Volume I, Issue VII
July to Sept. 2014

Reg. No. MPHIN/28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320-8767
Impact Factor - 0.547

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

श्री गणेशाय नमः

श्री गुरुवे नमः

नवीन शोध संसार

Reg.No. - MPHIN/28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320-8767 Impact Factor - 0.547
Volume I Issue VI, April to June 20014

सम्पादक की अभिव्यक्ति

सम्मानीय शोधार्थियों,
सादर वन्दे

सर्वप्रथम मंगलयान की सफलता पर हार्दिक बधाई एवं भारतीय वैज्ञानिको का कोटि-कोटि वन्दन, अभिनन्दन।

इसके साथ ही हम आपको हर्ष के साथ सूचित करते है कि नवीन शोध संसार द्वारा प्रकाशित मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम विशेषांक भाग-1 एवं 2 का विमोचन दिनांक 20 सितम्बर 2014 को माननीय श्री दीपक जी जोशी (उच्च शिक्षा राज्यमंत्री एवं प्रभारी मंत्री) जिला-नीमच (म.प्र.) के द्वारा सम्पन्न हुआ। जिसमें म.प्र. शासन की योजना कॉलेज चले हम एवं व्यक्तित्व विकास की जानकारी को निःशुल्क प्रकाशन करने पर उनके द्वारा सराहना करते हुए जर्नल की प्रशंसा की है।

जुलाई से सितम्बर 2014 का जर्नल आप सभी की सेवा में सादर प्रेषित करते हुए अनुरोध करता हूँ कि लोक सभा निर्वाचन 2014- परिणाम एवं प्रभाव 41 उपशीर्षकों सहित विशेषांक में शोधपत्र एवं आलेख भेजने की अंतिम तिथि 31अक्टूबर 2014 रखी गई है। आपके अमूल्य शोधपत्रों के विशेषांक का जर्नल माननीय श्री नरेन्द्र जी मोदी (प्रधानमंत्री) भारत शासन, नई दिल्ली, माननीया श्रीमती स्मृति ईरानी (मानव संसाधन मंत्री) भारत शासन, नई दिल्ली एवं मुख्य निर्वाचन आयोग नई दिल्ली को प्रेषित किया जायेगा। आशा करता हूँ कि आपके शोध पत्रों के निष्कर्ष अमूल्य धरोहर का कार्य करेंगे। विशेषांक की विस्तृत जानकारी हमारी वेबसाईट पर उपलबध है।

अन्त में आप सभी के असीम स्नेह, सहयोग, मार्गदर्शन हेतु आभार व्यक्त करता हूँ। कृपया आशीर्वाद पूर्ववत् बनाये रखें।

दीपावली पर्व की शुभकामनाएं एवं बधाई.....

आपका

आशीष शर्मा

संरक्षक एवं अध्यक्ष निर्णायक मण्डल
डॉ.एल.एन.शर्मा मो. 09425974314
प्राध्यापक वाणिज्य
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
नीमच (म.प्र.) भारत

सम्पादक
आशीष शर्मा
मो. 09617239102

प्रबंध सम्पादक
अपूर्व शर्मा
मो. 08989670811

मार्गदर्शक

प्रो. डॉ. आई.वी.त्रिवेदी (कुलपति)
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रो. डॉ. मोहनलाल छीपा (कुलपति)
अटलबिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रो. डॉ. डी.पी.सिंह (कुलपति)
देवी आहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रो. डॉ. शिवनारायण यादव (पूर्व कुलपति एवं पूर्व प्राचार्य)
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

सदस्यता शुल्क विवरण
* संस्थागत वार्षिक - 1250/-
* प्रति शोधार्थी वार्षिक - 750/-

शोधपत्र प्रकाशन राशि (सदस्यता अनिवार्य है)
* प्रतिशोध पत्र : 850/-

(प्रति शोध पत्र अधिकतम 2000 शब्द)
अतिरिक्त प्रति 500 शब्द 250/-
(शोध पत्र प्रकाशन राशि में वार्षिक सदस्यता शुल्क सम्मिलित नहीं है)

बेटी है तो कल है....

'नवीन शोध संसार' का छोटा-सा अनुरोध-
* पेड़-पानी, ऊर्जा और बेटी बचाएँ
* गुटखा, बीड़ी, सिगरेट एवं शराब को ना कहें, इनसे कैंसर होता है।

शोध पत्रिका को प्रकाशित करते हुए पूर्ण सावधानी रखी गई है, फिर भी किसी प्रकार की त्रुटी के लिये सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक जिम्मेदार नहीं होंगे समस्त विचारों का न्यायक्षेत्र नीमच होगा

अनुक्रमणिका / Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल 05

03. सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06

04. निर्णायक मण्डल 07

05. प्रवक्ता साथी 09

(Science / विज्ञान)

06. Impact Of Aquatic Weeds On Potable Water With Referance To Suketa Dem Of 11
Khandwa District (West Nimar) (M.P.) And Their Control Measures (Saroj Mahajan, Anita Gangrade)

07. Ethno Medicinal Plants Used For Treatment Of Rheumatism And Urinogenital 14
Problem By Tribal Of Kesli Block In Sagar (M.P) (Dr Madhu Sthapak)

08. Effects Of Urbanization And Industrialization On The Water Quality In 17
India-A Survey Based Research (Dr. Bindu Gandhi)

09. The Global Warming and CDM (Dr. Sunita Phadnis) 20

10. Effect Of Various Chemical Media On Nickel Plated Mild Steel (Dr. Bindu Gandhi) 22

11. Customer Satisfaction With Networking Processing Of BSNL & Reliance 24
Communication In Gwalior Division (M.P) (Dr. Sanjay Chaudhary, Namrata Jain)

12. Cloud Computing : Network Security In E-Banking (Dr. Sanjay Chaudhary, Kirti Saxena) 27

13. Natural Resources Conservation (Dr. Pratima Khare) 30

14. An Analysis and Comparison of the Security Features of Firewalls and IDSs 32
(Dr. Sanjay Chaudhary, Kirti Saxena)

15. Environmental Pollution and Effects (Dr. Sanjay Prasad, Prof. Deepali Amb) 36

16. Cloud Sim : Structures And Services of Cloud Computing 39
(Dr. Sanjay Chaudhary, Namrata Jain)

17. ध्वनि प्रदूषण – प्रायोगिक अध्ययन टैगोर मार्ग, नीमच (म.प्र.) भारत के विशेष सन्दर्भ में (डॉ. भूपेन्द्र कुमार अम्ब) 42

(Home Science / गृह विज्ञान)

18. To Assess Impact Of Practice On The Hemoglobin Of Breast Cancer Patients 45
(Dr. Archana Kushwah, Dr. Manju Dubey)

19. Role Of Domestic Appliances In Home Management And Their Impacts 47
On Human Beings (Suchi Sharma, Dr. Manju Sharma, Dr. Manju Dubey)

20. A Study On Interrelationship Between Domestic & Social Environment 50
(Suchi Sharma, Dr. Manju Sharma, Dr. Manju Dubey)

21. Mental Health And It's Relationship With Self And Self-Concept For 53
Adolescent Boys And Girls (Teena Pandey, Dr. Kantibhai S. Dedun)

22. बालशोषण और सिसकता बचपन (डॉ. भावना रमैया) 56

23. ग्वालियर शहर की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन 58
(डॉ. पूनम तिवारी डॉ. मंजू दुबे)

24. ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन 61
(डॉ. नीरु त्रिपाठी , डॉ. मंजू दुबे)

25. फास्ट–फूड उपभोग करने वाले बालक/बालिकाओं का एन्थ्रोपोमेट्रिक अध्ययन– सागर शहर के सन्दर्भ में 63
(डॉ. आराधना श्रीवास, डॉ रेनूबाला शर्मा)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

26. A Study On Service Quality Of Public Sector Banks In Indore 68
(Dr Sumeet Khurana, Vaibhav Jain)

27. Corporate Social Responsibility: Issues And Challenges (Ankita Jain, Prof. Rajeev Jain) 71

28. Technical Development Of Banking Sector In 21st Century 74
(Subhash Purohit, Dr. C. V. Singh)

29. Comparative Study Of The Various Institutions On Implementation Of 76
Panchayati Raj In India (Sandeep Kumar Laxkar, Dr. P. R. Somani)

30. Know your customer (KYC) policy (Dr. Vandana Jain, Dr. Pournima Patel) 79

31. Contribution Of Internal Audit (Dr. Pournima Patel, Dr. Vandana Jain) 82

32. Growth And Performance Of Small Scale Industries In India (Dr. L.N.Sharma) 85

33. Role Of Gender Discrimination And Women's Development In Rural Areas 87
(Dr. Prabhat Chopra)

34. Impact Of Right To Education Act 2009 For Welfare Of The Nation 91
(Dr. R. B. Gupta, Dr. Nilofar Qureshi)

35. Globalization And Tribal Culture Of India (Mehzbeen Sadriwala, Pankaj Vyas) 94

36. Performance Reviews Relating To Rajya Vidyut Utpadan Nigam Limited 100
(Harish Singh Nayak, Dr. P.R. Somani)

37. Impact Of Economic Reforms On Indian Economy (Dr. D. L. Ahir) 103

38. MGNREGA : Challenges & Future (Dr. D. L. Ahir) 106

39. बाल श्रम : मानवाधिकार (डॉ. आनन्द तिवारी) 109

40. विश्व पर्यटन मानचित्र पर मध्यप्रदेश की सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों का उभरता स्वरूप (डॉ. अमरचंद जैन) 111

41. भारत में बैंकिंग क्षेत्र की स्थिति का अध्ययन (डॉ.आर. बी. गुप्ता, जया कैथवास) 114

42. उद्योग, विकास और पर्यावरण (डॉ. प्रीति श्रीवास्तव) 116

(Economics / अर्थशास्त्र)

43. Export Potential Of Agricultural Commodities Of India (Dr. S.T. Warade) 118

44. कमजोर वर्गो के सामाजिक – आर्थिक समावेशीकरण की योजना मनरेगा : उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ 120
(प्रो. अलका जैन, डॉ. अर्चना शर्मा)

45. ग्वालियर जिले में बढ़ते आर्थिक अपराधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 125

46. भारत में लिंगानुपात संरचना का विश्लेषण (डॉ. निशा मिश्रा) 129
47. कृषि विकास एवं उसके पर्यावरणीय प्रभाव (डॉ. शक्ति जैन) 132
48. निर्धनता – कारण, परिणाम और कम करने के उपाय (डॉ. ए. के. जैन) 136
49. नव उदारवादी आर्थिक नीति के पश्चात् भ्रष्टाचार – एक विश्लेषण (डॉ. रिखबचन्द जैन) 139
50. बाल विकास में पालक की भूमिका (डॉ. बिन्दु श्रीवास्तव) 141
51. भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था (रावेन्द्र सिंह) 143

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

52. पंचायती राज : विसंगतियाँ एवं निदान (डॉ. संगीता मुकर्जी) 145
53. महिला विकास एवं शिक्षा (डॉ. ज्योति मार्टिन) 148
54. लोकतंत्र में बढ़ता भ्रष्टाचार – एक चुनौती (डॉ. अंशु सोनी) 150
55. आदिवासी क्षेत्रो में पंचायत राज की भूमिका (बालाघाट जिले के बैहर तहसील के विशेष संदर्भ में) 152
(तरूण कुमार शेण्डे , वरूण कुमार शेण्डे)
56. लोकतंत्र के विकास में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका (डॉ. रजनी दुबे) 153

(Sociology / समाजशास्त्र)

57. बैगा जनजाति में प्रचलित विवाह की पद्धतियाँ (म.प्र.के डिण्डौरी जिले के संदर्भ में) (डॉ. रश्मि दुबे) 155
58. पर्यावरण प्रदूषण एवं समाज का अस्तित्व (डॉ. संजय खरे) 158
59. महिला उत्पीड़न एवं मानवाधिकार (डॉ. सुमित्रा वर्मा) 160
60. महिला कानून एवं अधिकार (डॉ. उमा लवानिया) 162

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

61. The Trinity Of God, Nature, And Man In Rabindranath Tagore's Poetry (Girraj Sharma) 164
62. The Nuances Of Empathetic Realism And Benevolent Humaneness In Narayan's Stories (Vinay Dubey) 166
63. Mahesh Dattani's ' Tara '- Female Psyche And Gender Issues (Dr. Jyoti Taneja) 169
64. Women in Jhumpa Lahiri's Short Stories (V.M. Audichya) 171

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

65. बुन्देलखण्ड की विवाह लोकपरम्परा के बन्ना गीत (डॉ. छाया चौकसे) 173
66. वर्तमान साहित्य की प्रासंगिकता और सामाजिक सरोकार परिपेक्ष्य – राजेश जोशी का काव्य साहित्य (डॉ. छाया चौकसे) 178
67. हिन्दी साहित्य में लघु पत्रिका का उदय एक आन्दोलन का सूत्रपात है (राधा वास्केल) 179
68. सैरन्ध्री – अहं नहीं आत्माभिमान (डॉ. संध्या गंगराड़े) 181
69. जनकवि नागार्जुन : व्यक्तित्व और कृतित्व (डॉ. सरोज जैन) 182

70. राष्ट्रीय संपर्क भाषा हिन्दी : आवश्यकता एवं क्षमता (डॉ. पुष्पा शाक्य) 185
71. बदलते जीवन मूल्य और समकालीन कविता (डॉ. रंजना मिश्रा) 187
72. भारतीय संस्कृति और नारी स्वातंत्र्य (डॉ. चन्दा तलेरा जैन) 189
73. समस्याओं से संघर्ष करती नारी और अंतर्द्वन्द्व (डॉ. रश्मि जैन) 190
74. छायावादी कवियों का कल्पना विषयक दृष्टिकोण (डॉ. वंदना अग्निहोत्री) 193
75. भूमण्डलीकरण के युग में साहित्य और समाज मोहन राकेश के नाटक आधे अधूरे के संदर्भ में (डॉ. सरोज यादव) 195
76. भारतेन्दु युग : साहित्यिक परिदृश्य (डॉ. शबनम खान) 197
77. प्राचीन साहित्य में नारी चित्रण की पंरपरा (डॉ. शबनम खान) 199
78. साहित्य में व्यंग्य की प्रासंगिकता (डॉ. सुदामा प्रसाद धूमकेती) 201
79. तकनीकी शब्दावली का महत्व (डॉ. वंदना अग्निहोत्री) 203
80. नागार्जुन : जनवादी रचना के प्रतीक (डॉ. रशीदा खान) 205

(Education / शिक्षा)

81. Current Scenario Of Higher Education In India With It's Challenges 207
(Pawan Kumar Jaiswal, Archana Arya)
82. Role Of Teacher Education In Promoting Culture Of Peace 210
(Dr. Ramesh Nagda, Reena Dutt Sharma)
83. Education : Its height and depth (Ratna Kumari) 212
84. डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के 214
जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. भगवती लाल व्यास, संदीप सिंह चौहान)
85. राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में स्वायत अधिगम प्रशिक्षण के प्रभाव का अध्ययन (प्रो. अनुपूनिया, शंकरलाल मीणा) .. 217

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

86. Association Of Motor Fitness Mechanism With Playing Papability Of Handballers 219
(Dr. Jogendra Singh, Amit Ganshyam Bhai Upadyay)
87. Impact Of Deliberative Practice On Swimming Velocity And Active Drag 221
(Gagan Vyas, Dr. Seema Gurjar)

(Others / अन्य)

88. जल प्रबन्धन : घटता जल, भयावह कल (डॉ. भारती जोशी) 224
89. ऋग्वेद की मानव को पर्यावरणीय सीख–वर्णनात्मक अध्ययन (डॉ. मनीषा मालवीय) 226

(Naveen Shodh Sansar / नवीन शोध संसार)

90. Guideline for Authors/Research Scholars 227
91. Membership Cum Author's Bio - Data Form 228

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारीया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्डरे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

नवीन शोध संसार के बढ़ते कदम

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम–विशेषांक का विमोचन करते हुए
माननीय श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्य मंत्री) म.प्र. शासन, माननीय श्री ओमप्रकाश सकलेचा (विधायक) जावद, (म.प्र.) आशीष शर्मा (सम्पादक) नवीन शोध संसार, नीमच (म.प्र.)

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा (प्रोक्टर),** विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(3) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डी.डी. विश्वकर्मा, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ.पी.डी. ज्ञानानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नीतिन साहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, मऊगंज, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. रामचन्द्र चौहान ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(88) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(89) श्रीमती सुमन वशिष्ठ ..... राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Impact Of Aquatic Weeds On Potable Water With Referance To Suketa Dem Of Khandwa District (West Nimar) (M.P.) And Their Control Measures

Saroj Mahajan * Anita Gangrade **

Abstract - Water is basic unit of life for all living organisms at this planet. Water is essential for drinking ,domestic , irrigation and industries purposes . The Khandwa District is include in hot climatic region , suffering from water crises whole year specially in summer season . The sources of potable water are limited in comparison to population of Khandwa , The important source of potable water of khandwa are Suketa Dem , Nagchoon pond , Ganesh talai , Singhare talai , suraj kund , padam kund. In these water sources aquatic weed grows luxuriously causes water pollution. It also influences management of water in natural way. At quarterly field survey during 2010-2011 at different water sources reviled that presence of aquatic weeds (emergent, floating and submerged.) The study of aquatic weeds shows number of Environmental problems like water pollution, Fish production greatly affected , decomposition of weed creates foul smell, taste ,odor problems which are unpleasant to public convenience , ideal for mosquitoes growth , impede of free flow of water in canals . The control measures are physical or mechanical , chemical, and biological methods, suggestions for purification and management of water for Khandwa inhabitate.

Key words - Aquatic, Weed, Water, Dem.

Introduction - In twenty one century the most thretan crises is the scarcity of water specially drinking water, Although earth surface is covered by more than 2/3 part of water . Water is one of the most important natural resource and basic need of life for all organism. but most of the fresh water bodies of the world over all becoming polluted . thus the percentage of the potable water decreases . Eutrophication of natural water is one of the most significant causes of a decline in a water quality. It is accompanied by a large quantity of aquatic weed in water . The safe potable water is necessary for human growth and development clean, pure water for health and wellbeing because it is an internationally accepted as a human right (W.H.O.2001). The Indian population in 2001 is about 1200 million and it will grow up to 1333 million in 2025 and 1640 million in 2050.As the population grows, the demand of water increases and on other hand depleting the sources of water, due to deforestation urbanization industrialization and less rainfall . The fresh water demand of drinking agriculture , domestic and industrial purposes . There is wide gape between demand and supply .

Study area - Khandwa district is situated in south-west of MadhyaPradesh. Maximum and minimum height above mean sea level is 905.56 meter and 180.00 meter respectively .The geographical area is 6206.45 sq.km. and population 1261768 in year 2001. The dristrict Khandwa comes under drier part of India .The annual average rainfall is 880.75m.m. The northan part of district more rainfall then southern part . The study site Sukta Dam constructed on sukta river . The river rises and enters the Burhanpur district at its north western boundary. After traversing it for about 24.1 km. enters in Khandwa tehasil near Kalana and return to the north . It is joined by Abana river near Upasthal and then flowing north east falls in to the Chhota Tawa near selda . Its length in district about 80.5 km. Sukta Dem is also called Bhagwant Sager Dem and their Capacity is 1347 feet.

Material and method - Preliminary survey of different water bodies of Khandwa , revealed that the Sukta Dam is one of the most important sources of potable water for Khandwa inhabitant . From dam half population of khandwa get potable water supply to city . At a glance the dam water is infested with aquatic weeds. Aquatic weeds are unwanted plants which complete their life cycle in water. The quarterly visit to the dam, from October 2010 to September 2011. The four sampling sites decided are S1, S2 , S3 , S4, East, West , North, and South direction of dam. The heavily infection of weeds more at the bank of dam. The aquatic vegetation collected manually in plastic bags and kept in ice box . In the laboratory aquatic plants clean by hands and separate them . identified by the help of different flora , specially flora of Madhya Pradesh. Prepare their herbarium sheets and photographs . Preparing list and classify in to three categories like floating , submerged and emergent weeds.

* Department of Botany , M.L.B. Govt. P.G. College, Kila Bhavan, Indore (M.P.) INDIA
** Department of Botany, Govt. Holker Science College, Indore (M.P.) INDIA

Result and discussion - The preliminary survey report of Dam reveled that there are three types of aquatic weeds. The free floating, submerged, emergent weeds found in the sukta dam . During October 2010 to September 2011 survey period, during this time 29 aquatic weeds are identified, out of which Azolla pinnata , and Eichornia crassipes were dominated species during whole year . The higher species diversity observed in summer then followed by winter and rainy season . In rainy season the aquatic vegetation were disturbed . In submerged weed the Hydrillaverticilliata was the dominating species in dam. Large number of Aquatic weeds are creating some problems in the Environment , Malaria is one of the big problematic diseases at the Global Level , Aquatic weeds creates ideal situation for mosquito growth, they are also responsible for yellow fever , river blindness and encephalitis. Fish production is affected by the presence of floating and submerged aquatic weeds , when the growth of weeds become thick and cover the entire water body , it can be lethal for the fish growth. The aquatic weeds also affect the water quality odor, taste and color of water and also increases. biological oxygen demand because of organic loading ,similarly anthropogenic activity of people degrade the water quality . The submerged and floating weeds propagates at tremendous rate . Eichornia crassipes needs special attention , A pair of these plants can multiply up to about four thousand times in one season . Normally water surface covered and clogged in one season specially banks of Dem sites. The decomposition of huge amount of biological mass creates condition where carbon dioxide and carbon monoxide are produced and release to the atmosphere.

The decomposition creates emission of four smell which are unpleasant to public convenience . The decomposition of huge of weed consist of silicious material and other insoluble salts which settle on the bottom of dam and affect the life of water sources . The efficiency of Lemna minor for the treatment of waste water was studied . It is inferred that Lemna minor is efficient in removing Biological oxygen demand , solids and nutrients from polluted water (Egbert selwin 2000). The detritions in the quality of dam water has contributed to the decline in the biological diversity of the aquatic flora .Temperature and rain fall are the most important ecological feature that is a limiting factor for growth and distribution of aquatic vegetation

Control measure - The aquatic weeds causes great loss of quality and pollute the potable water . The water bodies are infested with aquatic weeds . so it is very essential to control the growth of weeds in dam . The cheap and easy method to control weed by manual. The infested weed can be removed by hands or manual cutting. Water hyacinth is major problem in dam water. this weed need to be taken up on the priority base, excess weed growth cover water surface. However, water hyacinth is recognized as a water purifier ,due to its ability to absorb heavy metals from the water bodies .At the same time its die and decay within dam water but it can lead to reentry of these chemicals in water further leading to eutrophication . Since, the chemical method is not desirable . So, manual method weed control has been adopted. By this methods the weeds reappear after some times . Hence, weed clearance required about three times in a year . The public awareness is necessary and farmers should be educate to use least amount of fertilizers and pesticides and do not through agricultural waste in water .

" Save one drop of water, save life of an organism "

References -

1. APHA 1998. Standard methods for the examination of water and waste water, 20th edition.
2. Arvind Kumar; (2002) Ecology of Polluted Water : 170 – 177.
3. Bajpai A. et.al. (1993) : Limnological studies to Bhopal lakes,: Bhopal. Nat. Symp. Past Present and Future of Bhopal lakes,:253-257 control **1,** 9.
4. Barko ,J.W.D.G. Hardin , and M. S. Mathews , (1982) Growth and morphology of submerged fresh water macrophytes in relation to light and temp. Can. J. Bot
5. Chauhan, U.S. (1971). Aquatic and marshy angiosperms of Roorkee sub-division. Vol. 68(3): 750-755. (Roorkee, Uttar Pradesh).
6. Cook CDK. (1996.) Aquatic and wetland plants of India. New York: Oxford University Press. 385 p.
7. De A.K. (2001) : Environmental chemistry, 4th edition, Delhi, 378p.
8. Dhillan G.S. (1987)Management of Aquatic Weeds in Irrigation system. Proceedings of the workshop on management of Aquatic Weeds, Amritsar, Punjab, India. 21st November,
9. Denny, P. (1994.): Biodiversity and wetlands. Wetlands Ecology and Management, 3: 55-61. 1987.
10. Kaul, V.(1971) : Production and ecology of some Macrophytes of Kashmir lake . Hydrobiologia, Bacuresti. 12:63-69.
11. Mudagal V. Khanna, Hajera P.K. Flora of Madhya Pradesh .Vol. II
12. Nair, A.S.K and G. Sankar (2002). ; Wetlands of Kerala. Wetland conservation and management in Kerala 17-26.
13. Roy, G.P. , Shukla B k , Datt Bhaskar (1992): Flora of Madhya Pradesh .
14. Segal S.(1971.) ; Principles on structure, zonation and succession of aquatic macrophytes. Hydrobiol **12**: 89-95.
15. Sharma, P.D.,(1999). Ecology and Environment. Rastogi publications, Meeret, India.
16. Subramanyam K.(1962). Botanical monograph No. 3 Aquatic Angiosperms. P no. 109
17. Wetzel, R.G .,(2006). ; Limnology Lake and River ecosystem. Third Edition., Academic press San Diego California U.S.A.
18. W.W.F. (1993.) ; Dictionary of Indian wetlands 264p.

Observation Table - List of Aquatic weeds of Sukta Dam

S. No.	Aquatic weeds	Family	Vernacular Name
A.	Free Floating Aquatic weeds		
1.	Azolla pinnata	Salvineaceae	Water velvet
2.	Marsilea quadrifolia Linn.	Marsileaceae	Aaupatuya
3.	Chara	Chareaceae	Stone wort
4.	Eichhornia crassipus Mart solms	Potanderaceae	Water hycinth
5.	Lemna minor	lemnaceae	Duck weed
6.	Ipomea aquatica Forsk.	Convolvulaceae	Kalmi sag
7.	Nymphoides indicum Linn. O. Kuntze.	Nympheaceae	Lotus
8.	Pistia stratiotes Linn.	Areaceae	Water lettuce
9.	Potamogeton perfoliatus Linn.	Potamogetonaceae	
10.	Trapa natens L. var. bispinosa. Roxb. Makino	Trapaceae	Water nut
11.	Utricularia flexosus Linn.	Lentibulariace	Bledder wort
B	Submerged Aquatic weeds		
1.	Hydrilla vertiillta Linn. F. Royle.	Hydrocharataceae	Pani jhaar
2.	Najas minor pers. Ali	Najadeaceae	
3.	Ottelia alismonides L. Pers.	potamogetonaceae	
4.	Potamogeton pectinatus Linn.	potamogetonaceae	
5.	Vallisneria spirallis L.	Hydrocharataceae	
C	Emergent Aquatic weeds		
1.	Ammania bacifera L.	Lythraceae	
2.	Alycicarpus hamosus Edgew.	Fabaceae	Birbut
3.	Alternethera sisselis. Br.	Amaranthaceae	Saranchi sag.Kollupa
4.	Cleome viscosa Linn.	Capparaceae	Hulhul
5.	Convolvolus microphyllus Roth.	Convolvulaceae	
6.	Cyprus iria Roxb. Linn.	Cyperaceae	
7.	Cyprus rotundus Linn.	Cyperaceae	Mutha
8.	Cyprus Umbellatus	Cyperaceae	
9.	Eriocaulon cinereum R. Br. Prodr.	Eriocaulaceae	
10	Eleocharis atropurea Kunth.	Cyperaceae	
11	Fimbristylis bisumbellatus Forsk.	Cyperaceae	
12	Phyala nudiflora (L) Greene.	Verbenaceae	
13	Scripus erectus poir.	Cyperaceae	
14	Typha angustata Linn.	Typhaceae	Hathi ghas

Categories	Numbers of aquatic weeds
Dicotlydones	18
Monocotlydones	9
Pteridophytes	2
Algae	1

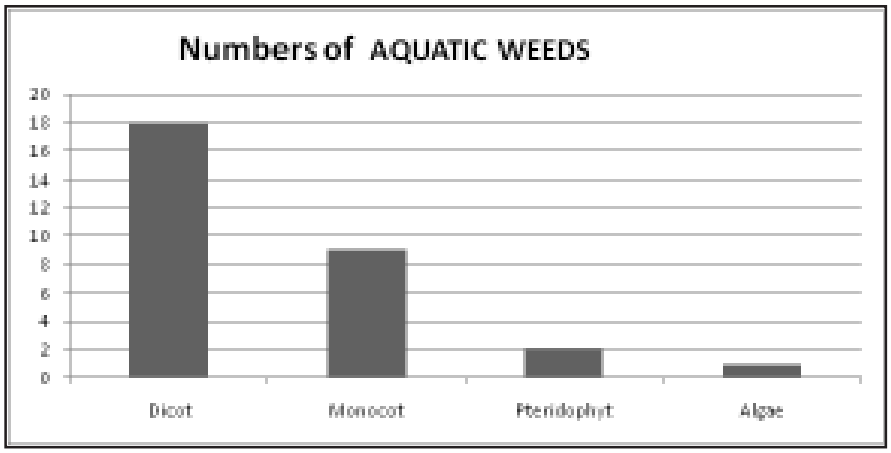

Ethno Medicinal Plants Used For Treatment Of Rheumatism And Urinogenital Problem By Tribal Of Kesli Block In Sagar (M.P)

Dr Madhu Sthapak *

Abstract - Plants play a dynamic role in human life. There is not a single aspect of human life where plants do not play any direct or indirect role. For every basic need like food, fuel, Shelter, clothing and medicine etc, man dependent on plants.

Research Methodology - The present paper deals with the ethno medicinal plants used by the tribes of kesli block. the tribal's depend on the herbal medicines for curing various-urenogenital and rheumatic problems In urenogenital problem tribal, do not approach doctors due to lack of awareness and shyness or hesitation.

Herbal healers and their patient who receive the treatment for any urenogenital problem enquired the local names, parts used and method of administration.The binomial names are enumerated with utilization ofthese plants Further studies were suggested to validate the claims and herbal drug development for treatment of such problem .

In the ethno-botanical field survey we collected up to 75 genera which are used in care and cure of rheumatism and urenogenital problem has shown in tables as follows

Conclusion - Ethno medicinal practices of tribal and non tribal relating with human health ethno medicine means the medical practices for the treatment of ethnic or aborigine people for their health Care needs. Present study focuses. On the utilization of plants available with the people of kesli block they are using the traditional knowledge's for the treatment of urenogenital and rheumatic problem. There is an urgent need for systematic documentation of this knowledge by using scientific tools.

References -

1. Ahluwalia k.s. (1952) "Medicinal plants of Kangra" Ind. For, 74(u) pp.188
2. Ambasta, S.R.(1986) "The useful plants of india," publication and Information directorate, CSIR, New delhi pp. 918
3. Atal, C.K and kopar,BM (eds) 1972 "cultivation and Utilization of medicinal and Aromatic plants" Reg,Res, Lab Jammu-Tawi, pp 1-568.
4. Athya C.D. and mishra, G.P (1979) "Notes on the Forest Flora of central India" I General Survey Bull of Bot.soc pri of sagar Vol 25-26 pp 67-72
5. Bhalla. N.P.sahu, T.R. mishra, G.P.and dakwale, R.N.(1982) "Traditional plant medicines of sagar district, m.p India" I Eco taxo bot 3 pp 23-32
6. Bhargava. N (1981) "plants in Folk life and Folk lore in Andaman and nicobar island"
7. Glimpses of India Ethnobotony pp 329-344
8. Billore, K.V. and Audichya. K.C (1978) "some oral, contraceptives –Family planning tribal way" j Res. Indian hed. Yoga, Home of 13: pp.104-109
9. Chopra, R.N. (1933) "Indiqenous drugs of india" The art press Calcutta. Pp 1-655
10. Das, P K and mishra, N k (1988) "some Ethno medicinal plants of karaput. District, Orissa" Ancient science of life.8(1) pp 668-675
11. Ford. R I (1978) "The nature and status of ethno botany" Ann arbor michigan.
12. Hurshburger, J.W (1895) " The purpose of Ethno botany Bot Gaz. 21 pp 146-154
13. Jain, S.K. (1963) (a) " observation of the ethno botany of tribal of M.P" Vanyajati 11 pp 177-183.

Table -1: Ethno-medicinal plants used against Rheumatism

S.NO.	B.N.	L.N.	Useful Part	Mode of Application
1	Arbus precatorius	Gumchi	Root, leaf , seed	Seed oil used externally
2	Alangium lomarkii	Akola	Root, leaf	Leaves in form of poultice to relieve r**heumatism**
3	Amarbhiphallus compana latus	(suran) jammikand	Tuber	Paste of tuber used externally
4	Andrographis paniculata	kirayta	Whole plant	Infussion of root and leaf
5	Asperagus recemosus	Satmuli	Taberous root	Root paste
6	Azatiracta indica	Neem	Leaf- bark seed	Oil extract
7	Calotropis gigantea	Akaua	Whole plant	Leaves are heated
8	Calotrotis procera	Akaua	Root leaf	Latex and leaf
9	Jatropa	Safed arand	whole plant	Root juice used both internally and externally

* **Professor and Head Department of Botany, Govt. Arts And Commerce College, Sagar (M.P) INDIA**

10	Jatropa	Safed arand	Whole plant	Leaves and seed decoction used topically and oil externally
11	Madhuca indicia	Mahua/mahva	Whole plant	
12	Menthea arvensis	Pudeena	Root	Roots are used externally
13	Cyperus scariosus	Nagermotha	Whole plant	Used seed oil
14	Hemindes mus indicas	Annatmool	Root, leaf	Liquid extract of roots is used as an alternative in chronic r**heumatism**
15	Melia azadarach	Bakayau maha neem	Whole plant	Seed oil
16	Lantana camarna	Vidyanasan	Leal stem	Decoction of leaves with jatropha curcas oil used externally in r**heumatism**
17	Maringa oleifera	Munga	Whole plant	Oil from seed
18	Ocimum gratissimum	Ban Tulsa	Whole plant	Strong decoction of whole plant used externally in r**heumatism**
19	Purgalaria extensa	Utarni	root,leaf,bark	Juice of leaves bark with mustard oil

Table -2 : Ethno-medicinal plants used against Uro- genital-problem

S.NO.	B.N.	L.N.	Useful Part	Mode of Application
1	Arbus precatorius	Gumchi	Root leaf seed	Seed powder with milk for abortion
2	Aloe barbe densis	Gamarpatha ghirit kumari	leaf	Fresh juice of leaves against menstrual suppression
3	Aster cantha longifolia	Tal makhana	Leaf seed	Decoction of leaves orally in gonorrhea
4	Butea monosperma	Chhewla teshu	Whole plant	(seed dust and banana)Powder mixed with milk and sugar in spermatorrhea
5	Cassia tora	Powder	Seed ,leaf	Leaves decoction used orally in gonorrhea
6	Chloro phytum tobacosum	Seted musli	Tuberous root	Powder of dried roots mixes with boiled water and given for stop white discharge of bleeding during pregnancy . it is found that women who consume safed Musli during pregnancy give birth to well nourished babies
7	Coculus hirsutus	Jaljamni	Whole plant	Powder of leaves or juice of leaves
8	Curculigo orchioides	Kali masli hempushpa	Rhizome	Powder of rhizome used in impotencys
9	Doliclos bifloru	Gahat kulrha	Seed ,leaf	Decoction seed with honey given orally in menstrual disorder
10	Cuscuta reflexa	Amar bel	Whole plant	Powder of seed used orally for anti fertility.
11	Emblica officinallis	Amla aonia	Root, bark, fruit	Gonorrhea
12	mimosa pudica	Lajalu, chhuimui	Root ,leaf	Paste of fresh leaves applied in topically over sacs in hydrocele
13	Phyllanthus niruri	Bhui amla	Leaf , flower	
14	Phyllanthus simplex	Bara bhui amla	Leaf ,flower	Paste of fresh leaves and flower with cumin and sugar for cure gonorrhea
15	Urginea indica	Van pyaji	Bulb	For urinary problem
16	Acacia catechu	Kathha	Bark flower	(1)extract of heart wood is given internally with local liquor in control bleeding during child birth. (2) flower tops with cumin milk and sugar are given in gonorrhea.
17	Adhatoda vasica	Rusa ruso	Leaves	Leaves decoction given orally in retention of urine.
18	Albizzia procera	Gurar gurberi	Leaf bark	Plants used in Impotency.
19	Argemone mexicum	Pilikuthai	Seed	Seed and juice of plant root given in spermatorhoea.

20	Euphorhia hirla	Dudhi	Whole plant	Plant juice given two times daily to nursing mother for increases her breast milk.
21	Cyperus scariosus	Nagar motha	Root	Decoction of root given orally in gonorrhea
22	Elgeodendron glanucum	Jamrasi bakra	Root leaf bark	Leaf bark powder with sugar used orally in impotency
23	Evolvulus alsinoides	Shankha puspi syam kranta	Whole plant	In the Vedic period it was believed to possess the power of promoting conception
24	Gloriosa superbra	Kalihari kirkic chyau	Root tuber	Decoction of root given orally for gonorrhea piece of root stock are touched with pregnant lady for abortion and easy delivery
25	Holarrhena antidysenterica	Kurchi, kureja	Whole plant	Leaves and root decoction is given to nursing mother after delivery of stop bleeding
26	Madhuca indica	mahua	Whole plant	The bark juice used orally 3 times daily for easy delivery
27	Mangifera indicia	Aam	Fruit leaves bark	Vaginal trouble
28	Momordica dioica	Parora kakora	Root leaf seed	(1)Decoction of roots of male plant are given orally to sterile lady for promoting fertility (2) decoction of female plant are used in urinary problem
29	Mucuna prurita	Kareneh kimach	Root fruit	Seed powder with honey given orally to improve male potency
30	Nerium indicum	Kaner	Root leaf	Root paste boiled in milk and used topically in penis against impotency
31	Opantia dillenils	Nagphani	Fruit leaf stem	Powder of dried flower used orally in prostrate trouble
32	Salmalia malabarca	Semal	Stem bark leaf	Bark powder with safed musli and honey in impotency
33	Semecarpus ancardium	Bhilma	Root seed	Root powder used as a tonic, twice a day in impotency
34	Sterculia urens	Kulu	Whole plant	Root powder mixed with honey and given to nourish women for easy delivery
35	Terminalia chebula	Harra	Whole plant	Powder of dried fruit orally in urinary disorder
36	Thespesia lampas	Banbhindi	Root leaf fruit	Fruit and root powder used in syphilis and gonorrhea
37	Butea monosperma	Teshu	Whole plant	Seed dust with banana given to eat, before the day of menstruation for ant fertility
38	Smilex zeybnica	Ramdatoon	Root	decoction of root for white discharge
39	Asperagus recemosus	Satavar	Rootstem seed	Dried root or stem soaked in a glass of water for one hour taken orally early morning in empty stomach.
40	Woodfordia fructicosa	Dhawai	Root flower	Dried powder of flower with honey given in irregular menstruation
41	Plumbago zeytanica	Chitrak	Root	Easy delivery root powder with honey given in easy delivery
42	Rauwolfia serpentina	Sarpagandha	Root	Decoction of root for Easy delivery

****

Effects Of Urbanization And Industrialization On The Water Quality In India-A Survey Based Research

Dr. Bindu Gandhi *

Introduction - The rapid growth of human population, rapid industrialization, indiscriminate use of natural resources, our quest for material comforts and new life styles demanding a variety of products and amenities, have led to the environmental pollution, which has become Global phenomenon. But it is neither feasible nor desirable to slow down the pace of development.So,in such condition we should manage our development in such a way that it will not harm our environment. One way in this direction is regular monitoring of environment quality.

Water is the essential constituent of any form of life. The Water of the earth's surface constitutes the hydrosphere, about 97% of which is tapped in ice glaciers and remaining 1% is fresh water. Man requires water for variety of purposes including irrigation, industries, livestock management, thermal power generation, fisheries, navigation and recreational activities.

As our communities grow, we notice many visible changes, including housing developments, road networks, expansion of services, and more. These changes impact our precious water resources, with pollution of water resources being one potential impact. Availability of clean and potable water has become a key issue in several developing countries. Growing population and water scarcity is affecting the quality of life significantly; India is no exception to this. Providing water in adequate quantity and quality for domestic water supply, irrigation and industrial requirement in all parts of the country are tremendous challenges.The global water scenario is very much alarming.

The increase in impervious of hard surfaces, (roads, driveways, and parking lots) decreases the amount of water that soaks into the ground. This increases the amount of surface runoff. The impervious surfaces collect and accumulate pollutants, such as those leaked from vehicles, or deposited from the atmosphere through rain or snowmelt. The runoff water carries pollutants directly into water bodies. Because there is less infiltration, peak flows of storm water runoff are larger and arrive earlier, increasing the magnitude of urban floods. Paving may alter the location of recharge, or replenishment, of groundwater supplies, restricting it to the remaining unpaved areas. If infiltration is decreased sufficiently, groundwater levels may decline, affecting stream flows during dry weather periods. Lowered groundwater levels can result in subsequent well failures. While the effects of urbanization on the water cycle can be major, if wise choices are made during the development process, the impacts can be minimized and our future water supply protected (ENVIS, 2005).

Freshwater resources all over the world are threatened not only by over exploitation and poor management but also by ecological degradation. The main source of freshwater pollution can be attributed to discharge of untreated waste, dumping of industrial effluent, and run-off from agricultural fields. Industrial growth, urbanization and the increasing use of synthetic organic substances have serious and adverse impacts on freshwater bodies. It is a generally accepted fact that the developed countries suffer from problems of chemical discharge into the water sources mainly groundwater, while developing countries face problems of agricultural run-off in water sources. Polluted water like chemicals in drinking water causes problem to health and leads to water-borne diseases which can be prevented by taking measures even at the household level.

Survey of research done in this field - According to the report of Central Pollution Control Board, there were 2000 large and medium scale industries in the country which polluted the ground water. Of these only 27% had adequate treatment plants 14% of the industries the treatment units were still under construction. Of the 17% sugar industries, only 6% had effluent treatment plants. The remaining 42% industries were simply disposing the wastes without any sort of prior treatment into the aquatic bodies which were the potential sources of public water supply. They generated enormous problems of water pollution (Trivedy and Goel, 1984).Now 50% of industries simply disposing the waste water without treatment (www. industrial effluents.com). Studies have revealed that some of our major rivers are polluted far beyond the permissible limit prescribed for human use and consumption. The mighty Ganga in the North and Cauvery in the South are also heavily polluted that the once life giving forms have now become a menace to aquatic life and human population.Water pollution is a phenomenon particularly in densely populated industrial cities at India (Babacar et al., 2005).Schueler and Holland (2000) suggested that the effects of urbanization on the water cycle can be major; if wise choices were made during the development process, the impacts could be minimized and our future water supply be protected.Purandara et al (2003) reported that with the rapid growth of population and industrialization in the country, pollution of natural water by municipal and industrial wastes had increased tremendously.

Danilo (1993) reported that the impact on urban areas, with their extensive hardened surfaces and inadequate storm water infrastructure to manage urban runoff, could be significant.

Sheridan et al (1996) reviewed the implications of inadequate provision of water and sanitation on children's health and general development, especially in urban areas. Research into health differentials showed that child mortality and morbidity rate in poor urban settlements was equal or

* Assistant Professor (Chemistry) M. J. B. Govt. Girls P.G. College, Motitabela, Indore (M.P) INDIA

exceed those in rural areas.The chemical composition of ground water depends upon the soluble products of rock weathering and decomposition and changes with respect to time and space in addition to the external pollution agents (Mariappan et al., 2000).

Groundwater is a precious natural resource for several vital functions such as for public, industrial and agricultural water supply. It provides drinking water to almost a third of the population and irrigates about 17% of the crop land. Due to the increased demand of water the groundwater is excessively exploited. Now a days ,the increasing effects of pollution on and overexploitation of ground water have become a serious threat.Many workers such as Kaza et al(1991),Ravichandran and Pundarikanthan (1991), Dayal (1992), Ali Akram and Iqbaluddin (1992),Mittal et al (1994),Prasad and Ramesh Chandra (1997), Sambasivarao (1997), Dhembare et al (1998), Tripathi (2003) have been carried exhaustive study on ground water quality.Activities such as indiscriminate disposal of human and agricultural waste, manure spreading over the vicinity of human habitation, housing of livestock, onsite human waste disposal system, septic systems and open defecation etc, are responsible for fecal contamination of ground water in the rural areas of the country.

The American academy of microbiology has showed that the quality of drinking water is declining all over the world mainly because of bacteriological contamination, a significant cause of gastro-intestinal diseases. As a consequence immunity to gastro-intestinal disease following exposure to contaminated water is slowly disappearing. Eric Minz of the US, centre for disease control estimated more than 3 million cases of diarrohea in all over the world per year leading to 10million deaths .

The Central Pollution Control Board (CPCB) identified severely polluted stretches on 18 major rivers in India and a majority of these stretches were found in and around large urban areas. The high incidence of severe contamination near urban areas indicates that the industrial and domestic sectors' contribution to water pollution is much higher than their relative importance implied in the Indian economy. Agricultural activities also contribute in terms of overall impact on water quality. Besides a rapidly depleting groundwater table in different parts, the country faces another major problem on the water front—groundwater contamination—a problem which has affected as many as 19 states, including Delhi. Geogenic contaminants, including salinity, iron, fluoride, and arsenic have affected groundwater in over 200 districts spread across 19 states.

Conclusion - Water as an environmental resource is regenerative in the sense that it could absorb pollution loads up to certain levels without affecting its quality. In fact there could be a problem of water pollution only if the pollution loads exceed the natural regenerative capacity of a water resource. The control of water pollution is therefore to reduce the pollution loads from anthropogenic activities to the natural regenerative capacity of the resource. The benefits of the preservation of water quality are manifold. Not only can abatement of water pollution provide marketable benefits, such as reduced water borne diseases, savings in the cost of supplying water for household, industrial and agricultural uses, control of land degradation, and development of fisheries, it can also generate non-marketable benefits like improved environmental amenities, aquatic life, and biodiversity.

Using available case studies, this survey based research aims to provide an overview of the extent, impacts and control of water pollution in India.

References -

1. Central Pollution Control Board, Ministry of Environment & Forests, Govt of India. 2009.
2-. Pravin U. Singare; Ravindra M. Mishra; Manisha P. Trivedi; Deepak V. Dagli (2012)."Aquatic pollution in Mithi River of Mumbai: assessment of physico-chemical parameters". Interdisciplinary Environmental Review **13** (4): 245–268.
3. Sreerangm Kanthaiah,Water quality of the Paleru river in different seasons at Jaggyyapet town (A.P.), Proceedings of 2nd ICCE Indore,124-126(2005).
4. Pawar C.T. and Joshi M.V.,Impact of urbanization and Industrialization on water quality, Nat. Environ. poll. tech. ,1(4),51(2003).

Drinking Water Standards

S.No	Parameters	Desirable limits mg/l	Permissible limits mg/l
Essential Characteristics			
1	Colour Hazen unit	5	25
2	Odour	Unobjectionable	-
3	taste	agreeable	-
4	Turbidity (NTU)	5	10
5	pH	6.5-8.5	No relaxation
6	Total Hardness, $CaCO_3$	300	600
7	Iron (Fe)	0.3	1.0
8	Chloride (Cl)	250	1000
9	Residual Free Chlorine	0.2	-
10	Fluoride (F)	1.0	1.5

Desirable Characteristics			
11	Dissolved Solids	500	2000
12	Calcium (Ca)	75	200
13	Magnesium (Mg)	30	100
14	Copper (Cu)	0.05	1.5
15	Manganese (Mn)	0.1	0.3
16	Sulphate (SO_4)	200	400
17	Nitrate (NO_3)	45	100
18	Phenolic compounds	0.001	0.002
19	Mercury (Hg)	0.001	No relaxation
20	Cadmium (Cd)	0.01	No relaxation
21	Selenium (Se)	0.01	No relaxation
22	Arsenic (As)	0.05	No relaxation
23	Cyanide (CN)	0.05	No relaxation
24	Lead (Pb)	0.05	No relaxation
25	Zinc (Zn)	5.0	15
26	Hexavelant Chromium	0.05	No relaxation
27	Alkalinity	200	600
28	Aluminum (Al)	0.03	0.2
29	Boron (B)	1.0	5.0
30	Pesticides	Absent	0.001

Guidelines for Evaluation of Quality of Irrigation Water

Water class	Sodium (Na) %	Electrical Conductivity µmhos/cm at 25°C	Alkalinity hazards	
			SAR	RSC (meq/1)
Excellent	<20	<250	<10	<1.25
Good	20-40	250-750	10-18	1.25-2.0
Medium	40-60	750-2250	18-26	2.0-2.5
Bad	60-80	2250-4000	>26	2.5-3.0
Very bad	>80	>4000	>26	>3.0

The Global Warming and CDM

Dr. Sunita Phadnis *

Abstract - The concentration of atmospheric green house gases like CO_2, methane, nitrous oxide has increased tremendously and produce green house effect. The green house is a process by which thermal radiation from a planetary surface is trapped by atmospheric green house gases and is re-radiated in all directions and some part is back towards the surface, as a result the temperature becomes higher and makes the planet warmer. In 1992 UNFCCC was adopted with an objective to stabilize atmospheric concentration of green house effect and an idea of CDM was ensured for implementation.

The CDM is one of the flexibility mechanisms defined in Kyoto protocol (IPCC 2007) and an arrangement that allows developed countries with a greenhouse gas reduction commitment to invest in projects that reduce emissions in developing countries. Such projects can earn profitable certified emission reduction (CER) credits, each equivalent to one ton of CO_2. These CER's can be traded, sold and used by industrialized countries to meet a part of their emission reduction targets under the Kyoto protocol.

The CDM projects may involve activities like rural electrification project, using solar panels or installation of more energy efficient boilers. The mechanism stimulates sustainable development and emission reductions. The aim of entire mechanism is to reduce emission globally and lower the global warming. The protocol was initially adopted on 11 December 1997 in Kyoto, Japan and entered in to force on 16 February 2005. As of April 2010, 191 states have signed and ratified the protocol.

Introduction - It is a well known fact that the global warming is due to increased concentration of green house gases which has become very difficult to manage in developing countries, so in 1992 united nation framework convention climate change (UNFCCC), it was decided to stabilize this increased concentration of green house gases, so an objective known as CDM is defined in Article 12 of Kyoto protocol. CDM has to be worked out in two ways as 1) to assist the developing countries in achieving sustainable development, so the ultimate objective can be fulfilled. 2) To assist developed countries to invest in developing countries to reduce green house gases and earn CER's (Certified Emission reduction).

The goal of entire process is to reduce emissions globally and to achieve the stabilization of Green house gas concentrations in the atmosphere at a level that should prevent dangerous anthropogenic interference with the climate system.

Background of Kyoto Protocol -

Countries with commitment under the Kyoto protocol to limit or reduce green house gases emission must meet their targets primarily through national measures. As an additional mean of meeting these targets, the Kyoto-protocol introduced three market based mechanisms, thereby creating "Carbon Market". The Kyoto mechanisms are:

- International Emission trading (IET)
- The clean development mechanism (CDM)
- Joint Implementation (JI)

The Kyoto Mechanisms -

- Stimulate sustainable development through technology transfer and investment.
- Help countries with Kyoto commitments to meet their targets by reducing emissions or removing carbon from the atmosphere in other countries in cost effective way.
- Encourage the private sector and developing countries to contribute to emission reduction efforts.

JI and CDM are the two project based mechanisms which feed the carbon market. It enables industrialized countries to carry out joint implementation projects with other developed countries while the CDM involves investment in sustainable development projects that reduce emissions in developing countries. The carbon market is a key tool for reducing emission worldwide. It was worth 30 billion USD in 2006 and is growing.

The Kyoto Protocol has specified quantified emission targets for all industrialized countries providing the CDM as one of the flexibility mechanisms (authorized article 12). It's object to contribute to the sustainable development in developing countries and to achieve emission reduction commitments of developed countries. The CDM allows emission reduction projects to earn CER credits, since green house gases have the same impact, no matter where they are emitted, they should be reduced where it is less costly. The article focuses on green house gases in the guise of promoting sustainable development. This misguided

* Asst. Prof. (Chemistry) M.J.B Govt. Girls P.G College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

mechanism is handing out money to projects that would have happened anyway under the concept of "additionality". CDM merely promotes another trading market mechanism by providing a license to pollute in exchange of CER credits. Once registered projects are then issued CER's. These CER's can be brought and used by developed countries to meet their Kyoto protocol companies can also purchase CER's to contribute towards their own emissions reduction targets under mandatory emissions trading schemes or voluntary schemes.

Methodologies - To get approved, validated and registered, a proposed CDM project has to use an approved baseline and monitoring methodology. To determine the baseline within certain applicability conditions, baseline methodology will set certain steps and to determine the monitoring parameters, monitoring methodology will set specific steps, in order to obtain the data (for calculating the emission reductions) quality assurance equipments are to be used.

AM - Approved Methodology

ACM - Approved Consolidated Methodology

AMS - Approved Methodology for Small Scale Projects

ARAM - Aforestation and Reforestation Approved Methodologies

All baseline methodologies approved by Executive Board are publicly available along with relevant guidance on the UNFCCC CDM website.

In support of implementation of CDM projects we can put some examples which appeared in several newspapers as:

- In the Times of India on 26th June 2011, the title of a news was "UN-aided project in Himachal to cut down carbon emissions" and the news was as follows:
  "NEW DELHI: A United Nations-aided project has been launched in Himachal Pradesh under which carbon emissions will be reduced by 40,000 tons per year for two decades — an initiative claimed to be bigger than a similar project in China. The silent revolution is taking place in mid and high hill ranges of Himachal where community participation in watershed management programs is making strong headway for success of India's first clean development mechanism (CDM) project, an official said. According to the Himachal Pradesh government, the project is registered for carbon credits by the UN under which the World Bank will buy carbon credits from the new forests/ plantations being developed on degraded areas in 177 gram panchayats covering around 4,000 hectare land falling in 10 districts of the state".
- The article which appeared on 26th July 2011 in 'The Guardian' (The article provided by sandbag as a part of Guardian environment Network) said that there are currently over 3000 registered projects delivering an average of 500 million CER's per year.

Conclusion - CDM success depends on how the developing world takes this mechanism as an approach towards mitigating climate concerns. The whole scenario must be dynamic and must be able to reduce carbon emissions truly. It's timely execution is a challenge. Transparency of information and active involvement of stakeholders are important features of CDM and must be maintained as CDM activity increases. The standards of CDM are very complex and the requirements relating to project activities are major hurdles. This must be overcome by pursuing simplification.

References -

1. Flues F, Michaelowa A, Michaelowa K. UN approval of greenhouse gas emission reduction projects in developing countries: The political economy of the CDM Executive Board, CIS Working Paper 2008; (35).
2. Institute for Global Environmental Strategies. CDM in Charts Version 2011; May; 13.1:23.
3. UN-aided project in Himachal to cut down carbon emissions. Times of India 2011 Jun 26.
4. Schneider L. Is the CDM fulfilling its environmental and sustainable development objectives? An evaluation of the CDM and options for improvement. 2007. WWF website
5. The European Union Emissions trading schemes. EU ETS. Available from: http://www.tfsgreen.com/
6. The CDM and Future Flexible Mechanisms Post-2012. report by Enel. Available from: http://www.enel.com/en-GB/
7. Carbon Market insights, Point Carbon 7th annual conference. 2011. Available from: www.pointcarbon.com
8. Vasa A, Neuhoff K. Role of CDM post, Climate Policy Initiative/DIW Berlin 2012.
9. Jensen HR, Current Issues in CDM and Projects in Malaysia. Danish Energy Management.
10. Thorne S, Managing risks in CDM projects in Africa. ACF Narobi, SSN Africa.
11. Zhu X, CDM project review – technology and regulation aspects, UNEP.

****

Effect Of Various Chemical Media On Nickel Plated Mild Steel

Dr. Bindu Gandhi *

Introduction - Corrosion is both costly and dangerous. Billions of dollars are spent annually for the replacement of corroded structures, machinery, and components. Premature failure of bridges or structures due to corrosion can also result in human injury, loss of life, and collateral damage. The challenges of corrosion in manufacturing and domestic sectors are enormous. According to *Denny (2004)*, the total annual estimated cost of corrosion in the United States was approximately $276billion. The corrosion causes about $8billion to $128billion economic damage per year in the United States alone degrading structures, machines and containers in the oil and gas industry. *SPE (2008)* stated in their report that Nigeria oil and gas industry suffered greatly between 2000 and 2004.The total pipeline breakage loss due to corrosion in 2004 alone is 396,000 metric tons. Corrodible surfaces are found throughout production, transport and refining equipment. Therefore, the protection of these equipments is necessary for the profitability and successful operation of these companies *(Becker, 1998).*

Steel is one of the major construction materials, which is extensively used in chemical and allied industries for the handling of acid, alkali and salt solutions. Acid solutions are extensively used in industry; the most important applications are acid pickling, industrial acid cleaning, acid descaling and oil well acidizing. The commonly used acids are hydrochloric acid, sulphuric acid, nitric acid, etc [1, 2]. Hydrochloric and sulphuric acids are the most difficult of the common acids to handle from the standpoints of corrosion and materials constructions. Extreme care is required in the selection of materials to handle the acid by itself, even in relatively dilute concentrations.

Carbon steel is a very important class of steels because of its favorable mechanical properties. Unfortunately, corrosion has proved itself as the major enemy deteriorating its cherished mechanical properties. In this research, the corrosion prevention of the mild steel is done by metal coating.

Metallic coatings provide a layer that changes the surface properties of the work piece. The work piece becomes a composite material exhibiting properties generally not achievable by either material if used alone.

All the possible methods of deposition have inherent advantages and disadvantages with regard to the quality of the layers they create and ease of their production. However electroplating seems best to fulfill imposed financial and temporal restrictions. Vapor deposition is expensive and time consuming, electro less deposition suffers from the same drawback and sputtering requires and expensive vacuum system and cannot be easily extended to industrial usage. Electroplating process is inexpensive, can be used on large parts and is a room temperature technology. For these reasons electroplating is now the production method of choice for most practical needs.

Modern electroplating equips the practitioner with the ability to pre design the properties of surface and in the case of electroforming those of the whole part. The ability to deposit very thin multilayer (less than a millionth of a cm) via electroplating represents a new avenue of producing new materials. [3]

Coating operations that coat an object with one or more layers of metal improve its resistance to wear and corrosion, alter its appearance, control friction, and impart new physical properties or dimensions. Applications automotive parts, defense, and medical to sophisticated range from common hardware items, communication equipment and aerospace technologies etc.

Electroplating is a process in which a surface is covered by a thin layer of another metal. Electroplating involves several physical steps and can be modified by changing the conditions of the processes, such as current, the cation, the solution and the metal involved.

Electroplating requires a conductive substance, often metal. Conductive substances are those that are able to channel electricity. In this case, an electrical current is passed through a solution with a metal cation. A metal cation is an atom of a metal that is positively charged. The cation is reduced, causing it to lose its positive charge, which in turn causes it to come out of the solution, where it will “plate” on the conductive material. This process is also called electrodeposition. [4,5] .

Experimental Methods - The mild steel is used as a base metal in all electroplating experiments. Many test specimens of steel were prepared. After complete preparation of specimens they were electroplated with nickel. The chemical used were of AR Grade and easily soluble in water. Distilled water was used for preparation of solutions. Before plating specimens were pretreated.

Pretreatment of specimens was done by-Mechanically polishing and buffing to a mirror finish using sand paper, degreasing with acetone cleaning the specimen by an alkali

* Assistant Professor (Chemistry) M.J.B Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

solution, consisting 25 g/l sodium carbonate, 35 g/l & sodium hydroxide and35 g/l trisodium phosphate, washing with cold water,neutralization in 10% HCl. After complete preparation of specimens they were electroplated at varying voltage and varying plating time.

After plating specimens were tested for corrosion resistence.

The corrosion property of different coatings was evaluated qualitatively. The analysis was performed on coated and uncoated specimens. All the specimens were tested in various corrosive media and then compared. Two types of tests were performed to test the corrosion behaviour of specimens.

1. Atmospheric exposure test -

1. Uncoated and coated specimens were exposed to open atmosphere.
2. Exposed time was about three months.
3. The exposed specimens were then physically examined, cleaned and weighed.
4. The uncoated specimens show indication of corrosion whereas coated samples appears to be unaffected by exposure to atmosphere.

2. Immersion test-

1. Immersion testing is the most frequently used for evaluating the corrosion of metals.
2. The test was performed on coated and uncoated specimens.
3. Corrosion resistance of different coatings was tested by immersing the specimens in .1 M NaOH, 3.5% NaCl, .1 M HCl ¨tap water, distilled water, rain water, acetic acid, acetone, ethyl alcohol, aniline, carbontetrachloride, phosphoric acid, aqueous ammonia, aqueous H_2S, CO_2 (wet), Cl_2 (wet), SO_2 (wet), Conc. HCl, Conc. H_2SO_4, and Phenol.

Inference - The results of corrosion study revealed that the unplated specimens showed indication of corrosion whereas coated samples appear to be unaffected by exposure to atmosphere because of the formation of thin protective film.

Results of corrosion in different corrosive media showed that distilled water is least corrosive. Nickel plated specimens experienced corrosion between 72 to 170 Hrs. in rain water and Tap water. The resistance of nickel coated sample to corrosion by distilled water was excellent.

Test in tap water has shown corrosion at room temperature. As per table 30 .1 M HCl did not corrode nickel plated sample but concentrated HCl corroded the specimen.

Resistance of nickel plated sample to H3PO4 was limited, because for longer duration of exposure in corrosive media, sample was corroded Nickel plated specimens showed outstanding resistance to .1N caustic soda. It might be due to formation of protective oxide film

Coating showed excellent resistance to ammonia, acetic acid,acetone, ethyl alcohol, aniline, carbon tetrachloride, phenol but concentrated HCl, concentrated H2SO4, H2S (aq.) CO2 (aq.) SO2 (aq.) are corrosive to coating

The work demonstrated the influence of operating parameters on nickel coating. It is clear that the factors that influence quality of deposit are voltage and plating time. These factors are interrelated. These factors also affected surface morphology, mechanical, physical and chemical properties of coated metal.

Results of corrosion study showed plating process decreases corrosion rate.Thus by varying these parameters one can design required property for a particular purpose. These findings should benefit manufacturers everywhere for electroplating.

References-

1. Anand, B. and Balasubramanian, V.2010. A Comparative Study on Corrosion Inhibition of Mild Steel Using Piper Nigrum L in Different Acid Medium. E-Journal of Chemistry World Wide Web Publications. 7(3), pg. 942-946. ISSN: 0973-4945
2. Ault, J.P.2006.The Use of Coatings for Corrosion Control on Offshore Oil Structures. Journal of Protective Coatings and Linings, Vol.23, Issue 4.Technical Publishing Company
3. Oloruntoba D., Eghwubare.O. And Oluwole.O. 2011. 'Effect of Some Process Variables on Nickel Electroplating of Low Carbon Steel', Leonardo Electronic Journal of Practices and Technology, Technical University of Cluj-Napoca, Romania 10(18), 79-94
4. Kanani, N., Electroplating: Basic principles, Processes and practice, Elsevier Advanced Technology: Oxford, U.K., (2004)
5. Schlesinger, M., Paunovic, M., "Modern electroplating (4^{th} edition) Wiley, New York (2000).

****

Customer Satisfaction With Networking Processing Of BSNL & Reliance Communication In Gwalior Division (M.P)

Dr. Sanjay Chaudhary * **Namrata Jain** * *

Abstract - In the today's competitive world communication plays a very important role. Communication has become an integral part of the growth, success and efficiency of any business. This is the technology that gives a person the power to communicate anytime, anywhere. Due to advancement in technology, now communication becomes easy and faster. In this research paper, special emphasis has been laid over the comparative analysis of telecom companies Reliance and BSNL by using primary sources of data in Gwalior division of Madhya Pradesh. Form the completion of efficient research work, descriptive and exploratory research design has been used which further conclude that BSNL is having weak network performance as compared to Reliance.

Keywords – Wireline, Wireless, Broadband, DOT, MTNL, VSNL

Introduction - Telecommunications technology touches every aspect of our lives. It affects the way we do business, the way we govern ourselves, the way we keep in touch with those we love, and the way we build the collective human experiences we call culture. Altogether, the telecom sector accounts for about fifteen percent of the U.S. economy This paper explores one particularly dynamic area of change in the telecommunications industry: the ongoing broadband revolution in residential and mobile communication. The nature of the telecommunication products and services that Americans use has changed dramatically over the last twenty years as a consequence of significant, sustained, and rapid innovation.

As a result, customers face switching costs associated with informing people about changing their number, printing new business cards, missing valuable calls from people that do not have the new number, etc.

Based on these considerations, many regulatory authorities have imposed mandatory MNP–or are about to require its introduction–so as to reduce customers' switching costs, attempting to make mobile telecommunications more competitive (see, e.g., Reinke, 1998).The new telecom policy in 1999.

The theme of NTP was to usher in full competition through a restricted entry of private players in all service sectors. The policy favored the migration of existing operators from the era of fixed license fee regime to that of revenue sharing. The policy further declined the strengthen of the regulator opening up of international long distance (ILD) and National Long Distance (NLD) services to the private sector and corporation of telecom services. The year 2001 witnessed the entry of private operators in offering basic telephony and NLD services. The telecom sector began witnessing a trend of growth with these reforms basic services were opened for unlimited competition more licenses were issued to the private sector for cellular services. There has also been a considerable increase in the rate of tale density. The telecom sector has thus completely changed both in terms of coverage and efficiency of services. Provision of landlines a demand, digital telephone, exchanges and the acceptability of optic fiber and wireless technology are a few instances of the change that took instances of the change that took place in the industry. Cellular telephone services have achieved great commercial success; because users recognize the mobile telephone access can improve productivity and enhance safety.

A new subscriber is opting for cellular services for personal security, safety and convenience. Increase in demand and the poor quality of existing telecommunications landline services. Mobile service providers will be benefited from the research, the ways to improve their quality of service and to support more users in their system. The present study has been made to identity the customer's attitude towards cell phones , telephones, broadband services of BSNL and Reliance in Indore Division. Many private operators have entered in to the cellular segment to provide services. It has brought heavy competition in to the market. They have to find out the customers attitudes towards this service which could be useful to formulate new strategies policy and market their services in a better way.

Research Methodology – This paper presents customer satisfaction in Gwalior division with some QoS parameter. This paper is based on a survey which is done in Gwalior division on BSNL and Reliance service providers, here we prepare questionnaire for wireline, wireless and broadband customer separately which include questions regarding network performance, reliability and availability. On the basis of data that are filled by customers we analyzed performance of BSNL and Reliance on customer satisfaction with network performance.

Primary data was collected through observation, questionnaires and interviews. Along with filling up of

* **Assistant Professor, S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

questionnaire interviews in local language with customer was done. The data is selected as a major primary data collection method, since the aim of the study is the customers perceived service quality and how it is related to customer satisfaction our main focus is thus the customer.

Definition of key terms -

Wireline service – These are the telephone services that are provided by various service providers for home / office installations. These telephone connections are connected by a copper wire.

Wireless service – This service encompasses the services based on both GSM and CDMA network technologies. These are typically known as mobile services.

Broadband service – Broadband' is defined in the Broadband Policy 2004 as "An always on data connection that is able to support interactive services including Internet access and has the capability of the minimum download speed of 256 kilo bits per second (kbps) to an individual subscriber from the Point of Presence (POP) of the service provider intending to provide Broadband service where multiple such individual Broadband connections are aggregated and the subscriber is able to access these interactive services including the Internet through this POP. The interactive services will exclude any services for which a separate license is specifically required, for example, real-time voice transmission, except to the extent that it is presently permitted under ISP license with Internet Telephony".

Data Analysis - The study was conducted in two modules. The first module (subjective survey) was undertaken to gauge the subscriber feedback on Network Performance by way of a large sample based field survey. The second module (objective assessment) involved auditing of the QoS monitoring records of telecom operators. To gauge the level of satisfaction of subscribers with the Network Performance provided by the service providers, interviews across a large sample of subscribers for Basic (Wireline), Cellular Mobile (Wireless) and broadband services were conducted. The sample survey was conducted to ensure spread across operators on the basis of their subscriber size and the type of circle in which we are conducting the interviews. The satisfaction level of subscribers was collected on a four-point scale of "Very satisfied", "satisfied", "dissatisfied" and "very dissatisfied".

Table -1 : **(See in bottom of the page)**

Table -2 : **(See the next page)**

Table -3 : **(See the next page)**

Conclusion - By the analysis it was found that in selected year the mean weightage of wireless services, broadband services and wireline services of Reliance are better than BSNL except in 2011. It infers that customers are not satisfy with the services that are providing by BSNL and BSNL must need to improve the quality of their services to survival in future against competitive environment.

Future Scope - This paper is limited to survey of the customer satisfaction in Gwalior division which includes Gwalior, Datia, Shivpuri, Guna and Ashoknagar. One can go to survey the same for different division of Madhya Pradesh. Also this paper is focused comparisons between BSNL and Reliance service providers, one can go to do same with different service providers and it can be done in rural and urban area separately.

References -

1. BSNL, Bharat Sanchar Nigam Limited, http://www.bsnl.co.in:9080/opencms/bsnl/BSNL/index.html
2. Department of Telecommunication, Ministry of Communications and Information Technology, http://www.dot.gov.in/
3. Indian Telecom Industry, industry structure, http://www.dnb.co.in/Indian telecom industry/industrystructure.asp.
4. Indian Telecom Sector, Introduction, http://www.dot.gov.in/osp/brochure/brochure.htm
5. Madhya Pradesh, http://www.mp.gov.in/
6. Mahanagar Telephone Nigam Limited, http://www.mtnl.net.in/
7. TRAI, Telecom Regulatory Authority of India, (IS/ISO 9001-2008 Certified organization)

Table-1 : Showing customer satisfaction with networking processing of BSNL & Reliance in wireless service last five year data summarize

Table-1: Wireless Service										
	2008		2009		2010		2011		2012	
	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance
Very Satisfied	7	19	9	18	8	21	5	22	7	14
Satisfied	38	58	36	62	35	58	44	54	49	71
Dissatisfied	42	17	36	14	38	14	34	17	32	12
Very Dissatisfied	13	6	19	6	19	7	17	7	12	3
Mean Weightage	2.39	2.9	2.35	2.92	2.32	2.93	2.37	2.91	2.51	2.96

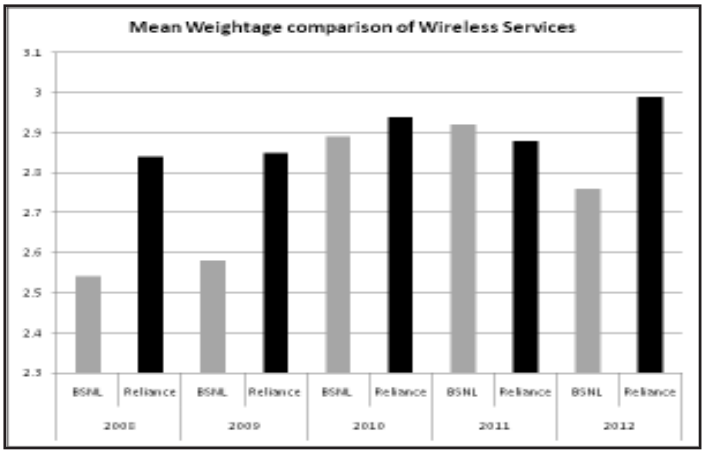

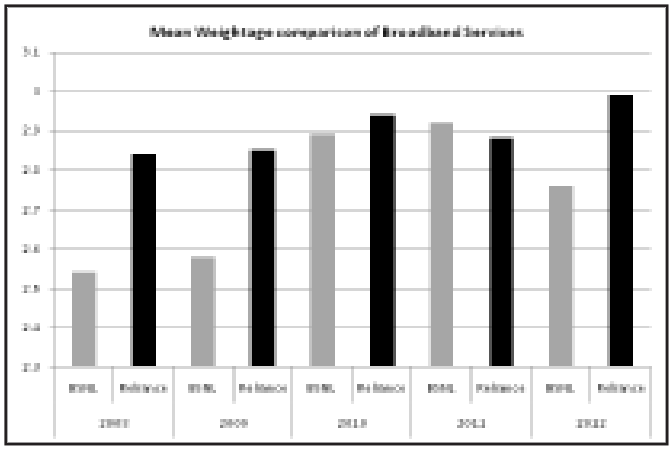

Table-2: Showing customer satisfaction with networking processing of BSNL & Reliance in broadband service last five year data summarize

Table-2: Broadband Services										
	2008		2009		2010		2011		2012	
	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance
Very Satisfied	17	21	23	22	21	19	24	23	26	19
Satisfied	67	68	69	67	76	77	73	74	72	78
Dissatisfied	9	6	6	7	2	2	2	3	1	2
Very Dissatisfied	7	5	2	4	1	2	1	0	1	1
Mean Weightage	2.94	3.05	3.13	3.07	3.17	3.13	3.2	3.2	3.23	3.15

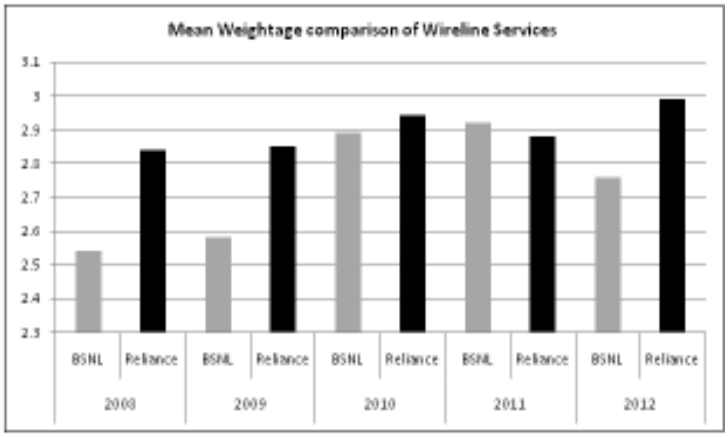

Table-3 : Showing customer satisfaction with networking processing of BSNL & Reliance in wireline service last five year data summarizes

Table 3 : Wireline Service										
	2008		2009		2010		2011		2012	
	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance	BSNL	Reliance
Very Satisfied	5	13	9	15	12	13	9	7	7	12
Satisfied	58	67	53	64	71	73	77	79	69	78
Dissatisfied	23	11	25	12	11	9	11	9	17	7
Very Dissatisfied	14	9	13	9	6	5	3	5	7	3
Mean Weightage	2.54	2.84	2.58	2.85	2.89	2.94	2.92	2.88	2.76	2.99

Cloud Computing : Network Security In E-Banking

Dr. Sanjay Chaudhary * **Kirti Saxena** * *

Abstract - Cloud computing is clearly one of today's most enticing technology areas due, at least in part, to its cost-efficiency and flexibility. However, despite the surge in activity and interest, there are significant, persistent concerns about cloud computing that are impeding momentum and will eventually compromise the vision of cloud computing as a new IT procurement model. It gives a summary of Cloud Computing and provides a good foundation for understanding.
Keywords - Cloud Computing, Information Technology, Banking.

Introduction - Cloud Computing, to put it simply, means "Internet Computing." The Internet is commonly visualized as clouds; hence the term "cloud computing" for computation done through the Internet. With Cloud Computing users can access database resources via the Internet from anywhere, for as long as they need, without worrying about any maintenance or management of actual resources. Accenture defines cloud computing as the dynamic provisioning of IT capabilities, whether hardware, software or services, from a third party over the network. Cloud computing has recently emerged as a major new trend in business technology based on its potential to significantly reduce information technology (IT) costs and vastly increase employee productivity for businesses both large and small. The development of a domestic cloud computing industry and to support research into the possible applications of clouds in several key industries including banking. The best example of cloud computing is Google Apps where any application can be accessed using a browser and it can be deployed on thousands of computer through the Internet.

What Is Cloud Computing? - The term cloud computing is broadly applied to a variety of services and IT configurations. Although a standard definition has yet to be established, in its most general form, cloud computing refers to the Cloud computing provides the facility to access shared resources and common infrastructure, offering services on demand over the network to perform operations that meet changing business needs. This architectural configuration creates a virtual computing "cloud" where users can access multiple resources at their discretion from any location they wish and at a cost based only on the resources used. Thus, a cloud is a style of computing that gives users the ability to dynamically configure computing services based on their current and future needs. Clouds can lower business expenses via reduced capital expenditures on computer hardware and software, energy usage, IT and personnel, and other related costs.

Cloud computing is TCP/IP based high development and integrations of computer technologies such as fast micro processor, huge memory, high-speed network and reliable system architecture. Without the standard inter-connect protocols and mature of assembling data center technologies, cloud computing would not become reality too. In October 2007, IBM and Google announced collaboration in cloud computing .

This discussion starts with the *National Institute of Standards and Technology* (NIST) definition: "Cloud computing is a model for enabling convenient, on-demand network access to a shared pool of configurable computing resources (for example, networks, servers, storage, applications, and services) that can be rapidly provisioned and released with minimal management effort or service provider interaction."

Banking on the Cloud - However, cloud computing is much more than simply renting servers and storage on-demand to reduce infrastructure costs—as many believe. Furthermore, it's not simply a technology issue.

In fact, the cloud offers a host of opportunities for banks to build a more flexible, nimble and customer-centric business model that can drive profitable growth and, as a result, should be something that non-IT decision makers at bank understand and appreciate. So what does the future of cloud computing look like for banks—both in the near and long term? The pundits tend to overestimate the impact of a technology and paradigm shift in the short term and underestimate what happens in the long term. In this paper, we explore some forward-thinking uses of cloud computing in the banking sector and discuss ways we believe innovative banks will be leveraging the cloud for competitive advantage in the next five years.

Cloud computing is one of the hottest technology and business topics today, and the market for cloud services is expected to skyrocket in the next few years.

Building a Frictionless and Flexible Ecosystem - Cloud computing's most compelling use case for banks likely will be in the way innovative services can be created. The cloud gives banks an opportunity to break apart their own value chain— be it credit approval or back-office fulfillment. A bank can re-configure its business in-real-time by dynamically sourcing from several service providers. For example, an e-

* **Assistant Professor, S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

invoicing company called Tradeshift allows for dynamic invoices that "pay themselves". The service constantly monitors exchange rates and then automatically sends out an order to withdraw funds or to make a purchase when the process is cheapest.

Example: Banks will be able team up with other parties (such as telcos and post offices) that can provide the "last mile" to consumers with whom the banks have no existing relationship and who can be difficult to reach. In supporting such teaming, the cloud can offer banks in the future an alternate growth strategy—i.e., a bank will be able to provide wholesale banking services outside of its core geography without having to create a presence in the new region by acquiring an established brand.

Consumer Cloud Computing - Banks also will be able to provide a more engaging and relevant customer experience that will enable customers to more easily access and use banking products and services and, thus, help attract and retain customers. For example an application that consumers might find useful on a smartphone and that could be supported by traditional financial services that are now made available by the cloud is "Split the Bill." This would enable consumers dining out together to easily divide the bill among each other. At its heart, such functionality is still the same basic transaction enabled by just a bit of clever logic that sits within the application, plus the required security. But it's afforded by banks' willingness to accept messages in a certain way with a certain level of security around them from a mobile device, and enables consumers to conduct their transaction completely differently (and in a way that is convenient to them). One of the cloud-based avenues in which banks can engage their customers is social media, which is growing in prominence and popularity by the month.

The Rise (again) of Analytics - Analytics has always been a differentiator for companies looking for ways to personalize interactions with customers as well as their products or services. Yet many companies still lack mature analytical capabilities, whether it's because they lack appropriate tools or have difficulty sharing, integrating and storing vast amounts of data for analysis.

Cloud computing has the potential to render such shortcomings obsolete. In fact, analytics is really tailor made for the cloud for several reasons:

- The cloud enables banks to store an enormous amount of data and put dormant data to work.
- It provides a cost-effective platform for developing analytics models, reports and driving business intelligence.
- It can enable a bank to work with historical as well real-time or transaction information from a variety of sources.
- It enables banks to churn through vast amounts of data and decipher patterns and anomalies—not only in the past, but also project into the future— much more quickly, efficiently and cost effectively Indeed, cloud computing as a virtually unlimited repository of data is a current reality.

Banking in the Clouds - There are three generally agreed upon deployment models:

- **Private Cloud –** Private cloud (also referred to as 'corporate' or 'internal' cloud) is a term used to denote a proprietary computing architecture providing hosted services on private networks. This cloud model and supporting IT infrastructure is owned by the customer and operated on the customer's business site for access by multiple-users, either employees or business units.

For most banks, the first major foray into cloud computing will be via private clouds. Indeed, in a survey of IT executives at tier-one banks. While this deployment approach provides direct control to the customer over data security and applications, this type of cloud can be cost prohibitive because of the required initial investment in computer hardware, software, and IT resources. Nevertheless, firms may still achieve cost savings by utilizing the cloud for real time collaboration and by provisioning shared resources between divisions, units, and employees.

- **Public Cloud -** Public cloud (also referred to as 'external' cloud) describes the conventional meaning of cloud computing: scalable, dynamically provisioned, often virtualised resources available over the Internet from an off-site third-party provider, which divides up resources and bills its customers on a 'utility' basis. The servers and systems used to provide cloud services are housed on the cloud provider's owned or leased premises.

Depending on the IT infrastructure used by the vendor, these servers and systems may be spread among multiple locations. Since customers rely on the cloud vendor to provide services and IT support, this outsourcing can significantly reduce a firm's operating costs and capital expenditures. However, this type of cloud system raises potential data ownership and data security issues.

- **Hybrid cloud –** This cloud model utilizes a mix of the internal and external cloud infrastructures. A hybrid system might split a project's workload over an organization's internal servers and the external servers of a cloud provider to increase computational speed and worker efficiency.

Regulatory Responses - Banking regulators are becoming increasingly aware of the benefits and dangers of cloud technology. The predominant approach has sought to address the potential risks without stifling the use of this new industry. Establishing industry standards has been a starting point for these efforts. The goal of these conferences is to establish best practices for the industry and suggest possible methods for implementing safe and practical cloud standards. Banks are also taking part in the cloud standardization process through the creation of bank-run compliance and standardization workgroups. These workgroups seek to establish cloud standards for the entire banking industry and include participation from a large number of banks and regulators from around the world. While the adoption of new technology is challenging, banks and regulators are working with the cloud industry so that the benefits of clouds can be an option for financial firms.

Applications When You Need Them - There is a compelling simplicity to a platformas-a-service and the velocity to drive innovation. We believe that in the future, a considerable portion of a bank's applications will be candidates for migration to one or more of the cloud models.

However, core banking in a legacy sense will likely have a long shelf life due to legal, risk or regulatory compliance considerations. There will emerge a new crop of corporate and customer-facing applications that will take advantage of parallelism, new programming languages and the efficiency of the cloud's bandwidth growth potential.

Social networks are themselves a platform for application development and are a key venue for a bank to reach its customer base in different ways. The applications built for these social platforms can be used to enhance a bank's brand, advertise banking products and services and inform and engage customers.

In short, banks will need cloud skills to help them choose among platform providers and determine the "glue" across these loosely coupled systems. At the very least, applications in the cloud will be a boon to productivity through the use of cloud data storage and Web frameworks

Having confidence in Cloud Computing - For good reason, security and data privacy remain prime concerns for cloud implementers in the banking sector, according to several studies.

The fear of having their data "in the cloud" is the single greatest hurdle that banking leaders must overcome to build trust and gain the benefits from cloud computing. Indeed, especially given that the cloud is a true "multitenanted" environment, CIOs are concerned that their data could be stolen or compromised by hackers, mixed with data from their cloud providers' other customers, or released by mistake.

Many banks today have very specific challenges in areas of security and data privacy. Their existing IT estates consist of highly fragmented landscapes of security and data privacy approaches and policies taken across different functions or business lines.

This in turn carries a lot of risk and cost. Using the move to cloud computing to drive more consistency and automation in security and data privacy may actually provide a catalyst for driving greater security and reduced costs.

Banks need to adopt a very practical approach to security and data privacy in the cloud. Most banks tag data with different levels of sensitivity, from low level (published widely with no restrictions) to ultra secure (only accessible by top decision makers). In the same way, banks will need to design their cloud to have similar and appropriate security built in, through a managed combination of both private and public clouds. So, for example, low level data and access may well be suitable to go onto a public cloud infrastructure service with simple password access, whereas highly sensitive data may require dedicated servers housed in ultra secure data centers with strong authentication required for access. There will be several different levels of security in between.

There are two recent trends that will be remembered for their impact on organizations and their IT departments – the first is 'credit crunch', the second is 'cloud computing'. This White Paper is primarily focused upon the latter, cloud computing - and how to overcome the security issues raised by users accessing applications and data from beyond the traditional network perimeter – but it is worth noting that the adoption of this IT trend is and will continue to be significantly influenced by the former.

Conclusion - After so many years, Cloud Computing today is the beginning of "network based computing" over Internet in force. even an academic report from UC Berkeley says "Cloud Computing is likely to have the same impact on software that foundries have had on the hardware industry." They go on to recommend that "developers would be wise to design their next generation of systems to be deployed into Cloud Computing".

As the capabilities of cloud technology continue to evolve, so do the potential applications for institutions. Given the strong adoption of cloud systems by a country (or countries) of operation. These security requirements may include specifications on data transmission, authentication, integrity, availability, location (including security of location), recoverability, consumer privacy and confidentiality. While some cloud service providers may simply be unfamiliar with the laws and regulations unique to the financial services industry, others may be unwilling to contractually guarantee the service levels that financial institutions and their customers expect.

Another key issue for banks and financial firms is the possibility that their data may be stored in cloud vendor. In this case, both governments and financial firms must determine whether the laws of the country in which the firm operates or the laws of the country in which the data is stored, govern data ownership rights, consumer privacy practices, confidentiality requirements, and other legal consequences This issue was first raised by the large auditing firms.

References -

1. http://www.sciencedaily.com/releases/http : // www . gartner.com/ http://www.google.com/support/forum/ http://web2.sys-con.com/
2. http://aws.amazon.com/ec2/ http://www.sun.com/ cloud/ http://microsoft.com/ http://www.wikipedia.org/
3. IBM, "Google and IBM Announced University Initiative to Address Internet-Scale Computing Challenges," http:/ /www-03.ibm.com/press/us /en/ pressrelease/ 22414.wss.
4. L.M. Vaquero, L.R. Merino, J. Caceres, and M. Lindner, "A break in the clouds: towards a cloud definition," ACM SIGCOMM Computer Communication Review, v.39 n.1, 2009.
5. searchcloudcomputing.com, "What is cloud computing? http://searchcloudcomputing.techtarget.com/ sDefinition/0,,sid201_gci 1287881,00.html.
6. Wikipedia, "Cloud computing," http://en.wikipedia.org/ wiki/ Cloud_computing.

****

Natural Resources Conservation

Dr. Pratima Khare *

Abstract - Human life dependent on bioresources, every basic need like food, fooder, guel, cloths and medicines are provide by the nature for humens. Water, air-soil, river natural gas and plants are very useful bioresources and play a very important role in man's life. For a clean and pure environment conserving natural resources is very essential today. Today most of the people are used many ways. For natural resource conservation and management, such as Mydroponvor and solar power these energy source are the best ways to save fossil fuels and trees, on the basis of recycling these products we can reduce the many trees cut dowen in every year. Fossil fuels are most important natural resources, our vehicle two whellor, four whellor rail engine and aeroplanes are run by petro products. Now we need to management for fossil fules. Some of cars will run out by electricity combined with using small amounts of gas. It is a great way for concoving and management of natural resources when it is concern with fossil fuels.

Key words - Biresources, Management, Natural, Conservation.

Introduction - Human life depend up on environment natural resources, every basic need like food, fodder, cloths, fuel, timber and medicines are provide by the nature for humans. Water, air, soil, natural gas and plants are very important natural resources. Plants contain a large number of substances that are used for medicinal purposes and most of the medicinal drugs are extracted from plants and their products since the time immemorial human population is dependent on plant resources for a number of benefits (Choubey, 2006).

Natural resources are features of environment that are important-and value of the human in one form or the other. However, the advancement of modern civilization has a great import on our plant's natural resources, so conserving natural resources is very essential today. There are many ways to conserve natural resources, Natural resources are main source of energy such as solar energy water energy and wind every.

Classification of natural resources -

1. Classification based on aim/purpose -

(i) Food Material (ii) Vegetation (iii) Cattles
(iv) Minerals (v) Energy

2. Classification on the basis of origen -

(i) Biotic resources (ii) Abiiotic resources

Biotic resources - In biotic resources these natural resources have a field life cycle. Such as forest wild life, animals, birds and micro organism, other this type bioi resources are fossils, coal and mineral oils.

Abiotic resources -

(i) Water (ii) Land (iii) Minerals

3. Classification on the basis of natural qualities - There are two types natural resources found on the basis of natural quality -

(i) Inexhaustible Resources - This type resources found a lot of quantity and never loss in nature such as air, water, light and solar energy.

(ii) Exhaustible Resources - This type natural resources found in nature but loss a some time use ex. Soil, Animals, Birds, Forest, Wild life oil and Fuels. Exhaustible resources can be divide two parts:

Renewable - This type natural resources can be change wild life water resources, ground water, plants.

Non-renewable - This type natural resources use can not rechange, coal, petroleum, natural gases and metals.

Some important renewable natural resources -

(i) Forest Resources (ii) Water Resources (iii) Mineral Resources (iv) Food Resources (v) Energy Resources (vi) Land Resources.

Water resources - Natural resources are very useful for human and animals water and inorganic substances are essential for growth of plants. Water is life, every living organism depend on water, 60-80 percent water found in living cell. 70-75 percent water found in earth out of these 0.3 percent water use as a drinking water. In world 97 percent water is alkaline this water found in seas. 2 percent water found in polar region in solid stage and 0.6 percent water found in surface water. Uses of water agricultural, industrial, house and environmental activities.

Source of water resources -

1. Sea 2. River 3. Pond
4. Lake 5. Streams

Soil resources - Soil is one of the most important resources it is a medium of plant growth and a product interaction of the biosphere, hydrosphere and atmosphere. Productive soil is the very useful natural resources for the country. Soil is a complex of living and non-living components and provide a medium to develop of plants. Fertility of the soil is reduced by growing the crops. Fertility of soil is also reduce by transportation of the soil by natural agents such as water and air. Man have a major agents which causes transportation by using modern methods of cultivation in agriculture field. Transportation of upper fertile layer of soil is called soil erosion.

* **Asst. Professor, Govt. Girls Autonomous P. G. College of Excellence, Sagar (M.P.) INDIA**

Air resources - Air is very important natural resources on earth oxygen is useful for respiration of living animals and humans and carbon dioxide (CO_2) is a basic needs for plant respioution. In primitive nature there have a healthy air sound, but now by human activity in present nature air pollution is a problem. In earth 1.5 k.m. region air is present, and air composition is -

21% Oxygen
0.3% CO_2
78% Nitrogen and
0.7% Hydrogen

Forest resources - Forest are a great important to main kind and nature. In India, about 23% of earth surface is covered by different types forests such as tropical dry deciduous evergreen forest, temperate forest, tropical own forest and coniferous forest.

In forest there have a group of found different types of plants ex, herb, shrub trees and climbers. In our country forest cover area shows in graps. In the case of Sagar district (Central India) one third area of district is covered by forest of tropical dry deciduous type (Champion and Seth, 1968).

Forest products - 1. Timber, 2. Gum, 3. Regin, 4. Dyes, 5. Food, 6. Fodder, 7. Fuel, 8. Minerals, 9. Medicinal plants, 10 Industrial raw material, 11. Wild life.

Energy resources - Energy playa dynamic role is nature there have different types sources found in earth such as solar energy, bio fuels, diesel, petro products number energy and hydro energy. In past time men have need every four basic activities, end of 18th country toot a industrial revolution by man. In this time man have develop many sources of energy for provide energic demand -

There have two type source of every

1. Conventional sources - Ex. Timber, Petro products fossil fuels, thermal power, mauler energy hydro energy, coal.

2. Non-conventional sources- Wind energy solar energy and biogas. tidal energy.

Renewable Energy Resources -

1. Wind energy, solar energy, hydro energy, fire to wood
2. Non renewable energy sources -

Coal energy, Natural gas, Petroleum products

How to conserve natural resources - methods of conservation natural resources.

Method of Conservation for Natural Resources -

How to conserve natural resources - methods of conservation natural resources.

Conservation of natural resources has become a major focus of a number of national and international organization some of the world richest areas in terms of biodiversity which must balance protection of their natural resources for basic need of their population, developing countries stats a program for protect wildlife and ecosystems for benefit both human and non human inhabitants.

Conservation is sustainable use of natural resources such as water, soil, air, plants, animals and minerals. To conserve natural resources can do these things.

1. Don't west water.
2. Stop use of agro-chemicals and reduce pollution.
3. Stop cutting of trees.
4. Maintain the production of clean food.
5. Stop grazing forest area.
6. Development of water energy sources.
7. Stop deforestation.
8. Use bio-fertilizers in agriculture field.
9. Natural gas use in kitchen.
10. Solar energy is a solution of development energy resources.
11. Choose recycled products.
12. Hydro and solar power can be generated and these sources are best ways for natural resource conservation like fossil fuels.

Result and Discussion - The advancement of modern civilization has had a great impact on our planet's natural resources. So conserving natural resources is very essential today. Those are many ways that we can conserve natural resources. Most of the people use natural gas to heat their water and their home. We can monitor how much you are using this resource to minimize its usage.

For conservation of natural resources like natural gas, we can get tank less water heater as it reduces the usage of natural gas. The other way to save natural gas is the use of another energy source for instance hydro, solar or wind power are all healthy and great alternatives to conserving natural resources. These energy sources are clean and healthy for environment.

Today, most of the people are finding many ways for conserving natural resources. One of the great option before is hydro-power and solar power. Power can be generated from these sources and these are best ways for natural resource like trees. It can be conserve through recycling process. Many products come from the trees like papers, cups, cardboards and envelopes. By recycling these products you can reduce the number of trees cut down a year, we can save fossil fuels by the use of electricity combined with using small amounts of gas, some hybrid cars just run on electricity.

References -

1. Choubey, 2006, Study of Some Poisonous Plants of Sagar and its Environ with Special Reference to Phytochemical Analysis, Ph.D. Thesis, Dr. H.S. Gour University, Sagar.
2. Champion, H.G. and S.K. Seth, 1968, A revised survey of the forest types of India, Indian Council of Agriculture Research, Delhi, 40.
3. Sharma, P. D., 2010, Ecology and Environment, Rastogi Publication, Meerut.
4. Unified Book of Environmental study, Madhya Pradesh Hindi Granth Academy, Bhopal.

****

An Analysis and Comparison of the Security Features of Firewalls and IDSs

Dr. Sanjay Chaudhary * **Kirti Saxena** * *

Abstract - Today both the firewalls and IDSs are widely used for the network security and they provide similar security features. It is very difficult to distinguish between their security features, we will perform the comparison of the security features provided by the Firewall and Intrusion Detection System after analyzing some common products. Both the Firewall and Intrusion Detection System are the perfect separators that provide the perimeter defense but they have different aims and different protection potentials. **Keywords -** Firewall, Intrusion Detection System

Introduction - A Computer Network is a collection of computers and other devices that facilitates Communication and allows sharing of resources and information. We can extend computer network to the Internet via the Intranet. Networking increases the exposure, which makes network and devices more accessible to the attackers. There are lots of reasons for people to attack information systems of an organization. The classic attack is the break-in that can be used for, to access or manipulate the information or to use the resources of the system. Another common type of attack is the DoS (Denial of service) attack, which can be used for extortion or to discredit. The main objective for these attacks is money directly or indirectly. Network security is traditionally all about reducing exposures and increasing risk to the attacker. Network security goes hand-in-hand with the system security, even if your network security is strong, one must need to make sure that accounting, auditing, monitoring and access control also working on the system too.

Designing for the secure network has some prerequisites, first we need risk and security awareness and second we need an accepted security policy. The security policy describes the goals of the design. Designing a secure network requires network segmentation, perimeter defense and network containment. With the network segmentation we can build multi-layered security architecture by dividing the network into different parts. These different parts of the network can be separated by the barriers between them, by dividing the network we limit the domain that an individual system can access.

The perimeter defense is the barriers between the network segments. These barriers protect the network from the external attacks. The perimeter defense consists of the Firewalls and the Intrusion Detection systems (IDS/IPS). For the secure design we need to segment the network and make separation between the network segments. This separation can be achieved by the following techniques and tools: Air gaps, Firewalls and Intrusion Detection Systems. The ideal separator is the air gap. In reality, air gaps often do not work because we need to transfer data between air gapped networks. If we can transfer the data between air gapped networks then it is possible for one to attack the network. The air gaps can be missing from reality even if they exist in the secure network design.

For achieving strong network security we need many tools and techniques to work together. We will mainly focus on the devices that provide perimeter defense between the network segments.

Today both the firewalls and IDSs are widely used for the network security and they provide similar security features. It is very difficult to distinguish between their security features, we will perform the comparison of the security features provided by the Firewall and Intrusion Detection System after analyzing some common products. Both the Firewall and Intrusion Detection System are the perfect separators that provide the perimeter defense but they have different aims and different protection potentials.

Research Questions - Today both Firewall and IDS technologies have many overlapping functionalities but still there are some significant differences. In this report we will clarify the following research questions:

- What kinds of countermeasures or operations are expected from Firewall and IDS?
- We will analyze the available products and their properties, and we will determine do they provide expected functionality or not?
- Regarding network security if we use both Firewalls and IDS together, do they provide complete protection or not?
- If they do not provide complete protection what should be added or is there any other solution for the complete network security?

Objectives - There are different claims that the firewalls and the Intrusion Detection Systems provide complete network security. By doing analysis of available technology we will determine whether they provide complete network

* **Assistant Professor, S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
* * **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

security or not. We will also compare the security features provided by both firewall and IDS. We expect that this paper will be beneficial for the network administrators, security personnel and students.

Methodology - The selection of Methodology is necessary during the research because it keeps the research on track as well as structured, measured and organized. According to Cambridge dictionary methodology means "a system of ways of doing, teaching or studying something". The three most used approaches qualitative, quantitative and mixed. This research is connected to qualitative approach in the form of detailed and widespread literature study. The literature study includes existing articles, books and web resources.

Brief Description of Firewalls - The Internet has made large amounts of information available to the average computer user at home, in business and in education. For many people, having access to this information is no longer just an advantage, it is essential. Yet connecting a private network to the Internet can expose critical or confidential data to malicious attack from anywhere in the world. Users who connect their computers to the Internet must be aware of these dangers, their implications and how to protect their data and their critical systems. Firewalls can protect both individual computers and corporate networks from hostile intrusion from the Internet, but must be understood to be used correctly.

Firewall is a system designed to prevent unauthorized access to or from a private network. Firewalls can be installed in both hardware and software, or a combination of both. Firewalls are frequently used to prevent unauthorized Internet users from accessing private networks connected to the Internet, especially internet. All messages entering or leaving the internet pass through the firewall, which examines each message and blocks those that do not meet the specified security criteria.

Usually, the firewall will only allow port 80 for internet connection and blocks other ports. To a certain extent, it is known that web applications are insecure. As port 80 is the only port available for Internet connection, the hackers will intrude the application layer by using Buffer overflow, structured Query Language (SQL) injection, cross site Scripting (XSS), Command Injection and Session Manipulation, Generally, Companies always have secured networks with insecure application where this will possibly jeopardize all the companies system.

The usage of ModSecurity, one of the Web application Firewall can prevent such attacks from damaging the whole system. The main advantage of the tool is that it can be downloaded from internet under GNU License where this Web Application Firewall is considered to be secured. It is the best tool both Intrusion Detection and Intrusion prevention.

Definition - Firewall is a device or set of devices designed to permit or deny network transmissions based upon a set of rules and is frequently used to protect networks from unauthorized access while permitting legitimate communications to pass.

A firewall is a set of related programs, located at a network gateway server, that protects the resources of a private network from users from other networks. (The term also implies the security policy that is used with the programs.) An enterprise with an intranet that allows its workers access to the wider Internet installs a firewall to prevent outsiders from accessing its own private data resources and for controlling what outside resources its own users have access to.

Many personal computer operating systems include software-based firewalls to protect against threats from the public Internet. Many routers that pass data between networks contain firewall components and, conversely, many firewalls can perform basic routing functions.

Basically, a firewall, working closely with a router program, examines each network packet to determine whether to forward it toward its destination. A firewall also includes or works with a proxy server that makes network requests on behalf of workstation users. A firewall is often installed in a specially designated computer separate from the rest of the network so that no incoming request can get directly at private network resources.

There are a number of firewall screening methods. A simple one is to screen requests to make sure they come from acceptable (previously identified) domain name and Internet Protocol addresses. For mobile users, firewalls allow remote access in to the private network by the use of secure logon procedures and authentication certificates.

A number of companies make firewall products. Features include logging and reporting, automatic alarms at given thresholds of attack, and a graphical user interface for controlling the firewall.

Computer security borrows this term from firefighting, where it originated. In firefighting, a firewall is a barrier established to prevent the spread of fire.

"A firewall gives you a single chokepoint through which all incoming and outgoing Internet traffic must pass, allowing you to control traffic, "Vince Emery explained in How to Grow Your Business on the Internet."A good firewall prevents Bad Guys from breaking in and helps keep confidential data from being sent out." The firewall basically acts as a guard, identifying each packet of information before it is allowed to pass through. It is one of the most effective forms of protection yet developed against hackers operating on the Internet.

Ideally, according to Emery, a firewall will detect intruders, block them from entering the company's computer network, notify the system administrator, record information about the source of the attempted break-in, and produce reports to help authorities track down the culprits. Since firewalls can be set to monitor both incoming and outgoing Internet traffic, they can also be used to prevent employees from accessing games, newsgroups, or adult sites on the World Wide Web.

Despite the potential advantages of firewalls, however, many small businesses remain unprotected. "Small businesses are particularly vulnerable to hacking because they rarely bother to invest in firewall protection," Phaedra

Hise wrote in Growing Your Business Online. "Hackers know this." Some small business owners feel that installing a firewall would be too expensive or demand too much technical expertise. Others believe that no hacker would be interested in the information contained on their computers. But many hackers seek to disrupt companies' operations for the challenge of it, rather than for monetary gain. Even if a small business does not lose information of value during an attack, it loses time and money repairing the computer system as well as potential customers who are temporarily unable to access the system.

Brief Description of IDS - An Intrusion Detection System (IDS) is a combination of tools or methods that collects and audits the information from any number of sources, after collection it analyzes the information and determines whether there is a problem or not. It identifies and reports unauthorized or malicious network activity. The goal of Intrusion Detection System is simply to detect intrusions that have occurred or that are in the process of occurring. In other words, it will do nothing to prevent intrusions, but might be helpful in attempting to understand them or mitigate their effects. An intrusion can be defined as:

"An intrusion is an active sequence of related events that deliberately try to cause harm, such as leaving a system unusable, accessing and manipulating unauthorized information".

Intrusion Detection system is one part of overall security system, it is not a stand-alone network security measure that can provide complete security. It works at the network layer of the OSI model. After capturing the network packets an IDS analyze them to find some specific patterns, if an IDS find such a pattern an alert is logged and reported. It is the proactive protection technology that can detect malicious activities and take certain actions for the Security at the network level. It was not designed to replace traditional security methods but instead to complement them.

A good IDS is one in which each IDS's component perform its duty efficiently and provide appropriate preventive responses that meet the business and operational needs of an organization. The IDSs encompass three basic components:

- Sensors
- Analyzers or Agents
- Manager

Brief Description of Intrusion Detection System - We can configure an Intrusion Detection System (NIDS) at the following three places:

- In front of External Firewall
- Behind the External Firewall
- Behind the Internal Firewall

IDS configuration in front of External Firewall - In this configuration an Intrusion Detection System captures all the network traffic (all incoming and outgoing packets); it monitors and detects several kinds of attacks against an organization's infrastructure including external firewall. This configuration cannot detect some attacks due to high speed and encrypted network data, it also generate high number of false alarms.

IDS configuration behind the External Firewall (In DMZ) - In this configuration an Intrusion Detection System is placed in the DMZ (between external and internal firewalls). In this case IDS monitors and detects all the network traffic and the intrusions that successfully passed through the external firewall. IDS configured in DMZ helps to fine tune the security policy of the external firewall and enables it to block such attacks (detected by IDS) in future. This configuration generates fewer false alarms as compared to previous one.

IDS configuration behind the Internal Firewall - In this configuration an Intrusion Detection System is installed between internal firewall and internal network. IDS is not configured inside the internal network so, it cannot listen the internal traffic of the network. This IDS's configuration monitors the incoming and outgoing traffic to/from internal network. The volume of traffic is small in this configuration so, IDS is less powerful then the above cases. This configuration of IDS will not protect the external firewall, resources in DMZ and inside attacks in internal network.

Comparison of Firewall and IDS - The passwords, firewalls and IDSs all together provide a layered defense and complement each other. A layered defense boosts the confidence level in access controls by providing some redundancy and expended protection. Both the firewall and IDS has some overlapping security features, but they both also have several important individual security features as well. The Firewall and Intrusion Detection System alone cannot offer complete protection against the attacks, they should be used together to enhance the defense-in-depth or layered approach. Both perform different functions for the network security. The basic difference between them is, Firewall offers active protection against the attacks, where as IDS can raise an alert after detecting an attack.

Conclusion - The security implementation is the process of controlling access; passwords, firewalls and IDSs control access to network and information resources. So, "security is controlled access". This definition of security is also true for the information security concepts of Confidentiality, Integrity and Availability. The confidentiality is controlling access to read the data or information, integrity is controlling access to change the data or information and availability is ensuring access to data when needed.

The passwords, firewalls and IDSs all together provide a layered defense and complement each other. A layered defense boosts the confidence level in access controls by providing some redundancy and expended protection. Firewall and Intrusion Detection Technology alone cannot offer complete protection against the attacks, they should be used together to enhance the defense-in-depth or layered approach. Both the Firewall and Intrusion Detection performs different functions for the network security. The basic difference between them is, Firewall offers active protection against the attacks, where as IDS can raise an alert after detecting an attack. Neither Firewall nor IDS provides complete

protection and cannot replace each other and any other security product.

For the protection of the assets (offices, houses, etc.) we set barriers (gates) at the entrance and also install security alarm system. The installed barriers are like firewalls and security alarm systems are like intrusion detection systems in the network security. Most people think that their installed firewall product (first line of defense) can solely protect their entire network, which is not true due to inability and some draw backs of firewall, such as:

- Not all access to the Internet occurs through the firewall.
- Not all threats originates from outside.
- Firewalls are vulnerable and subject to attack themselves.
- Firewall does not offer any protection if the network is compromised.
- Firewalls cannot prevent all kinds of attacks.

Because of above inabilities and draw backs an IDS is required that complements firewall for complete protection or network security.

We have analyzed several products, such as the Cisco, Juniper, Check Point and Snort (open source) products. These all products meet the basic security requirements and also provide extra functionalities as well. They compete each other on the basis of accuracy, detection methods, Operating system, user friendly interface, operational modes, modularity, ease of deployment, maximum throughput, number of concurrent sessions, cost and their security features. The Snort (open source IDS solution) product can handle limited amount of network traffic unlike the Cisco, Juniper and Check Point because it is software based solution. All products except Snort are implemented on ASICs (hardware) and have proprietary operating system, and meet the requirements of large size networks by providing high performance. Today all the IDS vendors have integrated an IDS with IPS known as IDPS (Intrusion Detection and Prevention System) that can provide active response after detecting an intrusion or attack.

All the analyzed products provide similar functionalities but the selection of one best product among all depends on the size of the network, desired security needs and the allocated budget of an organization.

Referencs -

1. Earl Carter, Jonathan Hogue, 2006. Intrusion Prevention Fundamentals. ISBN-10: 1-58705-239-3.
2. C. Tate Baumrucker, James D. Burton, Scott Dentler, Ido Dubrawsky, 2003. Cisco Security Professional's Guide to Secure Intrusion Detection Systems (IDS).
3. Bruce R. Mathews, CISSP. Physical Security: Controlled Access and Layered Defense.
4. Pawel Skrobanek, Edited 2011. Intrusion Detection Systems. ISBN 978-953-307-167-1

Websites -

1. A definition of Firewall Security from search Security.com.
2. A definition of Firewalls from the Free BSD Handbook

****

Environmental Pollution and Effects

Dr. Sanjay Prasad * Prof. Deepali Amb **

Abstract - Environmental Pollution remains a serious issue in the developing world, affecting the lives of billions of people, reducing their life expectancy, and damaging children's growth and development. The World Health Organization (WHO) estimates that 25% of all deaths in the developing world can be directly attributed to environmental factors. The problem of pollution and its corresponding adverse ecological impacts have been aggravated due to increasing industrial and other developmental activities. India, among other developing nations of the world, is facing the challenge of industrial pollution at an alarming rate. This has made the constant surveillance of environmental characteristics a necessary task. There is an urgent need to identify critically polluted areas and identify their problematic dimensions. Accordingly, measures have to be taken to make our process of industrial development and economic growth more sustainable. The biggest hindrance in this task is the lack of tools to Identify the problematic areas and the lack of an objective criterion to rank these areas in order of their needs for mitigation measures and, hence, the resources.
Keywords - Environment Pollution, Air Pollution, Water Pollution, Soil Pollution, Land Pollution, Health effects. Air pollution

Introduction - Pollution is an un-desirable change in the physical, chemical or biological characteristics of air, water and soil that may harmfully affect the life or create a potential health hazard of any living organism. Pollution direct or indirect changes in any component of the biosphere that is harmful to the living component and in particular undesirable for Human, affecting adversely the industrial progress, cultural and natural assets or general environmental pollutant may include any chemical or Geo-chemical substance, biotic component or its product, or physical factor (heat) that is released intentionally by Human into the environment in such a concentration that may have adverse harmful or unpleasant effects.

Today India is one of the first ten industrialized countries of the world. Today we have a good industrial infrastructure in core industries like metals, chemicals, fertilizers, petroleum, food etc. what has come out of these? Pesticides, detergents, plastics, solvents, fuels, paints, dyes, food additives etc. are some examples. Due to progress in atomic energy, there has also been an increase in radioactivity in the biosphere. Besides these, there are a number of industrial effluents and emissions, particularly poisonous gases in the atmosphere. Mining activities also added to this problem, particularly as solid waste.

Pollution is a necessary evil of all development. Due to lack of development of a culture of pollution control, there had resulted a heavy backlog of gaseous, liquid and solid pollution in our country. It is to be cleaned. Thus pollution control in our country is a recent environmental concern.

The main source of air pollution is industrial plants, power stations, automobiles, locomotives, aeroplanes, jets, missiles, domestic furnaces, dead bodies burning, burning of oils, sewers, refuse burning, etc. The emissions from these sources mainly consist of aerosols, odour, and gases. These air pollutants affect man, animals, vegetation and also having economical, sociological and psychological impact. It causes irritation of the mucous linings of the eyes, nose and throat, headaches, nausea, chronic bronchitis, bronchial asthma, asthmatic bronchitis, pulmonary emphysema, cancer, death, etc.

Noise pollution - Noise is one of the most pervasive pollutants. A musical clock may be nice to listen during
The day, but may be an irritant during sleep at night. Noise by definition is "sound without
Value" or "any noise that is unwanted by the recipient". Noise in industries such as stone
Cutting and crushing, steel forgings, loudspeakers, shouting by hawkers selling their wares,
Movement of heavy transport vehicles, railways and airports leads to irritation and an increased blood pressure, loss of

* Assistant Professor (H.O.D Commerce), Govt. College, Sanwer, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor (H.O.D Zoology), S. V. Govt. P. G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

temper, decrease in work efficiency, loss of hearing, which may be first temporary but can become permanent in the noise stress continues. It is therefore of utmost importance that excessive noise is controlled. Noise level is measured in terms of decibels (dB). W.H.O. (World Health Organization) has prescribed optimum noise level at 45 dB by day and 35 dB by night. Anything above 80 dB is hazardous.

Water pollution - Water pollution is one of the most serious environmental problems. Water pollution is caused by a variety of human activities such as industrial, agricultural and domestic. Agricultural runoff laden with excess fertilizers and pesticides, industrial effluents with toxic substances and sewage water with human and animal wastes pollute our water thoroughly. Natural sources of pollution of water are soil erosion, leaching of minerals from rocks and decaying of organic matter. Rivers, lakes, seas, oceans, estuaries and ground water sources may be polluted by point or non-point sources. When pollutants are discharged from a specific location such as a drainpipe carrying industrial effluents discharged directly into water body it represents point source pollution.

Soil pollution - Addition of substances which adversely affect the quality of soil or its fertility is known as Soil pollution. Generally polluted water also pollutes soil. Solid waste is a mixture of plastics, cloth, glass, metal and organic matter, sewage, sewage sludge, building debris, generated from households, commercial and industrial establishments add to soil pollution. Fly ash, iron and steel slag, medical and industrial wastes disposed on land are important sources of soil pollution. In addition, fertilizers and pesticides from agricultural use, which reach the soil as run-off and land filling by municipal waste, are growing cause of soil pollution. Acid rain and dry deposition of pollutants on land surface also contribute to soil pollution.

Thermal pollution - Power plants- thermal and nuclear, chemical and other industries use lots of water (about 30 % of all abstracted water) for cooling purposes and the used hot water is discharged into rivers, streams or oceans. The waste heat from the boilers and heating processes increases the temperature of the cooling water. Discharge of hot water may increase the temperature of the receiving water by 10 to 15 °C above the ambient water temperature. This is **thermal pollution**. Increase in water temperature decreases dissolved oxygen in the water, which adversely affects aquatic life.

Radiation pollution - Radiation pollution is the increase over the natural background radiation. There are many sources of radiation pollution, such as nuclear wastes from nuclear power plants, mining and processing of nuclear material etc. The worse case of nuclear pollution was the Chernobyl disaster in Russia occurred in 1986 but the effects still longer today. Radiation is a form of energy travelling through space. The radiation emanating from the decay of radioactive nuclides is a major source of radiation pollution. Radiations can be categorized into two groups, namely the non-ionizing radiations and the ionizing radiations.

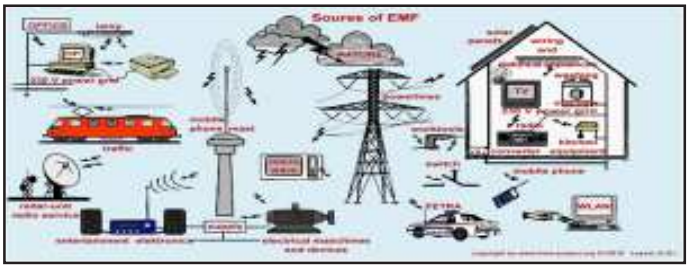

Effects of dying environment on human, animals and plants - Environment dying is a global perilous point which catastrophically the human, animals and plants. Air pollution results are Cancer, neurobehavioral disorders, cardiovascular problems, reduced energy levels, premature death, asthma exacerbations, headaches and dizziness, irritation of eyes, nose, mouth and throat, reduced lung functioning, respiratory symptoms, respiratory disease, disruption of endocrine and reproductive and immune systems.

Air pollutants can also indirectly affect human health through acid rain, by polluting drinking water and entering the food chain, and through global warming and associated climate change and sea level rise. Associations between particulate air pollution and respiratory disease. Acid rain destroys fish life in lakes and streams and kill trees, destroy the leaves of plants, can permeate soil by making it inappropriate for reasons of nutrition and habitation, unwarranted ultraviolet radiation through the ozone layer eroded by some air pollutants, may cause skin cancer in wildlife and damage to trees and plants, and Ozone in the lower atmosphere may damage lung tissues of animals and can prevent plant respiration by blocking stomata and negatively affecting plants' photosynthesis rates which will stunt plant growth; ozone can also decay plant cells directly by entering stomata.

Polluted drinking water or water polluted by chemicals produced waterborne diseases like, Typhoid, Liver and kidney damage, Alzheimer's disease, non-Hodgkin's Lymphoma, multiple Sclerosis, Hormonal problems that can disorder

development and reproductive processes, Cancer, heart disease, damage to the nervous system, different type of damages on babies in womb, Parkinson's disease, Damage to the DNA and even death, polluted beach water contaminated people like vomiting, gastroenteritis, respiratory infections, earache, pink eye and rashes. Loss of wildlife is directly related to pollution and according to Water Pollution Effects Nutrient polluted water causes overgrowth of toxic algae eaten by other aquatic animals, and may cause death; it can also cause eruptions of fish diseases.

Soil pollution effects cause, according to tutor vista are cancer, including leukaemia and It is dangerous for young children as it can cause developmental damage to the brain. The soil increases the risk of neuromuscular blockade, causes headaches, kidney failure, depression of the central nervous system, eye irritation and skin rash, nausea and fatigue. Soil pollution closely associated with air and water pollution, so its numerous effects come out as similarly as caused by water and air contamination. Industries are established on political ground without consideration of pollutants.

Conclusion - In the Constitution of India it is clearly stated that it is the duty of the state to 'protect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country'. It imposes a duty on every citizen 'to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers, and wildlife'. Reference to the environment has also been made in the Directive Principles of State Policy as well as the Fundamental Rights. The Department of Environment was established in India in 1980 to ensure a healthy environment for the country. This later became the Ministry of Environment and Forests in 1985.

Action plan for environment pollution preventing, abatement and control as well as remediation of various environmental components, employing the green technology/ modern technology and appropriate engineering practices, is the subsequent.

Polluted environment is a global issue and a world community would bear worst results more as they already faced. As an effective response to pollution is largely based on human appraisal of the problem and pollution control program evolves as a nationwide fixed cost-sharing effort relying upon voluntary participation. Rigorous Plantation program outside the industrial premises and nearby area will be developed. Necessary direction is issued to industries for better implementation of environmental laws, where ever violation is observed.

References -

1. A.k. sen, environmental management and planning, new age international publishers (p) Ltd., New Delhi (1988).
2. A.S. boughey, man and environment, 2nd Ed., Macmillan publishing Co. inc., New York (1975).
3. Bhargawa, g., (2001). Development of India's urban and regional planning in 21st century. Gain publishing house, New Delhi.
4. Central Pollution Control Board [CPCB] (2008), Status of Water Supply, Wastewater Generation and Treatment in Class-I Cities and Class-II Towns of India, Control of Urban Pollution Series, CUPS/70/2009-10, New Delhi.
5. Financing: The Path to Universal Coverage. Retrieved from Government of India (1997), Report of the Task Force to Evaluate Market Based Instruments for Industrial Pollution Abatement, submitted to the Ministry of Environment and Forests.
6. Gupta, D.B., M.N. Murty, and R. Pandey (1989), 'Water Conservation and Pollution Abatement in Indian Industry: A Study of Water Tariff ', (mimeo), National Institute of Public Finance and Policy, Delhi.
7. K.C. Sahu, proceedings of symposium on role of earth sciences in environmental (1987). I.I.T. press.
8. Mishra, v., (2003). Health effects of air pollution December 1-15.
9. Nagi, g., dhillon, m. k., bansal, a. s. and Dhaliwal, g. s., (1993). Extend of noise Pollution from household equipment and appliances. Indian journal of ecology,20 (2).
10. Pandey, Rita (1998), 'Pollution Taxes for Industrial Water Pollution Control', (mimeo), National Institute of Public Finance and Policy, New Delhi.
11. Parikh, J. (2004), 'Environmentally Sustainable Development in India', available at http:// scid.stanford.edu/events/ India 2004/JParikh.pdf last accessed on 22 August 2008.
12. R. Nash, environment and Americans—a problem of priorities, Holt, Rinehart and Winston (1972).
13. S.m. Khopkar, environmental pollution, monitoring and control, new age international publishers (p) Ltd., New Delhi (2006).
14. World Bank, (2002). What Do We Know About Air Pollution?—India Case Study, Urban Air Pollution, South Asia Urban Air Quality Management Briefing Note No. 4, pp. 1-4.
15. World Health Organization (WHO), (2010). The World Health Report - Health Systems.
16. World Health Organization [WHO] (2007), Guidelines for drinking-water quality, Incorporation First Addendum, Volume 1, Recommendations, Third edition, WHO, Geneva.

****

CloudSim: Structures And Services Of Cloud Computing

Dr. Sanjay Chaudhary * **Namrata Jain** * *

Abstract - The concept of Cloud computing has significantly changed the field of parallel and distributed computing systems today. Cloud computing enables a wide range of users to access distributed, scalable, virtualized hardware and/or software infrastructure over the Internet. Load balancing is a methodology to distribute workload across multiple computers, or other resources over the network links to achieve optimal resource utilization, maximize throughput, minimum response time, and avoid overload. With recent advent of technology, resource control or load balancing in cloud computing is main challenging issue.

A few existing scheduling algorithms can maintain load balancing and provide better strategies through efficient job scheduling and resource allocation techniques as well. In order to gain maximum profits with optimized load balancing algorithms, it is necessary to utilize resources efficiently. This paper presents a review of a few load balancing algorithms or technique in cloud computing. Cloudsim is a new generalized and extensible simulation framework that enables seamless modeling, simulation, and experimentation of emerging Cloud computing infrastructures and management services.

Introduction - Cloud computing delivers infrastructure, platform, and software that are made available as subscription-based services in a pay-as-you-go model to consumers. These services are referred to as Infrastructure as a Service (IaaS), Platform as a Service (PaaS), and Software as a Service (SaaS) in industries. The importance of these services was highlighted in a recent report from the University of Berkeley as: "Cloud computing, the long-held dream of computing as a utility has the potential to transform a large part of the IT industry, making software even more attractive as a service". Clouds aim to power the next generation data centers as the enabling platform for dynamic and flexible application provisioning.

This is facilitated by exposing data center's capabilities as a network of virtual services. hardware, database, user-interface, and application logic) so that users are able to access and deploy applications from anywhere in the Internet driven by the demand and QoS (Quality of Service) requirements. Similarly, IT companies with innovative ideas for new application services are no longer required to make large capital outlays in the hardware and software infrastructures. By using clouds as the application hosting platform, IT companies are freed from the trivial task of setting up basic hardware and software infrastructures.

CloudSim offers the following novel features -

i. Support for modeling and simulation of large scale Cloud computing infrastructure, including data centers on a single physical computing node.
ii. A self-contained platform for modeling data centers, service brokers, scheduling, and allocations policies.

The unique features of CloudSim -

i. Availability of virtualization engine, which aids in creation and management of multiple, independent, and co-hosted virtualized services on a data center node.
ii. Flexibility to switch between spaces shared and time-shared allocation of processing cores to virtualized services.

Related Works - Cloud computing can be defined as "a type of parallel and distributed system consisting of a collection of inter-connected and virtualized computers that are dynamically provisioned and presented as one or more unified computing resources based on service-level agreements established through negotiation between the service provider and consumers". Some examples of emerging Cloud computing infrastructures are Microsoft Azure, Amazon EC2, Google App Engine, and Aneka. The computing power in a Cloud computing environments is supplied by a collection of data centers, which are typically installed with hundreds to thousands of servers.

CloudSim Architecture - Figure 1.**(See the last page)** shows the layered implementation of the CloudSim software framework and architectural components. At the lowest layer is the Sim Java discrete event simulation engine, that implements the core functionalities required for higher-level simulation frameworks such as queuing and processing of events, creation of system components (services, host, data center, broker, virtual machines), communication between components, and management of the simulation clock.

Service Oriented Architecture - SOA is a way of reorganizing a portfolio of previously soloed software

* **Assistant Professor, S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

applications and support infrastructure into an interconnected set of services, each accessible through standard interfaces and messaging protocols. Once all the elements of an enterprise architecture are in place, existing and future applications can access these services as necessary without the need of convoluted point-to-point solutions based on inscrutable proprietary protocols.

This architectural approach is particularly applicable when multiple applications running on varied technologies and platforms need to communicate with each other. In this way, enterprises can mix and match services to perform business transactions with minimal programming effort.

Service-oriented architecture offers a way of thinking about IT assets as service components, establishing a software architectural approach to building business applications. The service-oriented architecture approach is based on creating stand-alone, task-specific reusable software components that function and are made available as services.

A service-oriented architecture service exposes a clearly defined activity—like credit card validation—to consuming business applications that might need to perform that function (such as an order processing application). At the core of the service-oriented architecture philosophy is the modularization of business functions for greater flexibility, manageability, and reusability.

Workflows - A workflow is a depiction of a sequence of operations, declared as work of a person, work of a simple or complex mechanism, work of a group of persons, work of an organization of staff, or machines. Workflow may be seen as any abstraction of real work, segregated in work share, work split or whatever types of ordering. For control purposes, workflow may be a view on real work under a chosen aspect, thus serving as a virtual representation of actual work. The flow being described often refers to a document that is being transferred from one step to another.

End Users/Providers - The main end users/providers can be divided to the following major groups.

Ordinary People - This group of users is just using services from the cloud. They do not care much about high performance and the main problem they may face is having an internet connection all the time and also information privacy. Cloud computing can help this group providing them hardware resources and accessibility through pervasive handhelds with limited resources.

Academia - Academia is building its own clouds upon the current cyber infrastructure they have. They are building cloud systems upon on their grid resources (like Teragrid) to resolve Grids limitations. The availability of these large, virtualized pools of compute resources raises the possibility of a new compute paradigm for scientific research with many advantages. For research groups, cloud computing provides convenient access to reliable, high performance clusters and storage, without the need to purchase and maintain sophisticated hardware.

Current Works - Currently there are various cloud systems on both academic and industrial world are being built.

Challenges Ahead - One of the most important challenges ahead is that clouds will always be compared to local machine in the time of usage. It's important for the user to know what he gains of shifting to the cloud. Obviously using services on local machines, the user needs more resources but at least he knows that he has access to his data all the time and he has the data he owns on his local machine. But who is in charge of restoring his data if something happens to the cloud and the fact that the user is not aware of the physical place which his data is stored makes cloud more unreliable for him. Here is a list of issues that cloud computing is currently facing.

Information Policy - Cloud computing raises a range of important policy issues, which include issues of privacy, security, anonymity, telecommunications capacity, government surveillance, reliability, and liability, among others. At a minimum, users will likely expect that a cloud will provide.

Reliability and Liability - Users will expect the cloud to be a reliable resource, especially if a cloud provider takes over the task of running "mission-critical" applications and will expect clear delineation of liability if serious problems occur.

Security, privacy, and anonymity - Users will expect that the cloud provider will prevent unauthorized access to both data and code, and that sensitive data will remain private. Users will also expect that the cloud provider, other third parties.

Access and usage restrictions - Users will expect to be able to access and use the cloud where and when they wish without hindrance from the cloud provider or third parties, while their intellectual property rights are upheld.

Conclusion - Cloud computing is an emerging computing paradigm that is increasingly popular. Leaders in the industry, such as Microsoft, Google, and IBM, have provided their initiatives in promoting cloud computing. However, the public literature that discusses the research issues in cloud computing are still inadequate.

In a study of the research literature surrounding cloud computing, it was found that there is a distinct focus on the needs of the scientific computing community. Big IT companies are also building their own version of cloud. But still there are many question have left without an answer and indeed the most important one is security.

References -

1. An Introduction to Virtualization, http://www.kernelthread.com/publications/virtualization.
2. Ditto, Appendix A (http://www.nsf.gov/od/oci/reports/APXA.pdf).
3. From "NSF'S Cyber infrastructure Vision for 21st Century Discovery," NSF Cyber infrastructure Council, September 26th, 2005, Ver.4.0, pg 4.

4. Lead Project, https://portal.leadproject.org.
5. Lijun Mei, W.K. Chan, T.H. Tse, "A Tale of Clouds: Paradigm Comparisons and Some Thoughts on Research Issues", To appear in Proceedings of the 2008 IEEE Asia-Pacific Services Computing Conference (APSCC 2008), IEEE Computer Society Press, Los Alamitos, CA.
6. M.A. Vouk, "Virtualization of Information Technology Resources", in Electronic Commerce: A Managerial Perspective 2008, 5th Edition y Turban, Prentice-Hall Business Publishing, to appear.
7. Mike P. Papazoglou, "Service -Oriented Computing: Concepts, Characteristics and Directions", Tilburg University, INFOLAB.
8. Mike Ricciuti, "Stallman: Cloud computing is 'stupidity'", http://news.cnet.com.
9. R. Buyya, C. S. Yeo, and S. Venugopa, "Market oriented cloud computing: Vision, hype, and reality for delivering it services as computing utilities" In Proceedings of the 10th IEEE International Conference on High Performance Computing and Communications (HPCC-08, IEEE CS Press, Los Alamit os,CA, USA) 2008.
10. Wikipedia, "Cyber infrastructure",http://en.wikipedia.org/wiki/Cyber infrastructure.
11. Wikipedia, "Workflow", http://en.wikipedia.org/wiki/Workflow.

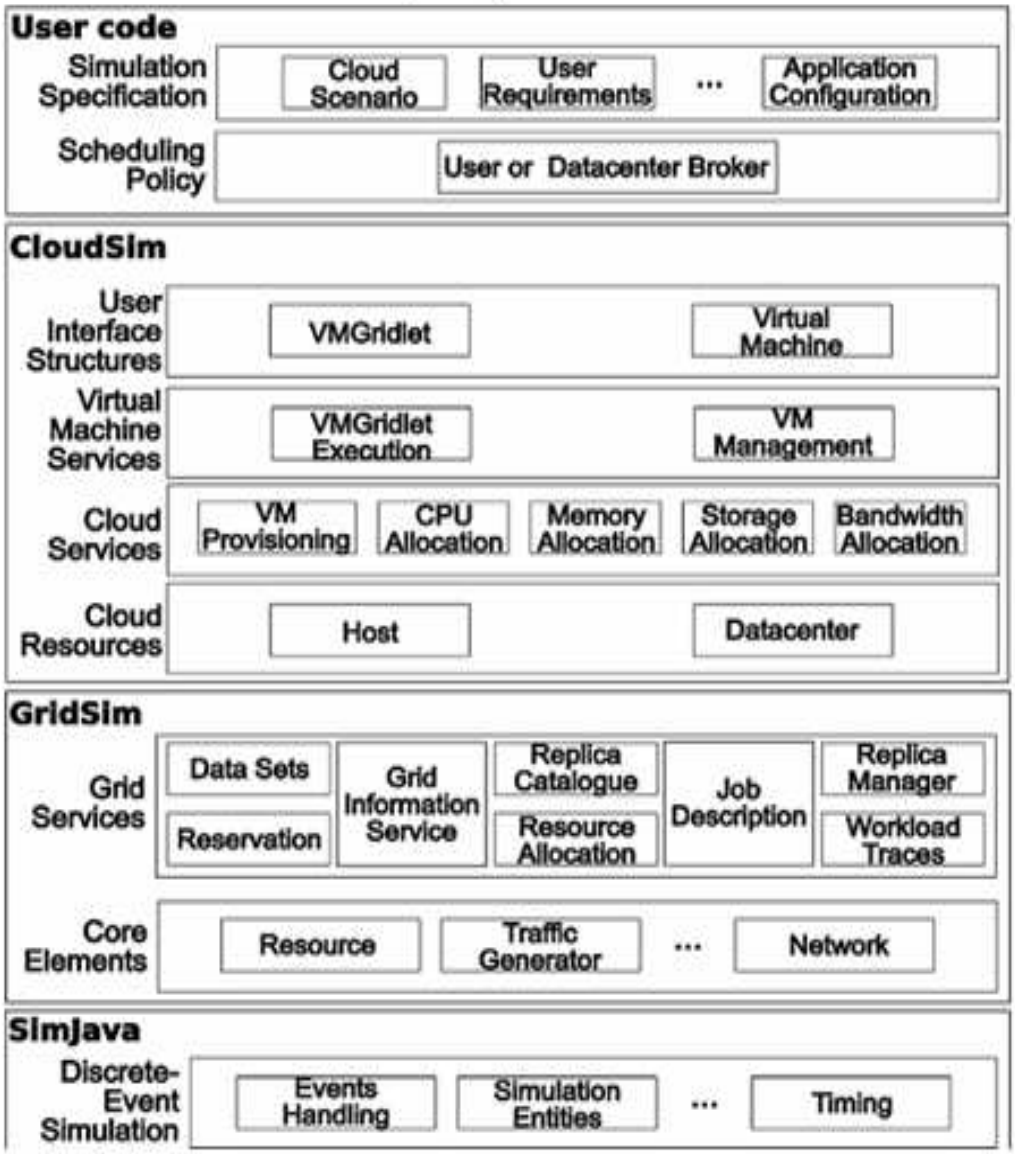

Figure : 1

****

ध्वनि प्रदूषण - प्रायोगिक अध्ययन टैगोर मार्ग, नीमच (म.प्र.) भारत के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. भूपेन्द्र कुमार अम्ब *

प्रस्तावना – इस शोध पत्र में नीमच शहर में श्री गणेश विर्सजन उत्सव पर चयनित स्थानों पर ध्वनि प्रदूषण की स्थिति को रेखांकित किया गया हैं। इस हेतु टैगोर मार्ग के 4 स्थानों को चिन्हित कर चल समारोह में होने वाली ध्वनि तीव्रता को ज्ञात कर उसका विश्लेषण प्रस्तुत किया गया हैं। प्रस्तुत अध्ययन में ध्वनि तीव्रता, ध्वनि तीव्रता मापन यन्त्र (sound level meter) से ज्ञात की गई हैं। यन्त्र को इस तरह स्थापित किया गया कि वह निर्धारित स्थान के 5 मिनिट अन्तराल में हर 2 सेकेण्ड के अन्तराल में ध्वनि नमूने का पाठयांक ज्ञात कर सके। इस अध्ययन में यह पाया कि हर चिन्हित स्थानों पर ध्वनि तीव्रता, केन्द्रीय प्रदूषण निवारण बोर्ड, भारत (CPCB2002) की निर्धारित मानक ध्वनि तीव्रता से कहीं अधिक थी। ध्वनि प्रदुषण संप्रेषण प्रक्रिया में बाधा, सुस्ती को बढ़ावा, कार्य क्षमता में कमी आदि कर मानव की स्वस्थ्यता को मूल रूप से प्रभावित करती हैं। इसे दूर करने हेतु आगे कुछ सुझाव दिये गये हैं।

विषय वस्तु-एक नजर – ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर-शराबा मानवीय प्रसन्नता को घटाती है, यह एक अनचाही एवं पसन्द न आने वाली ध्वनि हैं। ऐसा अवाधित पर्यावरणीय शोर या नुकसानदेय बाह्य ध्वनि जो कि मशीन द्वारा मानवीय गतिविधियों से उत्पन्न होती हैं, गुणवत्तापूर्ण मानवीय जीवन को क्षय करती है। ध्वनि ऊर्जा का वह प्रकार है, जहॉ विभिन्न दबावों के साथ जब ऊर्जा बहती हैं तो हमारे कान उसे पहचान लेते हैं। आज अधिकतम बड़े/छोटे नगरो में ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर-शराबा एक ज्वलंत पर्यावरणीय समस्या बन चुका हैं। यह न सिर्फ मानव के स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव डाल कर मनोवैज्ञानिक तथा भौतिक तनाव को जन्म देता हैं, बल्कि पेड़-पौधों एवं जीव जन्तुओं में भी हानि पहुँचाता हैं। जब हम गरबा उत्सव, दीपावली पार्टी शादी समारोह एवं अन्य धार्मिक त्यौहार मनाते है तथा ट्राफिक से होने वाली ध्वनि की तीव्रता न्यूनतम होती है तो हमें खुशी प्राप्त होती हैं, तथा मानव स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव नहीं पड़ता हैं। लेकिन जब उच्च तीव्रता वाले वाद्य यन्त्र, ड्रम्स डी. जे. साउण्ड, पटाखे आदि प्रयोग में लाते है तो यही ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख कारण बन जाते हैं। आजकल इन्ही उच्च तीव्रता वाले वाद्य यन्त्रों का प्रयोग जाने अनजाने में दिनोदिन बढ़ रहा है। इस सबसे ध्वनि प्रदूषण अत्यधिक बढ़ गया हैं। पटाखे जब चलते है तो वह खतरनाक विषैले रसायन छोड़ते हैं। यहॉ इस बात पर जोर दिया गया है कि कैसे ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर-शराबा को कम किया जाये, तथा चिन्हित स्थानो पर ध्वनि की उच्च तीव्रता पर क्या लगाम लगाया जावे।

गणक प्रविधि- ध्वनि एक तीव्र परिवर्तनीय दाब तरगं हैं जो कि माध्यम में चलती हैं। यदि ध्वनि तरगं हवा में चलती है तो वायुमण्डलीय दाब आवर्ती रूप में परिवर्तित होता हैं। एक सेकेण्ड में जितनी बार दाब परिवर्तन होता है वह ध्वनि की आवृति कहलाती हैं, इसे Hertz (Hz) से नापा जाता हैं तथा इसे चक्र प्रति सेकेण्ड से परिभाषित किया जाता हैं। ध्वनि की तीव्रता डेसीबल dB(A) इकाई से मापी जाती हैं। डेसीबल dB(A) स्केल लागेरिथ्मिक होती है। प्रत्येक 10 डेसीबल dB(A) ध्वनि तीव्रता को 10 गुना बढ़ा देती हैं। डेसीबल dB(A) ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर-शराबा को नापने की मानक इकाई हैं। 0 डेसीबल dB(A) स्केल में न्यूनतम सुनने लायक ध्वनि होती हैं। डेसीबल dB(A) स्केल में 20 डेसीबल लोहार की धोकनी की आवाज, 40 डेसीबल किसी कार्यालय की ध्वनि तथा 60 डेसीबल सामान्य वार्तालाप की ध्वनि होती हैं। 80 डेसीबल ध्वनि भौतिक रूप से पीड़ादायक होती हैं। कुछ बड़े शहरो की डेसीबल पैमाने पर ध्वनि तीव्रता उन्हें ध्वनि प्रदूषित शहरो के रूप में चिन्हित करती हैं। उदाहरण के रूप में दिल्ली 80 डेसीबल, कलकत्ता 87 डेसीबल, मुम्बई 85 डेसीबल, चेन्नई 89 डेसीबल इत्यादि। ध्वनि प्रदुषण नियंत्रण बोर्ड के 2000 के नियमानुसार विभिन्न शहरी इलाको की कुछ न्यूनतम ध्वनि रखे जाने की अनुमति प्रदान की है, क्योकि इससे अधिक ध्वनि तीव्रता, ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर-शराबा में तब्दील हो जाती हैं। यह तालिका - 1 में वर्णित हैं, इसमें दिन के समय से आशय प्रात: 6 बजे से रात्रि 10 बजे तथा रात्रि समय से आशय रात्रि 10 बजे से प्रात: 6 बजे से हैं।

प्रायोगिक प्रविधि एवं कार्य क्षेत्र- प्रस्तुत शोध पत्र में टैगोर मार्ग नीमच (म.प्र.) के चिन्हित 4 स्थानों की श्री गणेश विसर्जन चल समारोह के दौरान ध्वनि तीव्रता का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया हैं। इसके लिए टैगोर मार्ग नीमच (म.प्र.) के 4 स्थान चिन्हित किये गये हैं। प्रथम स्थान -फव्वारा चौक, द्वितीय पटेल प्लाजा चौराहा, तृतीय कमल चौक तथा चौथा स्थान 40 के नजदीक गणपति चौराहा अध्ययन हेतु चयन किये गये हैं। चल समारोह के दौरान तीव्र वाद्य यन्त्र, ड्रम्स डी. जे. साउण्ड, लेजम, ढोल नगाड़े, रस्सी पटाखे आदि मुख्य ध्वनि तीव्रता के स्त्रोत होते हैं। इन चारों स्थानों पर चल समारोह के दौरान ध्वनि प्रदूषण की ध्वनि तीव्रता को ध्वनि तीव्रता मापन यन्त्र (sound level meter) से ज्ञात किया गया है। चिन्हित स्थानों की ध्वनि तीव्रता चल समारोह के दौरान हर 5 मिनिट में 2 सेकेण्ड के अन्तर से ज्ञात की गई हैं। हर 5 मिनिट में न्यूनतम तथा अधिकतम तीव्रता नोट की गई

* सहायक प्राध्यापक (रसायनशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

है तथा एक स्थान के 5 पाठयांक लिये गये हैं। यहॉ पिछले 2 वर्षो के आधार पर पाठयांक लिये गये है।

तालिका – 1

Area	Day time dB	Night time dB
Industrial	75	70
Commercial	65	55
Residential	55	45
Silence Zone	50	40

परिणाम – यह पाया गया कि पर्यावरण नियंत्रण नियम 2000 तथा CPCB की मानक न्यूनतम ध्वनि तीव्रता से सभी स्थानों के परिणाम बहुत अधिक थे। डी. जे. साउण्ड, तथा रस्सी बम पटाखें जिन स्थानों पर आये वहॉ तीव्रता सबसे अधिक रही। पूरे अध्ययन में न्यूनतम ध्वनि तीव्रता लगभग् 91 डेसीबल dB(A)तथा अधिकतम ध्वनि तीव्रता लगभग् 105 डेसीबल dB(A) नापी गई, सामान्यत: यह पाया गया कि सभी चारों स्थानों की ध्वनि तीव्रता मानक न्यूनतम ध्वनि तीव्रता से कहीं बहुत अधिक हैं। तालिका–2 में प्रारंभ के 2 स्थानों के तथा तालिका–3 में आगे के 2 स्थानों के पाठयांक लिये गये हैं।

तालिका–2

श्री गणेश विसर्जन चल समारोह के दौरान ध्वनि तीव्रता

क्र. सं.	फब्बारा चौक पर ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)		औसत ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)	पटेल प्लाजा पर ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)		औसत ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)
	न्यूनतम	अधिकतम		न्यूनतम	अधिकतम	
1.	92	104	98	93	102	97
2.	94	103	98	94	104	99
3.	95	105	100	96	103	99
4.	96	104	100	94	104	99
5.	94	105	99	95	103	99

तालिका–3

श्री गणेश विसर्जन चल समारोह के दौरान ध्वनि तीव्रता

क्र. सं.	कमल चौक पर ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)		औसत ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)	40 के नजदीक गणपति चौराह पर ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)		औसत ध्वनि तीव्रता डेसीबल dB(A)
	न्यूनतम	अधिकतम		न्यूनतम	अधिकतम	
1.	92	102	97	96	103	99
2.	91	103	97	95	104	99
3.	93	104	98	95	104	99
4.	95	103	99	97	103	100
5.	94	102	98	95	103	99

चित्र क्र.–1
श्री गणेश विसर्जन चल समारोह के दौरान ध्वनि तीव्रता

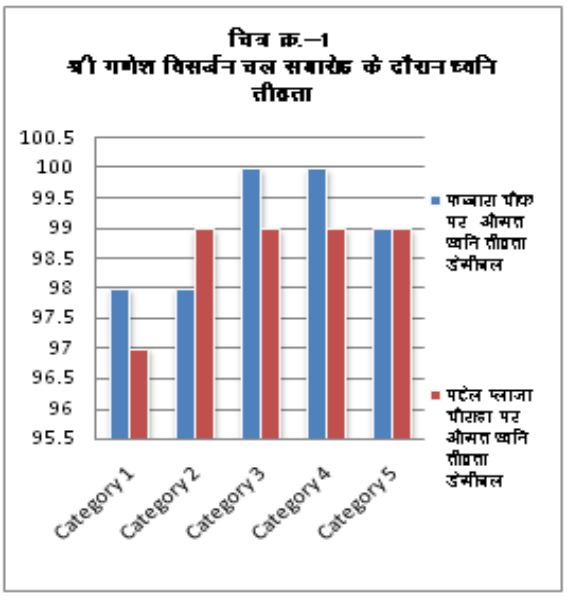

चित्र क्र.–2
श्री गणेश विसर्जन चल समारोह के दौरान ध्वनि तीव्रता

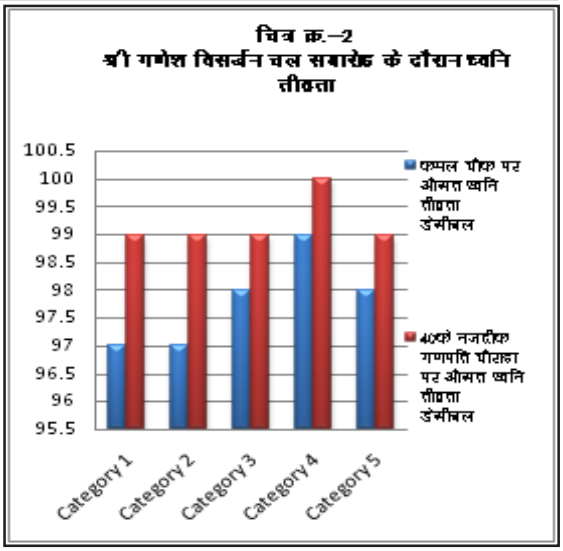

विश्लेषण – यहॉ एक स्थान पर अलग–अलग समय में 5 पाठयांक लिये गये हैं। चित्र में प्रत्येक स्थानों की औसत ध्वनि तीव्रता को लिया गया हैं। यहॉ केटेगेरी से आशय एक स्थान का वह समय जिस पर ध्वनि तीव्रता ली गई। केटेगेरी 1 से आशय समय 1, केटेगेरी 2 से आशय समय 2 आदि–आदि। चारों स्थानों के पाठयांक तथा चित्र स्पष्ट करते कि प्रत्येक स्थान पर न्यूनतम तीव्रता 80 डेसीबल से कम नहीं हैं, 80 डेसीबल ध्वनि भौतिक रूप से पीड़ादायक होती हैं 90 डेसीबल से अधिक ध्वनि तीव्रता कष्टदायक तथा 100 डेसीबल से अधिक की ध्वनि अधिक असहनीय होती हैं। चित्र 1 में प्रारभं के 2 स्थानों पर लिये गये विभिन्न समय अन्तराल में 5 पाठयाकों की औसत ध्वनि तीव्रता को दिखलाया गया है, वहीं चित्र 2 में आगे के 2 स्थानों को दर्शाया गया हैं। 92 से अधिक ध्वनि तीव्रता 8

मिनिट से अधिक समय तक लगातार कानों में पड़ती है तो निम्न वर्णित स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव हो सकता हैं।

ध्वनि प्रदूषण का स्वास्थ्य पर प्रभाव – ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर–शराबा के कारण गुस्सैल होना, उच्च रक्त चाप, उच्च तनाव, कम सुनना, नींद की कमी, भूलने की आदत तथा अनेक आकस्मिक दर्द का हो जाना तथा अवसाद की स्थिति होना आदि हानियॉ हो सकती हैं। अचानक बहुत अधिक तीव्र ध्वनि तेजी से कानों में पड़ती हैं तो कान सुन्न हो सकते हैं। एक वयस्क व्यक्ति व्यावसायिक लाक्षणिक ध्वनि तीव्रता के बीच प्रतिदिन कार्य करता हैं, तो उसकी लाक्षणिक रूप से सुनने की क्षमता में कमी उस वयस्क व्यक्ति की तुलना में आ जाती है, जो कि इस तरह की ध्वनि तीव्रता के बीच कार्य नहीं करता हैं, यद्यपि श्रवण संवेदनशीलता में यह अंतर समय के साथ–साथ कम होने लगता हैं और 79 वर्ष की आयु होते होते दोनों समूहों के पुरूषों में अंतर की पहचान करना कठिन हो जाता हैं।

उच्च तीव्रता का ध्वनि प्रदूषण अथवा शोर–शराबा हृदय की धमनियों को प्रभावित कर सकता हैं। यदि मध्यम उच्च तीव्रता का ध्वनि लगातार 8 घण्टे तक किसी व्यक्ति के कानों में पड़ती हैं तो रक्त चाप 5 से 10 बिन्दु तक बढ़ सकता हैं तथा यह बढ़ा हुआ रक्त चाप धमनियों को इस तरह प्रभावित कर देता है कि उच्च रक्त चाप बढ़ने लगता है। इससे हृदय की धमनियों में रूकावट होकर हृदयघात होने की संभावना बढ़ सकती हैं।

ऐसा भी देखा गया कि अपरिपक्व बच्चे का जन्म का कारण, गर्भाशय में भ्रूण की असामान्य वृद्धि, अजन्में बच्चे के विकास में बाधा का होना आदि अधिक तीव्रता की ध्वनि प्रदूषण के कारण भी हो सकता हैं। साथ ही व्यक्ति के भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक व्यवहार को भी यह प्रभावित करता हैं। ध्वनि प्रदूषण से होने वाले अन्य प्रभाव इस प्रकार हैं, स्थायी बहरापन, बुखार, उल्टी, दर्द, उच्च रक्त चाप, नींद में कमी होना, थकावट महसूस होना, मानसिक थकावट, मानसिक तनाव, एलर्जी, आदि।

निष्कर्ष – ध्वनि प्रदूषण नीमच (म.प्र.) तथा भारत के अन्य हिस्सों में एक पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न कर रहा है। और यह व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं समृद्धि पर विपरित प्रभाव डाल सकता हैं, उपर्युक्त सभी बिन्दुओं के परिप्रेक्ष्य में हम इस निष्कर्ष पर पहुचें है कि ध्वनि प्रदुषण (शोर) पर्यावरणीय ध्वनि को बढ़ा रहा हैं।

उपाय एवं सुझाव – श्री गणेश विसर्जन चल समारोह निश्चित रूप से हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया जाने वाला त्यौहार हैं। इसमें कर्ण प्रिय ध्वनि निश्चित ही श्रोताओं को आकर्षित करती हैं। भगवान् श्री गणेश जी भी कर्णप्रिय ध्वनि को सुनते, एवं स्वीकारते ही होगें। समस्या तो नादानीवश तीव्र ध्वनि का होना हैं। इस हेतु यदि आयोजन कर्ता डी. जे. साउण्ड को साउण्डप्रुफ छत के साथ उपयोग करें तथा चल समारोह के साथ–साथ जगह–जगह साउण्डप्रुफ कालम भी चलते रहे तो ये दोनों उपाय ध्वनि की तीव्रता को कम करेगें तथा ध्वनि को कर्णप्रिय बनायेगें।

हमें भी व्यक्तिगत रूप से झिझक छोड कर ईयर प्रोटेक्टिव उपकरण का उपयोग करना होगा, यह उपकरण महानगरों में उपलब्ध हैं। यह उपकरण कान में रूई लगाने या कानों को कपड़ा या फोम आदि से ढ़क लेने से काफी अलग होता हैं। इसके उपयोग से हम श्री गणेश विसर्जन चल समारोह में सहज रूप से घूम सकते हैं तथा त्यौहार का आनन्द उठा सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. N. Singh and S.C. Davar: Noise Pollution- Sources, Effects and Control, J. Hum. Ecol., 2004, 16(3): 181-187.
2. D.J. Fisk. Statistical Sampling in Community Noise Measurement, (1973), Journal of Sound and Vibration, 30(2), pp 221-236.
3. Ritu Kudesia: Environmental Health & Technology. Pragati Publishers, Meerut India, 2007.
4. WHO., Environmental health criteria of noise. 12 World Health Organization (1980).
5. S. Rosen and P. Olin, Hearing Loss and Coronary Heart Disease, Archives of Otolaryngology, 82:236 (1965).
6. J.M. Field, Effect of personal and situational variables upon noise annoyance in residential areas, Journal of the Acoustical Society of America, 93: 2753-2763 (1993).
7. V.P. Kudesia and T.N. Tiwari: Noise Pollution and Its Control. Pragati Prakashan, Meerut India, 1994.
8. Vidya sagar and Nageswara Rao, (2006), Noise Pollution Levels in Visakhapatnam City (India), Journal of Environmental Science and Engineering, 48(2), pp 139-142.
9. D.B. Tripathy: Noise pollution. A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi, India, 1999.
10. Bhabananda Phukan and Kalyan Kalita: A study of noise pollution in Gauhati University International Journal of Environmental Sciences Volume 3, No 5, 2013
11. Kang-Ting Tsai, Min-Der Lin and Yen-Hua Chen, (2009), Noise mapping in urban environments: A Taiwan study, Applied Acoustics, 70, pp 964-972.
12. Noise Pollution, Laws & Remedies by Justice Bhagabati Prosad Banerjee, pp. 327-28.

****

To Assess Impact Of Practice On The Hemoglobin Of Breast Cancer Patients

Dr. Archana Kushwah * **Dr. Manju Dubey** **

Introduction - Breast cancer is the second most common cancer among women. Breast cancer estimated to account for 1,105,000 cases and 3,73,000 deaths in women in 2000. (Parkin DM, 2001)

In 2013 the American cancer society estimates approximately 232,340 new cases of breast cancer will be diagnosed and 40,230 deaths due to breast will occur in the united states. Approximately 410 of the estimated deaths due to breast cancer in 2013 will be men. (www.cancer.org.)

The incidence of breast cancer is increasing in the developing world due to increase life expectancy, increase urbanization and adoption of western life styles. Therefore early detection in order to improve breast cancer outcome and survival Remains the comerstone of breast cancer control. (Anderson BO, 2008)

Breast cancer can spread insidiously. At diagnosis, 5% to 15% of patients have materstic disease and almost 40% more have had regional spread of the disease (carter CL , 1989)

Further, among there with only local tumors at diagnosis, 24% to 30% will experience relapse (Honig SF,1996). As treatment is sometimes unsuccessful or may be started too late, preventing cancer is preferable.

Healthy new cell take over as old ones die out. But over time, mutation can "turn on" certain genes and "turn off" other in a cell. That changed cell gains the ability to keep dividing without control or order producing more cells just like it and forming a tumor. (www.breastcancer.org.)

Symptoms of breast cancer -

- Lamp or mass in the armpit
- A change in the size or shape of the breast
- Abnormal nipple discharge usually bloody or clear – to yellow or green fluid, may look like pus.
- Change in the colour of feel or the skin of the breast, nipple or areola redness, scaly, dimpled, puckered, retraction "orange peel". appearance.
- Change in appearance or sensation of the nipple.
- Breast pain, enlargement, or discomfort on one side only.
- Symptoms of advanced disease are bone pain, weight loss, swelling or one arm and skin ulceration. (www.nlm-nih.gov)

Objectives -

- To assess the practice status about the disease of breast cancer patients.
- To assess the impact of practice on hemoglobin status of breast cancer patients in Gwalior city.

Methodology - The study was conducted upon 300 breast cancer patients in the age groups of 30 to 80 year living in Gwalior city who where selected by purposive sampling. It was hypothesized that "There is no significant effect of high and low practice groups upon the mean scores of hemoglobin status of breast cancer patients". Interview schedule was prepared to collect information on awareness, regarding causes, prevention, and side effects of treatment, their remedies and intake of adequate diet during the treatment. Hemoglobin status of the cancer patients was assessed by Sahli's hemometer. After collection of data tabulation and analysis of data was carried out by T-test the whether the hypothesis was approved or rejected.

Results and Discussion -

Table No. 1

Status of practice level of breast cancer patients.

Practice Groups	Number of Women	Percentage of Practice
High	203	67.67
Low	97	32.33
Total	**300**	**100.00**

67.67% breast cancer patients were found to have high practice and 32.33% low level of practice Respectively showing diagram No. 1. (next page)

Practice wise mean, SD, df and t-value of hemoglobin of breast cancer patients.

Practice Group	Mean	S.D.	df	t-value	Remarks
High	1.84	0.534	298	-1.340	P>0.05
Low	1.93	0.601			
*P value is Non significant at 0.05 level					

It is evident that t-value is = -1.340 is non significant at 0.05 level with df = 298. This shows that there is a non significant difference in the mean scores of hemoglobin status of breast cancer patients among high and low practice

* Guest Faculty, NINS College Sitholi, Gwalior (M.P.) INDIA

** Prof. & Head Department of Home Science, Govt. K.R.G. P.G. College, Gwalior (M.P.) INDIA

groups. Thus the null hypothesis stated that:- "There is no significant effect of high and low practice groups upon the mean scores of hemoglobin status of breast cancer patients" is accepted.

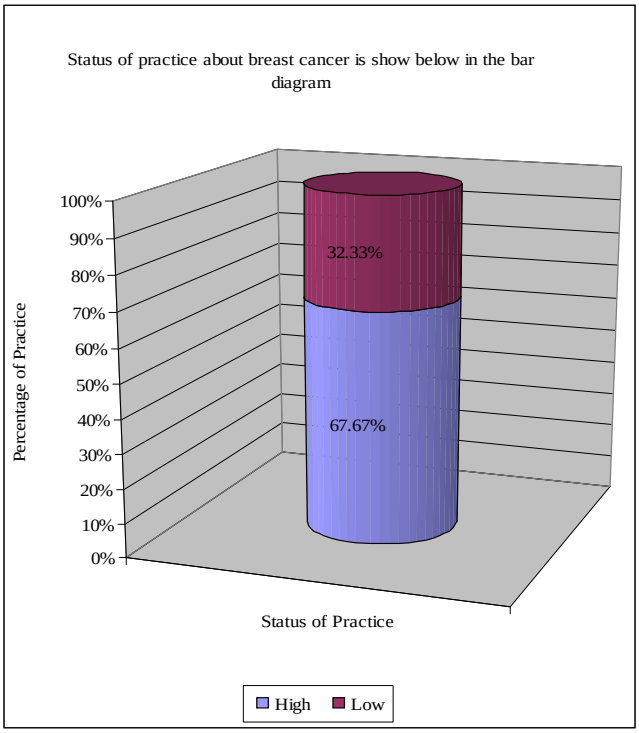

Conclusion -At the end study a conclusion may be drawn that the practice among the breast cancer patients about the disease would non significant effect on their hemoglobin status.

Suggestion -

- Diet of patient should be full of antioxident.
- Every day 4 to 5 liters liquid should be taken.
- Eat plenty of leafy green vegetables, fresh fruit and other foods high in beta – carotene.
- Frequently eat vegetables containing the type of fiber called pentosans, which are found in such vegetables, as cauliflower, onions broccoli, mushroms, spinach, potatoes, carrots, pumpkins or beans beans are also good sources.
- To help protect against breast cancer exercise regularly.
- Practice monthly breast self – exams.

References -

1. Parkin DM , Bray F, Ferly j , Paisani p. Estimating the world cancer burder : Globocan 2000. international journal of cancer 2001; 94:153-6
2. Anderson BO et al. (2008) Guideline implementation for breast healthcare in low income and middle – income countries : overview of the breast health global initiative global summit 2007. Cancer 113, 2221-43
3. Carter CL, Allen C, Henson DE : Relation of tumor size, lymph node status, and survival in 24,740 breast cancer cases. Cancer 1989 : 63 : 181-187.
4. Honing SF : Hormonal therapy and chemotherapy, in horris JR, Lippman ME, Morrow M, Hellman S (eds) : Disease of the breast. Philadelphia, Lippincott Raven. Publishers, 1996 PP 669-734.
5. http://www.cancer.org/acs /groups/content/ @epidemiologysurveilance/ documents / acspc 036845.pdt
6. http://www.breastcancer.org > Home> Symptoms & diagnosis> understanding breast cancer.
7. http://www.nim.nih-gov/medlineplus/ency/article/ 000913. htm accessed on 25.4.2007

****

Role Of Domestic Appliances In Home Management And Their Impacts On Human Beings

Suchi Sharma * Dr. Manju Sharma ** Dr. Manju Dubey ***

Abstract - Home management makes significant contributions to family relationships by providing a favorable background for family living. Although it takes more than smooth running machinery to make a home a comfortable place in which to live, homes that have a comfortable atmosphere do not for the most part just happen.Another way in which home management contributes to family relations is that whether or not so planned, many family values are shared through the managerial activities of the home.

Keywords - Home Management, Domestic Appliances, Planning, Organizing, Executing, Implementing, Evaluating

Introduction - Domestic appliances are integral to modern lifestyles, and they not only save precious time but have also made life much easier and comfortable. These appliances are no longer considered luxuries but have become necessities for smooth running of the house.Domestic appliances are integral to modern lifestyles. Choosing the right domestic appliances at right place at right time with proper management not only saves time,energy and money but also make life much easier & comfortable.

Home management can be defined as a way of planning, coordinating, controlling and evaluating the use of resources in order to organize or manage a home. This is necessary especially if you want your home to be a more convenient place to stay. It makes the home systematic in many ways, providing better and quality way of living.

Stephen R Covey quoted "Management is efficiency in climbing the ladder of success; leadership determines whether the ladder is leaning against the right wall." There are several factors or functions in management that can be applied in home making; these are **planning, organizing, implementing and evaluating**. These factors serve as step by step process done from the beginning going to the last.

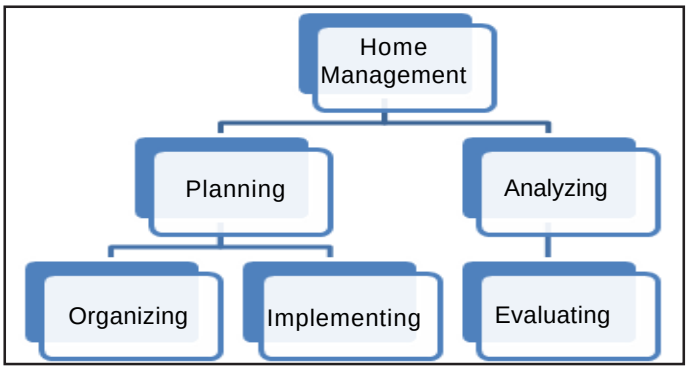

Figure 1.1: Home Management approach block flow diagram

Planning refers to the process in which the goals to be attained are being set and analyzed. In planning, it is important to identify the goals as well as the priorities of what should be done first before the others. It should be ensured that the choices are also set.

Organizing is the process by which different resources either human or non-human are being utilized or used in order to provide maximum efficiency. Human resources include the personnel or individual that is in charge to do a particular task. Non-human resources include the facilities as well as the materials that are needed. Here, the coordination of the different resources of management such as the personnel, the activities as well as the facilities, time and energy should be properly coordinated and organized.

Implementing is the process of carrying out the plan that was set. Here it is important to determine the problems that could possibly arise. Resolving possible problems upon the implementation is necessary to execute the plan effectively. Implementation can be considered as the main action that happens in home management.

Evaluating is the process in home management by which the goals in the plan are evaluated whether these are attained or not. The time as well as the energy efficiency should also be considered such as whether a task is attained in its allocated time or a task saves more energy or not. With evaluation, we can determine whether the implemented home management is successful or not successful.

It is really important to set a plan for a home management. A home management plan could be able to use in order to manage the home in a systematic way, providing an efficient way of living to every family member.

Objectives -

(i) To study the proper management of domestic appliances for family setup and its impact on human being.

* Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA ** Prof., M.J.B. Govt. Girls College, Indore (M.P) INDIA *** Prof. & H.O.D. (Home Science) Govt. K.R.G. P.G. College, Gwalior (M.P) INDIA

ii) Figure out the regular trends of home appliances used in different class of families, how they organize their regular chaos of work?
iii) What all the priorities they would set before implementing and achieving their final objective?
iv) What all their plans to improve their present situation of life condition, what innovation and involvement they are looking from domestic appliances usage in future?
v) How are the health and wealth conditions of different families in different sectors of society?
vi) How it impacts the human behavior and there family & social relationships?

Hypothesis of the study - To carry out the study null hypothesis was formulated "There will no significant difference between high, Medium, Low Income groups of people using domestic appliance."

Variables of study - A variable is a characteristic which takes on different values for different values for all the observed units. In this study the researcher has taken:

i) Types of Appliances
ii) Economic Conditions of different Income Groups

Method of Investigation - The researcher has adopted the survey method to carry out the study. The methods followed in the selection of the sample, collection of the data, scoring and analysis.

Data Collection - At level 1, we have partitioned complete East-Delhi into 22 blocks and name them as per the localities name. From each of the **random locality** we targeted to collect the 5-5 **purposive samples** from each income group i.e. Low Income Group (LIG), Medium Income Group (MIG) and High Income Group (HIG). Here **purposive sampling technique** (also known as judgmental, selective and non-probability sampling techniques) is required because in this sample selection technique, non-probability sampling focuses on sampling techniques where the units that are investigated are based on judgments of the researcher.

In this way, multistage systematic **random proportional and purposive selectionsampling** method was adopted to sample out 22 localities from which a total of nearly 320 random families covered for questionnaire session & group interviews. The entire exercise involved several stages.

Data Analysis - After that all the 22 localities and respective 320 families were grouped under three different strata in the ascending order of monetary condition of the population residing in them. These strata were termed as Category Low Income Group (LIG), Medium Income Group (MIG) and High Income Group (HIG) depending on their respective concentration of earnings which is as follows -

Survey Groups	Category
Families with monthly earning concentration between 0 to Rs. 15000	L.I.G.
Families with monthly earning concentration between Rs. 15000 to Rs. 50000	M. I.G.
Families with monthly earning concentration between Rs. 50000 and above	H.I.G

This ratio of population in three strata to the total population in the district thus came to be 20: 12: 7 for Categories LIG, MIG and HIG respectively.

Data Interpretation -

Disciplinary Distribution

	N	%
Income Group		
Low Income Group (LIG)	1224	39.16 %
Medium Income Group (MIG)	1103	38.43 %
High Income Group (HIG)	543	18.91 %
Occupation		
Professional, Technical & related work	353	12.26 %
Administrative, managerial & related work	65	2.24 %
Clerical & related work	73	2.69 %
Sales/Business work	748	26.02 %
Service work	522	18.17 %
Farmers and related work	41	1.43 %
Production and related work	436	15.22 %
Self Employed	51	1.79 %
Not applicable	328	11.46 %

Observations/Major Findings - The analysis of data collected from primary source and interpretation. It is presented in the form of description and tables as required. Analysis refers to the course of findings out answers to the question that had arises to the study. Interpretation finds out relationship among the available data and the variables.

The purchase and usage decision of a domestic appliance depends on the opinion of the consumer of its need at home. This opinion regarding the domestic appliance is shaped by their experience, the influence of the friends and relatives and the like. The opinion differs from individual to individual. In this section the researcher has tried to find out how the opinions on the purpose of buying and managing the selected Home appliances differ among various lifestyle segments. The purpose of buying and managing the selected Home appliances durables has been classified as Essential Goods, Comfort Goods, or Luxury Goods. What all is the impact of those home appliances usage in various lifestyle segments i.e. Low Income Group (LIG), Medium Income Group (MIG) and High Income Group (HIG).

To analyze the opinion of the respondents regarding the purpose for proper management of domestic appliances for family setup and their impact on human well-being they were asked to state if it was an Essential Utility, a Luxury Utility or a Comfort Utility.

(Table- 1 and Graph - 1 see the next page)

Conclusion - From the Table -1 and Graph-1 mentioned above it is seen that among three different income groups Need of proper management of domestic appliances required, 26.4 % of Low Income Group (LIG) believe that proper domestic appliances management utility is required where as 37.8% of Medium Income Group (MIG) families believes that it is a must skill set which everyone should attain. 34%

of High Income Group (HIG) families are also in support of favoring proper – management of domestic appliances is required.

It is observed by the researcher that education status of different income groups varies drastically with 16% LIG families are educated, 42% MIG and 56% HIG families are educated. Among all these income groups this education discriminated behavior is indirectly or in other sense directly related to home-management of domestic appliances.

Researcher observed difference in capability of domestic appliances organization. Researcher analyzed during his home visit and personal interview with different people in different income groups, that 14.5 % houses of LIG families are structured and organized. On the other hand, 44.12 % of MIG families and 61.5% of HIG families having proper organization of domestic appliances.

Researcher also observed that in productiveness in innovativeness 34% HIG families are having innovative ideas to implement daily usual work. They are keen to try and adopt new technique or skills which can make their life comfortable and luxurious, whereas innovative ness in MIG and LIG families observed 19% and 12% respectively.

Family members inter-relationship and communication skills with other family members is very high with 48 % families in HIG category, after that 35.8% in MIG and 23.5 % in LIG families.

Growth rate of HIG families are high with 44.5 %, after that MIG 29.4 % LIG 8.2% respectively.

From the above table and graph it is clearly visible that the Need of proper management of domestic appliances is must in current scenario of life style. Only then we can be recognized and would be able to live comfortable and luxurious life.

References -

1. Cox Eli P. (2013). Family purchase decision making and the process of adjustment. Journal of Marketing Research 12, 189-195. Retrieved from http://www.jstor.org/pss/3150442Dickson,
2. Lawrence C Christy; Cahrles E D Leva, Environmental and natural resources law and domestic environment law 2013.
3. Assistive Technology: Added Value to the Quality of Life, AAATE'01 - Èrt Marinèek - Google Books. Books.google.co.uk. Retrieved 2012-10-26
4. "Market Outlook: Worldwide Domotics and Home Automation Market evolution, 2010-2016". CMT research. Retrieved 2012-10-26.
5. Griffiths, Melanie (March 2008). "Smart Home Security". Homebuilding & Renovating. Retrieved 27 February 2012
6. Kamilaris A. Enabling Smart Homes using Web Technologies. PhD Thesis, University of Cyprus, Nicosia, Cyprus, December, 2012.

Groups	Proper Management required	Education rate	Organized Domestic Appliances	Productive	Family inter-relationship	Family Growth
LIG	26.4%	16%	14.5%	12%	23.5%	8.2%
MIG	37.8%	42%	44.12%	19%	35.8%	29.4%
HIG	34%	56%	61.5%	34%	48%	44.5%

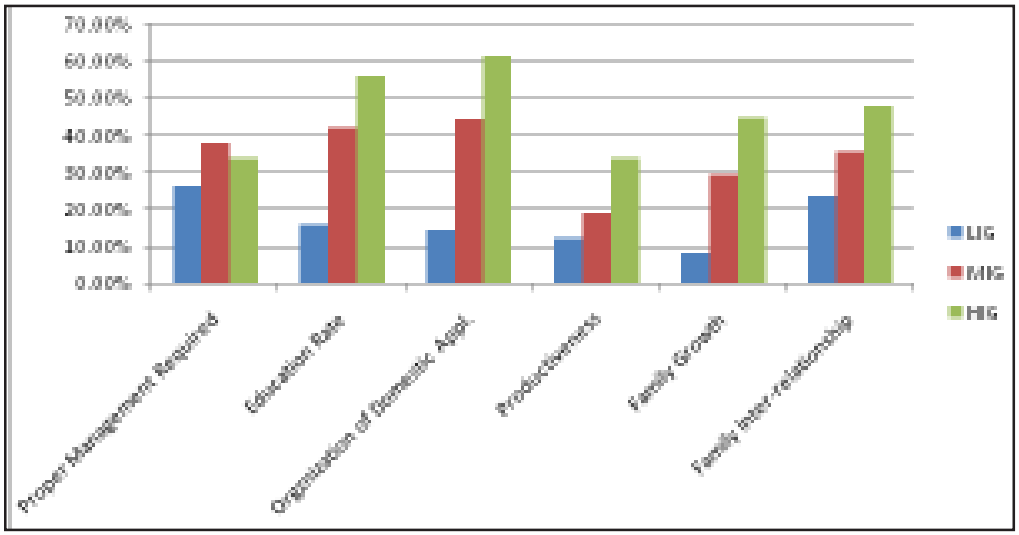

****

A Study On Interrelationship Between Domestic & Social Environment

Suchi Sharma * Dr. Manju Sharma ** Dr. Manju Dubey ***

Abstract - Environment means the surrounding factor which affects the human life in various ways. It should be healthy in all respect. A part from the environment ''Domestic environment'' is also required particularly healthy to keep the environment of the surroundings healthy. The goal of the study was to identify approaches and strategies to strengthen the integration of family, social, behavioral, and genetic research and to consider the relevant training and infrastructure needs.

Keywords - Domestic Environment, Biotic Environment, Social and cultural environment, Social infrastructure, Physical environment

Introduction - Domestic environment would be correctly changed as per meaning in the perception of people who are living in such type of the house. Perception may be varied from person to person in different type accommodations and understanding the surrounding environments and appliances in the house. Perception of the house is not always positive it may sometime dangerous and risk creating. Thus the conceptualization of the domestic environment may be with major objective of person is living in such environment. The working definition of Domestic environment is an environment which is the focus the utilization of manufactured environment beside the natural environment and more focus should be on the maximum use of manufactured resources without loss of single unit of manufactured environment. In this our emphasis should be also to use of natural environment at priority basis.

Domestic environment is most important factor to maintain the same. However the awareness about Domestic environment is required. Awareness about the domestic environment is required to make healthy life of the human Being. The Domestic environment must be such healthy as "healthy and positive environment".

It will not be out of place to maintain here, that in our society, even educated women is also not aware about Domestic Environment, what to speak about the uneducated and as semi illiterate. The non-appropriate use of home appliances creates the domestic environment unhealthy by which everything got affected.

The domestic environment means understanding and appropriate utilization of the home appliances. It is necessary to explain the actual meaning of domestic environment. The domestic environment is described differently of the people in different category of houses. By observing the domestic environment & utilization of home appliances one can easily figure out the social status of family, society and for the matter of fact, country as well. By measuring the quality of domestic environment we can easily predict the mental health and happiness of family and society.

So in that manner domestic environment which is directly dependent on home appliance usage and their management affects our daily life most and it also governs that society and country is progressing in right direction with positive node or not.

Domestic appliances are integral part to modern lifestyles. From choosing the right domestic appliances at right place at right time with proper management skills not only saves time, energy and money but also make life much easier & comfortable.

By adopting the proper skills to manage domestic appliances one can innovate new ideas which might get social revolution, which helps both society, and country to make healthy and wealthy on global map.

Present Condition & Potection For Domestic Environment - Domestic environmental conditions which are currently receiving attention are concerned mainly with the adverbs. Impact of human life's and activities. These adverbs impact are damaging environmental ecological foundation of the life support systems. Carelessness and unawareness in respect system and operation of the home appliances makes a great risk in the present state if reality. Out a great problem to keep up the healthy domestic environment many factors are responsible. How to know and how to use is a matter of study and our attention should be making the healthy domestic environment for promotion of positive outlooks towards environment.

To protect the entire universe from polluted environment; protection of domestic environment needed first because as per the phrase "CHARITY BEGINS AT HOME". It is clarified here that domestic environment protected; properly it would certainly strengthen the whole environment. Understanding

* Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA ** Prof., M.J.B. Govt. Girls College, Indore (M.P) INDIA *** Prof. & H.O.D. (Home Science) Govt. K.R.G. P.G. College, Gwalior (M.P) INDIA

the operation is required for proper management of domestic environment as use of electricity, appliances, needful water usage etc. Now society is sufferings with the crisis is due to lack of proper education and demonstration in the proper way of use and misuse of such objects.

Environment', this word has a great importance in our life. The simple definition of environment is the 'surrounding'. It is what surrounds a thing. We can also define it as "environment is the combination of all of physical and organic factors that act on a living being, residents, or ecological society and power its endurance and growth".

It could be a physical component, which is known as physical environment or a-biotic environment that includes the built environment. The natural surroundings like air conditions, water, land, atmosphere etc are also the part of physical environment but they are commonly known as natural environment. People surrounding the item or thing, this type of environment is known as Domestic environment/ human environment. This is also known as the social environment and includes elements like the religious environment, emotional environment, residence, relations etc.

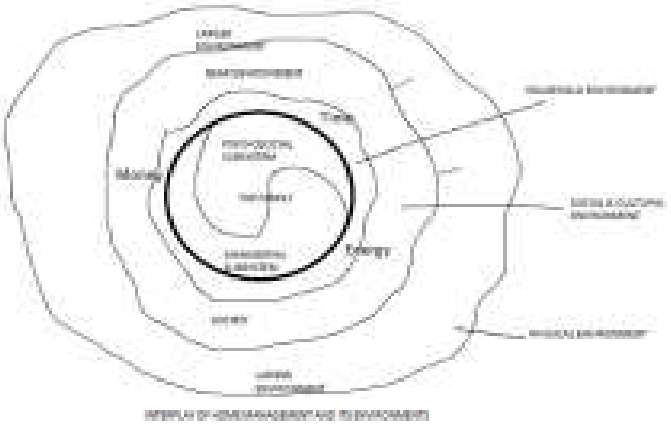

Figure 1: Interplay of Home Management & its Environment

Types of Environment

There are mainly three types of environment-

a) The Physical environment
b) Biotic environment
c) Social or cultural environment

1) The Physical environment

It is also known as a-biotic environment and natural environment.

- The meaning of 'a-biotic' or 'physical' is non-living like land water air conditions atmosphere which constitutes of soil. So we can say that physical or a-biotic environment is the environment which includes non-living or physical things which are constitutes of soil and affect the living things.
- The physical or a-biotic environment also includes the climatic factors such as sunbeams, rainwater, precipitation, moisture, pressure and wind speed.

The Importance of Physical Environment -

- Most important thing to make house is residential space, and for residential space, we need land area. The land area is included in physical environment. So it is responsible for the residential for living beings.
- The a-biotic environment like soil, water and air are the necessary nutrients element provider for the living beings.
- All of living beings are surrounded by atmosphere; it is the combination of different types of gases. The living beings take oxygen and other gases from the atmosphere.
- The a-biotic environment also controls the climatic factors like weather.
- The physical environment also includes the soil which is responsible for the works and food crops for the living beings. It also provides different types of minerals which are very necessary for growth of life
- Water is one of the most necessary things for living beings. Physical environment also deals with the water factor of the earth.

2. Biotic environment -

- It is also known as biological environment and organic environment.
- In the opposite side of the physical environment, the biotic or biological environment is responsible for the living beings.

The importance of biotic environment -

- In this type of environment includes the plants, trees, animals, mammals, underwater living beings including human beings and microorganisms like bacteria and fungi.
- The living beings are highly dependent to each other. For example humans are highly depend upon plants and trees for food and oxygen, and plants and trees are also depend upon humans and animals because of co2

3. Social or cultural environment -

- This type of environment involves the culture and life style of the human beings.
- The social or cultural environment means the environment which is created by the man through his different social and cultural activities and thinking.
- The historical, cultural, political, moral, economic aspects of human life constitute to the social or cultural environment

The Importance of Social or Cultural Environment -

- Culture involves the religion of the human, relations with each other etc. In a society there involve different types of people, they have different religion, different thinking, which has culture of its own and possess people having their own life style.
- The social or culture environment affects the social culture of human beings and hence it has the great importance.
- The development of a child is highly depends upon culture and society.

Conclusion - The purpose of this paper is to provide an overview of the social variables that have been researched

as inputs to domestic environment (the so-called social determinants of health) and wellness impact on human beings, as well as to describe approaches to their measurement and the empirical evidence linking each variable to domestic environment outcomes.

It should be emphasized at the outset that the social determinants of health can be conceptualized as influencing health at multiple levels throughout the life course. Thus, for example, poverty can be conceptualized as an exposure influencing the health of individuals at different levels of organization—within families or within the neighborhoods in which individuals reside. Moreover, these different levels of influence may co-occur and interact with one another to produce health. For example, the detrimental health impact of growing up in a poor family may be potentiated if that family also happens to reside in a disadvantaged community (where other families are poor) rather than in a middle-class community. Furthermore, poverty may differentially and independently affect the health of an individual at different stages of the life course (e.g., in utero, during infancy and childhood, during pregnancy, or during old age).

In short, the influence of social and cultural variables on domestic environment involves dimensions of both time (critical stages in the life course and the effects of cumulative exposure) as well as place (multiple levels of exposure). The contexts in which social and cultural variables operate to influence domestic environment outcomes are called, generically, the social and cultural environment.

These variables include SES, race/ethnicity, gender and sex roles, immigration status and acculturation, poverty and deprivation, social networks and social support, and the psychosocial work environment, in addition to aggregate characteristics of the social environments such as the distribution of income, social cohesion, social capital, and collective efficacy. Comprehensive surveys of current areas of research in the social determinants of domestic environment can be found in existing textbooks (Marmot and Wilkinson, 2006; Berkman and Kawachi, 2000). This chapter focuses on presenting the key research findings for a few selected social variables—SES, the psychosocial work environment, and social networks/ social support. These variables are highlighted because of their robust associations with domestic environment status and their well-documented and reliable methods of measuring these variables, and because there are good reasons to believe that these variables interact with both behavioral as well as inherited characteristics to influence domestic environment.

Socioeconomic differences in domestic environment are large, persistent, and widespread across different societies and for a diverse range of domestic environment outcomes. In the social sciences, SES has been measured by three different indicators, taken either separately or in combination: **educational attainment, income, and occupational status**. Although these measures are moderately correlated, each captures distinctive aspects of social position, and each potentially is related to domestic environment behaviors through distinct mechanisms.

References -

1. Berkman L, Glass T. Social integration, social networks, social support, and health. In: Berkman L, Kawachi I, editors. Social Epidemiology. New York: Oxford University Press; 2000. pp. 137–173.
2. Lynch J, Kaplan G. Socioeconomic position. In: Berkman L, Kawachi I, editors. Social Epidemiology. New York: Oxford University Press; 2000. pp. 13–35
3. Stansfeld S. Social support and social cohesion. In: Marmot M, Wilkinson R, editors. Social Determinants of Health. Oxford, England: Oxford University Press; 1999. pp. 155–178
4. Scott D; Mainwaring; Allison Woodriff; 2006: Nurturing technologies in the domestic environment feeling comforted; at connected at home; new port beach marriot part of the ubicomp.

****

Mental Health And It's Relationship With Self And Self-Concept For Adolescent Boys And Girls

Teena Pandey * **Dr. Kantibhai S. Dedun** * *

Abstract - The present study is undertaken to access the relationship between alienation and different aspects of self and self-concept for boys and girls. The present study is conducted on 200 X grade students' 100 boys and 100 girls from English medium co-educational Convent school of Jaipur, based on the C.B.S.E. pattern which had constituted the sample of the present study. The rating scale devised by Pratibha Deo was used to define the self-concept of an individual. While Mental health among the subject was measured by 'Mental Health Inventory' (M.H.I.) developed by Dr. Jagdish and Dr. Srivastava (1984). The results indicate the significant relationship of self concept and mental health.

Introduction - The term mental health is often used loosely, but generally it means to convey the idea of psychological well-being, or absence of mental illness, merely in terms of what is going in the mind. Thus health is a broader concept includes physical, social and mental health. Mental health has been reported as important factors influencing individual's various behaviors, activities, happiness and performance. Before the second half of the twentieth century, mental health was considered as the absence of mental disease but now it has been described in its more positive connotation not as the absence of mental illness. Mental health has mentioned as the ability of person to balance one's desires and aspiration, to cope life stresses and to make psychosocial adjustment.

The concept of mental health is not a new one. Its roots have been found in early pre-history of man. Five hundred years ago, Hippocrates's notion or concept of hysteria than was essentially a notion of mental health, and that ancient Arabic medical writings record that people could be happy or more effective with symptoms that without. (Soddy & Ahrenfeldt 1997).

A great deal of controversy continued for a long time regarding the status of "mental health" and "mental illness". The main issue is whether mental health and mental illness should be conceptualized on the same continuum or not. The conventional medical point of view is that mental health is the absence of mental illness. Mental health and mental illness represent the extreme ends of same continuum, and that the difference between the two states is a matter of degree. But the contrary view is that mental health is qualitatively different from mental health and that a person cannot be both mental health and mental illness at the same time.

Self-concept is global. It integrates personal qualities and other characteristics to define the self. A full understanding of self encompasses the physical body, the socially defined identity including roles and relationship, the personality and the person's knowledge about self (i.e. self-concept). Individual self-concept is ones picture or image of self, ones view of self as distinct from other persons and things.

Self-concept is a determinant of human behavior. In fact, awareness is the cause of behavior, how a person feels and thinks determines his cause of action. The awareness of self comes through the gradual process of adaptation to the environment to the environment (Piaget, 1989). Self-concept is defined as a collection of beliefs we hold about ourselves. One method through which we acquire self-knowledge is socialization. Individual are treated in particular ways by others and participate in certain activities, which if become regularities, can internalized and become important aspect of self-concept. Such aspects of socialization help in defining the self. Hence, self-concept can be developed and maintained through the process of taking action and then reflecting on what has been done and what others tell about what we have done (James, 1990; Brigham, 1996).

Self-concept is the cognitive or thinking aspect of self (related to one's self-image) and generally refers to **"the totality of a complex, organized, and dynamic system of learned beliefs, attitudes and opinions that each person holds to be true about his or her personal existence."**

Self-concept is a person's sense of identity. The set of beliefs about what he\she is like as an individual (Break well; 1992, Hattie; 1992). Self-concept is an organized collection of belief and self-perception about oneself (Baron and Byrne, 2000). Self-concept is the totality of an individual's thoughts and feelings having reference to himself\herself as an object (Hawkins et. al., 1998).

Objective - To understand the relationship between mental health and different aspects of self and self-concept for boys and girls.

Hypothesis - The hypotheses are given below:

1. Different aspects of self and self-concept will be significantly correlated with mental health for boys and girls.

* **Research Scholar, Pacific University, PAHER, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Associate Professor, College of Education, Daramali (Gujarat) INDIA**

2. There will be significant difference in mental health between subjects score high and low on dimension of self.
3. There will be significant effect of self-concept and gender on mental health.

Methodology - The present study is conducted on 200 X grade students' 100 boys and 100 girls from English medium co-educational schools of Ahmedabad, which had constituted the sample of the present study. The rating scale devised by Pratibha Deo was used to define the self-concept of an individual. Mental health among the subject was measured by 'Mental Health Inventory' (M.H.I.) developed by Dr. Jagdish and Dr. Srivastava (1984). This is a standardized tool. The present 'Mental Health Inventory' (M.H.I.) has been designed to measure Mental Health (Positive) of normal individuals. The data was collected from the respondents on the various variables under study at their respective schools. The test was administrated in group.

Results & Discussion

Table- 1.1
Correlation of Mental Health with Dimensions of Self & Self-Concept for boys, girls & total.

Dimensions of Self	Mental Health		
	Boys	Girls	Total
Perceived Self	-0.029	-0.016	-0.013
Ideal Self	-0.051	-0.102	-0.032
Social Self	-0.079	0.143*	-0.066
Self-concept	0.026	0.117*	0.024

* Significant at .05 level; ** Significant at .01 level

Table 1.2 (See the next page)
Table 1.3 (A) (See the next page)
Table 1.3 (B) (See the next page)

Table 1.1 reveals that social self and self-concept of girls have significant positive correlation (r=-.143, p<.05), (r=.117, p<.05) with mental health.

Thus, the hypothesis "different aspects of self and self-concept is significantly correlated with mental health for boys and girls" is partially proved. This hypothesis is found partially true for total sample (boys & girls) but not confirmed for boys and girls separately.

Table 1.2 result shows that boys having high perceived self, ideal self & social self scores (Group 1) have significantly high status of mental health scores than the boys having low perceived self, ideal self & social self scores (Group 2) which are having low status of mental health (total) scores. (t=5.37, p<.01), (t=6.84, p<.01), (t=4.73, p<.01) similar results were found for girls. (t=7.75, p<.01), (t=6.12, p<.01), (t=5.41, p<.01)

Thus, the hypothesis "There will be significant difference in mental health between subjects score high and low on dimension of self" is proved for boys and girls.

Table 1.3 (A) finding shows that boys have more mental health mean scores in comparison to girls similarly subject with positive self-concept scored high on mental health.

Table 1.4 (B) result indicates that the significant main effect of gender and self-concept on mental health. (F=16.04, p<.01), (F=257.48, p<.01)

Therefore, the hypothesis "There will be significant effect of self-concept and gender on mental health" is partially proved.

Mental health in Adolescence is characterized by the successful performance of mental function, enabling individuals to cope with adversity and to flourish in their education, vocation, and personal relationships. These are the areas of functioning most widely recognized by the mental health field. Yet, from the perspective of different cultures, these measures may define the concept of mental health too narrowly. Mental health is defined as a state of well-being in which every individual realizes his or her own potential, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to her or his community. 'Mental health' relates to a person's ability to manage and cope with feelings that may arise as a result of their understanding or experience of social, physical or psychological events.

In fact structuralizing the mental health is complex phenomenon that is exclusively dependent on social interactions and self-concept of individual. Self-concept is a determinate of human behavior. In fact awareness is the cause of behavior, how a person feel and think determine his cause of action. Self-concept is perhaps the basis of all motivation behavior (Franken, 1994) self-concept give rice to possible solves and it is possible solves that create the motivation for behavior.

Results of the present study reveal that self-concept significantly influence the mental health of the subjects. Those who scored high on all the dimensions of self-concept also scored significantly high on all the dimensions of mental health. Results further reveals that subjects with positive mental health scored significantly high on dimensions of mental health.

The subjects with high perceived self, ideal self and social self has significantly better mental health. This may be due to the subjects who have high perceived self do have sound mental health and less physical and psychological distress. Factually perceived self builds adequate life goals, ability to learn from experience, efficient contacts with reality and proper self-evaluation. The boys/girls likes or dislikes to be decided on the basis of their own evaluation, the realistic meaning given to various stimulus, their personality development through development of type and traits and the integration of it their opinion about the groups and the complete well being. The individuals often are with the view that how the other peoples of society perceive them is dependent on the self analysis and self evaluation through reality perception which integrate their personality. The autonomy given to adolescents build the attitudes towards society as they have to interact with social manifestations effectively without physical and psychological distress. The studies conducted by Hovey, (2001) and Bowers, (2003) found that mental health directly affects self of individual and it gives positive direction to develop good mental health.

The results indicate that there is a significant effect of gender on mental health. Girls have less positive self-evaluation then the boys this may be due to the restricted outlet of girls in society from the child rearing practices. This is also the reason for more integration in the personality among boys than girls. Attitudes of society towards boys

are more positive that is the reason that boys have more group oriented attitudes than girls. The total mental health of boys is more sound than the girls because they have more possibility of sharing their views with society in other words it can be said that they have relatively more freedom for social outlet in comparison to girls. These also prone girls towards anxiety, depression, frustration, stress, guilt proneness etc.

References -

1. Baron, R.A., Byrne, D. (2000). Social Psychology (Ninth adition) Pearson Education Pte. Ltd., India.
2. Bowers, L. (2003) "The Social Nature of Mental Health", Psychology Today Vol-2 pg 142.
3. Break well, G.M. (1992). Social psychology of identity and self-concept. NY academic press.
4. Brigham, J. (1986). Social Psychology. Boston: Little, Brown & Co.
5. Erickson, C. D., & Al-Timimi, N. R. (2001). Providing mental health survey to Arab Americans: Recommendations and considerations. Cultural Diversity and Ethnic Minority Psychology, 7, 308-327.
6. Franken, R. (1994). Human Motivation (3rd ed.). Pacific Grove, CA: Brooks/Cole Publishing Co.
7. Guarnaccia, P. J., & Lopez, S. (2003). The mental health and adjustment of children. The Child Psychiatrist in the Community, 7, 537-553.
8. Hattie, J. A. and Break Well (1992). Self-Concept. New Jersey: Laurence Erlbaum.
9. Hawkins, L. W. (1998). Self-concept: 1998. American Psychologist, 34, 859-865.
10. Hovey, J. D. (2001). The mental health status of adolescents farmworkers in the Midwest United States: What we know, and what we need to do. In S. Partida (Ed.), Proceedings of the 2000-2001 adolescents Farmworker Stream Forums (pp. 72-81). Washington, DC: U.S. Department of Health and Human Services.
11. Jagdish & Srivastava A.K. (1984). Manual for Mental Health Inventory (MHI), Manovaigyanik Parikchhan Sansthan, Varanasi (U.P.).
12. James, W. (1890). Principles of Psychology. New York: Henry Holt.
13. Prathiba Deo, (1987). Self-concept list. National Psychological Corporation Agra.
14. Soddy, R., & Ahrentfeldt W. (1997). The prediction of psychological and sociocultural adjustment during cross-cultural transitions. International Journal of Mental Health, 14, 449-464.

Table 1.2 - Mean, S.D. & t-value of Mental Health in different groups for boys & girls.

Dimensions	Gender	Variable	Groups	Mean	S.D.	t –value
Mental Health	Boys	Perceived Self	Group 1	157.72	13.02	05.37**
			Group 2	143.78	12.94	
		Ideal Self	Group 1	165.40	14.24	06.84**
			Group 2	146.82	12.88	
		Social Self	Group 1	168.82	28.80	04.73**
			Group 2	147.42	13.98	
	Girls	Perceived Self	Group 1	160.72	12.95	07.75**
			Group 2	141.92	11.24	
		Ideal Self	Group 1	158.20	13.70	06.12**
			Group 2	142.08	12.62	
		Social Self	Group 1	167.74	30.71	05.41**
			Group 2	142.18	13.20	

* Significant at .05 level; ** Significant at .01 level

Table 1.3 (A) - Mean & S.D. scores of Mental health

Groups		Self- Concept	
		Positive	Negative
		Mean	Mean
Gender	Boys	170.88	135.98
	Girls	158.28	124.14

Table 1.3 (B) - 2X2 factorial analysis of variance for Mental Health

Source of Variation	Sum of Squares	df	Mean Square	F-Ratio
Gender	3169.951	1	3169.951	16.043**
Self	50876.928	1	50876.928	257.481**
2-Way Interactions	20.720	1	20.720	0.746
Residual	38728.527	196	197.595	
Total	97087.520	199	487.877	

* Significant at .05 level; ** Significant at .01 level

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

बालशोषण और सिसकता बचपन

डॉ. भावना रमैया *

शोध सारांश – बच्चा हर समाज की बुनियाद है। पर दुर्भाग्यवश हिन्दुस्तान के आजाद होने के 67 वर्ष बाद भी इस देश में बच्चों की हालत काफी दुखद है। खेलने– पढ़ने की उम्र में बच्चो को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसका समाधान स्वयं उनके पास नहीं होता है वे तो मासूम होते है, ना समझ होते हैं, वे तो समाज के इस घिनौनें कृत्य की आंधी में बहा लिये जाते है जहाँ उनका बचपन कहां खो जाता है।जी हाँ हमारा समाज का एक बदलता परिदृश्य बालको का शोषण जिसे हम **बालशोषण** की संज्ञा दी गई

भारत सरकार के महिला एवं बालविकास मंत्रालय द्वारा बाल शोषण भारत 2007 के अध्ययनानुसार 5–12 वर्ष के उम्र के छोटे बच्चों पर होने वाले शारीरिक,यौन एवं भावनात्मक शोषण के अंतर्गत आता है।बाल शोषण बच्चों के मानवाधिकारों का उल्लंघन हैं। कुछ समय पूर्व मानवता को शर्मसार कर देने वाला **निठारी काण्ड** उजागर हुआ था।

गैर सरकारी संगठन(चाइल्ड राइट्स एंड यू क्राई) ने किया। इस अध्ययन के मुताबिक भारत के तकरीबन 50 प्रतिशत बच्चों को स्कूली शिक्षा नसीब नहीं है,एवं भारी संख्या में बच्चे यौन उत्पीड़न के शिकार हो रहे है। भारत सरकार के **महिला एवं बाल विकास मंत्रालय** के बच्चों के शोषण पर आधरित एक अध्ययन के अनुसार भारत के 5322 प्रतिशत बच्चे यौन शोषण के शिकार है।

इसमें 5–12वर्ष के बच्चे यौन शोषण के सर्वाधिक शिकार है उम्र के शुरूआती दौर में 3958प्रतिशत बच्चों को हवस का शिकार बनाया जा रहा है। इसमें 2190 प्रतिशत बच्चों की यातना शारीरिक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा।

बाल यौन शोषण की **राजस्थान के अलवर** की यह घटना जिसे जानकर हम सन्न रह गये कि यहां गायब की हुई लड़कियों को **ऑक्सीटॉक्सिन** का इंजेक्शन दिया जाता है जिससे बच्चियों की काया जल्द – जल्द चौदह पन्द्रह साल की किशोरियों की तरह हो जायें। इस प्रकार बाल शोषण में बलात्कार,अपहरण, छोटे बच्चों की खरीद फरोख्त,कन्याभ्रूण हत्या,राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के ऑकड़ों के अनुसार देश में साल 2007,2008 और 2009 में बच्चों के खिलाफ अपराध क्रंमश: 20,410,22,500 और 24,501 मामले दर्ज किये गये थे ग्रेस पूरे द्वारा संवादित The Children we Sacrifice के अनुसार ज्ञात हुआ कि 63 प्रतिशत लड़कियों का पारिवारिक सदस्यों द्वारा शोषण हुआ ।

1999 में **टाटा इंस्टीट्यूटऑफ सोशल सर्विसेज** द्वारा,जिसके अनुसार 58 प्रतिशत लड़कियों का यौन शोषण 10 वर्ष की उम्र के पहले हुआ,1997 में दिल्ली में **राही संस्थान** के अनुसार 76 प्रतिशत का शोषण बचपन में हुआ, एवं 71 प्रतिशत का शोषण परिवार के सदस्यों द्वारा हुआ। बैगलोर की एक संस्था '**संवाद**' के अनुसार 1996 में हाई स्कूल में पढ़ने वाली छात्राओं में से 47 प्रतिशत का यौन शोषण हो चुका।एण्टीवायरस बनाने वाली कम्पनी **मैकएफी** की ओर किये गये सर्वेक्षण –70 प्रतिशत बच्चे अपनी उम्र बढ़ाकर इसके सदस्य बन चुके है। विड़म्बना यह है कि 70 प्रतिशत बच्चों नें कहां कि उनके माता पिता ही फेसबुक पर उनका खाता खोला है,अब वह समय आ चुका है कि बाल अधिकारो के प्रति गंम्भीर हो। तभी हम इस समस्या को समाज से नष्ट कर बच्चों के सिसकता बचपन को सांवर सकते है।

शब्द कुंजी – बालशोषण, महिला एवं बालविकास मंत्रालय द्वारा बाल शोषण निठारी काण्ड, राजस्थान की अलवरघटना।

प्रस्तावना – भारत की जनसंख्या का एक तिहाई भाग बालको का है। वह समाज के भविष्य के निर्माता माने जाते है। इनकी सामाजिक,शैक्षिक एवं आर्थिक उन्नति में ही भारत की समृद्धि निहित है। बालक के जीवन की नींव बाल्यकाल में पड़ती है। चूँकि बालक एक कच्चे घडे क़े समान होता है और छ: वर्ष की आयु आते–आते उसकी ज्ञानात्मक मनौविज्ञानिक एवं अतिदर्शी जड़े मजबूत हो जाती है इसलिये बच्चो के विकास में जन्म से छह: वर्ष का समय अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है।

एक तरफ कहा जाये तो बच्चा हर समाज की बुनियाद है। पर दुर्भाग्यवश हिन्दुस्तान के आजाद होने के 67 वर्ष बाद भी इस देश में बच्चों की हालत काफी दुखद है। खेलते पढ़ने की उम्र में बच्चो को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसका समाधान स्वयं उनके पास नहीं होता है वे तो मासूम होते है, ना समझ होते हैं, वे तो समाज के इस घिनौनें कृत्य की आंधी में बहा लिये जाते है जहाँ उनका बचपन कहां खो जाता है।

जी हाँ हमारा समाज का एक बदलता परिदृश्य बालको का शोषण जिसे हम **बालशोषण** की संज्ञा देकर एवं इस पर अपने विचार देकर खामोश हो जाते है। हर साल बालदिवस पर बच्चो की स्थिति एवं उनके साथ ही रहे कृत्यों के बारे में चिंता जताई जाती है– और फिर पूरे साल इस मसले पर हम खामोशी की चादर ओढ़ लेते है अब सवाल उठता है कि ऐसे में क्या बच्चों का कल्याण ही पायेगा ? क्या बालशोषण समाज मे समाप्त हो पायेगा?

भारत सरकार के महिला एवं बालविकास मंत्रालय द्वारा बाल शोषण भारत 2007 के अध्ययनानुसार 5–12 वर्ष के उम्र के छोटे बच्चों पर होने वाले शारीरिक,यौन एवं भावनात्मक शोषण के अंतर्गत आता है।

बाल शोषण बच्चों के मानवाधिकारों का उल्लंघन हैं। कुछ समय पूर्व मानवता को शर्मसार कर देने वाला **निठारी काण्ड** उजागर हुआ था। उल्लेखनीय है कि निठारी ने बच्चो का अपहारण करने के बाद उन्हें हवसका शिकार बनाया जाता था। इसके बाद मासूमों को मौत के घाट उतार दिया जाता था।

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय,बीना सागर (म.प्र.) भारत

भारत में बच्चों की दुर्दशा को व्यक्त करता है एक अध्ययन बच्चो के लिए काम करने वाली **गैर सरकारी संगठन(चाइल्ड राइट्स एंड यू क्राई)** ने किया। इस अध्ययन के मुताबिक भारत के तकरीबन 50 प्रतिशत बच्चों को स्कूली शिक्षा नसीब नहीं है,एवं भारी संख्या में बच्चे यौन उत्पीड़न के शिकार हो रहे है,एवं इसके रिपॉट यह भी है कि हर साल भारत में 12 लाख बच्चों कुपोषण से मरते है। एवं 90 प्रतिशत बाल मजदूर ग्रामीण इलाकों में है।

भारत सरकार के **महिला एवं बाल विकास मंत्रालय** के बच्चों के शोषण पर आधारित एक अध्ययन के अनुसार भारत के 53.22 प्रतिशत बच्चे यौन शोषण के शिकार है। इस रिपोर्ट में 47.06 प्रतिशत लड़कियां हवस की शिकार है जबकि लड़को के यौनशोषण के मामले 52.94 प्रतिशत है। इसमे 5-12वर्ष के बच्चे यौन शोषण के सर्वाधिक शिकार है उम्र के शुरूआती दौर में 39.58प्रतिशत बच्चों को हवस का शिकार बनाया जा रहा है। इसमें 21.90 प्रतिशत बच्चों की यातना शारीरिक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा। इतना ही नहीं करीब 50.76 प्रतिशत बच्चे नें एक या दूसरे की शरीरिक प्रताड़ना की बात कबूली।

बाल यौन शोषण की **राजस्थान के अलवर** की यह घटना जिसे जानकर हम सन्न रह गये कि यहां गायब की हुई लड़कियों को **ऑक्सीटॉक्सिन** का इंजेक्शन दिया जाता है जिससे बच्चियों की काया जल्द - जल्द चौदह पन्द्रह साल की किशोरियों की तरह हो जायें फिर इन बच्चियों को मोटी रकम पर बाहर देशों में भेजा जाता है। जहां ये यौन शोषण का शिकार होती है।

इस प्रकार बाल शोषण में बालात्कार,अपहरण, छोटे बच्चों की खरीद फरोख्त,कन्याभ्रूण हत्या,राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के ऑकड़ों के अनुसार देश में साल 2007,2008 और 2009 में बच्चों के खिलाफ अपराध क्रंमश: 20,410,22,500 और 24,501 मामले दर्ज किये गये थे। 2007 में बच्चों की हत्या के 1,377 मामले 2008 में 1,296 मामले और 2009 में 1,488 मामले दर्ज किये गये थे जबकि 2007 ने बालात्कार के 5,045 मामले, 28 में 5,446 मामले और 2009 में 5,368 मामले दर्ज किये गये थे। बच्चों के अपहरण के बारे में कहे तो 2007 में 6,377 मामले, 2008 में 7,650 मामले और 2009 में 8,445 मामले दर्ज किये गये थे जबकि वेश्यावृत्ति के लिए लड़कियों की खरीद के 2007 में 40 मामले 2008 में 49 मामले और 2009 में 57 मामले दर्ज किये गये थे।

ब्रेस पूरे द्वारा संवादित ***The Children we Sacrifice*** के अनुसार- 1997 में साक्षी संस्थान द्वारा दिल्ली की 350 स्कूली छात्राओं का सर्वेक्षण किया गया। ज्ञात हुआ कि 63 प्रतिशत लड़कियो का पारिवारिक सदस्यो द्वारा शोषण हुआ। 1999 में **टाटा इंस्टीट्यूटऑफ सोशल सर्विसेज** द्वारा 1994-95 में मुंबई में 150 लड़कियों का अध्ययन किया गया जिसके अनुसार 58 प्रतिशत लड़कियों का यौन शोषण 10 वर्ष की उम्र के पहले हुआ, 50 प्रतिशत का शोषण परिवार के सदस्यो के द्वारा हुआ। 1997 में दिल्ली में **राही संस्थान** के अनुसार 76 प्रतिशत का शोषण बचपन में हुआ, एवं 71 प्रतिशत का शोषण परिवार के सदस्यों द्वारा हुआ। बैगलोर की एक संस्था **'संवाद'** के अनुसार 1996 में हाई स्कूल में पढ़ने वाली छात्राओं में से 47 प्रतिशत का यौन शोषण हो चुका।

वर्तमान में संचार क्रांति के प्रादुर्भाव के साथ बालशोषण बढ़ रहा है। एण्टीवायरस बनाने वाली कम्पन **मैकएफी** की ओर किये गये सर्वेक्षण जो कि 8-12 वर्ष बच्चों पर किया गया। जिसमें यह तथ्य सामने आये कि फेसबुक पर खाता खेलने की आयु न्यूनतम उम्र 13 वर्ष है। पर 70 प्रतिशत बच्चे अपनी उम्र बढ़ाकर इसके सदस्य बन चुके है। विड़म्बना यह है कि 70 प्रतिशत बच्चों नें कहां कि उनके माता पिता ही फेसबुक पर उनका खाता खोला है, ये बच्चे अपरिचितों से फेसबुक पर जुड जातें है। एवं उनका यौन शोषण किया जाता है इसी के जरिये अपहरण भी होता है।

बालशोषण का दूसरा दृश्य हमें बालश्रमिकों के रूप में दृष्टित होता है जिन बच्चों के हाथों में पेन पेसिंल, किताबे होना चाहिये। वहां आज बच्चों के हाथों में बूट-पॉलिस, पत्थर तोड़ने के हथौडा या नहीं तो होटलो में छोटू,छवनी,अठनी के नाम से पुकारे जाते है। जहां उनका शारीरिक शोषण के साथ भावनात्मक शोषण हो रहा है। कारण स्वयं माता पिता है जो आर्थिक तंगी के चलते बच्चों को काम पर भेजते है या बच्चे स्वयं जाते है।

इस प्रकार बालकों के साथ समाज द्वारा यह घिनौनें कृत्य शर्मनाक है जिसको रोकना आवश्यक है। जिसकी शुरूआत परिवार से होना चाहिये। इसके लिए पारंपरिक रूप से भारत में बच्चों के पालन पोषण में पूर्ण सुरक्षा एवं स्वयं की जिम्मेदारी पर ध्यान देने की आवश्यकता है। समाज में हो रहे इस कृत्य को समाप्त करने के लिये कठोर कानून की आवश्यकता है।

इस संगीन अपराध की श्रेणी में आने वाले इस कृत्य की जड़ो को तोड़ने के लिये राष्ट्रीय स्तर पर पहल की आवश्यकता है। आज **अंतराष्ट्रीय बाल अधिकार दिवस 19नवम्ब**र या **बाल दिवस 14 नवम्बर** के मौके पर इसके लिये हामी भर देने कुछ नहीं होगा बल्कि इस दिशा में लगातार प्रयास करते रहने की जरूरत है एक दृढसंकल्प की जरूरत है। ताकि कानून और समाज इसके प्रति जागरूक हो सके। बाल मजदूरों की समस्या को निपटाने के लिये माता पिता समाज एवं देश के नाते बालको के प्रति अपना दायित्व समझे। इसमें मजदूर संगठन,कानून बनाने बाले प्रशासको, स्वयं सेवी संस्थाओं, शिक्षण संस्थाओं को आगे आकर अन्याय को समाप्त करने के लिए जागरूकता अभियान चलाना चाहिये। बाल शोषण से संबधित अनेक ऐसे तथ्यपरख आँकड़ें हैं जो आगे की कारवाई के लिये आधार का काम कर सकते है। अब वह समय आ चुका है कि बाल अधिकारो के प्रति गंम्भीर हो। तभी हम इस समस्या को समाज से नष्ट कर बच्चों के सिसकता बचपन को सांवर सकते है। बस एक हवा एक तेज झोकें का इंतजार है जो अपने साथ इस हैवानियत, को उड़ा ले जाये। ताकि हम अपने बच्चों के पक्ष में सुरक्षित एहसास कर सकें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Breaking the sikwe :Child Sexual Abuse in India (2013) ISBN: I-5í432-980-1
2. सरल कानूनी ज्ञान माला - 17 उत्तराखण्ड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण नैनीताल
3. भारतीय पक्ष : देश का मतिरूप 'शोषित और असुरक्षित'
4. इन्टरनेट के सहारे बढ़ता बाल शोषण : मानसी गोपालकृष्णन (संवादन)
5. बाल अपराध और सिसकता बचपन (8 अप्रैल 2012) शिवेन्द्र मीना और रीना वर्मा

****

ग्वालियर शहर की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. पूनम तिवारी * डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – उत्तम स्वास्थ के लिए उत्तम पोषण लेना अवश्यक है उत्तम पोषण किशोरियों की शारीरिक वृद्धि एवं विकास के साथ साथ उनकी शारीरिक क्षमता को भी प्रभावित करता है पोषण किशोरियों की मानसिक स्थिरता व कार्य के प्रति रूचि को भी प्रभावित करता है किशोरावस्था में किशोरियों में मानसिक व शारीरिक परिर्वतन बहुत ही तीव्र गति से होते हैं उनके शरीर में आये तारूण्य संबंधी परिवर्तनों से उनकी रूचियाँ एवं भावनाऐं भी प्रभावित होती है ये कुछ कर गुजरने की इच्छा रखती हैं जिससे इनकी शारीरिक क्रियाशीलता बढ़ जाती है अत: उनकी पोषाणिक आवश्यकता भी बढ़ जाती है। आज की किशोरियाँ कल की भावी माता भी हैं, क़्योंकि उन्हें भविष्यं में एक स्वस्थ परिवार की संरचना करना है स्वस्थ शिशु का जन्म स्वस्थ समाज की इकाई है। किशोरियों के पोषण का स्तर उनके स्वास्थ्य स्तर को प्रभावित करता है हमारे देश की किशोरियों का स्वास्थ्य स्तर अन्य देशों की किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर से निम्न है हमारे देश में चलाये जा रहे कार्यक्रम तभी सफल होगें जब प्रत्येक स्थान विशेष में किशोरियों के पोषण स्तर का स्पष्ट चित्रण समक्ष होगा अत: शोधार्थी ने ग्वालियर शहर की किशोरियों का पोषण स्तर ज्ञात करने की आवश्यकता महसूस की चूंकि किशोरियाँ उच्चशिक्षा ग्रहण करने हेतु ग्वालियर शहर के विभिन्न छात्रावासों में भी निवास करती हैं और आवास परिवर्तन भी पोषण स्तर को प्रभावित करता है इसके साथ ही छात्रावासी किशोरियाँ वो आहार ग्रहण नहीं कर पाती जो वे घर में रहकर ग्रहण करती थी उपरोक्त समस्त बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुये शोधार्थी ने अपने शोध का विषय 'ग्वालियर शहर की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन चुना है।

उद्देश्य–

1. ग्वालियर शहर की छात्रा वासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों का पोषण स्तर ज्ञात करना
2. छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना
3. किशोरियों के पोषण स्तर को उन्नत बनाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पना – शोध कार्य के लिए निम्नानुसार शून्य परिकल्पना का निर्माण किया 'छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर में कोई अंतर नहीं पाया गया जायेगा।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु ग्वालियर शहर की 13 से 19 वर्ष की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी कुल 300 किशोरियों का चयन दैव निर्दशन विधि से किया गया है। किशोरियों का पोषण स्तर ज्ञात करने हेतु लक्षण परीक्षण विधि का उपयोग किया गया है लक्षण परीक्षण विधि का पोषण स्तर पर निर्धारण में महत्वपूर्ण स्थान है इसके उपयोग से किशोरियों द्वारा गत 4 से 6 सप्ताह तक ग्रहण किये गये आहार में पाये जाने वाले कुल चयापचित भोज्य तत्वों की कमी व अधिकता का परिणाम उनके शरीर पर ज्ञात किया गया, जिसके अन्तर्गत किशोरियों की सामान्य वृद्धि, बाल, आँखें, होठ, जीभ, मसूडे, दाँत, त्वचा एवं नाखून आदि का अवलोकन किया गया। प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण कर किशोरियों का पोषण स्तर ज्ञात किया गया है (तालिका क्र.1 ग्राफ क्र.–1) सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण का उपयोग किया गया है। (तालिका क्र.–2)

तालिका क्रमांक 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्रमांक 1 में ग्वालियर शहर की सामान्य स्वस्थ शारीरिक लक्षण युक्त छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है सामान्य शारीरिक वृद्धि वाली किशोरियों में 20 प्रतिशत छात्रावासी, 33.00 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 59.33 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गयी। इस प्रकार गैर छात्रावासी किशोरियों का छात्रावासी किशोरियों की तुलना में प्रतिशत अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ बालों वाली किशोरियों में 6.66 प्रतिशत में छात्रावासी तथा 17.33 गैर छात्रावासी कुल 24 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गई, जिनमें गैर छात्रावासी किशोरियों का प्रतिशत छात्रावासियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ आँखो वाली किशोरियों मे 24.33 प्रतिशत छात्रावासी, 36.33 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 60.06 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गई, जिसमें गैर छात्रावासियों का प्रतिशत छात्रावासी किशोरियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ वाली होठो, वाली किशोरियों में 28 प्रतिशत छात्रावासी, 32.67 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 66.67 प्रतिशत पाई गईं जिनमें गैर छात्रावासी किशोरियों का प्रतिशत छात्रावासी किशोरियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ मसूड़ों वाली किशोरियों में 45 प्रतिशत छात्रावासी, 49 प्रतिशत गैरछात्रावासी कुल 94 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गई, जिनमें गैर छात्रावासियों का प्रतिशत छात्रावासियों की तुलना में अधिक पाया गया है। सामान्य स्वस्थ दाँतो वाली किशोरियों मे 40.67 प्रतिशत छात्रवासी तथा 47.67 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 86.37 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गई, जिनमें छात्रवासियों का प्रतिशत गैर छात्रावासियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ त्वचा युक्त किशोरियों में 26 प्रतिशत छात्रावासी, 28.33 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 54.33 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गयी। जिनमें गैर छात्रावासियों का प्रतिशत छात्रावासियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य स्वस्थ नाखून वाली किशोरियों में

* अतिथि विद्वान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.) भारत
** संकायाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय स्वशासी कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

35.34 प्रतिशत छात्रावासी तथा 38.34 प्रतिशत गैर छात्रावासी कुल 73.68 प्रतिशत किशोरियाँ पाई गयीं। इनमें भी गैर छात्रवासियों का प्रतिशत छात्रवासियों की तुलना में अधिक पाया गया।

तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि स्वस्थ बालों वाली किशारियों का प्रतिशत सर्वाधिक कम पाया गया जो कि उनके आहार में विटामिन बी 2 की कमी को दर्शाता है। स्वस्थ और जीभ और स्वस्थ त्वचा वाली किशोरियों का प्रतिशत केवल 54.33 प्रतिशत होना भी किशोरियों में बी 2 की कमी को प्रदर्शित करता है।

तालिका क्र.- 2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्र.-2 से स्पष्ट है कि गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर का माध्य छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर के माध्य से अधिक है। किशोरियों के पोषण स्तर के टी. परीक्षण का परिगणित मूल्य 298 स्वतांत्र्यांश पर 19.926 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है अत: शून्य परिकल्पना 'छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा अस्वीकृत होती है अर्थात् छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। इससे स्पष्ट होता है, कि छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर में समानता नहीं पाई गई तथा गैर छात्रावासी किशोरियों का पोषण स्तर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर की तुलना में उच्च पाया गया।

ग्राफ क्र.2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

निष्कर्ष - ग्वालियर शहर की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर में अंतर पाया गया तथा गैर छात्रावासी किशोरियों का पोषण स्तर छात्रावासी किशोरियों के पोषण स्तर की तुलना में उच्च पाया गाया।

सुझाव - किशोरियों के लिये आहार सम्बन्धी सुझाव निम्नानुसार है।

1. किशोरियों को संतुलित आहार लेना चाहिये
2. उन्हें विटा इ2 की कमी को दूर करने के लिये अंकुरित अनाज व दालें, क्सा रहित दूध का पाउडर, अण्डे का पाउडर, दूध, मांस, मछली व हरे पत्तेदार सब्जियों का सेवन करना चाहियें
3. प्रतिदिन आहार में सब्जियों फलों का सेवन करना चाहियें
4. दूध व दूध से बने पदार्थो का प्रतिदिन 3-4 कप सेवन करें
5. ऊर्जा की पूर्ति हेतु, चीनी गुड़ व वसा युक्त भोज्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में ले।
6. दिन में 8-10 गिलास पानी अवश्य पियें
7. पर्याप्त विश्राम एवं व्यायाम करें

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

8. नारायण सुधा आहार विज्ञान, 1982।
9. कुलकर्णी ज्योति सामान्य एवं उपचरात्मक पोषण।
10. सिंह, डॉ. अनीता, 'उपचारात्मक पोषण', स्टार पब्लिकेशन, आगरा।
11. त्रिवेदी आर.एन., शुल्क डी.पी., रिचर्स मेथालॉजी कॉलेज बुक डिपो, 2008।
12. मुकर्जी रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2010।
13. मुकर्जी रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2010।
14. मिश्रा उषा एवं अग्रवाल अल्का, आहार एवं पोषण विज्ञान, नवीन संस्करण साहित्य प्रकाशन।
15. श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीति, मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
16. स्नेहलता, 'पोषण स्तर' पोषण स्तर डी. स्नेहलता डिस्कबरी पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 110002 पृष्ठ क्र.- 9,15-16

ग्राफ क्र.1 : सामान्य स्वस्थ शारीरिक लक्षण युक्त छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों ग्राफ द्वारा प्रदर्शन

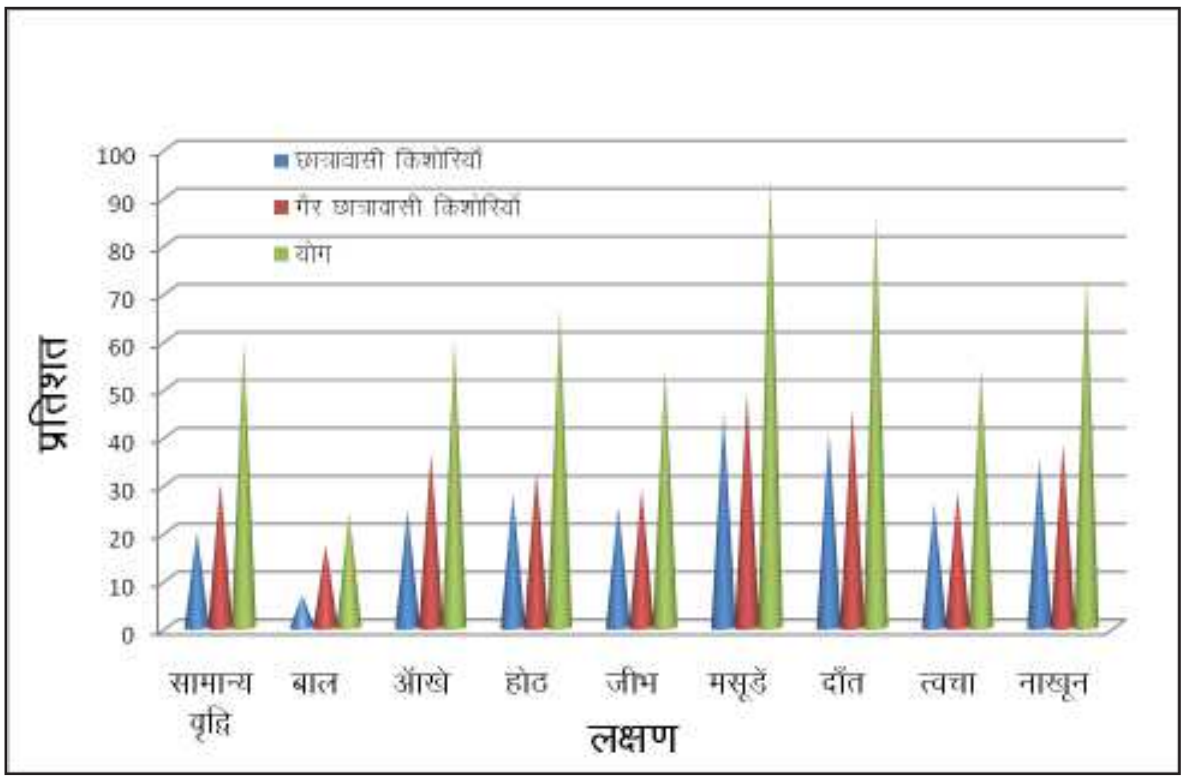

तालिका क्रमांक 1

सामान्य स्वस्थ शारीरिक लक्षण युक्त छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों का विवरण

लक्षण	छात्रावासी किशोरियाँ		गैर छात्रावासी किशोरियाँ		योग	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
सामान्य वृद्धि	87	20.00	91	30.33	178	59.33
बाल	20	06.67	52	17.133	72	24.00
आँखे	73	24.33	109	36.33	182	60.06
होंठ	84	28.00	98	32.67	182	66.67
जीभ	76	25.33	87	29.00	163	54.33
मसूड़े	135	45.00	147	49.00	282	94.00
दाँत	122	40.67	137	45.67	259	86.37
त्वचा	78	26.00	85	28.33	163	54.33
नाखून	106	35.34	115	38.34	221	73.68

तालिका क्र.- 2

किशोरियों का आवास के आधार पर पोषण स्तर का माध्य, मानक विचलन एवं टी. परीक्षण

आवासीय स्तर	माध्य	मानक विचलन	स्वतांत्र्यांश	किशोरियों की संख्या	परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
छात्रावासी किशोरियाँ	25.80	2.411	298	150	19.926	P < 0-05
गैर छात्रावासी किशोरियाँ	30.50	1.562	298	150	19.926	P < 0-05

ग्राफ क्र.2 किशोरियों का आवास के आधार पर पोषण स्तर के माध्य का रेखाचित्र

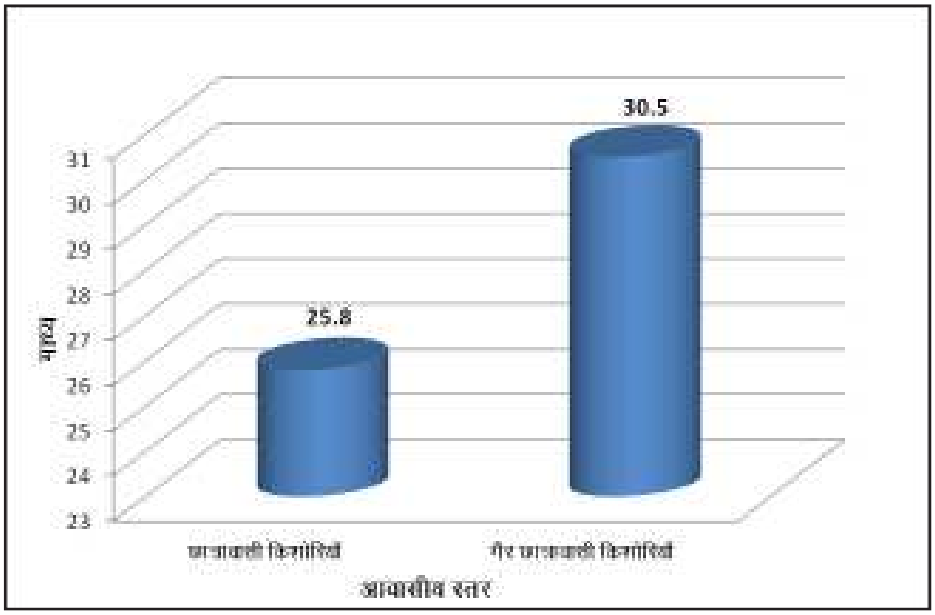

****

ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. नीरु त्रिपाठी * डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – कुपोषण भारत में विस्तृत रूप से व्याप्त है। भारत की लगभग दो तिहाई जनसंख्या पोषण की दृष्टि से कमी युक्त आहार ग्रहण करती है। किशोर बालिकाओं में व्याप्त कुपोषण न केवल उनकी वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करता है वरन् उनके क्रिया कलापों रूचियों चिन्तन तथा सामाजिक भागीदारी को भी प्रभावित करता है। अनेक सर्वेक्षण प्रदर्शित करते हैं कि बड़ी संख्या में लोगों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप संतुलित भोजन प्राप्त नहीं होता है। जिसके कारणों में भोजन संबंधी ज्ञान का अभाव, अंधविश्वास व कुरीतियाँ भी है। पोषण शिक्षा किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान के साथ-साथ अभिवृत्तियों एवं व्यवहार में भी परिवर्तन ला सकती हैं। उनमें अंधविश्वास व कुरीतियों का पोषण स्तर पर पड़ने वाले प्रभावों के प्रति सचेत कर सकती हैं। उपरोक्त समस्त मुद्दों को मद्देनजर रखते हुये शोधार्थी ने अपने शोध का विषय **'ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन** चुना है।

शोध के उद्देश्य –

1. किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान का अध्ययन करना।
2. किशोर बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान पर भोजन शिक्षा का प्रभाव ज्ञात करना।

परिकल्पना – शोध कार्य करने के लिये निम्नानुसार शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया।

'किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।'

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु ग्वालियर शहर के विभिन्न विद्यालयों में से 13 से 19 वर्ष की 300 किशोर बालिकाओं का दैव निदर्शन विधि से चयन किया गया। अध्ययन कार्य तीन चरणों में सम्पन्न किया गया। प्रथम चरण में बालिकाओं का पोषण संबंधी ज्ञान ज्ञात करने के लिये प्रश्नावली का उपयोग किया गया द्वितीय चरण में विद्यालयों के दैनिक शालेय कार्यक्रम में से एक कालखण्ड का चुनाव कर तीन महीनों तक पोषण शिक्षा प्रदान की गयी तृतीय चरण के अन्तर्गत पोषण शिक्षा प्राप्त किशोर बालिकाओं का पुन: प्रश्नावली के माध्यम से भोजन संबंधी ज्ञान प्राप्त किया गया इस प्रकार बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का प्रभाव ज्ञान करने हेतु पोषण शिक्षा देने के पूर्व एवं बाद के प्राप्त आंकड़ो का तुलनात्मक विश्लेषण कर परिणाम प्राप्त किये। सांख्यकी विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन विधियों का उपयोग किया गया (तालिका क्रमांक 1, ग्राफ क्रमांक 1) परिणामों की सार्थकता ज्ञात करने हेतु टी टेस्ट का उपयोग किया गया।

तालिका क्रं. – 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

1. – पोषण शिक्षा देने के पूर्व मध्यमान व मानक विचलन।

2.– पोषण शिक्षा देने के पश्चात् मध्यमान व मानक विचलन।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 13 से 15 वर्षीय बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने के पूर्व एवं पश्चात् 'भोजन संबंधी ज्ञान है का टी परीक्षण मूल्य 30.37 भोजन संबंधी ज्ञान नहीं है का मूल्य 9.32 तथा ' भोजन संबंधी ज्ञान स्पष्ट नहीं है का मूल्य 20.21 प्राप्त हुआ। जो 212 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

इसी प्रकार 15-17 वर्ष की बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने से पूर्व एवं पश्चात् ' भोजन संबंधी ज्ञान है' का टी परीक्षण मूल्य 37.78 'भोजन संबंधी ज्ञान नहीं है' इसका मूल्य 15.84 तथा 'भोजन संबंधी ज्ञान स्पष्ट नहीं है' का मूल्य 21.02 प्राप्त हुआ जो 248 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

17-19 वर्ष की बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने से पूर्व एवं पश्चात् 'भोजन संबंधी ज्ञान है' का टी परीक्षण मूल्य 28.06, 'भोजन संबंधी ज्ञान नहीं है' का मूल्य 5.59 तथा 'भोजन संबंधी ज्ञान स्पष्ट नहीं है' का मूल्य 14.39 प्राप्त हुआ। जो कि 134 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

अत: शोध कार्य का उद्देश्य 'किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन करना के लिये निर्मित शून्य परिकल्पना 'किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा। अस्वीकृत होती है। उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि भोजन संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का प्रभाव पड़ता है। अत: शिक्षण के पश्चात् किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान में शत-प्रतिशत वृद्धि होती है।

ग्राफ क्र. 1(अगले पृष्ठ पर देखें)

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि पोषण शिक्षा का किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अत: इसे औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में अनिवार्यत: सम्मिलित करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. सिंह, डॉ. अनीता, 'उपचारात्मक पोषण' स्टार पब्लिकेशन, आगरा।
2. नारायण सुधा आहार विज्ञान, 1982
3. कुलकर्णी ज्योति सामान्य एवं उपचरात्मक पोषण

* अतिथि विद्वान (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.) भारत
** संकायाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय स्वशासी कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

4. श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीति, मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा
5. मिश्रा उषा एवं अग्रवाल अल्का, आहार एवं पोषण विज्ञान, नवीन संस्करण साहित्य प्रकाशन
6. राणावत, रमा, 'आहार नियोजन' विश्वभारती पब्लिकेशन 4378/4बी, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ.क्र. 2-5
7. पल्टा, डॉ. अरूणा, 'आहार एवं पोषण' शिवा प्रकाशन, खजूरी बाजार, इन्दौर, पृष्ठ क्र. 97

तालिका क्रं. - 1

किशोर बालिकाओं के भोजन संबंधी ज्ञान के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण की तालिका

क्रं.	समूह	मध्यमान		मानक विचलन		टी परीक्षण का मान	DF	मध्यमान
		A	B	A	B			
1.	समूह 13-15 वर्ष, ज्ञान है	26	99.56	22.39	11.24	30.37	212	0.01
2.	ज्ञान नहीं है	31.06	7.31	24.13	10.6	29.32	212	0.01
3.	स्पष्ट ज्ञान नहीं है	49.94	0.13	25.50	0.25	20.21	212	0.01
4.	समूह 15-17 वर्ष, ज्ञान है	30.69	122.87	26.01	8.23	37.78	248	0.01
5.	ज्ञान नहीं है	38.06	2.13	23.99	8.23	15.84	248	0.01
6.	स्पष्ट ज्ञान नहीं है	56.25	0.00	29.92	0.00	21.02	248	0.01
7.	समूह 17-19 वर्ष, ज्ञान है	15.56	68	15.91	0.00	28.06	134	0.01
8.	ज्ञान नहीं है	20.31	0.00	17.45	0.00	5.59	134	0.01
9.	स्पष्ट ज्ञान नहीं है	32.13	0.00	18.40	0.00	14.39	134	0.01

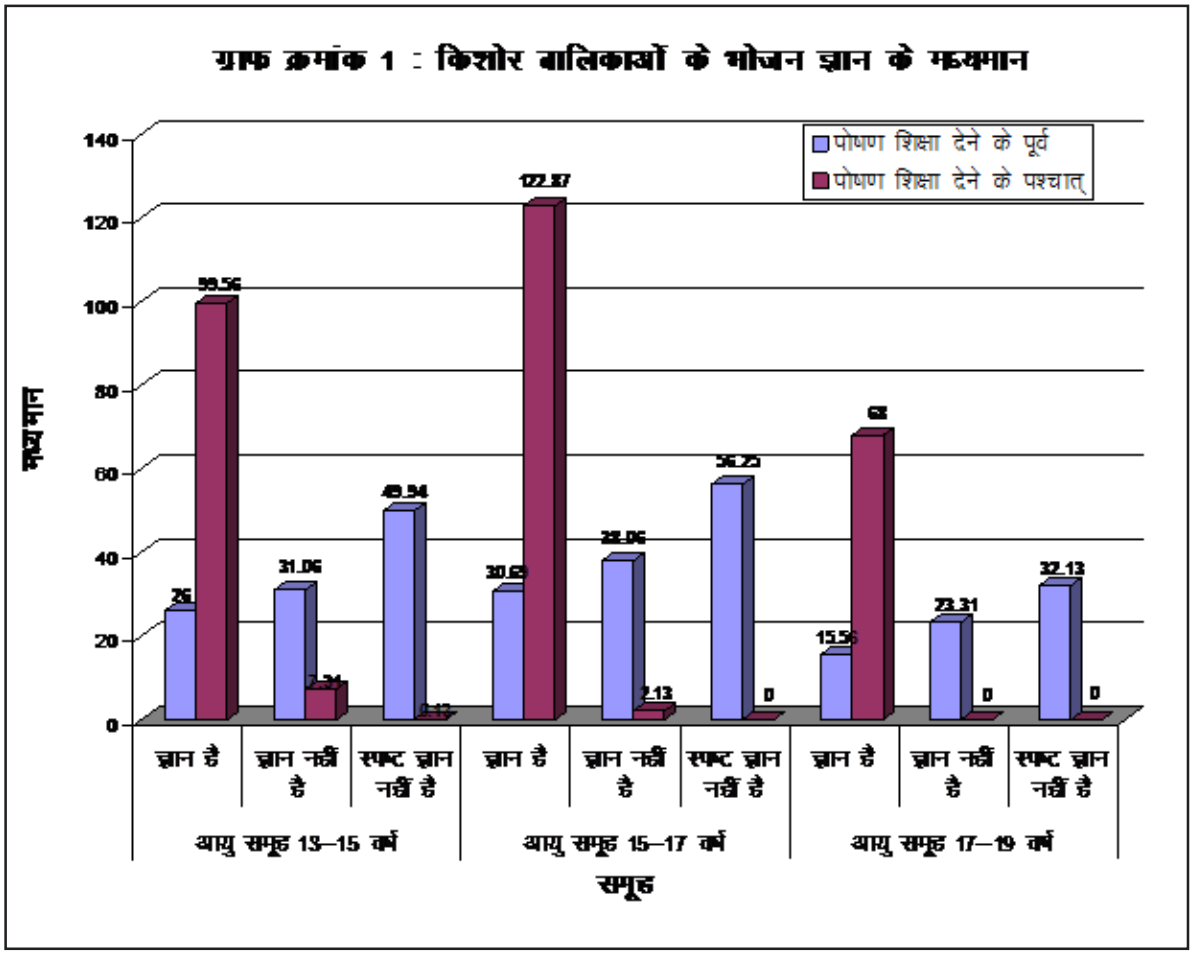

****

फास्ट-फूड उपभोग करने वाले बालक/बालिकाओं का एन्थ्रोपोमेट्रिक अध्ययन- सागर शहर के सन्दर्भ में

डॉ. आराधना श्रीवास * डॉ रेनूबाला शर्मा * *

शोध सारांश – मानव जीवन में बाल्यावस्था का अत्यधिक महत्व है। अंग्रेजी के महाकवि मिल्टन जी ने कहा है- "Child hood shows the man, as morning shows the day." अर्थात जिस प्रकार सुबह से दिन का पता चलता है उसी प्रकार बाल्यावस्था व्यक्ति की परिचायक होती है। अंग्रेजी के ही एक अन्य कवि वर्ड्सवर्थ का कथन है "The Child is father of man." अर्थात् बालक मनुष्य का पिता है। ये दोनों उक्तियाँ बाल्यावस्था के महत्व को दर्शाती हैं। आज जो बालक है, कल वे ही राष्ट्र के कर्णधार होगें, अर्थात् बाल्यावस्था मानव जीवन की एक अत्याधिक महत्वपूर्ण अवस्था है।

बाल्यावस्था शारीरिक विकास, मानसिक विकास, प्रत्ययों के निर्माण, आदतों के निर्माण, सीखने की क्षमता, अनुभव अर्जन की दृष्टि से जीवन की एक अद्वैत अवस्था है इस समय बालक तीव्र गति से एक ओर अपनी शारीरिक संभावनाओं को प्रकट करता है तो दूसरी ओर अपने वातावरण के अनुभवों को द्रुत गति से ग्रहण करने की योग्यता को विकसित करता है। शिक्षण की दृष्टि से भी यह जीवन का सर्वश्रेष्ठ समय है।

प्रस्तावना – डॉक्टर जाकिर हुसैन जी ने कहा था बालक ईश्वर का अंश है। वह हमारी सम्पत्ति नहीं है, वह किसी का खिलौना भी नहीं है। वह तो हमारे पास ईश्वर और मनुष्य की एक धरोहर है, आप उस पर जुल्म नहीं करें।

बाल्यकाल मानव जीवन की अपरिपक्वावस्था होती है। इस अवस्था में बालक की स्थिति कुम्हार के उस कच्चे घड़े के समान होती है, जिसे वह कुशल हाथों से सजा संवार कर कलात्मक एवं आकर्षण रूप दे सकता है, या फिर अपने फूहड़ हाथों से भद्दी आकृति में भी परिवर्तित कर सकता है। शिशु किसी आदत को लेकर जन्म नहीं लेता वह तो अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तथा इस जटिल एवं नवीन वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने के लिये कुछ क्रियाएँ करता है। यही प्रारम्भिक क्रियाएँ उत्तरोत्तर उसके विकास का आधार बनती जाती है।

बालक का स्वास्थ्य एवं विकास उचित तथा योग्य पोषण पर निर्भर करता है। उचित तथा योग्य पोषण से तात्पर्य समस्त भोज्य तत्वों की निर्धारित मात्रा से है। भोज्य तत्वों की मात्रा भोज्य पदार्थों की विशिष्ट मात्रा से प्राप्त करना पड़ती है।

फास्ट-फूड – वर्तमान भौतिक सम्पन्नतावादी युग में फास्ट-फूड किसी परिचय का मोहताज नहीं है। वर्तमान समय में दो वर्ष के छोटे बच्चे से लेकर साठ वर्षीय दादा-दादी भी फास्ट-फूड के विभिन्न व्यंजनों का मौका मिलते ही लुत्फ उठाते हैं। परंतु वह यह नहीं जानते कि फास्ट-फूड से सबसे बड़ा नुकसान हमारे स्वास्थ्य को ही भुगतना पड़ता हैं और यह भी सत्य हैं कि फास्ट-फूड घर में बनाये हुये भोजन कि अपेक्षा अधिक हानिकारक होता हैं।

ऑक्सफोर्ड खाद्य एवं स्वास्थ्य शब्दकोश के अनुसार, "फास्ट-फूड सुविधा जनक खाद्य है जो बहुत जल्दी तैयार एवं परोसे जा सकते हैं।"

मैकडॉनल्ड्स के अनुसार, "फास्ट-फूड वह फास्ट सर्विस है। जो बगैर किसी वेटर की सहायता के आपके मांग करने पर आपका स्वादिष्ट व पसंदीदा फूड आपके पास पहुँच जाये।"

- **पाण्डेय श्रीमती सुनीता (2007)** बालक-बालिकाओं की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ उनके माता-पिता की आवश्यकताओं से भी अधिक हो जाती है परन्तु उचित पोषणाहार के अभाव में बालिकाएँ कमजोर हो जाती हैं और उनका शारीरिक, मानसिक विकास बाधित हो जाता है इसलिए बालिकाओं के पोषणाहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए परन्तु अक्सर उसे अपने भोजन से यह सन्तुलित पोषणाहार पूर्ण रूप से नहीं मिल पाते हैं और परिणामस्वरूप बालिकाएँ कुपोषण का शिकार हो जाती हैं।

काजीपुर शहर में किये गये अध्ययन के अनुसार उच्च पोषण समूह के प्रयोज्यों का शारीरिक विकास, निम्न पोषण समूह के प्रयोज्यों की अपेक्षा अधिक संतुलित व अच्छा पाया गया। शारीरिक विकास के प्रचल लम्बाई, वजन तथा छाती की परिधि पर पोषण स्तर का प्रभाव अधिक देखने को मिला। जिसमें केवल सिर की परिधि का विकास दोनों समूह के प्रयोज्यों का भारतीय चिकित्सीय अनुसन्धान परिषद् (1968) द्वारा अनुशंसित मानक माप अर्थात् विकास से अच्छा पाया गया किन्तु उच्च पोषण समूह के प्रयोज्यों का छाती का विकास निम्न पोषण समूह प्रयोज्यों की अपेक्षा अधिक अच्छा पाया गया। अत: यह स्पष्ट होता है कि बालिकाओं का उत्तम शारीरिक विकास उसके उत्तम पोषण स्तर पर निर्भर करता है जैसा बालिकाओं का पोषण स्तर होगा वैसा ही उसका शारीरिक विकास होगा।

- **हजारा व अन्य (2009)** -14 से 16 वर्ष के इस्लामाबाद के शासकीय शाला में पढ़ने वाले बालक-बालिकाओं पर एक सर्वेक्षण किया गया प्रश्नावली द्वारा एन्थ्रोपोमेट्रिक आँकड़े तथा भोजन सम्बन्धित आदतों पर प्रश्न पूछे गये। इस अध्ययन में BMI की गणना कर उसका WH (2007) के आँकड़ों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन किया गया। परिणाम के अनुसार यह निष्कर्ष निकाला गया कि अधिकांश बालक-बालिकाओं के द्वारा प्रतिदिन 3 बार भोजन (Meal) लिया जाता है। 79.5 प्रतिशत द्वारा नाश्ता नियमित रूप से लिया जाता है (जो उनके उच्च पोषण स्तर को परिलक्षित करता है। 82.8 प्रतिशत बालक-बालिकाएँ दोपहर का भोजन नियमित रूप से लेते हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि फास्ट-फूड का उपभोग 95.4 प्रतिशत द्वारा नियमित रूप से किया जाता है। निष्कर्ष में यह भी पाया गया कि 14.1 प्रतिशत किशोर मोटापे से ग्रसित थे जबकि 12.2 प्रतिशत दुबलेपन से।
- **मुखोपाध्याय व अन्य (2005)** ने बंगाली बालक-बालिकाओं पर अध्ययन किया और अपनी रिपोर्ट में बताया कि 41.08 प्रतिशत बालक एवं

*अतिथि विद्वान (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या कमला नेहरु महाविद्यालय, दमोह (म.प्र.)
**प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष गृहविज्ञान, शासकीय स्वशासी कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

30.61 प्रतिशत बालिकाएँ अल्पपोषण के शिकार थे।

- **चौधरी व अन्य (2000)** ने वाराणसी के ग्रामीण क्षेत्र में किये गये अध्ययन की रिपोर्ट में बताया कि 68.52 प्रतिशत किशोर बालक-बालिकाएँ सामान्य से कम वजन की थी।
- **डॉ. मुनीरा एम. हुसैन एवं रशिदा कांचवाला इन्दौर (2006)** के कथन के अनुसार बालक-बालिकाओं में खाने के तरीके प्रौढ़ावस्था में सेहत को प्रभावित कर सकते हैं क्योंकि भोजन के चुनाव से सम्बन्धित व्यवहार को हम 2 से 18 वर्ष की आयु से जान सकते हैं विशेषज्ञों का कहना है कि व्यवधान (Intervention) का आरम्भ इस आयु के पूर्व या इसी समय में होना चाहिए जब व्यवहारों के प्रतिमान परिवर्तन के कम विरोधी होते हैं जिससे व्यवधान अधिक प्रभावशाली हो सके।

इस आयु में बालक-बालिकाएँ अधिक स्वतन्त्र होकर नई-नई पसन्द की ओर आकर्षित होते हैं जो आगे अस्वास्थ्यकर आदतों की ओर ले जाती हैं आजकल युवाओं का स्वास्थ्य से सरोकार मीडिया मित्र मंडली परिवार और सामाजिक क्रियाकलापों से संचालित होते हैं। इसके बावजूद भी अस्वास्थ्यकर आहार आदतें बालक-बालिकाओं में अधिकता से उपस्थित होती है। जो हमें उनके खानपान की गड़बड़ियों जैसे बुलिमिया (बार-बार अधिक खाना), अनेक्झेरिया (किशोरियों में मोटे हो जाने का भय) के रूप में दिखाई देता है। प्रस्तुत अध्ययन के अवलोकन से स्पष्ट है कि बालक-बालिकाओं में खान-पान की आदतें नियमित नहीं होती जिसके कारण खानपान की आदतों तथा वजन के मध्य सम्बन्ध भी देखा गया है बालक-बालिकाओं में खानपान की अनुचित आदतों एवं उनके शरीर के वजन का स्तर स्पष्ट करता है कि युवाओं के लिये शिक्षा का ऐसा पैकेज तैयार किया जाना चाहिए जो उनमें एकदम सही आहार आदतें तथा सन्तुलित वजन का संदेश दे सके क्योंकि यह अवस्था बालक-बालिकाओं में बनी आदतें आजीवन बनी रहती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बालक-बालिकाओं के वजन एवं ऊँचाई का तुलनात्मक अध्ययन वक्षना है।

उपकल्पना– 1. बालक-बालिकाओं की ऊँचाई में अन्तर पाया जाता है। 2. बालक-बालिकाओं के वजन में अंतर पाया जाता हैं।

प्रतिदर्श प्रारूप – दैव निर्दशन पद्धति से बालकों का चुनाव कर उनकी जानकारी प्राप्त की गयी। जानकारी के अन्तर्गत ऊँचाई व वजन का परीक्षण किया गया। जानकारी प्राप्त करने के लिये स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया।

अनुसंधान प्रविधि – यह अध्ययन सागर मध्यप्रदेश में किया गया। अध्ययन हेतु 300 बालक व बालिकाऐं लिये गये। जिनका आयु वर्ग 8- 13 वर्ष था।

प्रस्तुत अध्ययन में चार शालाओं का सर्वेक्षण किया है जिसमें वात्सल्य पब्लिक स्कूल (सिविल लाईन्स) में बालकों की संख्या 40(26.66 प्रतिशत) व बालिकाओं की संख्या 38(25.33 प्रतिशत), एस.के.आर. नेशनल स्कूल (मकरोनिया) द्वारा बालकों की संख्या 35(23.33 प्रतिशत) व बालिकाओं की संख्या 37(24.66 प्रतिशत), जैन हायर सेकेन्डरी स्कूल (बस स्टेण्ड) द्वारा बालकों की संख्या 38(25.33 प्रतिशत) व बालिकाओं की संख्या 36(24 प्रतिशत), बाल भारती स्कूल (तहसीली) द्वारा बालकों की संख्या 37(24.66 प्रतिशत)व बालिकाओं की संख्या 39(26 प्रतिशत) का चयन किया गया है।

बालक पर देश की समृद्धि की बुनियाद टिकी है इस अवस्था में प्राप्त पोषण तथा परिस्थितियाँ बालक की भविष्य निर्माणक होती हैं। बाल्यावस्था वृद्धि एवं विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। बालकों का विकास उनके द्वारा लिये जाने वाले आहार की समुचित मात्रा एवं उसमें उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा पर आधारित होता है। आहार एवं पोषण के साथ अन्य कारक जैसे वंशानुक्रम एवं वातावरण भी बालक के विकास को प्रभावित करते हैं। इस समय बालक अपने व्यक्तित्व के अनेक तत्वों को समाहित करता हुआ विकास की ओर तीव्रता से बढ़ता है। उसका शारीरिक विकास भी तीव्रता से होता है, कद में वृद्धि होती है, तीव्र गति का मानसिक विकास बालक को जिज्ञासु बना देता है। क्रियात्मक विकास की तीव्र वृद्धि उसे वातावरण से समायोजित होने में मदद करती है तथा द्रुतगति से होने वाला भाषा विकास, विकास प्रक्रिया की बाधाओं को दूर करता है ये समस्त विकास सामाजिक विकास की ओर अपना फैलाव करते है बौद्धिक योग्यता में तीव्र वृद्धि होती है तथा बालक की आत्मनिर्भरता भी इस अवस्था की प्रमुख विशेषता है। **रॉस** के अनुसार, "बाल्यावस्था मिथ्या परिपक्वता का काल है। बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास में सहसम्बन्ध पाया जाता है।"

शारीरिक विकास- बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के विकास में से शारीरिक विकास का सबसे अधिक महत्व है क्योंकि शरीर ही उसकी सभी क्षमताओं, आवश्यकताओं, भावनाओं और विचारों का आधार तथा संरक्षक होता है।

फैरल के अनुसार, "शारीरिक विकास तथा उसके सामान्य व्यवहार का सहसम्बन्ध इतना महत्वपूर्ण होता है कि यदि समझना चाहें कि भिन्न-भिन्न बालकों व बालिकाओं में क्या समानतायें हैं, क्या भिन्नताएँ है आयु वृद्धि के साथ व्यक्ति में क्या-क्या परिवर्तन होते है तो हमें बालक-बालिकाओं के शारीरिक विकास का अध्ययन करना होगा।"

शारीरिक लम्बाई में वृद्धि - बालक और बालिकाओं में वार्षिक ऊँचाई की दर एक जैसी नहीं होती। इसी प्रकार आयु के सभी वर्षों में ऊँचाई एक जैसी नहीं बढ़ती है 5 से 11 वर्ष तक के बालकों की वार्षिक ऊँचाई वृद्धि 4.0 से 7.7 से.मी. और 5 से 12 वर्ष तक की बालिकाओं में 4.9 से 7.2 से.मी. वृद्धि होती है। बालकों की ऊँचाई वृद्धि की दर 14वें वर्ष से और बालिकाओं की 12वें वर्ष से कम होने लगती है।

भार में वृद्धि - बालकों में 5 से 14 वर्ष की आयु तक वार्षिक भार वृद्धि 2.5 से 6.6 कि.ग्रा. बालिकाओं में 2.3 से 5.2 कि.ग्रा. होती है। बालकों में 14 वर्ष की आयु के बाद और बालिकाओं में 13 वर्ष की उम्र के बाद भार वृद्धि दर निरन्तर घटती-बढ़ती रहती है।

तालिका क्र. 1 व ग्राफ क्र. 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)
तालिका क्र. 2 व ग्राफ क्र. 2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

प्रस्तुत अध्ययन में तालिका क्र.1 में बालकों के औसत वजन को दर्शाया गया है। तालिका से स्पष्ट होता है कि बालकों का औसत वजन प्रत्येक बढ़ते हुये आयु समूह के अनुरूप बढ़ रहा है। अधिकतम वजन वृद्धि 11 वर्ष की आयु समूह में 5.27 कि.ग्रा./वर्ष देखी गयी।

बालिकाओं का औसत वजन तालिका क्र.2 में दर्शाया गया है उपरोक्त तालिका के अनुसार बालिकाओं में भी आयु बढ़ने के साथ वजन वृद्धि क्रम:बढ़ती हुई देखी गयी बालिकाओं में भी अधिकतम वार्षिक वजन वृद्धि 4.85 कि.ग्रा./वर्ष 11 वर्ष की आयु में देखी गयी तुलनात्मक रूप से बालक एवं बालिकाओं की अधिकतम वजन वृद्धि 11 वर्ष की आयु में ही देखी गयी। पिछले पांच वर्षों में बच्चों की जीवन शैली में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुये है। बच्चों में शारिरिक व्यायाम एवं मैदानी खेलकूद के स्तर में कमी देखी गई है। बच्चों का अधिकांश समय टेलीविजन एवं कम्प्यूटर के समक्ष बीतता है वस्तुत: उनके शारिरिक विकास के प्रतिमानों में बदलाव देखा जाता है।

तालिका क्र. 3 व ग्राफ क्र. 3 (अगले पृष्ठ पर देखें)
तालिका क्र. 4 व ग्राफ क्र. 4 (अगले पृष्ठ पर देखें)

उचित पोषण एवं स्वास्थ्यकर स्थिति में ऊँचाई विकसित होती है। अपर्याप्त पोषण का प्रभाव शरीर की ऊँचाई में अपर्याप्त वृद्धि के रूप में (बौनापन) दृष्टिगत होता है। प्रस्तुत अध्ययन में 8 से 13 वर्ष आयु समूह के बालक-बालिकाओं की ऊँचाई का अवलोकन किया गया जिसे तालिका क्र.4 व 5 में दर्शाया गया है।

उपरोक्त तालिका के अनुसार बालकों में औसत ऊँचाई 124.72+3.78 मानक विचलन से 152.88+4.59 मानक विचलन पाया गया तथा बालिकाओं में औसत ऊँचाई 120.5+5.75 से 151.04+4.03 पायी गयी। बालकों में अधिकतम ऊँचाई 152.88 से.मी/ वर्ष आयु में तथा बालिकाओं में अधिकतम ऊँचाई 151.04 से.मी./वर्ष आयु पायी गयी। बालक-बालिकाऐं द्वारा लिये गये आहार में पाया गया कि वे भोजन में दूध दही कम लेते पाये गये तथा उनके भोजन में फल व सब्जियों की भी कमी पायी गयी जिससे उनकी उँचाई में अन्तर पाया गया।

निष्कर्ष :

1. प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि बालक एवं बालिकाओं में 8 से 13 वर्ष कि आयु के दौरान ऊँचाई की वृद्धि क्रमिक रूप से बढ़ती हुई पायी गयी।
2. प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि बालिकाओं में औसत वजन एवं ऊँचाई की वृद्धि बालकों की अपेक्षा कम है।
3. अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि बालक-बालिकाओं के फास्ट फूड के बढ़ते आकर्षण के कारण उनमें पोषक तत्वों कि कमी पायी गयी जिससे बालक एवं बालिकाओं (8 से 13 वर्ष) का औसत वजन एवं ऊँचाई कि वृद्धि छउक्ब एवं खउचठ के मानक मूल्य की तुलना में कम है।
4. कुछ बालक-बालिकाओं के भोजन में अनाज की अधिकता होने के कारण उन्हें सन्तुलित भोजन नहीं मिलता पाया गया जिससे वे कुपोषण के शिकार पाये गये व उनके शारिरिक विकास में कमी पायी गयी।
5. प्रस्तुत अध्ययन में पाया गया कि बालक-बालिकाओं के माता-पिता जागरुक न होने के कारण वे अपने बच्चों को सन्तुलित भोजन नहीं दे पाते जिससे उनके वजन और वृद्धि में अन्तर पाया गया हैं।

बालक-बालिकाओं के भोजन में पौष्टिक तत्वों की कमी होने के कारण उनके वजन एवं वृद्धि में कमी पायी गयी। अत: स्पष्ट होता है कि बालक-बालिकाओं की वजन एवं ऊँचाई में अन्तर पाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Bhandari B. (1972) : "Nutritional anthropometry of rural adolescents of Udaipur District", Incl. J. Read, 39-11.
2. Bharti S., Mukharjee D. Bharti P. and Gupta R.(1992) : "Patterns of growth in height and weight of Bengali girls of Howrah District", West Bengal India, Made in India, 72 (G), 423-450.
3. Gour R. Kaur G. and Saini K. (2002) Nutritional Profile 8 growth of Rajput Children in Himachal Pradesh, Made in India, 82 (182); 31-41.
4. Joanne Hendrick, "The whole child developmental education for the early years", sixth edition P.N. 67-77.
5. Mukhopadayay A., Bhadra M. and Bore, K. (2005) : "Anthropometry Assessment of Nutritional status of Adolescents of Kolkata", J. Hum Eco, 18 (3): 213-216.
6. Brook U., Tepper I. (1997) : "High School Students attitudes and knowledge of food consumption and body image, implications for school-based education". Patient Educ. couns, Mar; 30(3) : 283-8.
7. मुखर्जी रवीन्द्र नाथ (2005) "सामाजिक शोध व सांख्यिकी", विवेक प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 30-40।
8. शर्मा वीरेन्द्र प्रकाश (2010), रिसर्च मैथडोलॉजी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, छठा संस्करण, पृ. 125।
9. पाण्डेय एस.एस., अग्रवाल जी.के., सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी।
10. राय पारसनाथ (2008), अनुसंधान परिचय, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, प्रकाशन आगरा, द्वादश संस्करण, पृ. 96।

तालिका क्र. 1
बालकों का औसत वजन

क्र.	आयु (वर्ष में)	बालकों की कुल संख्या	औसत वजन कि. ग्रा.	मानक विचलन (SD)	वार्षिक वृद्धि	NCHS मानक	ICMR मानक
1.	8	18	21.5	±2.26	2.3	27.3	26.42
2.	9	18	23.8	±1.64	3.04	29.9	30.00
3.	10	39	26.84	±3.08	2.89	32.6	32.29
4.	11	26	29.73	±4.31	5.27	35.2	35.26
5.	12	32	35	±5.58	4.94	38.2	38.78
6.	13	17	39.94	±7.09		42.2	42.88

बालकों का औसत वजन

ग्राफ क्र.1 : बालकों का औसत वजन

तालिका क्र. 2
बालिकाओं का औसत वजन

क्र.	आयु (वर्ष में)	बालिकाओं की कुल संख्या	औसत वजन कि. ग्रा.	मानक विचलन (SD)	वार्षिक वृद्धि	NCHS मानक	ICMR मानक
1.	8	20	20.25	±1.83	2.9	26.3	25.97
2.	9	19	23.15	±4.66	3.46	28.9	29.82
3.	10	36	26.61	±3.32	2.14	31.9	33.58
4.	11	24	28.75	±3.80	4.85	35.7	37.17
5.	12	27	33.6	±5.44	4.60	39.7	43.97
6.	13	24	38.20	±5.74		45.0	44.54

ग्राफ क्र.2 : बालिकाओं का औसत वजन

तालिका क्र. 3
बालकों का औसत वजन

क्र.	आयु (वर्ष में)	बालकों की कुल संख्या	औसत ऊँचाई से.मी.	मानक विचलन (SD)	वार्षिक वृद्धि	ICMR मानक	NCHS मानक
1.	8	18	124.72	±3.78	4.39	127.86	130.0
2.	9	18	129.11	±3.32	5.35	133.63	135.5
3.	10	39	134.46	±3.53	1.96	138.45	140.3
4.	11	26	136.42	±3.59	10.2	143.45	144.2
5.	12	32	146.62	±7.26	6.26	148.91	149.6
6.	13	17	152.88	±4.59		154.94	155.0

तालिका क्र. 4
बालिकाओ की औसत ऊँचाई

क्र.	आयु (वर्ष में)	बालिकाओ की कुल संख्या	औसत ऊँचाई से.मी.	मानक विचलन (SD)	वार्षिक वृद्धि	ICMR मानक	NCHS मानक
1.	8	20	120.0	±5.75	9.6	127.22	126.4
2.	9	19	130.10	±3.25	3.2	133.08	132.2
3.	10	36	133.30	±2.93	7.95	138.90	138.3
4.	11	24	141.25	±4.39	6.08	145.00	144.8
5.	12	27	147.33	±6.35	3.71	150.98	151.5
6.	13	24	151.04	±4.03		153.44	157.1

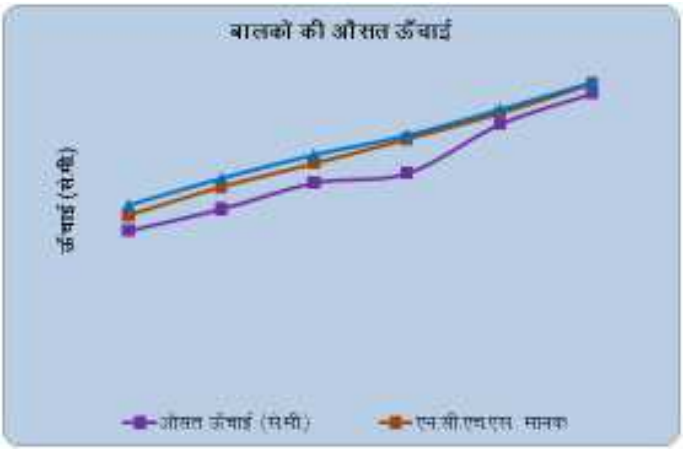

ग्राफ क्र.3 : बालको की औसत ऊँचाई

ग्राफ क्र. 4 : बालिकाओ की औसत ऊँचाई

****

A Study On Service Quality Of Public Sector Banks In Indore

Dr Sumeet Khurana * Vaibhav Jain **

Abstract - Customer service is one integral part of any feature of banking and it defines future of any banking organization. Government of India is targeting to open one account every household through its Jan Dahn Yojna. Public sector banks have to play a major role in achieving this target of the Government. But success can be achieved by the Banks only if customer gets delighted through the services of the banks. Present study targets on finding out the gap between the expected and experienced services in public sector banks in Indore, the business capital of Madhya Pradesh. The gap has been identified by using SERVQUAL questionnaire which was responded by hundred respondents who were customers of various public sector banks in Indore. Various areas have been identified where there is huge scope of improvement in the banks.

Key Words - Public Sector banks, SERVQUAL, gap identification, customer delight

Introduction - The Banking industry is said to be the engine of economy. A strong banking sector is important for flourishing economy (Ibrahim, M. S., & Thangavelu, R. (2014)). Dynamic world today is showing the rapid changes in the market, including banking sector. With the advent of new technologies, economic qualms, severe competition, customer are becoming contentiously demanding.

Customer service is one integral part of any feature of banking and it defines future of any banking organization. The whole range of banking activity revolves around the customer. Success of banking industry lies in the satisfaction of customers. Customer satisfaction has to be seen from vivid angles viz. assurance, reliability, responsiveness, physical facilities and empathy, keeping in view the increasing market size and intense competition (Rajendran, P., & Ibrahim, D. M. S. (2014)). According to a study by Krishna Naik (2010) bank customers have highest expectations on the promptness of service, accuracy of transactions, security issues and concerns.

India has understood the importance of Banks today for the economic development. National banks offer credit and financial services to different sectors of economies. Investments made by national banks are spread widely across the nation, therefore influencing economical development across an entire country or geographic region. Primarily, the participation of banks in economic development focus around providing credit and services to generate revenues, which are then invested back into a local, national, or international community. Although the role can vary, factors such as access to credit and bank investment policies or practices remain constant, no matter the scope of economic development. Stronger banks can play a major role mobilizing the funds and hence development of the economy. Stronger are those banks which have a huge customer base.

Current Prime Minister of India Mr Narendra Modi launched the JAN DHAN YOJANA or Scheme for people's wealth which plans for every Indian household to have bank account. India has grown to become Asia's third largest economy, but nearly two-fifth of its 1.27 billion people do not have a bank account. This leaves them dependent on moneylenders and other informal financing routes (PTI).

Indian Public sector banks can play a major role of being a catalyst in the growth of Indian economy. But this role can be the best only when it provides best services to its customers.

There arises a need to find out the service quality of Public sector banks in India so as to suggest them the areas where they can work upon so as to emerge as stronger catalyst of growth in economy.

Literature review - Customers in developing economies seem to keep the "technological factors" of services such as core service and systematization of the service delivery as the yardstick in differentiating good and bad service **G.S. Sureshchandar, Chandrasekharan Rajendran, R.N. Anantharaman (2003).** Place/ambience is also becoming the leading factor in determining customer satisfaction **Abdullah (2009).**But customers have highest expectations on the promptness of service, accuracy of transactions, security issues and concerns **Krishna Naik C.N**.(**2010).** Bankers,however, should also concentrate on all the Human aspect i.e. in terms of human interaction with their customers to get better result. The ultimate success of any service quality programme implemented by a bank can only be gauged by creation and retention of satisfied customers. The role of customer contact personnel in the attainment of these goals is of paramount importance. Therefore, in their efforts to deliver high quality services to their external publics (i.e. clients), banks should not ignore the specific needs of their internal publics, notably their customer contact employees **Yavas, Bilgin and Shemwell** (1997).

To measure the satisfaction level of customers SERVQUAL scale provides greater diagnostic information than the SERVPERF scale **Madhukar, Nataraajan, John (1999).**

Objective of the study - To measure the service quality gap between expected and perceived banking services by customers of Public sector banks in Indore.

* **Professor, Faculty of Management, Acropolis Technical Campus, D.A.V.V., Indore (M.P) INDIA**

** **Research Scholar, Faculty of Management, Acropolis Technical Campus, D.A.V.V., Indore (M.P) INDIA**

Research methodology - The measurement of subjective aspect of customer service depends on the conformity of the expected benefit with the perceived result. This in turn depends upon the customer's imagination of the service they might receive and the service provider's talent to present this imagined service.

Present study is based on well known servqual tool developed by 'Parsu' Parasuraman, Valarie Zeithaml and Len Berry, in 1985 to measure difference between customers expectations of 'what they want' and their perception of 'what they get.'

Dimensions of Service Quality: A customer will have an expectation of service determined by factors such as recommendations, personal needs. The expectation of service and the perceived service result may not be equal, thus leaving a gap. This model identifies 5 gaps viz.

Gap 1: Between consumer expectation and management perception

Gap 2: Between management perception and service quality specification

Gap 3: Between service quality specification and service delivery

Gap 4: Between service delivery and external communication

Gap 5: Between expected service and experienced service

Importance Of Service Quality In Banks - Maximizing customers satisfaction through quality customers service has been described as 'the utilimate weapon' by Davidow and vital(1989). According to them, in all industries, when competitors are roughly matched, those with stress on customer's point of view may be sound and interesting at this juncture. Such an analysis will provide banks, a quantitative estimate of their service being perceived with intricate details such as whatever banks are meeting the expectations of the customers or not.

Present study also focuses on finding out the Gap between expected and experienced banking services from the customers of public sector banks.

The data was collected through well structured questionnaire using SERVQUAL tool consisting 22 questions for measuring expectation on seven point scale and 22 questions measuring experience on seven point scale of hundred respondents from Indore. The results of the same can be seen as under: **S.No**

From the above self explanatory chart and table we can easily see what the customers of public sector banks perceive and what they actually get from their banks. The biggest bar is the reflection of biggest gap, where the bankers have to work more to minimize the gap and improve the service quality.

Conclusion - The expectation of a customer about individual attention is to high as compare to what they perceive, as a result the gap in individual attention is the maximum. Customers in the public sector bank seek more individual attention which they don't exactly get. There may be various reasons for the same but the biggest reason is the occupancy of the employee. There are instances where customers can get most of their queries solved through ATMs but still they visit branch for getting the solutions. On the other side most of the private banks like IndusInd have already launched a new customer service called video branch to enable customers to do a video conference with bank staff at their convenience as per the information from Journal of banking finance Vol. XXVII No 7 July 14. Such type of services may hopefully reduce the gap of expected and perceived.

Apart from this various issues like promptness of service offered by public sector banks, knowledge of the employee about the bank and related services, nature of the employees plays a very important role in satisfying the customers. Since banking services involves feeling of trust, that feeling should also be inculcated among the customers from the bankers.

References -

1. Ibrahim, M. S., & Thangavelu, R. (2014). A Study on the Composition of Non-Performing Assets (NPAs) of Scheduled Commercial Banks in India. *Journal of Finance*, *2*(1), 31-48.
2. Rajendran,P.,&Ibrahim,D.M.S.(2014).Factors Influencing The Customers'satisfaction At Commercial Banks: An Analytical Study. *International Journal Of Applied Services Marketing Perspectives*,*3*(1), 726-729
3. Yavas, U., Bilgin, Z., & Shemwell, D. J. (1997). Service quality in the banking sector in an emerging economy: a consumer survey. *international journal of bank marketing*, *15*(6), 217-223.

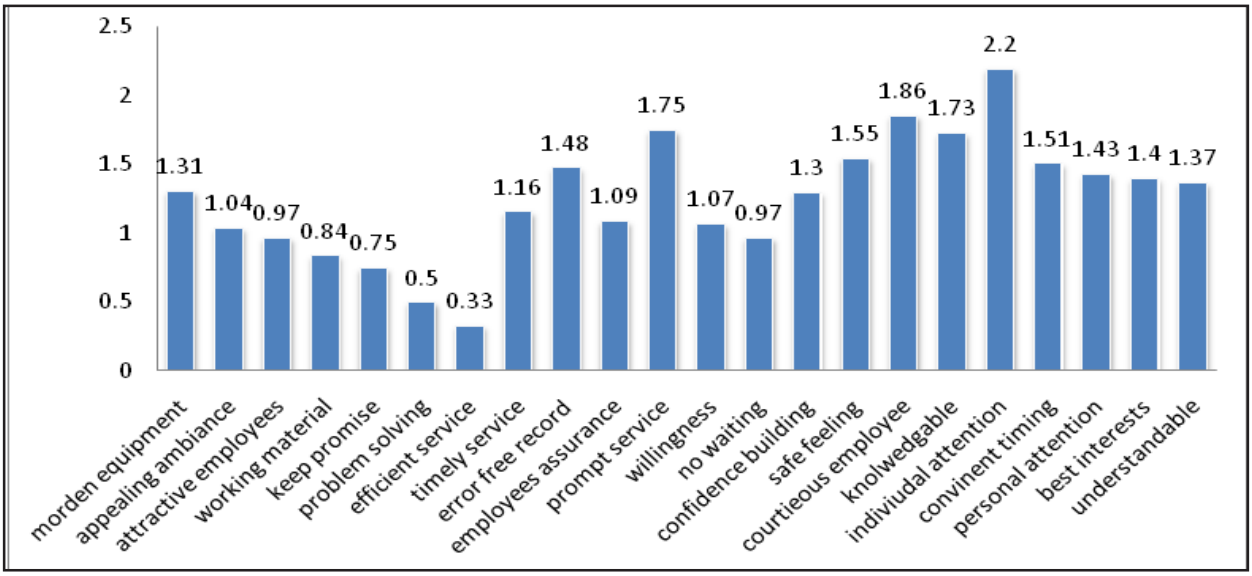

Chart Reflecting Gap In Service Quality

S.N.o	Statement	Expectation avg.	Perception avg.	Gap
1	The bank has modern looking equipment.	4.7	3.39	1.31
2	The bank's physical features are visually appealing.	4.21	3.17	1.04
3	The bank's reception desk employees are neat appearing	4.06	3.09	0.97
4	Materials associated with the service.	3.18	2.34	0.84
5	When the bank promises to do something by a certain time, it does so.	3.67	2.92	0.75
6	When you have a problem, the bank shows a sincere interest in solving it.	3.6	3.1	0.5
7	The bank performs the service right the first time.	3.53	3.2	0.33
8	The bank provides its service at the time it promises to do so.	3.97	2.81	1.16
9	The bank insists on error free records.	4.79	3.31	1.48
10	Employees in the bank tell you exactly when the service will be performed.	3.51	2.42	1.09
11	Employees in the bank give you prompt service.	3.98	2.23	1.75
12	Employees in the bank are always willing to help you.	3.54	2.47	1.07
13	Employees in the bank are never too busy to respond to your request.	3.59	2.62	0.97
14	The behavior of employees in the bank instills confidence in you.	3.53	2.23	1.3
15	You feel safe in your transactions with the bank.	4.82	3.27	1.55
16	Employees in the bank are consistently courteous with you.	4.56	2.7	1.86
17	Employees in the bank have the knowledge to answer your question.	4.6	2.87	1.73
18	The bank gives you individual attention.	4.8	2.6	2.2
19	The bank has operating hours convenient to all its customers.	4.12	2.61	1.51
20	The bank has employees who give you personal attention.	3.49	2.06	1.43
21	The bank has your best interests at heart.	3.75	2.35	1.4
22	The employees of the bank understand your specific needs.	3.97	2.6	1.37

****

Corporate Social Responsibility: Issues And Challenges

Ankita Jain * Prof. Rajeev Jain **

Abstract - A few decades before the business houses started realizing that they would have to rise over and above" the profitability" and take care of all those associated with their survival in the society directly or indirectly. This realization resulted into the concept of Corporate Social Responsibility (CSR). This research paper moves around the findings of the issues and challenges in Rajasthan as well as in India.
Key Words : Corporate Social Responsibility, CSR, Stakeholders.

Introduction -

Literature Review - The concept of CSR developed in the western world and became prevalent in the early 1970s. During the 1980's to 2000, corporations recognized and started accepting a responsibility towards society especially which they were operating. Corporate Social Responsibility (CSR) focuses on the wealth creation for the optimal benefit of all stakeholders – including shareholders, employees, customers, environment and society. The term 'stakeholders' was used to describe corporate owners beyond shareholders as a result of a book titled "Strategic Management: A Stakeholder Approach" by R. Edward Freeman[1] in the year 1984.

With regard to understanding the term CSR, Bowen[2] (1953) says, "CSR refers to the obligations of businessmen to pursue those policies to make those decisions or to follow those lines of relations which are desirable in terms of the objectives and values of our society. Frederick[3] (1960) says 'social responsibility means that businessmen should oversee the operation of an economic system that fulfills the expectations of the people'. Further to it, Davis[4] (1960) asserted that some socially responsible business decision can be justified by a long, complicated process of reasoning as having a good chance of bringing long-run economic gain to the firm, thus paying it back for its socially responsible outlook .

Aspects of Social Responsibility:

- ***Responsibility towards Itself -*** It is the responsibility of each Business to work towards growth, expansion and stability and thus can earn profits.
- ***Responsibility towards Employees -*** Employees are the most important part of an organization. Following are some of the responsibilities which an organisation has towards its employees -
  - Timely payment of wages, salary and perks etc.
  - Hygienic environment at the working place.
  - Good and impartial behaviors with all employees.
  - Health care and recreational activities
  - Encouraging employees to take part in managerial decisions
- ***Responsibility towards Shareholders -*** It is the responsibility of Business entity to safeguard the interest of the shareholders and make efforts to provide a reasonable return on their investment.
- ***Responsibility towards the State -*** Out of the profit available, the state is entitled to get a certain share as per the tax laws. Utmost transparency has to be exerted regarding the profit & loss account and the balance sheet.
- ***Responsibility towards Consumers -*** The Company should maintain high quality standards at reasonable prices. It should not enter to any kind of malpractices for earning extra profits.
- ***Responsibility towards Environment -*** It is the responsibility of the organization to contribute to the protection of environment. It should practice eco friendly practices and should produce eco-friendly products.

Objective of the Study - To study the issues and challenges for Corporate Social Responsibility in India.

Research Methodology - Exhaustive literature survey regarding the topic and related concepts has been done. Secondary data - quantitative and qualitative both - are collected from various sources including books, research papers, newspapers, magazines, and websites for the purpose of study.

Issues & Challenges - Many companies think that customer satisfaction is now only about price and service, but they fail to point out on important changes that are taking place worldwide that could below the business out of the water. The change is named as social responsibility which is an opportunity for the business. Some of the drivers pushing business towards CSR include:

The Shrinking Role of Government - Shrinking government resources, coupled with a distrust of regulations, has led to the exploration of voluntary and non-regulatory initiatives instead.

Demands for Greater Disclosure - There is growing demand for corporate disclosure from stakeholders, including

* Research Scholar (Management Studies) Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Dean and Head. (Commerce and Management) University of Kota (Raj.) INDIA

customers, suppliers, employees, communities, investors, and activist organizations.

Increased Customer Interest - There is evidence that the ethical conduct for companies exerts a growing influence on the purchasing decisions of customers.

Competitive HR Markets - Employees are increasingly looking beyond paychecks and benefits, and seeking out employers whose philosophies and operating practices match their own principles. In order to hire and retain skilled employees, companies are being forced to improve working conditions.

With regard to chalk out the issues and challenges related to CSR it is worth notable to know the readings of a survey conducted by Times of India[5] group on CSR. The survey comprised 11 public sector undertaking (PSUs), 39 private national agencies and 32 private multinational organizations.

Responses obtained from the above organizations have been broadly categorized by the research team.

The findings are listed below:

Lack of Local Community Participation in CSR Activities - Owing to lack of communication and awareness, the local communities are not participating and contributing to CSR activities organized by various companies. This is largely attributable to the fact that there exists little or no knowledge about CSR within the local communities as no serious efforts have been made to spared awareness about CSR and install confidence in the local communities about such initiatives.

Need to Build Capacities - There is serious dearth of trained and efficient organizations that can effectively contribute to the ongoing CSR activities initiated by organisations.

Issues of Transparency - There exists lack of transparency on the part of the local implementing agencies as they do not make adequate efforts to disclose information on their programs, audit issues, impact assessment and utilization of funds. This lack of transparency negatively impacts the process of trust building between organisations and local communities, which is a key to the success of any CSR initiative at the local level.

Non availability of Well Organized NGOs - The survey reveals that there is non-availability of well organized nongovernmental organizations (NGOs) in remote and rural areas that can assess and identify real needs of the community and work along with companies to ensure successful implementation of CSR activities.

Narrow Perception towards Initiatives - Non-Governmental Organizations (NGOs) and Government agencies usually possess a narrow outlook towards the CSR initiatives of corporate houses. As a result, they find it hard to decide whether they should participate in such activities at all in long run.

Need Clear and Understandable CSR Guidelines -

Lack of Consensus on Implementing CSR Issues - There is a lack of consensus amongst local agencies regarding CSR projects. This lack of consensus often results in duplication of activities by corporate houses in areas of their intervention. This results in a competitive spirit between local implementing agencies rather than building collaborative approaches on issues.

Recommendations - There is a need for developing communication and creation of awareness about CSR amongst the general public to make CSR initiatives more effective. This awareness generation can be taken up by various stakeholders including the media to highlight the good work done by corporate houses in this area. This effort will also motivate other corporate houses to join the league and play an effective role in addressing issues such as access to education, health care and livelihood opportunities for a large number of people in India through their innovative CSR practices.

It is observed that partnerships between the private sector, employees, local communities, the Government and society in general are either not effective or not effectively operational at the grassroots level in the CSR domain. This scenario often creates barriers in implementing CSR initiatives. It is recommended that appropriate steps be undertaken to address the issue of building effective bridges amongst all important stakeholders for the successful implementation of CSR initiatives.

It is noticed that very few corporate houses are involved in CSR activities, that too in selected geographical areas. To address the issue of reaching out to wider geographical areas, the involvement of all categories of corporate houses in the CSR related activities will be essential. This will help CSR reach out to other locations and cover a large number of communities and help companies play a valuable role in addressing various social and development issues.

It is observe that many CSR initiatives and programs are taken up in urban areas and localities. As a result, the impact of such projects does not reach to needy and the poor in the rural areas. This does not mean that there are no poor and needy in urban India. While focusing on urban areas, it is recommended that companies should also actively consider their interventions in rural areas on education, health, girl child and child labor as this will directly benefit rural people. After all, more than 70 per cent people still reside in rural India.

CSR as a subject or discipline should be made compulsory at all business schools and in colleges and universities to sensitize students about social and development issues and the role of CSR in helping corporate houses strike a judicious balance between their business and societal concerns. Such an approach will encourage and motivate young minds, prepare them face future development challenges and help them work towards finding more innovative solutions to the concerns of the needy and the poor.

It is noteworthy that the Government's policy documents have adequate levers to ensure 'public co-operation' in planning process. The 1951 Plan Documents and other subsequent policy amply demonstrate the intent of the

Government in this regard, underscoring the value of participatory approach in the context of larger governance mechanics.

The 'public co-operation' element has further been ensured by the involvement of various interest groups in drafting of the 'National Policy on Voluntary Sector-2007', under the aegis of the Planning Commission, Government of India. The National Policy was subsequently cleared by the Cabinet in 2007 and is one of the finest blueprints available on partnerships between the Government, the voluntary sector and the private sector.

The role and efforts of the companies in taking development agenda forward with focus on education, health, environment, livelihood, women empowerment, and disaster management have been visible and effective. In order to push the development agenda in a mission mode, it is recommended that realistic and operational models of engagement between all three important stakeholders-the Government, the non-governmental organizations and the private sector-are jointly explored and addressed.

Conclusion - The concept of corporate social responsibility is now rooted on the global business agenda. A key challenge the need for more reliable indicators of progress in the field of CSR. Some of the positive outcomes that can arise when companies adopt a policy of social responsibility include:

Company Benefits -

- Enhanced brand image and reputation;
- Increased sales and customer loyalty;
- More ability to attract and retain employees;

Benefits to the Community and the General Public -

- Charitable contributions;
- Employee volunteer programs;
- Corporate involvement in community education, employment and homelessness programs;

Environmental Benefits -

- Greater material recyclability;
- Better product durability and functionality;
- Greater use of renewable resources;
- Integration of environmental management tools into business plans, including life-cycle assessment and costing, environmental management standards, and eco-labeling.

References –

1. Freeman, R.E. Strategic Management: A Stakeholder Approach (Pitman Publishing: Marshfield, MA, 1984)
2. Bowen, H.R.. Social responsibilities of the businessman (New York: Harper & Row, 1953)
3. Frederick, W.C., The growing concern over business responsibility (California Management Review, Vol.2, 1960)pp 54-61
4. Davis, Keith, Can Business Afford to Ignore Social Responsibility to the Reality of Earning Trust (Tomorrow's Company, 2003)
5. Corporate Social Responsibility Practices in India, Times Foundation, the corporate social responsibility wing of the Bennett, Coleman & CO. Ltd.

****

Technical Development Of Banking Sector In 21st Century

Subhash Purohit * **Dr. C. V. Singh** * *

Abstract - Now a day's banking sector plays a very important role in human life, banks motivates human to make saving money for their future. It provides number of facilities to the people, banking service has become a need of the society. As we know that in this 21st century every sector have a great challenges i.e customer satisfaction , and being a part of the society banks also facing this challenges, and banks are accepting challenges very nicely for the betterment of service banks are providing innovative services to the customer so that they can get proper benefit in this sector . Banks have influenced the economics and politics for centuries. The objective of this paper is to analyze the services provided by banks, and to observe that how innovative, and new services they are giving to the society, and to know that how much these facilities or services are beneficial for the society and as well as banks. This paper is descriptive in nature, and data has been collected through various secondary sources. The paper explains the objective with the help of case study of Union Bank of India.

The paper concluded that banking sector has been changes rapidly. Now technology has made tremendous impact in banking, in 21st century dreams becomes reality. Now one can get banking services anytime and anywhere, wherever and whenever anyone want, priority banking is a symphony of banking benefits, unique investment products, personalised services and exclusive life style, benefits that brings complete harmony to all your financial needs.

Key words - Banking sector, customer satisfaction, Innovative services financially needs.

Introduction - Banking sector has became a emerging sector in India, their services are affecting to the human life and their life style, no one can deny that now the banks are becoming the necessity of everyone, in this era the need and satisfaction level of human has moved beyond the previous benchmark, and banking sector is providing lot of services to the customer, traditionally banks were providing only saving facility to the public and there were less number of banks are available, now scenario has been changed, there are 171 banks which are working in India, in which some are public sector banks and some are private sector banks are working. Earlier the banks worked only for urban side of the country, but now they are focusing on the rural side, they are providing much facility for upliftment of their life style and their economic conditions, and its happening, see how the villagers are producing the crops and they have no fear of money lender, who were made fool them, but apart of these we cannot ignore the technological challenges for every sector, and banking sector are also facing the great challenges, that's why they are more serious about the innovation policy and strategy.

This paper deals with all the innovative strategy and the policy which are made by banks to retention of the existing and valuable customer and the backward side society.

Objective of study - The objective of study are -

(i) To identify and analyse the innovation initiative of selected bank, in special reference to SBI.
(ii) To analyse that how the innovation are profitable for the society as well as banks.
(iii) To ananlyse the affect of these innovation on the rural area of the country.

Methodology - This is the conceptual one with detailed review of literature for the purpose of study. The official website of banks were consider along with the additional literature, the period of the study is for Annual Report of 2013-14, some good journals and research paper were also considered during the study, there were a personal query from the bank's employee regarding their services.

Review of literature - Innovation is has always been a sought after area of organization. Innovation service is identifies as the main driver for companies to prosper grow and sustain at a high profitability.

Many researchers have given their views on the innovation in the services. in the perception of **Chanakya Jayawardhana and Paul Foley.2000**; Innovation are discontinue innovation difficult "only accessible to people with certain qualities". **Scott M Davis and Kristan Moe (1997)** have framed eight steps that effectively take a company from customer driven needs and work assessment to final commercialization. **(Schumpeter. 1934,p.228).** Schumpeter recognized and felt that Entrepreneur seek profit thought innovation transform the strategies, equilibrium into a dynamic process of economics development. Innovation in Banks in terms of services.

Innovation has been buzz words in banking right from beginning. The attempt toward innovation in India has been more, so in India due to to the countries emergence and growth, more or less in the entire sector. The banking industry has been on an unprecedented growth trend during te past decade in the country. Banking sector today is fast and paced and is consistency in the throes of changes, with new regulation, new process and new policies. Technology has

* **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**
* * **H.O.D., Department of A.B.S.T. , Government College, Salumber (Raj.) INDIA**

played a very important role in the past in shaping the way things are today and will continue to do more than even before from beginning just a support function. Banking sector got success because of their innovation, now a days banks are providing very innovative services, even they are seeking the technologies which can help more to the customer.

Application of innovation in SBI - SBI is the public sector bank. Being a public sector bank it has a good reputation in the market , but instead of it, it could not provide better service to the customer , but now the situation has been changed. SBI is providing very innovative and unique services to the customer. Despite being the country's largest bank, State Bank of India is trying hard to attract customers towards its various products and services. Or maybe we should say that it is because of SBI's innovative offerings that it has become the country's largest and most popular bank.

Take a look at some of its new facilities:

- Most recently, SBI has introduced a service which enables customers to file their income tax returns online. This service is extended to all customers of the bank. The Bank charges a nominal amount of Rs. 150 for rendering this service.
- It has launched a Multi City cheque facility. Multi City cheques are those which can be drawn at any bank branch, in any city, even if it is drawn at base bank. No extra charges are levied on them they are treated as local cheques subject to a limit of Rs.5 lakh.
- Recently, the bank scraped the minimum savings requirements of its savings accounts. Now, customers are not charged any penalty for not maintaining a minimum balance of Rs. 1000 in their savings accounts.

CSR Philosophy - The Bank is a corporate citizen, with resources at its command and benefits which it derives from operating in society in general. It therefore owes a solemn duty to the less fortunate and under-privileged members of the same society. Staff members are encouraged to make their contribution by understanding the aspirations of the public around them and by endeavouring to evolve measures to remove indisputable social and developmental lacunae.

There are very unique and innovative CSR policies of the bank

Which is Incredible – CSR activity touches the lives of millions of poor and needy across the length and breadth of the country. The Bank has a comprehensive Corporate Social Responsibility (CSR) Policy, approved by the Executive Committee of the Central Board in August 2011 and earmarks 1% of the previous year's net profit as CSR spend budget for the year.

Focus areas of our CSR activities are:

- Supporting education.
- Supporting healthcare.
- Assistance to poor & underprivileged.
- Environment protection.
- Entrepreneur development programme.
- Assistance during natural calamities like floods/ droughts etc.

Supporting Education -

- To support school education and provide relief from heat to millions of school children specially the under privileged children, Bank has provided 1,40,000 electric fans to 14,000 schools across the country during 2013-14.
- Infrastructure support by way of furniture, computers and other educational accessories and donation of large number of school buses/vans to the physically/ visually challenged children and children belonging to economically weaker section of society.

Supporting Healthcare -

- Bank donated 210 medical vans/ambulances with an expenditure of '18.38 crores during the year.
- Medical equipment have been provided at 90 centres worth '8.87 crores.
- Bank installed more than 30,000 water purifiers in schools ensuring clean & safe drinking water for millions of school going children. Assistance during natural calamities:
- During the current fiscal the Bank has donated '6.00 crores to the Chief Minister's Relief Fund of three states.

Green Banking -

- Bank has adopted energy efficient measures.
- SBI is the largest deployer of solar ATMs.
- Bank has installed windmills in three states for its own energy needs.
- Paperless Banking is promoted and implemented across the country.
- Gives project loans at concessionary rate of interest to encourage reduction of green house gases by adopting efficient manufacturing practices.

Conclusion - After detail study of policies and strategies of State Bank of India, I would like to say that this bank is providing very innovative services. This banks has focused on the backward side of the society. The CSR policy of the bank is really very innovative. This is the only bank who is providing this type of facility to the rural area. It is observed that banks in India moving towards sustainability through innovative service operations and offerings. The sample considered here for analysis has proved this point very clearly. The rate at which innovation are adopted by firm constitute an important part of the process of technological change. State Bank of India is more aggressive in innovation and it is position ahead it terms of services. So the banks must create and sustain an environment that promotes creativity.

At last I would like to say that innovation can give the better success to the banking sector. It is one of the best policy and the key of success of any bank.

References -

1. Bessant, J., Tidd, J., "Innovation And Entrepreneurship", John Wiley &Sons. 2007
2. Chanaka Jayawardhena, Paul Foley, "Changes I the banking sector- the Case of Internet banking in the UK",
3. Internet Research; Electronic Networking Application and Policy, Vol. 10, No. 1, 2000,pp. 19- 30
4. Scott M. Davis, Kristin Moe," Bringing Innovation to Life", Jounal of Consumer Marketing, Vol. 14, No. 5,1997, pp. 340-341.
5. Salmana Jafri, "Emergence In Banking In India:, The Journal of Business & Economics Studies, vol. V-II , pp, 81-85
6. www.unionbankofindia.co.in

Comparative Study Of The Various Institutions On Implementation Of Panchayati Raj In India

Sandeep Kumar Laxkar * Dr. P. R. Somani **

Abstract - India has been considered the world's largest democracy. According to view of the people and leaders of India it is true that emphasis on decentralization of democracy is to strengthen the Government, local autonomic institutions. Mahatma Gandhi's imagination of embodiment of the gram Swaraj we have seen in Panchayati Raj institutions. The intention of instant research paper is to provide information about authorities, duties, powers and responsibilities of Panchayati Raj Institutions. Formal comparative study of implementation in District council, Panchayat Samiti and Gram Panchayats.

The working condition of District Council Panchayat Committee and Gram Panchayat is identical. The work is being done under the rules, bye-laws formed related to the institution. During the investigation if any defect is seen in the rules and orders then the attention of local institute authority is drawn towards it. The funds are utilized only on the authorized organization under the act and rules. Whenever loss of any money, revenue, stamp or any damages is found then the same is notified to the Development Officer. The proceeding for recovery of more payment done from the fund is being done. Present study is evaluating analytical methodology of all the Panchayat Raj institutions. The above study would proved a milestone for development of Panchayat Raj as well as Nation.

Introduction - The India has been considered largest democracy of the world. According to view of the people and leaders of India it is true that emphasis on decentralization of democracy is to strengthen the Government, local autonomic institutions. And to work in form of its protector the training and capacity of democracy, PRI members should be increased.

The motive of present Research Paper is to provide information about authorities, duties, powers and responsibility of Panchayati Raj intuitions. To conduct comparative study of execution of the District Council, Panchayat Committee and Gram Panchayat in accordance with the rules.

District Council (Jilla Parishad) - The District Council is apex body in arrangement of Panchayati Raj, as it appears from its name only, and it is formed at district level.

One District Council is being set up for each district and such an impression of district which is already included in any nagarpalika. Generally the head office of the district council is at headquarter of district. But the district council can keep its office in any area of district. The district council is in the name of same district for which it has been formed.

The District Council is formed for - General work**,** Work related to improvement of agriculture and land, Work related to micro irrigation, ground water resource and water division, Work related to Horticulture, Work related to statistics, Work related to rural electrification**,** Work related to soil conservation, Work related to social forestry, Work related to animal husbandry and dairy, Work related to fisheries, Work related to domestic and cottage industry, Work related to rural roads and building, Work related to health and hygiene, Work related to rural housing, Work related to education, Work related to social welfare and for welfare of weaker section, Work related to removal of poverty and Improve community engagement.

Panchayat Committee - Panchayat Committee is an important body under the Panchayat Raj arrangement. On the strength of current arrangement of Panchayati Raj only the cycle around and the entire activities of Panchayati Raj is based upon it.

The State Government under the Rajasthan Panchayati Raj Act, 1994 by notification in Government Gazette has declared that within any one district the Nagarpalika can declare any village or local region as one segment, and there will be one same Panchayat for each local region declared in this way.

By this research the panchayats have been given various forms.

The panchayats will be the body corporate and which shall have succession and a common seal and it will initiate litigation under that name and litigations against it will be initiated in this name.

It will have right to hold or acquire immovable and movable properties by charity or by incurring expenditure.

The state government itself or by writing style of statements of residents of panchayat shall publish one

* Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Ex H.O.D.,(Accountancy and Business Statistics) B.N.P.G. College, Udaipur (Raj.) INDIA

month's notice and after that only can change the name of the panchayat.

The panchayat committee will be formed at the level of segment.

With a view to boost rural development after changes in Panchayat Raj it has been decided that, every districts will be divided in certain developed segments.

The Sarpanch of all the panchayats falling within the region of panchayat committee were used to be member of panchayat committee and they had also right to cast their vote. The provision was made to give representation to the members of backward castes and the scheduled caste and tribes and their women in functioning of panchayat committee.

Gram Panchayat - In the new Panchayati Raj Act an important power vested to the Sarpanch is the Administrative Control on officers and employees. For duties and operation of Panchayat the appointment of certain officers and employees is being done by the State Government. Presently there is an arrangement mainly for appointment of secretary and fourth class employees in the Panchayat.

These officer and the employees are working under the control of the Government. But the administrative supervision and control upon them is of the Sarpanch. And all of them are honestly follow the orders of the Sarpanch.

Main object for formation of Gram Panchayts is the development of villages. The Sarpanch is in control on development. The following acts from time to time are being done under the rules by the Sarpanch for development of any panchayat.

(1) To prepare scheme for development of village.
(2) To work for encouragement of weaker section as well as women of the society.
(3) To determine source of income of the panchayat and to attempt for accretion to be occurred in it.
(4) To take interest in public construction work.
(5) To inspect the places, complexes and roads etc.

An important gift of new Panchayati Raj Act is the economical autonomy. This is a understood thing that due to paucity of funds the panchayat cannot do development work. The fund is essential on every step of development work.

This is the reason that authority vested in the panchayat to impose and to determine charges, development tax and to receive grant to strengthen the economical condition of the panchayats. The funds that may received from all te sources is depositing in panchayat fund.

Study of various institutions - For the purpose of present research the District Council, Panchayat Committee and Gram Panchayats have been selected. For this purpose five panchayat committees have been randomly selected from the thirteen panchayat committees falling within the one district council of Chittorgarh (Rajasthan). There were minimum 20 and maximum 50 Gram Panchayats. But on basis of random technology five gram panchayats from each panchayat committees have been selected. Out of the total gram panchayats falling within the one district council of Chittorgarh District overall all 13 panchayat committees have been remained for this study, wherein totally 25 gram panchayats have been selected as justice model.

The statistical analysis done through computer and for the purpose analysis percent, calculated mean of measurements etc. For examination of the significance of the mean difference between both the groups calculation of 't' mean has been done and the same have been tested on level of 0.5 and 0.01. For display of data graphical pictures the diagrams have also been drawn at appropriate places.

The essentiality of primary instructions has been accepted in form of research tool. For storing of primary instructions all those who were making arrangement for audit of the accounts as well as making arrangement for funds and those were contacted who are working on various posts in different organizations contacted Gram Panchayat, Panchayat Samiti and District Council. A questionnaire has been prepared for collection of primary information.

(See the next page)

The Statement no.1, "the work has been done in accordance with the rules and bye-laws framed under the Act related to the institution". On this statement the values of esq.chi of District Council and Panchayat Committee has been received 0.29 which is non-significant. It means situation of both is similar. Whereas the Esq.chi of district council and gram panchayat is received 1.29 on this statement which is non-significant. It means the condition of both is same. As such on this statement the Esq.chi of panchayat committee and gram panchayat received is 0.23 which is non-significant. It means the condition of both is similar.

Statement No.2, "Whether the attention of the Authority of institution is drawn if any query appears in the rules and orders during course of checking or not." On this statement the Esq.chi of District Council and Panchayat Committee is received 1.61 which is non-significant. It means that the condition of both is similar. Whereas the Esq. chi on this statement received from District Council and Gram Panchayat is 3.66 which is non-significant. It means that the conditions of both is similar. As such the Esq. Chi of Panchayat Committee and Gram Panchayat on this statement has acquired is 0.29. Means the condition of both is similar.

Statement No.3: "Whether the funds have been spent for authorized motive in accordance with the acts and rules or not". On this statement the esq.chi received from District Council and Panchayat Committee is 1.61 which is non-significant. Means condition of both is similar. On this statement the esq.chi received 3.40 from the District Council as well as Gram Panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar. As such on this statement the esq.chi received 0.19 from the Panchayat Committee as well as Gram panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar.

Statement-4: "Whether the Development Officer is being informed whenever there occurred any lows of any amount,

revenue, stamp or any damages or not?" On this statement the esq.chi received from District Council and Panchayat Committee is 1.41 which is non-significant. Means condition of both is similar. On this statement the esq.chi received 2.98 from the District Council as well as Gram Panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar. As such on this statement the esq.chi received 0.17 from the Panchayat Committee as well as Gram panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar.

Statement No.5: "Whether the recovery proceeding is being done for excess payment made from the funds or not?" On this statement the esq.chi received from District Council and Panchayat Committee is 0.08 which is non-significant. Means condition of both is similar. On this statement the esq.chi received 0.33 from the District Council as well as Gram Panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar. As such on this statement the esq.chi received 0.01 from the Panchayat Committee as well as Gram panchayat which is non-significant. It means that the condition of both is similar.

The working condition of District Council and Gram Panchayat is similar. The work is being done in accordance with the rules and bye-laws framed under the act related to the institute. If any defect is found in rules and orders then the attention of the authority of institute is drawn towards the same. The funds have been spent only on authorized purpose under the act and rules. Whenever there occur any loss or damage of any amount, revenue, stamp or any loss then the same is notified to the development officer. The recovery proceeding is being done when excess payment is made from the funds. Present study is evaluating analysis of method of work of all the Panchayat Raj institutions. Above study will prove a milestone for development of Panchayat Raj as well as nation.

References -

1. Babel Vasantilal, Brihad Panchayat Raj Code, Bafna Publishing House, Jaipur.
2. Rathod Girvar Sinh, Bharat Me Panchayati Raj, Panchsheel Prakashan, Jaipur 2004.

State-ment No.	Statement	District Council		Panchayat Committee		Gram Panchayat	
		Yes %	No %	Yes %	No %	Yes %	No %
1.	Whether the work has been done in accordance with the Rules, Bye-laws framed under the Actrelated to the institution?	88.00	12.00	80.00	20.00	75.20	24.80
2.	Whether the attention of authority of institution is drawn towards any query, if appears in rules and orders during the course of checking?	88.00	12.00	72.00	28.00	66.40	33.60
3.	Whether the funds have been spent only under the acts and rules on authorized motive or not?	88.00	12.00	72.00	28.00	67.20	32.80
4.	Whether the Development Officer is being informed whenever any amount, revenue, stamp or any loss is occurred?	92.00	08.00	78.00	22.00	73.60	26.40
5.	Whether the proceeding for recovery for excess payment made from the fund is being done or not?	80.00	20.00	74.00	26.00	72.00	28.00

Comparative study of various institutions:

State-ment No.	District Council		Panchayat Committee		Gram Panchayat	
	Esq. Chi	Significance	Esq. Chi	Significance	Esq. Chi	Significance
1.	9.29	Non-significant	1.29	Non-significant	0.23	Non-significant
2.	1.61	Non-significant	3.66	Non-significant	0.29	Non-significant
3.	1.61	Non-significant	3.40	Non-significant	0.19	Non-significant
4.	1.41	Non-significant	2.98	Non-significant	0.17	Non-significant
5.	0.08	Non-significant	0.33	Non-significant	0.01	Non-significant

Know your customer (KYC) policy

Dr. Vandana Jain * **Dr. Pournima Patel** **

Abstract - As KYC a norm are applicable to all the customers of the banks as well as becomes an compulsory aspect to be followed by the bank as well as customer it is needed to provide information related to all the KYC guidelines to be maintained by banks and customers. The Guidelines issued by the Reserve Bank of India on Know Your Customer (KYC) Standards and Anti Money Laundering measures (AML), Banks are required to put in place a comprehensive policy frame work covering KYC Standards and AML Measures. The guidelines issued by the Reserve Bank of India take into account the recommendations made by the Financial Action Task Force and inter government agency, on AML Standards and on combating financing terrorism. The guidelines also incorporate aspects covered in the Basel Committee document on customer due diligence which is a reflection of the International Financial Community's resolve to assist law enforcement authorities in combating financial crimes.

This policy document is prepared in line with the RBI guidelines and incorporate the Bank's approach to customer identification procedures,customer profiling based on the risk perception and monitoring of transactions on an ongoing basis.The purpose of KYC guidelines is to prevent the Bank from being used, intentionally or unintentionally, by criminal elements for money laundering activities as well as for customers to prevent from any cyber frauds.

Key Words - Know Your Customer, Guideline, Customers, Banks.

Introduction - Security implies sense of safety and freedom from danger or anxiety. When a banker takes a collateral security, says in the form of a little deed or gold, against the money lent by him, he has a sense of safety and of freedom from anxiety about the possible non-repayment of the loan by the borrowers. In a broader perspective, when a nation maintains a well equipped and well trained military force, the citizens have a sense of safety and freedom from anxiety against possible aggression by other nations. All measures adopted to bring about the sense of safety are collectively called "security measures".

Know your customer (KYC) is the security process used by a Bank to verify the identity of their clients. The term is also used to refer to the bank regulation which governs these activities. Bank, insurance and export credit agencies are increasingly demanding that customer provide detailed anti –corruption due diligence information, to verity their probity and integrity.

Know your customer policies are becoming increasingly important globally to prevent identity theft, financial fraud, money laundering and terrorist financing.

Objectives of the study-

1.To discuss about the conceptual aspect of "know your customer policy"

Need Of KYC -The objective of KYC guidelines is to prevent bank from being used,intentionally or unintentionally,by criminal elements for money laundering activities. KYC procedures enable banks to know their customer and their financial dealings better, which in turn help them,manage their risk prudently. Necessary check before opening a new account ensures that the identity of the customer does not match with any person with known criminal background or with banned entities such as individual terrorist organizations etc. and that no account is opened in anonymous or terrorist organization etc and that no account is opened in anonymous or fictitious/benami names.

Bank are supposed to adopt due diligence and appropriate KYC norms at the time of opening of accounts .the objectives of KYC are to insure appropriate customer identification and to monitor transactions of a suspicious nature . while opening an account a bank is suppose to obtain all information necessary for establishing the identity existence of each new customer by taking and verifying the introductory reference from an existing account holder /a person known to the bank or on the basis of documents provided by the customer .The mean of establishing identity can be passport ,driving license etc. In respect of existing customers banks are required to complete customer identification at the earliest.

What Is KYC Policy-KYC norms means in order to prevent identity theft ,identity fraud ,money laundering, terrorist financing etc .the RBI had directed all banks and financial institutions to put in place a policy framework to know their customers before opening any account .this involves verifying customers identity and address by asking them to submit documents that are accepted as relevant proof.

Mandatory details required under KYC norms are proof of identity and proof of address .passport ,voter ID card PAN card or Driving license are accepted as proof of identity ,and proof address .some banks may ask for verification by an existing account holder .though the standard documents which are accepted as proof of identity and residence remain the same across various banks ,some deviation permitted ,which are differ from Bank to bank. So, all documents shall be checked against bank requirements to ascertainment if those match or not before initiating an

* Asst. Prof. & ** Asst. Prof. ,S.J.H.S. Gujarati Innovative College, Indore (M.P) INDIA

account opening process with any bank .thus opening a new bank account is no longer a cake walk.

Know Your Customer - As per "know your customer "guideline issued by Reserve bank of India, customer has been defined as:

(a) A person or entity that maintain an account and /or has a business relation with the bank;
(b) One on whose behalf the account is maintained.
(c) Beneficiaries of transactions conducted by professional intermediaries ,such as stock Brokers,charted accounts Solicitors etc. as permitted under the law and
(d) Any person or entity connected with a financial transaction, which can pose significant reputational or other risk to the bank, say, a wire transfer or issue of a high value demand draft as a single transaction.

Bank Customer Relationship-Banking is a trust-based relationship .There is numerous kind of relationship between the bank and the customer. The relationship between a banker and a customer is based on certain terms and conditions. These relationship confer certain rights is the and obligations both on the part of the banker and on the customer .However, the personal relationship between the bank and its customer is the long lasting relationship. Some bank even say that they have generation –to-generation banking relationship with their customer .The banker customer relationship is fiducially relationship .The terms and conditions governing the relationship is not be leaked by the banker to a third party.

Customer Identification Requirements Indicative Guidelines-

1. trust/nominee or fiduciary accounts- There exists the possibility that trust /nominee or fiduciary account can be used to circumvent the customer identification procedure .banks should determine whether the customer is acting on behalf of another person as trustee/nominee or any other intermediary .if so bank may insist on receipt of satisfactory evidence of the identity of the intermediaries and of the persons on whose behalf they are acting as also obtain details of the nature of the trust or other arrangements in place. while opening an account of trust ,bank should take reasonable precaution to verify the identity of the trustees

2. Accounts of companies and firms – Banks need to be vigilant against business entities being used by individuals as a front for maintain accounts with banks .Bank should examine the control structure of the entity, determine the source of funds and identity the natural persons who have a controlling interest and who comprise the management .these requirements may moderated according to the risk perception.

3. Client accounts opened by professional intermediaries - When a bank has knowledge or reason that the client account opened by a professional intermediary is on behalf of a single client, the client must be identified .Bank may hold pooled accounts managed by professional intermediaries on behalf of entities like mutual funds, pension funds or other types of fund.

KYC standards - The objectives of KYC guideline is to prevent banks from being used ,intentionally or unintentionally, by criminal elements for money laundering activities .related procedures also enable banks to know or understand their customer, their financial dealings better. This helps them manage their risks prudently .Banks usually frame their KYC policies incorporating the following four key elements

1. Customer Acceptance policy
2. Customer Identification Number
3. Monitoring of Transactions and
4. Risk Management

1. Customer Acceptance policy –All banks should develop criteria for accepting any person as their customer to restrict any anonymous accounts and insure documentation mentioned in KYC

2. Customer Identification Number-Customer can be identified not only while opening the account but also at the time when the bank has a doubt about his transactions.

3. Monitoring of Transactions –KYC can be effective by regular monitoring of transactions. Identify an abnormal or unusual transaction and keeping a watch on higher risk group of the account is essential in monitoring transactions.

4. Risk Management –This is about managing internal work to reduce the risk of any unwanted activity .managing responsibilities, duties and various audit plus regular employee training for KYC procedures.

These guidelines also specify that KYC should be implemented for existing account holder on the basis of materiality and risk segments.

Typical Kyc Control -KYC control typically include the following-

1. Collection and analysis of basic identity information
2. Name matching against lists of known parities.
3. Detrmination of the customer risk in terms of propensity to commit money laundering, terrorist finance ,or identity theft.
4. Creation of an expectation of a customer's transactions against their expected behavior and recorded profile as well as that of the customer's peers.

To insure that the latest details of customer identification are available ,banks have been instructed from time to time by RBI to periodically update the customer identification data based upon the risk category of the customers.

Conclusion - Banks are the engines that drive the operations in the financial sector, which are vital for the economy .While the operations of the bank have become increasingly significant; there is also an occupation hazard. There is a Tamil proverb, which says that a man who collects Honey will always be tempted to lick his fingers. Banks are all the time dealing with money, a temptation should therefore be very high Oscar wiled said that the thief was an artist and the policeman was only a critic ,there are many people who are unscrupulous and are able to perpetrate a fraud. The bank should devise systems and procedures in such a way like KYC that the scope for such cleverer and unscrupulous people is reduced. That's why Know your customer policy is becoming increasingly important globally to prevent identity theft, financial fraud, money laundering and terrorist financing. So all the customer should cooperate with banks because after all this is for the security of the customer. . Above all, a risk-based approach requires KYC software that will spot and notify financial institutions of any discrepancies or concerns regarding a potential customer.

References -

1. "'Know Your Customer' (KYC) Guidelines - Anti-Money Laundering Standards".
2. "Why KYC is mandatory now". business.rediff.com. Retrieved 25 Oct 2010.
3. "AML CFT 2009".
4. http://www.fdic.gov/regulations/examinations/bsa/bsa_13.html
5. *Learn How to Make Your Goals SMART* web page, retrieved November 5, 2006
6. http://www.c6-intelligence.com/
7. http://www.kycisrael.com
8. http://www.sgs.com.ng/
9. http://www.kycnet.com
10. http://acamstoday.org/wordpress/?p=1955
11. http://pugodesk.winwinhosting.net/dailyexcelsior/sbi-celebrates-kyc-compliance-fraud-prevention-day/[dead link]

(vi)

These Are The Basic Requirements Of Kyc To Identifying A Customer At Account Opening Stage.

Features	Documents
Accounts of Individuals	
1. Legal name and any other names used	(i)Passport (ii)PAN card (iii)Voter's Identity Card (iv) Driving licence (v) Identity card (subject to the bank's satisfaction)(vi) Letter from a recognized public authority or public servant verifying the identity and residence of the customer to the satisfaction of bank
2. Correct permanent address	(i) Telephone bill (ii) Bank account statement(iii) Letter from any recognized public authority(iv) Electricity bill(v) Ration card(vi) Letter from employer (subject to satisfaction of the bank)(any one document which provides customer information to the satisfaction of the bank will suffice)
Accounts of Companies	
1. Name of the company 2. Principal place of business 3. Mailing address of the company 4. Telephone / Fax Number	(i) Certificate of incorporation and Memorandum & Articles of Association(ii) Resolution of the Board of Directors to open an account and identification of those who have authority to operate the account (iii) Power of Attorney granted to its managers, officers or employees to transact business on its behalf (iv) Copy of PAN allotment letter (v) Copy of the telephone bill
Accounts of Partnership Firms	
1. Legal name 2. Address 3.Names of all partners and and their addresses 4.Telephone numbers of the firm and partners	(i) Registration certificate, if registered(ii) Partnership deed (iii) Power of Attorney granted to a partner or an employee of the firm to transact business on its behalf (iv) Any officially valid document identifying the partners and the persons holding the Power of Attorney their addresses (v) Telephone bill in the name of firm / partners
Accounts of Trusts & Foundations	
1. Names of trustees, settlers, beneficiaries and signatories 2. Names and addresses of thefounder, the managers / directors and the beneficiaries 3. Telephone / fax numbers	(i) Certificate of registration, if registered (ii) Power of Attorney granted to transact business on its behalf(iii) Any officially valid document to identify the trustees, settlors, beneficiaries and those holding Power of Attorney, founders / managers / directors and their addresses(iv) Resolution of the managing body of the foundation / association(v) Telephone bill
Accounts of Proprietorship Concerns	
1. Proof of the name, address andactivity of the concern	(i) Registration certificate (in the case of a registered concern) (ii) Certificate / licence issued by the Municipal authorities under Shop & Establishment Act,(iii) Sales and income tax returns(iv)CST / VAT certificate(v) Certificate / registration document issued by Sales Tax / Service Tax / Professional Tax authorities(vi) Registration / licensingdocument issued in the name of the proprietary concern by the Central Government or State Government Authority / Department.(vii) IEC (Importer Exporter Code) issued to the proprietary concern by the office of DGFT as an identity document for opening of bank account. (viii) Licence issued by the Registering authority like Certificate of Practice issued by Institute of Chartered Accountants of India, Institute of Cost Accountants of India, Institute of Company Secretaries of India, Indian Medical Council, Food and Drug Control Authorities, etc.Any two of the above documents would suffice. Thesedocuments should be in the name of the proprietary concern.

Contribution Of Internal Audit

Dr. Pournima Patel * **Dr. Vandana Jain** **

Abstract - Due to tremendous growth in business and expanding markets through out the world there is need of internal audit. It is only because of contribution of internal audit, the owners, investors, consumers and at large society is beniffited.The main purpose of this paper is to show that it is due to internal audit the companies and business, may be small or large, the company has made growth and profit positively because there is continuous internal audit system maintained which helps the management to go on correct path. Auditing is the independent appraisal activity with in an organization for the review of the accounting, financial and other operations as a ban's for protective and constructive service to the management. It is a type of control which functions by measuring and evaluating the effectiveness of other types of control. It deals primarily with accounting and financial matters but it may also properly deal with matters of an operating nature. Some business institutions appoint auditors who are made responsible to have a constant and regular review of their accounts. Such a cadre of auditors is of permanent nature and helps a lot in the detection and prevention of errors and fraud. The scope and objective of internal audit are likely to vary from business to business depending upon the different nature of organization. Thus internal audit is an integral part of internal control.
Key words - audit, auditor, contribution, internal check, internal control, techniques.

Introduction - The business world is quietly undergoing through the fundamental changes which have very serious long-term consequences. The impact of privatization, speed of communication, globalization, impact of e-commerce, influence of intellectual property has placed the internal audit to fore front in the business management. The scope of internal auditing within an organization is broad and may involve topics such as the efficacy of operations, the reliability of financial reporting,deterring and investing fraud, safeguarding assets and compliance with laws and regulations, policies and procedures. It should be noted that the audit of accounts by internal auditors is not compulsory and it is not essential. It is a matter of organizational behavior to appoint internal auditor for management to ensure smooth running of the business. Such auditors are known as internal auditors who besides checking the accounts, are required to report also as to how the system of accounting can be improved and the system of internal check be made economical and efficient. Internal audit is an independent appraisal of activity with in an organization for reviewing the accounting, financial and other operation. It renders a productivity and constructive service to management. The main object of an audit is to verify the accounts and reports whether the balance sheet and profit or loss account have been drawn properly according to the companies act and whether they exhibit a true and fair view of the state affairs of the concern. Such verification of accounts and reporting to management are vital factors for promoting efficiency and a literacy in the maintenance of accounts so that the owners of a business may get accurate information about the financial condition of their business.

Objective of Auditing

- **Primary -** To examine the reliability and validity of the financial statements so as to render an opinion on the truth and fairness of the presentation in those statements.
- **Secondary -** Study and evaluation of the adequacy and effectiveness of an accounting, financial and operating control, ascertaining the degree of compliance with predetermined policies, plans and procedures, correctness of accounting for business assets and measures their safety, and evaluation of quality of performance in performance of the duties as signed to individuals and departments.

Data collection and research methodology - To have a detail study of the subject, a survey of industry was done with the help of primary data, which was collected by preparing questionnaire.

Contribution of internal audit - Internal audit contributes greatly in managing the affairs of the company. Wherever right internal audit system/controls are available, you will observe that such companies are more disciplined and always have an edge over other companies in every respect. Major contributions of internal audit are: -

- **It leads to streamlining the internal working, methodology and procedures: -**When internal auditor adopts adequate methodology and procedures, he is able to express more appropriate opinion on the financial statement by spending optimum amount of time and resources. An internal auditor is successful when various techniques are used in conjunction with one another, which are interrelated in carrying out audit. In any auditing situation, certain areas are more prone to risk than others, at such

* Asst. Prof. & ** Asst. Prof. ,S.J.H.S. Gujarati Innovative College, Indore (M.P) INDIA

time the auditor should identify such areas and plan the methodology, timing and extent of his audit procedures on the basis of his assessment of the degree of risk invaded.

- **It helps in identifying and rectifying the mistakes in shortest time, so as to not to let its impact continues for long time -** Internal audit /control is a system of controls having two important constituents. I.e. internal check and internal control. Internal checks take place concurrently with the execution of the transactions, whereas internal audit function is carried out after the transactions have taken place. Thus when both i.e. internal check and internal control of any firm or companies, it is very easy to identify any mistake and immediately rectifying them in shortest time .Naturally when the error is located at the earlier stage and is rectified its impact will not continue for long time.
- **Internal audit help in guiding the management whether all prescribed auditing norms and accounting standards are being followed or not -** Auditing standards are expected to be observed by the auditor when he has to express an opinion on financial statements. Compliance with auditing standards is necessary in normal circumstances. The auditor has to state in his report whether the audit was carried out in accordance with generally accepted auditing standards or not.
- **The internal auditor's reports help the statutory auditor to make up his mind and decide his time duration of audit and also the areas and the extent of concentration required -**For conducting the internal audit effectively, an internal auditor should modify his audit techniques and methods of reporting appropriately. Since the internal audit function is a part of the overall internal control system, the statutory auditor should evaluate its effectiveness. The evaluation of the internal audit function assists the statutory auditor in determine the nature, timing and extent of his audit. Thus if a statutory auditor finds that internal audit is adequate and effective in certain areas, he may limit the related substantive procedures.
- **Internal auditing is also a threat to the incompetent employees -** In order to achieve the objectives of internal controls relating to accounting system, it is necessary to establish adequate control and policies and procedure by internal auditor. The work involved in a transaction is allocated to different persons in such a manner by internal auditor that the work of one person is complementary to the work of another person. When the employees know that the work performed by them is continuously monitored, they will be more alert and would be more sincere to their work and thus due to internal auditor the management would be free from the employee's part.
- **Internal audit takes care of and keeps a watch on the safety of assets of the company -** Here the internal auditor inquires into the value, ownership and title, existence and possession and presence of any charge on the assets. While auditing the internal auditor not only examines the arithmetical accuracy of assets but also inquire into that the assets have been fairly and truthfully valued, the ownership and title of assets are with the organization and are the assets in existence and are in the possession of the organization and if they are not, there has to be no charge over them other than what has been shown in the balance sheet. Internal auditor physically verifies the assets and in case of grave discrepancies, proper treatment has been done in the books of accounts accordingly, and thus internal auditor is like a watch dog to the management and takes care and keeps a watch on the safety of assets of the company.

Areas Of Contribution In Relation To Internal Audit

Identification of Potential Problem Areas

- An objective of the preliminary review is the identification of potential problem areas. One of the first steps in determining problem areas is to identify those programs, activities, and functions, which are significant. These can be identified as those programs or activities:

1. Which are susceptible to fraud, abuse, or mismanagement?
2. In which there is a large volume of transactions or large investmentsin assets
3. which are subject to loss if not carefully controlled.
4. About which concerns have been expressed by management.
5. In which prior audits have disclosed major weaknesses or deficiencies.

This phase of the preliminary review should identify the significant activities of the area and what inherent risks exist. Once these activities and risks have been identified, the next step is to evaluate controls.

- The auditor is responsible for determining how much reliance can be placed on the entity's controls to protect its assets, assure accurate information, assure compliance with applicable laws and regulations, promote efficiency and economy, and produce effective results.
- The auditor's evaluation should include identification of areas in which essential controls appear to be weak, non-functioning, or missing.

Questionnaire -

T Enterprise

1. Along with internal audit, is organization inspection system effective?
2. Does internal auditing process continue throughout the year?
3. Are all the activities of internal audit satisfied in regards to show true and fair views regarding books of accounts?
4. Has the auditor audited all suitable areas?
5. Does the internal auditor give suggestion to management from time to time?
6. Does Statutory auditor have faith on internal auditor?
7. Are the internal auditors techniques, methods and process helpful to Organization.
8. Has Internal audit helped management to increase its efficiency.

9. Is the possibility of frauds and illegal acts reduced due to internal audit.
10. Does the internal audit keep a continuous watch on business policies?

Answers related to above questionnaire were YES answered by top officials, employees and management.

Conclusion - To examine the reliability and validity of financial statements so as to render an opinion on the truth and fairness of the presentation, study and evaluation of the adequacy and effectiveness of an accounting, financial and operating controls, asserting the degree of compliance with predetermined policies, plans and procedures, correctness of the accounting for business assets and measures their safety, evaluation of quality of performance of the duties as assigned to individuals and departments. It was observed that due to internal audit there is transparency in financial reporting which is a part of good governance and is a requirement of the day. The study has very clearly revealed about how effective and useful an internal audit is. It serves as a guidance note to the management and supportive document. It is also an effective tool and has a utility for management at all levels. Conducting of internal audit itself gives a confidence to the employees and creates a sense of responsiveness among them so as to not let internal auditor find a fault in their work and performance.

A survey was done of a manufacturing company with the help of questionnaire and the result was as follows:

This is a proprietary firm involved majorly into manufacturing of electrical control bands (specialized) and trading of related items. The company has improved on account of inputs by internal audit. Internal audit was done, issues were discussed and accordingly suggestions were also made. It was found that, there is a positive growth of rise and substantial growth in sales. In the initial stage the company was having almost 86% as its cost of manufacturing which came down to 80%and later 76% and so on. This was on account of better stock planning and material consumption for which input suggestions were made by internal auditors. This was also on account of increasing turnover leading to economy in pricing .The current ratio of the company has been brought down from 1.8:1.1.This shows that the strength of the company has gone up. Bringing down and maintaining the current ratio to a desired result needs a very strong management skill. This has been on account of proper stock management and debtor, creditors control and effective rotation of the liquidity available to the company. As is normally seen, direct expenses are lesser then indirect expenses and so is the case here also. With the increase in sales the net consumption has also increased but the profitability has definitely improved. The company has been on a positive trend towards saving in expenses directly/indirectly, when costing is considered, yielding better turnover and better profitability. The internal audit has played a vital role in this regard and also been motivational instrument for increasing sales. The internal audit has brought in a discipline in consumption yielding better profitability. It was found that there was a growth in gross profit mainly because of the input by internal audit to improve on their pricing and control in the cost. The fluctuation in net profit was mainly found due to effective tax planning, measures by the management for legitimate saving of tax. To summarize audit has an important role in the development of the world economy by enhancing the degree of confidence of the users in the financial information. Audit will remain an instrument of growth and cherish the trust of society.

References -

List of Books -

1. Principles and Practice of Auditing : By Dinkar Pagare
2. Contemporary Auditing : By Kamal Gupta.
3. Auditing Information Systems : By Jack .J. Champlain
4. Auditing : By Dr.T.R.Sharma.
5. Fundamental of Auditing : By Gupta

Publications -

1. Manual on internal audit.
2. Auditing and assurance standards and guidance notes.

Websites -

1. w.w.w.icai org : The institute of charted Accountants of India
2. w.w.w ifac. org : International Federation of Accountants

****

Growth And Performance Of Small Scale Industries In India

Dr. L.N.Sharma *

Abstract - Small Scale Sector has emerged as a dynamic and vibrant sector of the economy. They performed extremely well and enabled our country to attain wide ranging events of industrial amplification and diversification. Because of their less capital and high labour intensive nature, the SSI have made important contribution to increased employment, increase in production, increase in exports and also to rural industrialization. Today, it accounts for nearly 35% of the gross value of output in the manufacturing sector and over 40% of the total exports from the country. The contribution of this sector to employment is next only to agriculture in India. It is therefore an excellent sector of economy for investment and employment generation.

Introduction - Small-scale industries have been playing a momentous role in overall economic development of a country like India where millions of people are unemployed or under-employed. Poverty and unemploy-ment are two burning problems of the country today. This sector solves these two problems through providing immediate large-scale employment, with lower investments. According to Dr. Manmohan Singh, "the key to our success in employment lies in the success of manufacturing in the small scale sector". The economic development of any country primarily depends upon the establishment of industries, which require sufficient amount of capital. In a country like India, where capital is scarce and unemployment is wide spread, growth of small-scale industries is vital in order to achieve balanced economic growth. The strength of small-scale enterprises lies in their wide spread dispersal in rural, semi-urban and urban areas, fostering entrepreneurial base, shorter gestation period, and equitable distribution of income and wealth.

Having recognized the significance of SSI sector, the Govt. of India has set up various agencies and institutions at different levels-central, state and the local government has been pursuing 'the policy of protection and promotion of this sector since independence and also offered several incentives and concessions for their promotion and development. Since the launching of five-year plans in our country, the SSI sector has grown at a phenomenal rate. This sector comprises 95 per cent of the total industrial units in the country, accounting for 40 per cent of the total industrial production, 34 percent of the national exports, and employment of 250 lakh persons. So, this sector emerged as a dynamic and vibrant sector of the Indian economy.

Classification of SS in India - Small scale industries are broadly classified into two sectors Namely,

A) Traditional Small industries

B) Modern small industries

A. Traditional small industries include:

(a) Khadi and Village indu-stries, (b) Handlooms,
(c) Handicrafts, and (d) Coir and Sericulture.

B. Modern small industries - These units produce wide range of goods from comparatively simple items to sophisticated products such as television set. electronic control system, and various engineering products particularly as ancillaries to the large industries.These industries make use of highly sophisticated machinery and equipment.Following establishments may be classified as modern small scale industries:

a) Small scale industrial undertakings,
b) Export oriented small scale industrial units,
c) Ancillary industrial undertakings,
d) Tiny enterprises,
e) Small scale services and Business enterprises. and
f) Power looms.

Growth and Performance of SSI - The performance of the Small Scale Units on various parameters viz., number of units, value of production, number of persons employed and exports has been impressive. The Small Scale Sector, Which plays a pivotal role in the Indian economy in terms of employment and growth, has recorded a high rate of growth in spite of tough competition from the large scale sector. It is one of the fastest growing sectors in the country and it has made steady progress during recent years. The good performance of the Small Scale Units is evident from the number of units registered, production recorded, em-ployment generated and earnings from exports.

Table-1 (see in next page)

Growth Pattern of Number of Small Scale Units -

Small firms are often said to grow faster than the large firms. The table-2 reveals the growth pattern of number of small scale units in India from 1990-91 to 2012-13.

Table-2 Growth Pattern of Number of Small Scale Units

Year SSI	Units(in lakh)	Rate of growth
1990-91	65.00	100.00
2000-01	97.15	148.96
2012-13	325.60	

From the Table-2, it is clear that the number of small scale units in India was increased from 66.00 lakh units in the year 1990-91 to 325.60 lakh units in the year 2012-13 The tremendous growth is seen in terms of units registered in the period of 23years. It was increased tonearly 4.98 times in the year 2012-13 and the reason for the same was continuous promotional measures undertaken by the Government of India for the development of small scale industries.

Growth Pattern of Production of SS Units:

Table – 3 Growth Pattern of Production of Small Scale Units

Year	production (Rs. in crore)	Rate of growth
1990-91	60314	100.00
2000-01	234255	411.36
2012-13	1221442	1922.99

It is clear from the table-3 that there is remarkable growth in the production of small scale units in terms of value. The

* **Professor (Commerce) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P) INDIA**

production was Rs.60314crore in the year 1990-91and it has been increased to Rs.1221442 crore in the year 2012-13. It shows that the production was increased to 19.23 times in the period of 23 years. It was largely due to numerous Entrepreneurial Deve-lopment Programmes conducted by both the State and the Central Governments.

Growth Pattern of number of employees - The development of small scale sector is important in India because it provides more employment than the large scalesector.

Table -4 – Growth Pattern of Number of Employees

Year	Number of Employees (in Lakh)	Rate of growth
1990-91	149.24	100.00
2000-01	229.10	151.00
2012-13	771.27	487.10

The Table-4 shows that there is continuous growth in the number of persons employed in the period of 23 years. It is clear from the table that the number of employees was 158.24 lakh in the year 1990-91 and the number increased to 771.27 lakh in 2012-13. It reveals that the employment has increased nearly to 4.87 times in 2012-13, which is largely due to increase in number of units in India.

Growth Pattern of Export of Small Scale Units:

Small Scale Industries plays an important role in India's export performance.

Table – 5 : Growth Pattern of Exports of Small Scale Units

Year	Exports(Rs. In crore)	Rate of growth
1990-91	9254	100.00
2000-01	54200	722.24
2012-13	269125	2784.82

The Table-5 shows the growth pattern of exports of Small Scale Industries in India in terms cf value in the period of 23 years. The table clearly shows that the value of exports was Rs.9254crore in 1990-91 and it was increased to Rs.269125 crore during the year 2012-13.It is clear that the exports was increased to nearly 27.84 times in 23 years. The increase in value of exports due to promotional measures introduced by the Central and the State Governments.

Conclusion - Small Scale Sector has emerged as a dynamic and vibrant sector of the economy. They performed extremely well and enabled our country to attain wide ranging events of industrial amplification and diversification. Because of their less capital and high labour intensive nature, the Small Scale Industries have made important contribution to increased employment, increase in production, increase in exports and also to rural industrialization. Today, it accounts for nearly 35% of the gross value of output in the manufacturing sector and over 40% of the total exports from the country. The contribution of this sector to employment is next only to agricul-ture in India. It is therefore an excellent sector of economy for inve-stment and employment generation.

References -

1. H.R.KrishanaMurtiy, A Text book 'Economic Development of India'.
2. Lakshmi Narain M., 'Development of Small Scale Industries', Himalaya Publishing House. New Delhi 1986, Page. 9
3. VasantDesai.'SmallScaleindustries and Entrepreneurship Hima-laya Publishing House. Page 27-30
4. RuddarDutt and K.P.M.Sundaram 'Indian Economy', 61st'revised Edition.Himalaya Publishing House.
5. Vasant Desai, 'Management of Small Scale Industries', Mumbai Himalaya Publishing House 1989, p.3 Commission, New Delhi.
6. T.R.Jain, MukeshTrehan, RanjuTrehan, 'Indian Economy'-Page 247.
7. Various Issues of Five Year Plans of India.
8. Dr. C.B. Gupta and 'Dr. S.S. Khanka 'Entrepreneurship and Small Business Management', Page 24 to 25

Table-1Growth of Small Scale industries in India from 1990-91 to 12-13

Year	No. of small scale units(inlakh)	Production (Rs in Crore)	Employment (in lakh)	Export (Rs. In Crore)
1990-91	65	60314	149.24	9254
1991-92	67.87	63518	158.34	9664
1992-93	70.63	73072	165.99	13883
1993-94	73.51	85581	174.84	17784
1994-95	76.49	98804	182.64	25307
1995-96	79.6	122210	191.40	29068
1996-97	82.84	148290	197.93	36470
1997-98	86.21	168413	205.86	39248
1998-99	89.71	189178	213.16	44442
1999-00	93.36	212901	220,55	48979
2000-01	97.15	234255	229.10	54200
2001-02	101.10	261289	239.09	69797
2002-03	105.21	282270	249.09	71244
2003-04	110.10	311993	261.38	86013
2004-05	113.95	364547	271.42	97644
2005-06	118,59	429796	282.35	124417
2006-07	123.42	497882	294.91	150242
2007-08	261.12	709398	595.66	177600
2008-09	272.79	790759	626.34	182538
2009-10	285.16	880805	659.35	202017
2010-11	298.08	982919	695.38	223572
2011-12	311.52	1095758	732,17	245127
2012-13	325.60	1221442	771.27	269125

Source: Ministry of small scale industries, Annual Report 12-13 and Economic Survey of India

Role Of Gender Discrimination And Women's Development In Rural Areas

Dr. Prabhat Chopra *

Abstract - In India, discriminatory attitude towards men and women have existed for generations and affect the lives of both genders. Although the constitution of India has granted men and women equal rights, gender disparity still remains. There is specific research on gender discrimination mostly in favour of men over women. Due to a lack of objective research on gender discrimination against men, it is perceived that it is only women who are suffering. The research often conducted is selectively sampled, where men are left out of the picture. Women are perceived to be disadvantaged at work, and conclusions are drawn that their capabilities are often underestimated. Gender is a common term where as gender discrimination is meant only for women, because females are the only victims of gender discrimination. Females are nearly 50 percent of the total population but their representation in public life is very low. Recognizing women's right and believing their ability are essential for women's empowerment and development. This study deals with gender discrimination in India, its various forms and its causes. Importance of women in development, legislation for women and solution for gender discrimination are also discussed in this paper. **Key Words -** Gender Discrimination, education, employment, decision making and self confidence.

Introduction - Men and women may be innately different, but does not grant that this fact is particularly pertinent. Masculine and feminine modes of behaviour are relevant in as far as they reflect social expectations. Men and women enact different roles, because society expects them to act in these ways and reward them if they do, punishes them if they do not. Through a variety of practices and institutions, a child acquires its earliest knowledge of its destined role in the family. Parents have different codes of behavior for boys and girls.

Gender refers to roles, attitudes and values assigned by culture and society to women and men. These roles, attitudes and values define the behaviors of women and men and the relationship between them. They are created and maintained by social institutions such as families, governments, communities, schools, churches and media. Because of gender, certain roles, traits and characteristics are assigned or ascribed distinctly and strictly to Society's perceptions and value systems that instill an image of women as weak, dependent, subordinate, indecisive, emotional and submissive1. Men, on the other hand, are strong, independent, powerful, dominant, decisive and logical. Gender refers to socially constructed roles, which are likely to vary from society to another, and which change significantly as societies develop and evolve over time.Gender discrimination and patriarchal domination go hand in hand. The essence of gender discrimination is unequal power relations. The social instruments for perpetuating such unequal power relations is restricting access to property, and skill/education and ensuring control over female sexuality through restrictions on mobility and such other institutions like early marriage. Social resistance arising out of fears and misconceptions that education might alienates girls from tradition and social values. Girls are treated as *Parayadhan* – liabilities, hence parents attach less important to girls' education. Stereotyped roles assigned to girls in society i.e. girls will look after the household and family.

When a boy is born in most developing countries, friends and relatives exclaim congratulations. A son means insurance. He will inherit his father's property and get a job to help support the family. When a girl is born, the reaction is very different. Some women weep when they find out their baby is a girl because, to them, a daughter is just another expense. Her place is in the home, not in the world of men. In some parts of India, it's traditional to greet a family with a newborn girl by saying, "The servant of your household has been born."

Sociologically the word gender refers to the socio-cultural definition of man and woman, the way societies distinguish men and women and assign them social roles. The distinction between sex and gender was introduced to deal with the general tendency to attribute women's subordination to their anatomy. For ages it was believed that the different characteristics, roles and status accorded to women and men in society are determined by sex, that they are natural and therefore not changeable. Gender is seen closely related to the roles and behavior assigned to women and men based on their sexual differences. As soon as a child is born families and society begin the process of gendering. The birth of the son is celebrated, the birth of a daughter filled with pain; sons are showered with love, respect, better food and proper health care. Boys are encouraged to be tough and outgoing; girls are encouraged to be homebound and shy. All these differences are gender differences and they are created by society. Gender inequality is therefore a form of inequality which is distinct from other forms of economic and social inequalities. It dwells not only outside the household but also centrally within it. It stems not only from pre- existing differences in economic endowments between women and men but also from pre-existing gendered social norms and social perceptions.

Half of the world's population is females. They are doing two-third of work of the total work in the world but received only one-tenth of the world's total income. Nearly two-third of the women is illiterates and they have possessed only one percent of the total world's assets. In the world only one-fourth of the families are headed by female. India is a male dominant society and gender discrimination is customized habitually.

* S.J.H.S Gujarati innovative college, Indore (M.P.) INDIA

Discriminations - From web to death females are facing lots of discrimination against them. Some of them are:

- Abortion of female gravida with the help of scanning.
- Feoticide (By giving liquid extract from cactus / opuntia, giving raw paddy to new born female baby, by pressing the face by pillow or by breaking the female baby's neck).
- Not giving enough and nutritious food
- Not allowing to go to school (Denial of education)
- Not giving needy health care while in ill health
- Early marriage
- Eve teasing, Rape and Sexual harassment
- Dowry

Discrimination towards Women -

- **Infancy to Childhood -** Both women and men are important for reproduction. The cultural construct of Indian society which reinforces gender bias against men and women, with varying degrees and variable contexts against the opposite sex, has led to the continuation of India's strong preference for male children. Female infanticide, a sex-selective abortion, is adopted and strongly reflects the low status of Indian women. Census 2011 shows decline of girl population (as a percentage to total population) under the age of seven, with activists estimating that eight million female fetuses may have been aborted in the past decade. The 2005 census shows infant mortality figures for females and males are 61% and 56%, respectively, out of 1000 live births, with females more likely to be aborted than males due to biased attitudes.A decline in the child sex ratio (0-6 years) was observed with India's 2011 census reporting that it stands at 914 females against 1,000 males, dropping from 927 in 2001 - the lowest since India's independence.
- **Childhood to Adulthood and Education -** Education is not widely attained by Indian women. Although literacy rates are increasing, female literacy rate lags behind the male literacy rate Literacy for females stands at 65.46%, compared to 82.14% for males. An underlying factor for such low literacy rates are parents' perceptions that education for girls are a waste of resources as their daughters would eventually live with their husbands' families and they will not benefit directly from the education investment.
- **Adulthood and Onwards -** Discrimination against women has contributed to gender wage differentials, with Indian women on average earning 64% of what their male counterparts earn for the same occupation and level of qualification. Discrimination against women has led to their lack of autonomy and authority. Although equal rights are given to women, equality may not be well implemented. In practice, land and property rights are weakly enforced, with customary laws widely practiced in rural areas. Women do not own property under their own names and usually do not have any inheritance rights to obtain a share of parental property.

Commonly used Indicators of gender discrimination:

Indicators of gender discrimination seek to go beyond description, and to identify policy measures for improving women's status or autonomy. These terms are not synonymous. Status has the connotation of relative social standing, and improving status may not increase autonomy, a term that suggests the ability of self determination, independence and control over one's life. However, knowledge of status is important in defining norms of behaviour, and permissible deviations from such norms. Demographic studies have tried to explore the extent to which women have control over their fertility behaviour by using various measures of 'autonomy'. Proxies used for female autonomy include female age at marriage, age difference between spouses, female secondary school education.

- **Education and Employment -** Education and employment are undoubtedly the most popular choices of ways to improve women's well being. The cause of women's education, in particular, has received much support from the findings of demographers. The schooling-fertility link has been found to be strong in all empirical studies, although the lines of causation are not always clear. A recent study of Palestinian women re -affirms the power of education to secure better employment and economic independence and lead to more equitable gender roles. There is scattered evidence to suggest that little difference is made to employment or other decisions unless 8-10 years are spent in school. However in India only 8.6% of adult females, and 15.3% of adult males have completed middle school, as against 40% and 66% who are literate. Moreover, even higher levels of formal education may be needed for the kind of exposure to new ideas and strategies that questioning of gender roles will need.

Employment as a route to empowerment is equally complex. Work participation levels of women are high, if an extended labour force definition is used, although the majority are in informal sector jobs, crowded into the low skill end of the spectrum, and usually in part time work. The uncertain impact of paid work on women's welfare is closely related to their continued home responsibilities. Does earning an independent income increase a woman's bargaining power? The answer is yes if she has real control over it. In many situations however women work in response to household needs, and have been variously described as 'target earners' or as a 'flexible resource of the household'. A recent analysis finds that regions with higher initial levels of female labour force participation have experienced larger growth of per capita expenditure and also faster poverty decline. In identifying the possible reasons behind this finding, the authors suggest that 'First, female labour force participation can be seen as having an important insurance role, in so far as a household with more earning members is less exposed (other things being equal) to downward income fluctuations resulting from illness and related events....Second, higher levels of female labour force participation leads to greater flexibility in occupational choices at the household level, ...Third, female labour force participation can be interpreted as an indicator of the general involvement of women in economic, social and political matters, with faster poverty decline being more likely in a society which gives greater scope for women's agency in general.' The same study finds little connection between literacy and poverty reduction.

Causes of Gender Discrimination- The causes of gender discrimination are:

- Educational backwardness
- Caste
- Religious beliefs
- Culture
- On the name of family history
- Customs and beliefs
- Races
- Low income
- Unemployment
- Society

- Family situation and
- Attitudes

Like male or even above them female plays important role in the family and national development. But her contribution is not recognized by the male dominant society.

Findings From The Study -

- **Education and Gender–** Education has the most persuasive impact on the development of women. It increases the sphere of knowledge and gives direction to the development of an individual's personality. It brings behavioural changes directed towards personal hygiene which help in prevention of certain diseases. It also increases the chances of getting financially rewarding jobs and access to credit facilities. In India, even after almost five decades of constitutional provision of free and compulsory education to children, a large proportion of them remain illiterate. Article 45 of the Constitution reads "the state shall endeavour to provide within a period of ten years from the commencement of the constitution, free, and compulsory education for all children, till they complete the age of fourteen years". At rural Bengal, 50% women are illiterate, 20% have only alphabetical knowledge, and remaining 30% are literate, up to class six. In these families, most male members are literate and educated. So, they easily may dominate the female members due to their ignorance, absence of awareness. Women are not conscious about their legal rights in the family and society approved by the Indian constitution. Also, they are afraid of applying those rights for long bureaucratic process in the Indian system. So, they try to tolerate all the exploitative, unjustifiable, inequitable manners in the family. Majority of girl children in countryside are first generation students, whose parents may be illiterate. Often they do not get the parental support or guidance required for coping with formal education. They lack learning materials. Moreover, in some cases children from villages are not properly clothed. For girls, formal schooling is more difficult because traditional attitudes do not favour long-term education. Even those few who manage to secure a college degree are disillusioned when they fail to get employment. They then have to learn a new earning skill. This leads to a belief that 12 or 15 years of formal education are a waste of resources. Lack of formal education closes opportunities for technical education, making learning of formal earning skills difficult. Consequently, a majority is forced to join the informal sector doing menial work.
- **Daily Food Intake for Women** - The practices of discrimination are also seen in daily intake of food among women. Women's role is seen as provider and serviced in household activity. So, the discrimination is mainly maintained by women's own initiation. In most cases, women play a dominating role in internal household activity. Only 20% women avoid any type of discrimination. 80% women are consciously bearing discrimination at interior household. Women prefer to give better food and service for their sons rather than girls. Sons are provided more healthy, nutritive and preferable foods than girls. Even women want to give birth the son child instead of girl child. Because they think that only sons are their future support. The girl child is seen as burden in the household. So the family members don't want to take any positive thinking about their girl child. This attitude also creates the vicious circle of poverty, malnutrition and injustice among women in the long run.
- **Deciding the Age of Marriage -** Discrimination is also seen in the deciding of the age of marriage of women. Parents are worried about their daughters' marriage after completing puberty and they start to think and search about their daughters' matrimonial relations. In rural society, women's average age of married is below 15. 20% women are getting married in the age of 13 and 60% women are getting married at the age of 15 and remaining 20%women are given married at the age of 18. In another side, men's average age of marriage is 25. Regarding husband-wife age gap, 84% women's husbands are elder than them near about 10 to 15 years. Only 16% women are belonged to standard age gap. So, this instance shows that in the younger age women must have to take the burden of family care and responsibilities. In maintaining responsibilities, they must have to involve in paid work and unpaid domestic work. Because, the male members are unable to fulfill smoothly the family needs and demands. In maintenance of peace and security of the household, women must take these contributory roles.
- **Dowry Practice –** Gender discrimination also strongly practiced by dowry system. The birth of a girl causes great upheaval for poor families. When there is barely enough food to survive, girl child puts a strain on a family's resources. The monetary drain of a daughter feels even more severe by the practice of dowry. Dowry is goods and money a bride's family pays to the husband's family. Dowry came to be seen as payment to the groom's family for taking on the burden of another woman. The dowry practice makes the prospect of having a girl even more distasteful to poor families. Girls are regarded as family burden due to decreasing of family assets in deciding their marriage. At rural Bengal, 90% girls are given marriage taking the help of dowry. 7% matrimonial relations are decided by their own choice and 3% relations are decided without any practice of dowry. In respect of 3%, girls' quality is decided by their good outlooks and so here the dowry practices are not useful. Families are bound to buy their daughters' happiness and comfort in exchange of bride price. So, this practice influences preferences of discrimination of son rather than daughter in the households.
- **Practice of Gender Socialization-** Discrimination is also seen in social customs and habits. Most of the mothers are conscious about their daughters' socialization than boys'. They think that girls must be protected from any misaffairs of the society and must be trained about day to day routine work of household activities. The insecurity and atrocities outside the household discourage the necessity of education and any engagement with the outside world for girl child. They work at home, look after siblings and assist their mothers in the respective economic field. 90% women take companionship of their girl child to get relief from heavy work load and to earn extra money in their respective economic field. The girl child's expertness at household activities is indicated for themselves as good qualities regarding the decision of their matrimonial relations.

Women and girls in some villages have a poor quality of life. The lack of basic services affects them the most. They have to spend considerable time in cooking for family. Having to defecate in open spaces is a health and social hazard. Looking after children who are frequently sick, husbands who do not earn adequately and can be drunk and trying to ensure that the family gets a meal every day. Women are most disadvantaged in the studied area. Combined with a traditional bias against educating girls they are often not sent to school or drop out at an early stage. Girls do not have the sufficient

exposure to everyday cultural situations, which men, women and young men have. As a result they are often anxiety prone and stressed. This happens because of women are socialized differently from the childhood.

Solution for Gender Discrimination - Various movements, programmes are being carried out by the Government, voluntary organizations and by lot of social activities for women's development and against the gender discrimination. To solve the gender discrimination problem the **E4SD** factor would be very useful. They **E4SD** factors are:

- **Education -** Education develops the skills, imparts knowledge, changes the attitude and improves the self confidence. It provides employment opportunity and increases income. Hence educating women is the prime factor to combat gender discriminate and for the upliftment of women. Not only the female, the society must be educated to give equal right for female.
- **Employment** - Employment gives the income and improves the economic position of the women. Employed women are given importance by the family members. Employment gives the economic independence for the women.
- **Economic Independence -** In India, mostly, women in the young age – depends her father, in the middle age- she depends on her husband and in the older age – depends on her son. Woman always depends on somebody for her livelihoods hence, independent in economical aspects are imperative for women's development. Economic independence will free the women from the slavery position and boost the self confidence. Economic independence of women also helps in the national economic development.
- **Empowerment -** Empowering women with the help of laws, education and employment will make the society to accept the women as an equal gender like male. Female also has all the potential and empowering women will help to use her full capability and mitigate the economic dependency of women.
- **Self-confidence -** Due to prolonged suppresment, Indian women, an especially uneducated and unemployed woman hasn't had the self-confidence. Women need self confidence to fight against all the atrocities against her and to live self esteemed life. Hence, boosting the morale and selfconfidence of the women, is the key to eliminate the inferior complex of her.
- **Decision Making -** Even in the family as well as in the society the decision making power of women is denied. Mostly males make the importance decision in the family and in the society. This makes women as voice less and destroys herself confidence and she feels less important in the family as well as in the society. So, to end gender discrimination women must empower with decision making power.

Conclusion - Throughout the world, women play a critical and contributory role in national economic growth and development. Their contributions have a lasting impact on household and communities, and it is women who most directly influence family nutrition and the health and education of their children. Giving women equal rights and opportunities can only serve to enhance this contribution and to bring us closer to the goal of eliminating poverty, illiteracy.

Mahatma Gandhi commented that "Womanhood is not restricted to the kitchen", he opined and felt that "Only when the woman is liberated from the slavery of the kitchen, that her true spirit may be discovered". It does not mean that women should not cook, but only that household responsibilities be shared among men, women and children. He wanted women to outgrow the traditional responsibilities and participate in the affairs of nation. He criticized Indian's passion for male progeny. He said that as long as we don't consider girls as natural as our boys our nation will be in a dark eclipse. Transforming the prevailing social discriminations against women must become the top priority, and must happen concurrently with increased direct action to rapidly improve the social and economic status of women. In this way, a synergy of progress can be achieved. A combination of extreme poverty and deep biases against women creates a remorseless cycle of discrimination that keeps girls in developing countries from living up to their full potential.

Education is the tool that can help break the pattern of gender discrimination and bring lasting change for women in developing countries. Educated women are essential for ending gender bias. Education of girls has a positive impact on economic well-being of women and their families and society in the long run through below mentioned circle :–

- As women receive greater education and training, they will earn more money.
- As women earn more money - they spend it in the further education and health of their children, as opposed to men, who often spend it on drink, tobacco or other women.
- As women raise their economic status, they will gain greater social standing in the household, and will have greater voice.
- As women gain consciousness, they will make stronger claims to their entitlements - gaining further training, better access to credit and higher incomes.
- As women's economic power grows, it will be easier to overcome the tradition of "son preference" and thus put an end to the evil of dowry.
- As son preference declines and acceptance of violence declines, families will be more likely to educate their daughters, and age of marriage will rise.
- As women are better nourished and marry later, they will be healthier, more productive, and will give birth to healthier babies.

A nation or society, without the participation of women cannot achieve development. If we eliminate gender discrimination, women will deliver all the potentials, skills, knowledge to develop the family, the nation and the whole world.

References -

1. Goswami, Sribas 2013- "Missing Girls: A sociological study on female infanticide in India" Published in Medical ethics: Challenges and prospects in India, Supirya Book, New Delhi, India.
2. Goswami, S (2008): "Hegemony of women entrepreneurs", Samajtattva" December, issue 2, Vol. 14, Adyasakti Printers, Kolkata.
3. Sen, Amartya. 2001 – "Many faces of Gender Equality", Frontline, Vol. – 19, issue- 22, 2009, India
4. Government of India, 2008, "Eleventh Five Year Plan (2007-2012),Vol. II, New Delhi, Planning Commission.
5. Kalyani Menon Sen and A.K.Shiva Kumar, 2010, "Women in India, How Free? How Equal?", New Delhi, UNDAF.
6. Julie Mullin, 2010, "Gender Discrimination – Why is it still so bad and what can you do about it?", Accessed from www.childerninneed.org on 15.08.2010.
7. Women's Education in India (PDF).Retrieved 12-09-10.
8. Gender Discrimination and Growth: Theory and Evidence from India (PDF). Retrieved 2012-09-10.

Impact Of Right To Education Act 2009 For Welfare Of The Nation

Dr. R. B. Gupta * Dr. Nilofar Qureshi **

Introduction - The Constitution (Eighty-sixth Amendment) Act, 2002 inserted Article 21-A in the Constitution of India to provide free and compulsory education of all children in the age group of six to fourteen years as a Fundamental Right in such a manner as the State may, by law, determine. The Right of Children to Free and Compulsory Education (RTE) Act, 2009, which represents the consequential legislation envisaged under Article 21-A, means that every child has a right to full time elementary education of satisfactory and equitable quality in a formal school which satisfies certain essential norms and standards.

Meaning - Article 21-A and the RTE Act came into effect on 1 April 2010. The title of the RTE Act incorporates the words 'free and compulsory'. 'Free education' means that no child, other than a child who has been admitted by his or her parents to a school which is not supported by the appropriate Government, shall be liable to pay any kind of fee or charges or expenses which may prevent him or her from pursuing and completing elementary education. 'Compulsory education' casts an obligation on the appropriate Government and local authorities to provide and ensure admission, attendance and completion of elementary education by all children in the 6-14 age group. With this, India has moved forward to a rights based framework that casts a legal obligation on the Central and State Governments to implement this fundamental child right as enshrined in the Article 21A of the Constitution, in accordance with the provisions of the RTE Act.

Objectives of study - Every research work is done for especially some objectives. This research paper has also some specific special objective what are the barriers and difficulties are come against the educational society faced due to RTE act 2009.

Research Methodology - Secondary data are collected by information received by Internet Websites, News papers, Books and magazines etc.

Importance of study - The RTE Act provides for the -

(i) Right of children to free and compulsory education till completion of elementary education in a neighborhood school.

(ii) It clarifies that 'compulsory education' means obligation of the appropriate government to provide free elementary education and ensure compulsory admission, attendance and completion of elementary education to every child in the six to fourteen age group. 'Free' means that no child shall be liable to pay any kind of fee or charges or expenses which may prevent him or her from pursuing and completing elementary education.

(iii) It makes provisions for a non-admitted child to be admitted to an age appropriate class.

(iv) It specifies the duties and responsibilities of appropriate Governments, local authority and parents in providing free and compulsory education, and sharing of financial and other responsibilities between the Central and State Governments.

(v) It lays down the norms and standards relating inter alia to Pupil Teacher Ratios (PTRs), buildings and infrastructure, school-working days, teacher-working hours.

(vi) It provides for rational deployment of teachers by ensuring that the specified pupil teacher ratio is maintained for each school, rather than just as an average for the State or District or Block, thus ensuring that there is no urban-rural imbalance in teacher postings. It also provides for prohibition of deployment of teachers for non-educational work, other than decennial census, elections to local authority, state legislatures and parliament, and disaster relief.

(vii) It provides for appointment of appropriately trained teachers, i.e. teachers with the requisite entry and academic qualifications.

(viii) It prohibits (a) physical punishment and mental harassment; (b) screening procedures for admission of children; (c) capitation fee; (d) private tuition by teachers and (e) running of schools without recognition,

(ix) It provides for development of curriculum in consonance with the values enshrined in the Constitution, and which would ensure the all-round development of the child, building on the child's knowledge, potentiality and talent and making the child free of fear, trauma and anxiety through a system of child friendly and child centered learning.

Higher education in India - Today we have large network of more than 304 universities and more than 14600 colleges in public and private sectors as compared to 20 universities and 500 colleges in 1947 at the time of independence.

Education level - The Sarva Siksha Abhiyan's focus on creation of educational infrastructure and improving quality of education in rural areas has had positive outcomes. It has led to increase in the Gender Parity Index (GPI) in

* **Prof. (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Commerce College, A.B. Road, Indore (M.P.) INDIA**
** **Prof. (Commerce) Visiting faculty, School of Commerce D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA**

primary (0.94) as well as upper primary (0.92) education. Enrolment of girls at primary level increased by 8.67percent (86.91 percent in 2001-02 to 104.7percent in 2009-10) and at upper primary level by 13 percent (52.1 percent in 2001-02 to 65.1percent in 2004-05).4

The challenge, however, remains is that the high enrolment rate has not translated into high attendance rates as well. According to the India Human Development Report, 2011, the national attendance rates during the year 2007-2008 at primary and upper primary level were 82% and 60% respectively. Therefore despite attaining high enrolment rates of 96% at the primary level, the attendance rates remain low. This needs to be addressed to enable women to access education that gives them employability. The National Literacy Mission or Saakshar Bharat Mission, with its objective of extending educational options to those adults who have no access to formal education, targeted female literacy as a critical instrument for women's empowerment. This has led to an increase in literacy, amongst women, from 53.67% (Census 2001) to 65.46% (Census 2011). It is also for the first time that of the total of217.70 million literates added during the decade, women (110.07million) outnumbered men (107.63million).5

The advancement of Information and Communication Technologies (ICTs) has brought new opportunities for knowledge gathering for both women and men.

Conclusion - Higher education as been above acts as an essential component of culture, socio- economic and environmentally sustainable development of individuals, communities and nation.

University education has become crucial in preparing a healthy, skilled and agile intellectual human force. To accept the challenges of Privatization and Liberalization to offer high quality education and other services Indian university have to adopt various measures. Then only can they enter into the competition. It is the task of the government to facilitate equity and excellence at all levels of education and learning. This can however be achieved by proper implementation of the plans formulated by the government. The lacuna in the system of higher education should be removed, properly restructured and reconstituted so that India higher education can rank as one of the best in the global world. The process of received financial amount more complex and due to takes more time and process becomes very rigid & difficult so many schools face financial problems .lack of people education and awareness in society creates so many problems for proper implementation of the act.

Lack of communication with rural children 2/3 of India's population resides
In villages.

The service sector is growing - The private service sector is a major economic factor in society. In the 1992-97 periods the service sector was the most important source of the increase in employment, since 77,000 jobs were created in the private service sector. New technology plays an important part for service enterprises, and it is expected that within the next few years it will be far more important for competitive power.

These last few years the division of work between the public and the private sectors has been changing. More and more local authorities invite tenders for jobs such as home care. Besides, many private enterprises outsource tasks outside their core product. This opens possibilities for new enterprises in a large number of fields where women have the competence and the interest.

In addition to this, users of public services are becoming more critical. We want to be able to choose between several offers concerning schools, hospitals, nursing homes, etc. We make increasingly high demands on the service we want. Today many entrepreneurs base their enterprise more and more on the possibilities of new tasks created by outsourcing and more open competition. Computer services, counseling, cleaning, and entertainment are the lines of business that have provided the most new jobs during the last five years. They wanted educated persons.

Equalization of sex roles - These last few years we have also seen quite radical changes in the traditional sex roles, which help to blur the distinction between the values of men and women. The same applies to the field of education, the choice of occupation, and the sharing of domestic chores.

Therefore the Government wants - To contribute to making the establishment of one's own enterprise more prestigious. The way to do this is to start a number of activities to arouse interest, for instance by focusing on role models, by awarding entrepreneur awards, and publishing discussion books about entrepreneurs,

- to improve the access of societies to loan capital, especially to small loans,
- To induce the banks to improve their knowledge of educational societies and thereby their competence in evaluating educational societies projects.
- Government should increase the training activities programmed.
- NGO also increase the awareness activity programmed.
- The layout of the estate and buildings should be arranged in such a way that there is scope for expansion in the future.
- They should Developed good infrastructure.
- Government both at centre and states joined hands to develop higher education system.
- Government should organizing trainings programs, seminars, exhibitions, research program etc for awareness of student. Government should provide infra structural facilities and the land at concessional rates.
- They need exposure to modern processors, computer and training. Without this the increased students educational is difficult. Proper implementation of act and Facilities like electricity, road, street lighting, and road transport are either not available or poorly served.
- The higher education system is not so much aware about various facilities and concessions provided by the government.

- The higher education is closely linked to the opportunities they have in education, health, employment and for political participation. Over the years, significant advancements have been made in India on many of these counts. Data on literacy rates, enrolment and drop rates in primary education, life expectancy, infant mortality, maternal mortality rates, etc has shown a progressive trend.

Suggestions -

- Government should increase the training activities programmed.
- NGO also increase the awareness activity programmed.
- The layout of the estate and buildings should be arranged in such a way that there is scope for expansion in the future.
- They should Developed good infrastructure.
- Government both at centre and states joined hands to develop higher education system.
- Government should organizing trainings programs, seminars, exhibitions, research program etc for awareness of student.
- Government should provide infra structural facilities and the land at concessional rates.
- Government should try and controlled inequalities among various universities.

References -

1. Research and Methodology by C.R. Kothari
2. Indian Economy problem by A.N. Agrawal
3. Business statisticsShukla & SahaySBP Agra 2014 Hisrich,
4. 'bare act b.s khetrapal by kp Indore 2014
5. Business Environment Francis Cherunila HMP.H Mumbai 2014
6. Kuruchatra Monthly Magazine New Delhi
7. India Today Monthly Magazine New Delhi
8. News channels 2014
   - DD News
   - Aaj Tak
   - NDTV
9. News Paper 2014:
   - Times of India by Times of India Group Indore
   - Nai Duniya Indore by Nai Duniya Group
   - Bhaskar News Paper by Bhaskar Group
10. Internet Websites:
    - www.yahoo.com
    - Google search engine
    - altavista.com

****

Globalization And Tribal Culture Of India

Asst. Prof. Mehzbeen Sadriwala * Asst. Prof. Pankaj Vyas * *

Introduction - For nearly two decades, a "silent revolution" has been sweeping through the world – in developed countries as well as in developing countries. It is the revolution of economic reforms, in other words, a change from an economic system of central planning to a market based economy. Economic reforms have become a universal phenomenon and are viewed as indispensable for rapid and balanced development. It involves both macroeconomic stabilization and structural (microeconomic) reforms. Rangarajan rightly points out that.

While the stabilization policies were intended to correct the lapses and put the house in order in the short term, the structural reform policies were intended to accelerate economic growth over the medium term. Structural reform policies cannot succeed unless a degree of stabilization has been brought about. But stabilization by itself will not be adequate unless structural reforms are undertaken to avoid the recurrence of the problems faced in the recent period. Structural reforms were broadly in the area of industrial licensing and regulation, foreign trade and investment and the financial sector. There is considerable unanimity among economists about the need to reduce and, as far as possible, eliminate barriers to the entry and expansion of firms. The policy of licensing as has been practiced in the past has had no particular merit and, in fact, the Approach document of the Eighth Plan published in May 1990 had said: "A return to the regime of direct, indiscriminate and detailed control in industry is clearly out of question. Past experience has shown that such a control system is not effective in achieving the desired objective. Also the system is widely abused and lead to corruption, delays and inefficiency". **(1)**

Economic reforms, as promoted by IMF and World Bank, are expressed in two concepts: Stabilization and Structural adjustments. Related to that is a rule-based operation of free trade and trade related services, globally promoted and administered by WTO through a series of multi-lateral agreements, known through such acronyms as TRIPs (Trade Related Intellectual Property Rights), TRIMs (Trade Related Investment Measures), GATs (General Agreement on Trade in services) etc.

Two IMF economists **(2)** have defined stabilization measures as "a package of policies designed to eliminate disequilibrium between aggregate demand and supply in the economy, which typically manifests itself in balance of payment deficits and rising prices". Actually, this implies restoring two types of balance viz. external balance of payments and budgetary equilibrium, both of which are assumed to be complementary. These balancing acts are needed to contain prices. While stabilization measures are short-term package, administered by the IMF, structural adjustment packages are long-term measures towards deregulation, liberalization and privatization largely supervised by the World Bank. The economic logic underlying these measures rests on the assumption (not yet fully tested or proved) that market–mediated growth will ensure efficient allocation of resources. Economic reforms seek to usher in Liberalization, Privatization and Globalization, what is commonly known as LPG policies.

Liberalization - Liberalization denotes deregulation and de-licensing of industry, relaxation of industry entry barriers and removal of restrictions on capacity expansion. "Economic Reform is sometimes equated with liberalization, but it is better described as encouragement of free and fair competition in all economic spheres as a spur to efficiency and growth. The negative aspects of liberalization are decontrol, deregulation and reduction in governmental intervention and involvement. These "liberalization" initiatives are important, but they are only a part of the agenda for increasing free and fair competition. They have to be supplemented by positive efforts to create institutions that make competitive markets function and to make sure that all sections of society have access to the market economy and the opportunities it creates". **(3)** The main aim of liberalization is to dismantle the excessive regulatory framework, which acts as a shackle on freedom of enterprise.

Privatization - Privatization in a narrow sense indicates transfer of ownership of a public sector undertaking to private sector, either wholly or partially. But in a broad sense, it implies the opening up of the private sector to areas, which were hitherto reserved for the public sector. Such deliberate encouragement of investment to the private sector in the economy, while emphasizing to a lesser degree the expansion or growth of the public sector will, over a period of time, increase the overall share of the private sector in the economy. The purpose is to limit the areas of the public sector and to extend the areas of private sector operation, including heavy industries and infrastructure.

"Privatization is" as Barbara Lee and John Nellis define it, "the process involving the private sector in the ownership or operation of a state-owned undertaking. Thus, the term refers to private purchase of all or part of a company. It covers 'contracting out' and the privatization of management – through management contracts, leases, or franchise arrangements."(4) The basic purpose of privatization is to infuse the spirit of efficiency into public enterprises.

Globalization - Globalization is a "process of trans-nationalization of production and capital, and standardization of consumer tastes and their legitimization with the help of international institutions like World Bank, IMF and WTO. Obviously the process is a move towards a borderless regime of free trade and transactions based on competition".**(5)** It intends to integrate the Indian economy with the world economy.

* Assistant Prof., M.V.S. College J.R.N. University, Udaipur (Raj.) INDIA
* * Assistant Prof., Maharaja Engineering College, Udaipur (Raj.) INDIA

Globalisation is considered to be an important element in the reforms package. It "involves the increasing interaction of national economic systems – more integrated financial markets, economies and trade, higher factor mobility, and spectacular change in information technology leading to the spread of knowledge throughout the world."**[6]**

Globalisation means different things to different people. In business world, it refers mainly to specific strategies in companies designed to overcome the constraints of national boundaries through the mechanism of globalized production and marketing networks. In the field of economics it is considered synonymous to economic inter-dependence between countries covering increased trade, technology, labour and international capital flows. In the political debate, globalisation refers to the integrative forces drawing national societies into a global community covering the spread of ideas, norms and values. Last but not the least, in the social field, the tidal wave of global culture is sweeping the indigenous cultures all over the world.**(7)**

Globalisation is defined as free movements of goods, services, capital (FDI), people and information technology across national boundaries. It creates and, in turn, is driven by an integrated global economy, which influences both, economic as well as social relations within and across countries. The opening up of an economy increases competition internally as well as externally, leads to structural changes in the economy, alters consumer preferences, lifestyles and demands of citizens. The process of global economic integration gained momentum only in the 1970s with the development of capital markets. **[8]**While mainstream economists suggest that globalisation process is a strong force for equalizing per capita income between nations, others say that the developing countries are exposed to threats of further aggravation and marginalization in the process.**[9]**

The advocates of globalization, especially from the developed countries, limit the definition of globalisation to only three components, viz., unhindered trade flows, capital flows and technology flows. They insist that the developing countries accept their definition of globalisation and conduct the debate on globalisation within the boundaries set by them. But several economists and social thinkers in developing countries believe that this definition is incomplete. If the ultimate aim of the globalisation movement is to integrate the world into one global village, then the fourth component of unrestricted movement of labour cannot be left out. But whether the debate about globalisation is carried out at the World Trade Organization (WTO) or at any other international forum, there is a deliberate effort to black out 'labour flows' as an essential component of globalisation.

Fears of Globalization - Globalization has raised fears all over the world that the market could rend the social fabric of societies. Anti-globalizationists proclaim, "The world is not for sale". Globalization, these days, is not being warmly welcomed particularly in the developing countries. Quotations from centuries past would show that fears about globalization have long been prevalent. Back in the time of the Roman Empire, Pliny the Elder was already complaining about "India, China and Arabia robbing our Empire one hundred million sesterces every year." **[10]**

As Robert J. Samuelson **[11]** puts it "…Globalisation is a double-edged sword. It's a controversial process that assaults national sovereignty, erodes local culture and tradition and threatens economic and social stability." It brings instability and unwelcome change…exposes workers to competition from imports…undermines governments…" **[12]**. As Henry Kissinger, former US Secretary of State has said, "globalisation inevitably challenges prevailing social and cultural patterns…A sense of political unease is inevitable-especially in the developing world-a feeling of being at the mercy of forces neither the individual nor the government can influence any longer." **[13]**

The driving forces in the process of globalisation are incentives and integration. The most visible outcomes in the process are the development of transnational corporations and international banks having principal control over growing world trade in goods and services rather than governments (the world's 37,000 parent transnational corporations and their 200,000 affiliates control 75% of the world trade).

Views about globalisation differ widely, influenced by the particular vantage point of an individual or a country. In South Asia, for example, during the period of globalisation the absolute number of people in poverty has increased, despite the fact that India, the largest country in the region has been experiencing a growth rate of over 6.5 per cent during this period of increased integration with the global economy. Although the other indices of human development in South Asia have improved during the last three decades, they are still among the worst in the world. **[14]**. According to Paul Streeten, **[15]**globalisation has its gainers and losers. Gainers are rich countries, rich people, people with skills, large firms etc. Losers are poor countries, poor people, workers, people with low skills, small firms etc.

Globalization in India - In the broad setting of reforms in many countries in the 1980s, India was an apparent anomaly. India was at the crossroads. She was facing a macroeconomic crisis that required immediate attention. The crisis had been simmering since the mid 1980s in spite of occasional minor reform measures, attempted by the governments led by Prime Ministers, V.P. Singh and Chandrasekar respectively. The macroeconomic crisis provided the opportunity and the necessity to address meaningfully the inefficiencies in our policy framework that had altered our economic performance and to begin constructively the task of undertaking the necessary microeconomic or structural reforms that had long been overdue.

The reform process began in India in 1991. The, then new Government of P.V. Narashima Rao moved swiftly and announced a programme of macroeconomic stabilization and structural adjustments, which initiated a series of reform measures in India. The proposed policy frame was radically different in approach and content from the one India had pursued since independence. Reforms initiated by Rao and his Finance Minister, Manmohan Singh are called the Second Wave of reforms. The major areas of reform include -

1. Fiscal policy reform;
2. Monetary policy reform;
3. Pricing policy reform;
4. External policy reform;
5. Industrial policy reform;
6. Foreign investment policy reform;
7. Trade policy reform; and
8. Public sector policy reform.

India, characterized by pervasive poverty (300 million below

the poverty line) has been implementing several poverty alleviation programmes over the passed decades. These programmes have been in the form of "Garibi Hatao" (eradicate poverty), self-employment creation (SEC), Food for Work (FFW), asset building programmes and wage employment creation (WEC) programmes. These programmes were mainly targeted towards the poor or very poor families on the basis of income threshold. However, a feature of most programmes is that they are financed by the state and, as such, periodic funding inadequacies often lead to either abandonment or reduced effectiveness of the schemes. However, with the onset of globalisation the resource allocations to these programmes in real terms are badly hit. **[16]**

There is now substantial evidence that India's success at reducing the incidence of poverty during the 1970s and 1980s was halted, if not reversed, during the globalisation era of 1990s. Estimates made at the World Bank show that the incidence of poverty, which between 1972-73 and 1989-90 fell from 55.5 per cent to 34.3 per cent in rural India and from 54.3 to 34.1 per cent nationally, has in subsequent National Sample Survey (NSS) rounds, up to 1997 (when the incidence was 34.2 per cent national and 35.8 per cent rural) never gone below the 1989-90 level and has in fact risen to much higher levels in individual years. Other estimates (e.g., Gupta 1999) suggest an even greater increase in rural poverty during 1990s. All the estimates indicate that the gap between rural and urban areas, which had decreased during the 1980s and the 1970s, increased considerably during the 1990s. **[17]**

In addition to the decline in the purchasing power of the incomes of the rural poor, the rate of growth of per capita rural income in real terms has sharply decelerated. This fall in rural income is, however, not just because the share of agricultural income in national income has fallen. The share in non-agricultural incomes in total rural incomes, which rose sharply between 1977-78 and 1990-91, has stagnated since then. The reason behind all this is the inefficiency and corrupts practices inherent in the governance system of the Indian Government, which does not enhance productivity, competitiveness and development.

Given that India accounts for about a third of the world's absolute poor, the nature of her integration with the international economy has critical implications for liberalization and globalisation reducing world poverty. India can be described as a relatively large, closed or protected economy, in the throes of industrialization, with trade and foreign investment plating a limited role, low per capita income, and a significant agrarian sector, marked by sharp inequality.

The issue of poverty and inequality is far more important for India both because of the alarming and overwhelming proportion of the population living below the poverty line (however measured) and also because inequality halting growth usually leads to the self-perpetuation of a low-level equilibrium. In regard to the distributive effect in particular, economists are worried over a noticeable empirical phenomenon that suggests a considerable decline in the income of unskilled labour and/or a decline in their employment relative to the more skilled segment of the work force. **[18]**

Globalisation takes society from a national to an international perspective, which is typified as being consumer driven. 21st century consumers have informed value politics and a global culture. Their choices reflect the lifestyle consumerism and materialistic trend in society, where self-esteem is centered on one's consumption. "You are what you wear and eat". Globalisation is not really global. As Streeten points out, it increases the gap between different strata of people and countries. Globalisation is good for rich countries like USA, Japan and Europe. It is bad for developing countries like India. Globalisation is good for rich people with assets and skills. But it is bad for the poor people like Tribals and Dalits.

Tribal's in India - The tribal population of India (67.6 million) around 7 percent of the total population is larger than that of any other country in the world. The rural and urban male population is 3,17,55,930 and 26,07,341 respectively. The rural female population is 3,09,95,096 while the urban female population is 24,00,013. The tribal population of India is more than the total population of France and Britain and four times that of Australia. If all the tribal's of India had lived in one state, it would have been the fifth most populous state after Uttar Pradesh, Bihar, West Bengal and Maharashtra. Madhya Pradesh is not only the largest state in India but also has the largest tribal population of the country.

The word 'tribe' is generally used for a "socially cohesive unit, associated with a territory, the members of which regard them as politically autonomous" (Mitchell, 1979: 232). Often a tribe possesses a distinct dialect and distinct cultural traits. The term 'primitive tribes' was often used by western anthropologist to denote "a primary aggregate of peoples living in a primitive or barbarous condition under a headman or chief" (Encyclopedia of Social Sciences, Vol. 15). Various anthropologists define tribe as a people at earlier stage of evolution of society. **[19]**

The forest occupies a central position in tribal culture and economy. The tribal way of life is very much dictated by the forest right from birth to death. It is ironical that the poorest people of India are living in the areas of richest natural resources. Historically, tribals have been pushed to corners owing to economic interests of various dominant groups. In contemporary India, the need for land for development is still forcing them, albeit this time to integrate with mainstream.

In spite of the protection given to the tribal population by the Constitution of India (1950), tribals still remain the most backward ethnic group in India. They rate very low on the three most important indicators of development: health, education and income. The tribals are most backward not only compared with the general population, but also compared to the Scheduled Caste (Dalits), the other backward social group with constitutional protection. While examining the effects of planned developmental intervention on the tribals from 1961 to 1981, it was observed that twenty years of intervention has not made any significant impact in improving the conditions of the tribals.

The basic features of our Constitution indicate direction of change or modernization, if one wants to say so, of our society. Ours is supposed to be a casteless, secular, democratic and socialist polity and society. We have shaped our policies and programmes to realize this type of change. **[20]** Our Constitution considers every citizen as equal. Legal and administrative framework, institutional network and policies of development in general are also considered suitable for tribals. The tribals are a part of the Indian society and general problems of consciously changing or modernizing Indian society are also applicable to them. But the tribal's form a special case in this wider framework and the problem is the nature and type of this

special category.

Tribal development policies and programmes in India assumed that all the tribal's will develop and will integrate themselves with the so-called mainstream. This has happened only in a symbolic way. As a result of the planned tribal development, stratification on secular lines has taken place among tribals and only a small section has been able to take advantage of the development programmes. The reason being that the development programmes were not implemented due to inefficient and corrupt bureaucracy. **[21]**

Impact of Globalization on Tribal's - Displacement of Tribals: It is estimated that owing to construction of over 1500 major irrigation development projects since independence, over 16 million people were displaced from their villages, of which about 40 per cent belong to tribal population. The government and the planners are aware of

a. the eroding resource base and socio-cultural heritage of tribal population through a combination of development interventions, commercial interest, and lack of effective legal protection to tribal and
b. the disruption of life and environment of tribal population owing to unimaginative, insensitive package of relief (Planning Commission, 1990). Still the development process continued unmindful of displacement. **[22]**

A common feature shared by most of the tribal people is their remoteness and marginal quality of territorial resources. In the past, exploitation of such poor regions was found both difficult and uneconomic. But, the recent rapid technological advancement and unrivalled economic and political strength of world capitalism, and the rising power of neo-colonialism through the G-8 directly and the IMF, WB, IBRD, etc., as agencies, have created favorable conditions for the evasion and extraction of natural resources from the ecologically fragile territories of tribal people. Thus, forced evictions of tribal's to make way for mammoth capital-intensive development projects have become a distressing routine and ever-increasing phenomenon. **[23]**

There is a heavy concentration of industrial and mining activities in the central belt. All the massive steel plants, BALCO, NALCO, heavy engineering concerns etc. are based here. Most river basin development schemes and hydropower projects, a chain of forest-based and ancillary industries and an increasing number of highly polluting industries are located in this region. Despite intense industrial activity in the central Indian tribal belt, the tribal employment in modern enterprises is negligible. Apart from the provisions of Apprenticeship Act, there is no stipulation for private or joint sector enterprises to recruit certain percentage of dispossessed tribal workforce. The tribals are forced to live in juxtaposition with alien capitalist relations and cultures, with traumatic results. They are forced onto the ever-expanding low paid, insecure, transient and destitute labour market. About 40 per cent of the tribals of central India supplement their income by participating in this distorted and over exploitative capitalist sector. Many more are slowly crushed into oblivion in their homeland or in urban slums. This is nothing short of ethnocide. Their economic and cultural survival is at stake. **[24]**

India happens to be the second most dammed country in the world. It has invested over Rs. 300 billion on dams and hydropower projects by 2000. The World Bank has directly funded as many as 87 large-scale dam projects in India as against only 58 for the whole of the African continent and 59 for Latin America. Between 1981 and 1990, the World Bank provided $7 billion for such projects in India, i.e., one-fifth of its total funding for 85 countries world over. Almost all major dam projects in India are intrinsically linked to world capitalism and its obsequious national stooges. Nearly 60 per cent of these large dams are located in central and western India where about 80 per cent of the tribals live. **[25]**

There is no reliable and complete information on the number of tribals displaced in the country since independence. The estimates range between 5 and 7 million - mostly by the dams, followed by mines and industries - or approximately one in every ten tribals has been displaced by different developments projects. It is not only the magnitude of involuntary tribal displacement that should attract the special concern but also the sacrifice of collective identity, historical and cultural heritage, and of course the survival support. Poverty, malnutrition, mortality, morbidity, illiteracy, unemployment, debt bondage, and serfdom among the tribals are markedly higher. **[26]**

Case Studies - The founding fathers of the Indian Constitution had, with right insight, taken into serious consideration, the plight of certain deprived and backward sections of the Indian society and brought into the constitutional framework some special legislation in order to protect their interests. In the tribal context, the protective legislations came into force with the objective of safeguarding the tribal people by the State from the onslaught of the non-tribals as; otherwise, they would be mercilessly exploited of their resources, labor and habitat. However, even a cursory examination reveals that these protective legislations have far from succeeded in protecting the interests of the tribals not only from the exploitation of non-tribals but also from the State itself.

Development carnage under the New Economic Policy and its submission to the powers of globalisation have led to a process of conscious and systematic annihilation of the first people - the Adivasis- of this country.... This process of globalisation has invaded India too since the introduction of the New Economic Policy of the Nineties, which is a complete reversal of the welfare and socialistic essence of the Constitution.

We present below some case studies to bring out the impact of globalization on the tribal communities in India.

1. Narmada People's Struggle - Living in the mountains and plains of the Narmada river valley, stretching for 1,300 km through Madhya Pradesh, Gujarat, and Maharashtra, the natural resource based communities, also known as adivasis have, since 1985, mounted a tenacious struggle against displacement, state repression, and the destruction of natural resources resulting from the Narmada Valley development projects. The projects comprise 30 large dams, 133 medium size dams, and 3,000 small dams, along with 75,000 km of canal networks to direct the waters of the Narmada River. The year the World Bank has agreed to finance the project. **[28]**

The people decided to oppose the displacement and question the project's claim to 'public purpose'. The Narmada Bachao Andolan (Movement to Save the Narmada), was formed to fight not only for rights over economy, environment, and livelihood, but also for personhood, for humanity itself. Holding firm to the policy of 'Amra gaon ma amra raj' (our rule in our village) the villagers resisted state collusion with globalisation forces.

Indigenous peoples' unity has served the villagers well in

confronting the all too familiar tactic of allotting multiple families, even multiple villages the same plot of land and setting the poor and dispossessed against one another. The people refuse to be divided or intimidated by the numbers thrown at them. 'Ham sab ek hain!' (We are one) they declared.

The people's movements raised slogans like 'vikas chahiye, vinas nahin' ('we want development and not destruction). Voices are rising everywhere against the rampage of large dams, mines, polluting industries, sweatshops, airports and expressways, designs for health care delivery – all packaged and publicized as third world aid, while destroying natural resources, traditional knowledge, and vibrant communities.

The fight against centralization of knowledge and natural resources is a fight against globalisation, in which people's knowledge – in their own language and with reference to their own experience – is an essential survival tool. In India the battles over patents on neem, turmeric, and basmati rice have drawn attention to the wholesale attack on people's knowledge. Dams further reveal the extent of the attack. The desperate attempts of the people to attract finance for the Maheshwar dam (also on the Narmada) highlight the mutual dependence of resource-centralizing projects upon multinational finance, which seeks distance from the democratic processes of any single country.

2. Bhopal Gas Tragedy - Hundreds of thousands of survivors of Union Carbide corporate crime in Bhopal, Madhya Pradesh State, still waiting for compensation for illnesses resulting from the gas leakage 15 years ago, and suffering to this day from groundwater contamination due to the leaked toxins. There is no more urgent call for solidarity than the recent decision of the New York Federal Court to dismiss their class action lawsuit against Union Carbide Corporation.

Gains and Losses of Globalization - A number of studies suggest that during the 90s, when policies of liberalization, globalisation and privatization (LGP) were implemented in various degrees, income distribution, has worsened, and as a result is having a dampening impact on long-term economic growth and on the prospects for poverty reduction, necessary to meet the UN Millennium Declaration Goal of halving the number of people living in extreme income poverty. Extreme income poverty has affected some 150 million people in India. Tribals make up about one third of the income poor. An assessment of progress has been less than anticipated. The trade aspects of globalisation also alter the context of many issues and areas affecting tribals, in some cases intensifying problems and in other cases affecting the policy actions required to address the problems. **[33]**

Globalisation affects tribals differently. Urban and educated tribals may benefit from the increased opportunities for work that come with the influx of foreign companies and investments. These employment avenues are complemented by greater opportunities to receive education and skills training of a higher quality. The new technologies that define this era, in particular the computer and Internet may be accessible to this group of tribals. In general, the liberalization of trade and financial markets also promise benefits for this group, including a greater variety of goods at cheaper prices due to increased competition and much more attractive interest rates to undertake business ventures.

Conversely, poor, uneducated, credit-constrained, informal and agricultural sector tribals will benefit in a much less direct manner. Tribals in general benefit from long-term economic growth brought about by correcting price distortions in factor and product markets. By making markets competitive, higher agricultural growth is expected and this in turn is expected to increase rural income. It is also expected that the expansion of the industrial sector would increase employment in the urban as well as in the rural areas. The proponents of globalisation argue that the process may entail some short-term difficulties in terms of reduced income and consumption; unemployment might also increase. But eventually the reform process would lead to greater gains all around. But we cannot close our eyes to serious undercut in domestic production of goods and services and risks to the health status particularly of the poor, tribals, women and children.

The gains of globalisation have so far accrued to those who already have education and skill advantage, easier market access and possession of assets for use as collateral to access credit. For the tribals, globalisation is associated with rising prices, loss of job security, lack of health care and tribal development programmes. Globalisation may also weaken the Constitutional protections, in terms of education and job reservations, given to tribals.

Conclusion- Globalization with a Human Face - Markets are not very friendly to the poor, to the weak or to the vulnerable, either nationally or internationally. Nor are markets free. They are often the handmaidens of powerful interest groups, and they are greatly influenced by the prevailing distribution of income. In a capitalist economy, all are not in a position to compete in the market. Some like Tribals and Dalits who do not have enough education, health and nutrition to compete will fall outside the market place. That is why much better distribution of income and assets, of credit, of power structures and certainly of knowledge and skills are vital to making markets work more efficiently. Markets cannot become more neutral or competitive unless the playing field is even and playable.

If globalisation were superimposed on a poorly educated and poorly-trained tribal people, particularly in states like Bihar and Jharkhand with poor systems of governance and infrastructure, it would not lead to growth nor reduce poverty. Globalisation may no longer be an option, but a fact. However, it must be implemented with a human face.

The efforts to become competitive often hurt the social sectors first. It is most often these sectors that face budgetary reductions when liberalisation policies are implemented. Conservative monetary and fiscal policies are often undertaken and these too, independent of reductions in the size and scope of social sectors, can indirectly reduce allocations to social services and basic provisions. Such cuts in social spending are likely to hit the tribals the hardest who already have limited access to education and health facilities. **[34]**

It has been accepted as an undisputed fact that rural and tribal particularly women, have a very intimate and symbiotic relationship with the ecology around them as they are untenably linked to the natural resources. In India, people adversely affected by development have been mainly dalits and tribals and among them women, who suffer even severe forms of discrimination. Repeated displacement, migration and drastic changes in livelihood patterns have socially and culturally denuded the status of the indigenous people, increasing violence and abuse against them.

The tribals are part of the Indian society, at the same time

they are different. Special policy and programmes are required to address and redress these differences especially in the context of globalisation. When we plan for tribal development, we have to regard these differences, take a special note of their situations and capabilities and provide them facilities to develop on the line they want to take. Outsiders cannot develop tribals; they can become only facilitators if they want to do so. If they have to unfold from within, they must have participation in any development decision. Their felt needs should be transformed in development programmes. The tribals can participate in their development programmes only if they are considered to be equals **[35]** and if unique identities are respected.

References-

1. Rangarajan C., "The New Economic Policy and the Role of the State", in Uma Kapila (ed.), *Indian Economy Since Independence*, p. 69.
2. Khan Mohsin S and Malcolm D Knight, 1981, "Stabilization Programme in Developing Countries: A Formal Framework", *IMF Staff Papers*, March.
3. Government of India, 2001, "Economic Reforms: A medium Term Perspective", Recommendations of Prime Minister's Economic Advisory Council, in Raj and Uma Kapila (ed.), *A Decade of Economic Reforms*, p.355.
4. Lee Barbara and Nellis John, 1990, "Enterprise Reform and Privatization in Socialist Economies", World Bank Discussion Paper 104, p.3.
5. Oommen M A, 2001, "Globalization and Poverty: The Indian Case", *Malayala Manorama Year Book*, p.563.
6. Kapila Uma, *Understanding the Problems of Indian Economy*, p.482. Also refer Globalization and Inequality: Historical Trends by Kevin H. O'Rourke in Annual World Bank Conference on Development Economics 2001/2002, p. 40.
7. Mahbub ul Haq Human Development Centre, *Human Development in South Asia 2001* (OUP), pp. 10-11
8. Ibid, pp.aa 11
9. *Annual World Bank Conference on Development Economics*, p. 69
10. Ibid, p. 70
11. Samuelson, Robert J. *International Herald Tribune, January* 2000)
12. World Bank, WDR 1999
13. Henry Kissinger, 1999
14. *Human Development in South Asia 2001* (OUP), pp. 15
15. Streeten Paul, "Globalisation: Threat or Opportunity", *Copenhagen Business School Press*, 2001.
16. Ibid, pp.56
17. Ibid, p.73
18. Rajat Acharya and Sugata Marji, "Globalisation and Inequality":, *EPW*, 23 September 2000, p. 3503
19. Joshi Vidyut (ed.): "Tribal Situation in India", Rawat Publication, 1998, pp.15
20. Ibid, p.13
21. Ibid, p. 14
22. Sah, D.C., "Displacement and Rehabilitation" in "Tribal Situation in India", (ed. Vidyut Joshi)
23. Pathy, Janganath, "Impact of Development Projects on Tribals" in "Tribal Situation in India",. Vidyut Joshi (ed.)
24. Ibid, p. 279
25. Ibid, pp. 279-280
26. Ibid, p. 280
27. *Human Development in South Asia 2001* (OUP), p.50
28. Ibid, p.53
29. Joshi Vidyut, pp.25

****

Performance Reviews Relating To Rajya Vidyut Utpadan Nigam Limited

Harish Singh Nayak * Dr. P.R. Somani **

Introduction - Performance Audits relating to '**Power Generating Stations' of Rajasthan Rajya Vidyut Utpadan Nigam Limited**, conducted. Power is an essential requirement for all facets of life and has been recognised as a basic requirement. In Rajasthan, the generation of power is managed by the Rajasthan Rajya Vidyut Utpadan Nigam Limited (RRVUNL), which was incorporated on 19 June 2000 as per the Rajasthan Power Sector Reforms Transfer Scheme 2000 under the administrative control of the Energy Department of the Government of Rajasthan. During 2005-06, electricity requirement in Rajasthan was assessed at 32,052 Million Units (MUs) of which only 31,373.98 MUs were available leaving a shortfall of 678.02 MUs, which works out to 2.12 per cent of the total requirement. The total installed power generation capacity in the State of Rajasthan as on 1 April 2005 was 5,248.64 Mega Watt (MW) and effective available capacity was 4,414 MW against the peak demand of 4,786 MW leaving deficit of 372 MW. As on 31 March 2010, the comparative figures of requirement and availability of power were 44,031 and 41,337.90 MUs with deficit of 2,693.10 MUs (6.12 per cent) while the installed capacity was 7,768.46 MW and effective available capacity was 6,859 MW. Thus, there was a growth in demand of 11,979 Million Units (MUs) during review period against which only 9,963.92 MUs were additionally available. The capacity addition during the review period was 2,519.82 MW.

As on 31 March 2010, RRVUNL had four thermal generation stations and 12 hydro generation stations with installed capacity of 2,930.50 MW and 163.85 MW respectively. The turnover of RRVUNL was ' 5,101.12 crore in 2008-2009, which was equal to 29.13 and 2.66 per cent of the State PSUs turnover and State Gross Domestic Product respectively. It employed 3,492 employees as on 31 March 2010.

Objectives -

- To assess whether capacity addition programme taken up/ to be taken up to meet the shortage of power in the State is in line with the National Policy of Power for All by 2012;
- To assess whether a plan of action is in place for optimization of generation from the existing capacity;
- To ascertain whether the contracts were awarded with due regard to economy and in transparent manner;

To ascertain whether the execution of projects were managed economically, effectively and efficiently.

Financial Management -

- To ascertain whether the projections for funding the new projects and upgradation of existing generating units were realistic including identification and optimal utilization for intended purpose;
- To assess whether all claims including energy bills and subsidy claims were properly raised and recovered in an efficient manner; and

To assess the soundness of financial health of the RRVUNL.

Operational Performance - To assess whether the power plants were operated efficiently and preventive maintenance as prescribed was carried out minimising the forced outages; To assess whether requirements of each category of fuel worked out realistically, procured economically and utilised efficiently; and

To assess whether the manpower requirement was realistic and its utilisation optimal.

Environmental Issues - To assess whether various types of pollutants (air, water, noise, hazardous waste) in power stations were within the prescribed norms and complied with the statutory requirements.

Monitoring and Evaluation - To ascertain whether adequate MIS existed in the entity to monitor and assess the impact and utilize the feedback for preparation of future schemes.

Scope and Methodology - The present review conducted during January 2010 to May 2010 covers the performance of the RRVUNL for the years 2005-06 to 2009-10. The review mainly deals with Planning, Project Management, Financial Management, Operational Performance, Environmental Issues and Monitoring by Top Management. The audit examination involved scrutiny of records at the Head Office and six* out of total 18 generating stations. The units were selected for detailed study where the capacity addition has been made or was planned to be made during the period under review. Apart from it, one Hydro Power station based on its higher generating capacity was also selected for detailed study. Thus, coverage in terms of capacity was 1,490 MW (38.76 per cent) out of total installed/under commissioning capacity of 3,844.35 MW.

* Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Ex. H.O.D., Department of Accountancy, B.N.P.G. College, Udaipur (Raj.) INDIA

Capacity Addition and Project Management - Against the envisaged capacity addition of 3,020 MW to meet the energy generation requirement in the State during 2005-10, the actual addition was 2,519.82 MW. Though 1,525 MW of capacity was planned to be added by RRVUNL during the five years ending March 2010, the actual addition was only 525 MW leaving a deficit of 1,000 MW. The State was not in position to meet the demand as the power generated as well as purchased fell short to the extent of 678.02 MUs to 2,693.10 MUs during 2005-10 due to non commencement of commercial production by the newly established generation stations/ units as per the scheduled plan. The nine units taken up for implementation during the review period were not completed within scheduled time. The slippage in time schedule were due to delay in signing of gas supply agreement for Gas based plant, finalisation and approval of drawings, execution of work of main plant by BHEL, providing input from Balance of Plant contractors/RRVUNL etc. Three units could not be commercially operated even after synchronization due to technical problems which could not be resolved till September 2010. Time overrun varied from 12.5 to 48 months in commercial operation of projects, which led to cost overrun amounting to ' 1,133.44 crore.

Contract Management - Contract management is the process of efficiently managing contracts (including inviting bids and award of works) and execution of works in an effective and economic manner. The works in thermal power projects is generally awarded on turnkey (Composite) basis to a single party involving civil construction, supplies of machines and ancillary works. During 2005-10, contracts valuing ' 5,121.35 crore were executed. RRVUNL failed to recover liquidated damages of ' 222.34 crore being the penalty for the delay in commissioning of the projects. RRVUNL also failed to impose penalty for extra cost of dismantling and rework at SSTPS-Unit VI and thus had to bear an extra cost of ' 1.95 crore due to modification in approved drawings which could have been avoided.

Operational Performance - Performance of the existing generation stations depends on efficient use of material, manpower and capacity of the plants so as to generate maximum energy possible without affecting the long term operations of the plants. Audit scrutiny of operational performance revealed the following:

Procurement of fuel - Short receipt of coal (14.91 per cent) against the total linkage approved by Standard Linkages Committee during the four years upto 2008-09 led to shortfall in achievement of the generation targets by 3,289 MUs in the TPSs valued at ' 777.99 crore. In absence of any agreement with the coal companies from May 2002 to August 2009, RRVUNL failed to procure allotted quantity of coal. Similarly, short receipt of gas at DCCPP resulted in shortfall in achievement of the generation targets by 23.86 MUs valued at ' 6.34 crore.

Consumption of fuel - Use of coal having less gross calorific value coupled with Station Heat Rate (SHR) above the Rajasthan Electricity Regulatory Commission (RERC) norms and leakages of steam in the ageing units of power plants caused excess consumption of coal to the tune of 38.34 lakh MT (' 892.12 crore) during 200510. Similarly, in case of gas based DCCPP, SHR in excess of RERC norms led to excess consumption of 18.03 MMSCM of gas valued at ' 16.73 crore.

Deployment of Manpower - RRVUNL had 3,492 employees as on 31 March 2010. The deployment of manpower was not rational as the manpower deployed at gas based and hydro power station was in excess of the norms fixed by CEA whereas the manpower at coal based power stations was inadequate.

Plant Load Factor - The PLF of KSTPS, SSTPS and DCCPP was above the national average of 77.2 per cent but the PLF of RGTPS, was lower (36 per cent than the national average in 2008-09) due to non availability of gas. The estimated shortfall in generation as compared to national average PLF works out to 1,782.93 MUs during 2005-10 resulting in loss of contribution amounting to ' 46.36 crore. Decline in PLF of hydro power projects was due to less availability of water.

Outages - The total number of hours lost due to planned outages increased from 7,718 hours in 2005-06 to 8,528 hours in 2009-10. The unit wise analysis of planned outages revealed that total 4,800 hours were lost in excess of annual all India average. The forced outages remained less than the norm of 10 per cent fixed by CEA in all the five but it increased by 4.42 to 99.23 per cent during 2006-10 as compared to the year 2005-06.

Auxiliary Consumption - The actual auxiliary consumption at RGTPS was more than the norms fixed by RERC during the period under review resulting in loss of generation of 76.53 MUs valuing ' 18.11 crore.

Financial Management - Efficient fund management is the need of the hour in any organisation. This also serves as a tool for decision making, for optimum utilisation of available resources and borrowings at favorable terms at appropriate time. The power sector companies should, therefore, streamline their systems and procedures to ensure that:

- funds in idle inventory are not invested,
- outstanding advances are adjusted/recovered promptly,
- funds are not borrowed in advance of actual need, and
- Swapping high cost debt with low cost debt is availed expeditiously.

Dependence on borrowed funds increased from ' 4,723.23 crore in 200506 to ' 7,521.25 crore (59.24 per cent) in 2008-09, which resulted in interest burden of ' 360.86 crore. Heavy capital expenditure coupled with interest commitment on loans without adequate returns due to delay in commercial operation of the plants caused significant increase in cost of operations. RRVUNL's own inclination for equity support of 20 per cent of project cost by CERC caused short receipt of equity support from the State Government by ' 433 crore.

Environmental Issues - In order to minimize the adverse impact on the environment, the GOI had enacted various Acts and statutes. At the State level, State Pollution Control

Board (SPCB) is the regulating agency to ensure compliance with the provisions of these Acts and statutes. MOEF, GOI and Central Pollution Control Board (CPCB) are also vested with powers under various statutes. RRVUNL has an environmental wing at the KSTPS & SSTPS.

RRVUNL could not get registered its Gas based DCCPP under Clean Development Mechanism and consequently could not earn Certified Emission Reduction. Further, it did not initiate any action for washing of 117.28 lakh MT of high ash content coal (weighted average of ash ranged between 35.85 and 39.01 per cent) before use to meet the MOE&F norm of less than 34 per cent ash. KSTPS and SSTPS neither installed adequate silencing equipments nor installed noise monitoring equipment to record noise levels. We observed that KSTPS and SSTPS neither installed adequate silencing equipments nor installed noise monitoring equipment and did not record noise levels at all, which resulted in violation of statutory provisions in this regard.

The Government in its reply (September 2010) stated that measures like installation of low noise machines, silencers, mufflers, noise refuge, noise absorbent padding and green belt development were taken to restrict sound levels. However, we are of the opinion that RRVUNL did not install noise

Conclusion and Recommendations - RRVUNL could not keep pace with growing demand of power in the State due to non-commencement of commercial production by the newly established generating stations/ units as per their scheduled plan. The project management was ineffective as there were instances of time and cost overrun in all the projects taken up during 200510. Delay in completion also caused significant increase in interest cost during construction period. Operational performance of the plants was adversely affected due to short receipt as well as inferior quality of coal/gas, low heat rate causing excess consumption of coal/ gas. Further though plant load factor, plant availability and capacity utilization remained higher than the national average level, there was a declining trend since 2007-08 due to increase in forced outages and auxiliary consumption. Heavy capital expenditure coupled with interest commitment on loans without adequate returns due to delay in commercial operation of the plants caused significant increase in cost of operations. The top management did not take corrective measures to ensure adherence to norms/targets in respect of input efficiency parameters. The review contains seven recommendations which include effective planning and monitoring, ensuring consumption of coal/gas within the prescribed norms, minimise forced outages and auxiliary consumption and ensure compliance to environmental laws, etc.

References -

1. Accountability of Public Enterprises to Parliament, Sterling, New Delhi, (1980).
2. Administrative Reforms Commission Reports of Study team on Financial Administration, (1967).
3. Annual Reports of the State Enterprises under Industries Department, Rajasthan.
4. Annual Reports on the functioning of various administrative Ministries in the Rajasthan
5. Bhatia, B.S., Gurdeep, S, (10, June 1991) : Accountability of public Enterprises. Indian Journal of Public Enterprises. Indian Journal of Public Enterprises. Allahabad, Vol. 6.
6. Jain, R.K. (1967): Management of Public Enterprises in India, Manaktala, Bombay.
7. Khan,Z., Arora, R.K. (1975) : public Enterprises in India, Associated, New Delhi
8. Memorandum and Articles of Association of State Enterprises, Rajasthan.
9. Ministry of Finance, Bureau of Public Enterprises, Annual Reports on the Working of Industrial and Commercial Undertaking of the Rajasthan Government.

****

Impact Of Economic Reforms On Indian Economy

Dr. D. L. Ahir *

Introduction - India was a latecomer to economic reforms, embarking on the process in earnest only in 1991, in the wake of an exceptionally severe balance of payments crisis. The need for a policy shift had become evident much earlier, as many countries in East Asia achieved high growth and poverty reduction through policies which emphasized greater export orientation and encouragement of the private sector. India took some steps in this direction in the 1980s, but it was not until 1991 that the government signaled a systemic shift to a more open economy with greater reliance upon market forces, a larger role for the private sector including foreign investment, and a restructuring of the role of government.

Opinions on the causes of the growth deceleration vary. World economic growth was slower in the second half of the 1990s and that would have had some dampening effect, but India's dependence on the world economy is not large enough for this to account for the slowdown. Critics of liberalization have blamed the slowdown on the effect of trade policy reforms on domestic industry. However, the opposite view is that the slowdown is due not to the effects of reforms, but rather to the failure to implement the reforms effectively.

Reforms in Industrial and Trade Policy - Reforms in industrial and trade policy were a central focus of much of India's reform effort in the early stages.

Industrial Policy - Industrial policy has seen the greatest change, with most central government industrial controls being dismantled. The list of industries reserved solely for the public sector which used to cover 18 industries, including iron and steel, heavy plant and machinery, telecommunications and telecom equipment, minerals, oil, mining, air transport services and electricity generation and distribution has been drastically reduced to **three**: defense aircrafts and warships, atomic energy generation, and railway transport. Industrial licensing by the central government has been almost abolished except for a few hazardous and environmentally sensitive industries.

Trade Policy - Trade policy reform has also made progress, though the pace has been slower than in industrial liberalization, before the reforms, trade policy was characterized by high tariffs and pervasive import restrictions. Imports of manufactured consumer goods were completely banned. For capital goods, raw materials and intermediates, certain lists of goods were freely importable, but for most items where domestic substitutes were being produced, imports were only possible with import licenses. Although India's tariff levels are significantly lower than in 1991, they remain among the highest in the developing world because most other developing countries havp also reduced tariffs in this period. The weighted average import duty in China and Southeast Asia is currently about half the Indian level. The government has announced that average tariffs will be reduced to around 15 percent by 2004, but even if this is implemented, tariffs in India will be much higher than in China which has committed to reduce weighted average duties to about 9 percent by 2005 as a condition for admission to the World Trade Organization.

Foreign Direct Investment - Liberalizing foreign direct investment was another important part of India's reforms, driven by the belief that this would increase the total volume of investment in the economy, improve production technology, and increase access to world markets. The policy now allows 100 percent foreign ownership in a large number of industries and majority ownership in all except banks, insurance companies, telecommunications and airlines. Procedures for obtaining permission were greatly simplified by listing industries that are eligible for automatic approval up to specified levels of foreign equity (100 percent, 74 percent and 51 percent). Potential foreign investors investing within these limits only need to register with the Reserve Bank of India. For investments in other industries, or for a higher share of equity than is automatically permitted in listed industries, applications are considered by a Foreign Investment Promotion Board that has established a track record of speedy decisions. In 1993, foreign institutional investors were allowed to purchase shares of listed Indian companies in the stock market, opening a window for portfolio investment in existing companies.

These reforms have created a very different competitive environment for India's industry than existed in 1991, which has led to significant changes. Indian companies have upgraded their technology and expanded to more efficient scales of production.

Reforms in Agriculture - A common criticism of India's economic reforms is that they have been excessively focused on industrial and trade policy, neglecting agriculture which

* **Assistant Professor (Commerce) Govt. College, Jawad (M.P) INDIA**

provides the livelihood of 60 percent of the population. Critics point to the deceleration in agricultural growth in the second half of the 1990s as proof of this neglect. However, the notion that trade policy changes have not helped agriculture is clearly a misconception. The reduction of protection to industry, and the accompanying depreciation in the exchange rate, has tilted relative prices in favors of agriculture and helped agricultural exports. The index of agricultural prices relative to manufactured products has increased by almost 30 percent in the past years. The share of India's agricultural exports in world exports of the same commodities increased from 1.1 percent in 1990 to 1.9 percent in 2012, whereas it has declined in the ten years before the reforms'.

But while agriculture has benefited from trade policy changes, it has suffered in other respects, most notably from the decline in public investment in areas critical for agricultural growth, such as irrigation and drainage, soil conservation and water management systems, and rural roads.

Infrastructure Development - Rapid growth in a globalized environment requires a well-functioning infrastructure including especially electric power, road and rail connectivity, telecommunications, air transport, and efficient ports. These'sctors were opened to private investment, including foreign investment. However, the difficulty in creating an environment which would make it possible for private investors to enter on terms that would appear reasonable to consumers, while providing an adequate risk- return profile to investors, was greatly underestimated. Many false starts and disappointments have resulted.

Civil aviation and ports are two other areas where reforms appear to be succeeding, though much remains to be done. India's road network is extensive, but most of it is low quality and this is a major constraint for interior locations. The major arterial routes have low capacity and also suffer from poor maintenance. However, some promising initiatives have been taken recently.

The railways are a potentially important means of freight transportation but this area is untouched by reforms as yet. The sector suffers from severe financial constraints, partly due to a politically determined fare structure.

Financial Sector Reform - India's reform program included wide-ranging reforms in the banking system and the capital markets relatively early in the process with reforms in insurance introduced at a later stage.

Banking sector reforms included: (a) measures for liberalization, like dismantling the complex system of interest rate controls, eliminating prior approval of the Reserve Bank of India for large loans, and reducing the statutory requirements to invest in government securities; (b) measures designed to increase financial soundness, like introducing capital adequacy requirements and other prudential norms for banks and strengthening banking supervision; (c) measures for increasing competition like more liberal licensing of private banks and freer expansion by foreign banks. These steps have produced some positive outcomes.

Privatization - The public sector accounts for about 35 percent of industrial value added in India, but although privatization has been a prominent component of economic reforms in many countries, India has been ambivalent on the subject until very recently. Initially, the government adopted a limited approach of selling a minority stake in public sector enterprises while retaining management control with the government, a policy described as "disinvestment" to distinguish it from privatization. This policy had very limited success. An important recent innovation, which may increase public acceptance of privatization, is the decision to earmark the proceeds of privatization to finance additional expenditure on social sector development and for retirement of public debt. Privatization is clearly not a permanent source of revenue, but it can help fill critical gaps in the next five to ten years.

Social Sector Development in Health and Education - The challenges in this area are enormous; it is worth noting that social sector indicators have continued to improve during the reforms. The literacy rate increased from 52 percent in 1991 to 65 percent in 2011, a faster increase in the 1990s than in the previous decade, and the increase has been particularly high in the some of the low literacy states such as Bihar, Madhya Pradesh, Uttar Pradesh and Rajasthan.

Suggestion - The central government's effort must be directed primarily towards improving revenues, because performance in this area has deteriorated significantly in the post reform period. Total tax revenues of the center were 9.7 percent of GDP in 1990-91. They declined to only 8.8 percent in 2011-12, whereas they should have increased by at least two percentage points. Tax reforms involving lowering of tax rates, broadening the tax base and reducing loopholes were expected to raise the tax ratio and they did succeed in the case of personal and corporate income taxation but indirect taxes have fallen as a percentage of GDP.

State governments also need to take corrective steps. Sales tax systems need to be modernized in most states. Agricultural income tax is constitutionally assigned to the states, but no state has attempted to tax agricultural income. Land revenue is a traditional tax based on landholding, but it has been generally neglected and abolished in many states. Urban property taxation could yield much larger resources for municipal governments if suitably modernized, but this tax base has also been generally neglected. State governments suffer from very large losses in state electricity boards (about 1 percent of GDP) and substantial losses in urban water supply, state road transport corporations and in managing irrigation systems. Overstaffing is greater in the states than in the center. The industrial structure that evolved under this regime was highly inefficient and needed to be supported by a highly protective trade policy.

Conclusion - The impact of ten years of gradualist economic reforms in India on the policy environment presents a mixed

picture. The industrial and trade policy reforms have gone far, though they need to be supplemented by labour market reforms which are a critical missing link. The logic of liberalization also needs to be extended to agriculture, where numerous restrictions remain in place. Reforms aimed at encouraging private investment in infrastructure have worked in some areas but not in others. The complexity of the problems in this area was underestimated, especially in the power sector. This has now been recognized and policies are being reshaped accordingly. Progress has been made in several areas of financial sector reforms. The goals were often indicated only as a broad direction, with the precise end point and the-pace of transition left unstated to minimize opposition and possibly also to allow room to retreat if necessary. This reduced politically divisive controversy, and enabled a consensus of sorts to evolve, but it also meant that the consensus at each point represented a compromise, with many interested groups joining only because they believed that reforms would not go "too far". The result was a process of change that was not so much gradualist as fulfill and opportunistic.

References :-

I. Ahluwalia, Isher.J., "Productivity and Growth in Indian Manufacturing, "Oxford University Press, New Delhi 1991.

2 Ahluwalia, Isher J., "Industrial Growth in India: Stagnation since the mid sixties," Oxford University Press, New Delhi, 1995.

3. Dreze, Jean, and Amartya Sen, "Economic Development and Opportunities, " Oxford University Press, New Delhi (1995).

4. Indian economy - Dalchand Badi, Arjun Publication , New Delhi.

5. Economic development and Planning - Dr, Rita Mathur, Arjun Publication, New Delhi.

6. Indian economy - B.S. Yadav, University Publication , New Delhi.

7. Economic development and Planning -Dr. Kaint Tabssum, UniversityPublication, \ New Delhi.

8. Economic Policy - Rajeev Kumar, Arjun Publication, New Delhi.

9. Economic development and Planning - Richa Singh, Arjun Publication, New Delhi.

10. Indian economy - Ruddardatt & K.P.N. Sundharam, S. Chand & Company Ltd. Ram Nagar, New Delhi.

11. Indian economy - Dr. Mishra and Puri, Himalaya Publication. New Delhi.

****

MGNREGA : Challenges & Future

Dr. D. L. Ahir *

Introduction - ''The difficulty lies, not in the new ideas, but in escaping from the old ones, which ramify, for those brought up as most of us have been, into every corner of our minds,"

john Maynard Keyners (1883-1946)

The MGNREGA is the largest employment programmme in human history. The Act was launched on 2nd February 2006 from Anantapur in Andhra Pradesh and initially covered 200 of the "poorest" districts of the country. The Act was implemented in phased manner; 130 districts were added from 2007 to 2008. With its spread to over 635 districtsacross the country now. The mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) was enacted by legislation on 25th August 2005. This scheme provides a legal guarantee for at least one hundred days of employment in every financial year to adult members of any household who want ot work at minimum wage of INR 120 (160now) (US$2.20) per day in 2009 prices. The vital aim of the act is to improve the purchasing power of the rural people, it is no matter whether they are APL or BPL. In the Act Central Government meets the cost towards the payment of wages, 3/4th of material cost and some percentage of administrative cost. State Governments meets the cost of unemployment allowance.

There are two crucial intentions of the scheme:

1. Rural development
2. Employment generation

The MGNREGA stipulates that works must be targeted towards a set of specific rural development activities such as: water conservation and harvesting of forests, rural connectivity, flood control and protection such as construction and repair of embankments, digging of new tanks/ponds, construction of small check dams and tree plantation.

Fundamental provisions in mgnrega -

- The Gram Panchayat will issue a job Card.
- The job Card will bear the photograph of all adult members of the household willing to work underMGNREGA.
- A job Card holder may submit a written application for employment.
- Employment will be given within 15 days.
- Work should ordinarily be provided within 5 km radius of the village.
- Wages are to be paid according to the Minimum Wages Act 1948.
- At least one-third beneficiaries shall be women.
- Work site facilities such as crèche, drinking water, shade have to be provided.

Mgnrega (CSS) Expenditure on the scheme -

Table-1: Budget outlay and Expenditure on MNREGA:

YEAR	Budget outlay (In Crore)	Expenditure (In Crore)
2006-07	11300	8823.35
2007-08	12000	15856.89
2008-09	30000	27250.10
2009-10	39100	37905.23
2010-11	40100	39377.27
2011-12	40100	37548.79
2012-13	33000	-
2013-14	33000	-

Source:12" five year plan-Vol-2 MGNREGAPerformance page-287

Table -2 : Total outlay and wage Expenditure on MGNREGA

YEAR	Total Outlay (TO)	Wage Expenditure Percent of To)
2006-07	$2.5bn	66
2007-08	$2.6bn	68
2008-09	$6.6bn	67
2009-10	$8.68bn	70
2010-11	$8.91bn	71

Source: ministry of Rural Development, Report MGNREGA, 2012

Table-3: (Table see the last page)

Cag's report on mgnrega - The Comptroller and Auditor General (CAG) of India, in its performance audit of the implementation of MGNREGA has found "significant deficiencies" in the implementation of the act. The poorest of poor were not able to exercise their rights fully under the job guarantee act and several irregularities have been noticed in works and procedures under the government's ambitious scheme. The Comptroller and Auditor General's (CAG) report says that widespread instances of non-payment and delayed payment of wages have been noticed in 23 states under the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (MGNREGS). Because of this the per rural

* Assistant Professor (Commerce) Govt. College, Jawad (M.P) INDIA

household employment declined from 54 days in 2009-10 to 43 days in 2011-12. There was also a substantial decline in the proportion of works abandoned midway or not completed for a significant period were noticed.

"Works of Rs.2,252.43crore, which were undertaken under the scheme, were not permissible. It was seen that 7,69,575 works amounting to Rs. 4,070.76 crore were incomplete even after one to five years. It was also noted that expenditure on works amounting to Rs.6,547 .35 crore did not result in creation of durable assets," The report said that an analysis of releases made to states for the period April 2007 to March 2012 and poverty data showed that three states Bihar, Maharashtra and Uttar pradesh had 46 percent of the rural poor in India but accounted for only 20 percent of the total funds released under the scheme." This would indicate that the poorest of poor were not fully able to exercise their rights under MGNREGS," the report said that correlation between poverty levels and implementation of the scheme was not very high.

An amount of Rs. 4,072.99 crore was released by the ministry during 2008-12 to states for use in the subsequent financial years, in contravention of budgetary provisions. Excess funds of Rs.2,374.86 crore were released by the ministry to six states, either due to wrong calculation or without taking note of the balances available with the states. It said there were significant inefficiencies in the implementation of the annual plans. The CAG said despite MGNREGA being in force for seven years, governments of Haryana, Maharashtra, Punjab, Rajasthan and Uttar Pradesh did not formulate rules for carrying out provisions of the act, as of March 2012

The report noted that job cards were not issued to 12,455 households in six states, photographs were not found pasted on 4.33 lakh job cards in seven states, there were multiple job cards in the name of the same person in 18,325 cases and there were delays in issue of job cards ranging up to 51 months in 12,008 cases. The CAG said unemployment allowance was not paid in 47,687 cases and non-payment of wages was of Rs. 36.97 crore.

The audit of the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme which has an annual budget of 40,000 crore covers the period between 2007 and 2011. The ministry will soon be issuing orders to make it compulsory for all Grampanchayat accounts related to the rural employment guarantee programme to be certified by chartered accountants. To this end, CAG will create a panel of chartered accountants for each district. There will also be a random check of the Grampanchayat accounts by CAG. There have been large number of complaints of misappropriation of funds under the National Rural Employment Guarantee Scheme ranging from the embezzlement of funds in seven districts in Uttar Pradesh to the 90-crore scam in Andhra Pradesh, given that funds are used and disbursed at the Gram panchayat.

Mgnrega and its impact on migration - MGNREGA is focusing on reducing the number of migrant labourers in the country as employment is being provided to them in their own villages. MGNREGA is a scheme which confines distress migration, when people have to go to cities to find work because they cannot survive on what they can earn in their own villages.

Generally, for the people those who have no access to positive. Migration opportunities, it may be a good way to curb distress migration, which is creditable previously migration has played a significant role in the urbanization. Still many urban problems like over-burdened infrastructure, urban poverty, decline in social welfare, overcrowding and increased population in urban areas blamed on this ' rural spill over'. It is seen that distress migration occurs at the cost of net loss to both rural and urban areas, and a decline in social welfare. Because of inadequate demand for labour in urban areas thus, in this process, rural poverty gets transformed into urban poverty. In villages most people would prefer not to migrate, men and women both. Therefore, if MGNREGA can be used to control rural urban migration then it will be yet another benefit from this act. Which can actually do something concrete in poverty alleviation and rural development in the long run.

The lack of exact official data on Migration is a matter of concern that should be corrected as soon as possible. Rural and Urban migration can become a problem for both the areas. The aspect of MGNREGA where it can be used to curb rural-urban migration is conditional on the MGNREGA being implemented well in that region, otherwise, if work is not supplied, if wages aren't paid on time, then workers will have no incentive to stop migrating. However, primary aim of the Act is to provide welfare for the population that does not even earn the minimum wage- the fact that it can also curb distress migration which is just a positive secondary impact of the Act.

However, it is doubtful to achieve something in reducing mobility for work in general – Which is not desirable anyway? Question is not about migration itself, but what kinds of opportunities are available for unskilled labour groups of people" not only economically, but also socially. The programme is an attempt to reduce labour mobility by providing unskilled, socially unrewarding work in rural areas. From labour market point of view, MGNREGA is important for creating safety net for poor people without damaging labour market and employment prospects.

Criticism - 2011 Wall Street journal report claims that the programme has been a failure. No major roads have been built, no new homes, schools or hospitals or any infrastructure to speak of has resulted from the programmeAt national level, a key criticism is corruption. Workers hired under the MGNREGA programme say they are frequently not paid in full or forced to pay bribes to get jobs, and aren't learning any new skills that could improve their long-term prospects and break the cycle of poverty.

Another important criticism is the poor quality of public works schemes completed product. In February 2012 in an interview, Jairam Ramesh, the Ministry of Rural Development

for the central government of India, admitted that the roads and irrigation canals built by unskilled labor under this programme were of very poor quality and were washed away with heavy rains.

It also appears as if MGNREGA has something to do with the shift of people fro self-employment to the sarkari social security net. In the five years between 1999-00 and 2004-05, when the economy grew at 6 percent on an average. In the next five years to 2009-10, the economy reved up to 8.6 percent. An analysis by Crisil Research of the National Sample Survey Office's (NSSO's) latest jobs data found that the second half of the decade created all of 2.2millionadditional jobs while the first half created as many as 92.7 million new jobs. The question is , How did slower growth create more jobs? And why did faster growth do the opposite? What's going wrong? What was so different between the 1999-00 and 2004-05 period and the five years after that? The main divergences were in growth, and it can be no one's case that growth destroyed self-employment. The key difference was huge social spends in rural areas, especially MGNREGA which is creating around 25 million jobs in NREGA-based projects annually. In 2010-2011, MGNREGA provided 257 core person-days of employment. This stopped people from being self-employed.

Suggestions for Better Implementation -

- Ensuring job card verification is done on the spot against an existing data base.
- Reducing the time lag between application and issue of job cards.
- Selection of works by Gramsabha in villages and display after approval of projects.
- To ensure public choice, transparency and accountability, At least half the works should be run by GramPanchayats.
- Maintenance of muster roll by executing agency-to prevent contractorsled works. Regular measurement of work done according to a qachedule of rural rates Supervision of Works by qualified technical personnel on time.
- Payment of wages through banks and post offices.

PaulomeeMistry, general secretary of MGNREGA said; Civil society organizations (CSOs) can play an important role in monitoring such programmes. Budget monitoring can be a useful tool for helping governments implement such ambitious schemes. Various steps to raise awareness about MGNREGA, including holding public meetings, organizing training sessions for youths, distributing pamphlets, and conducting a house-to-house campaign to explain the people's rights under MGNREGA. Workers employed under this scheme ought to be taken up. The first step in this direction was the formation of National Rural Employment Guarantee Workers' Union in Gujarat (NREGWUG), which was followed by other similar efforts in Rajasthan parts of Uttar Pradesh and elsewhere.

Conclusions - First, the MGNREGA with improved wages and incomes in rural areas, appears to have prompted more people to drop out of self-employment and increased dependency on the Government.

Second, the lack of labour market reforms suggests that the seeds for long-term jobs growth are not being exposed.

Third, a separate study is required to understand the full consequences ofMGNREGA and its economic impact-both god and bad. The next few years may see more jobless growth if existing policies are not assessed correctly.

Finally, it may be concluded that if all the loopholes in distribution of job cards and payment of wages, missuse of funds, measurement of work etc could be brought under strict vigilance,then only MGNREGA would be a weapon against rural poverty. Otherwise it would remain as an adhoc arrangement to provide meal to needy people through creating employment only. People should appreciate that MGNERGA does not stand to create employment only but also provides an opportunity to serve their villages, their state and their country.

References -

1. MGNREGA, Report to the people (2nd February 2012); Ministry of Rural Development, Government of India.
2. A Survey of Twenty Districts (2008) INSTITUTE OF APPLIED MANPOWER RESEARCH, Delhi.
3. R. Jagannathan (2011) Did MGNREGA kill as many jobs as it created?
4. MGNREGA website.
5. CAG's report on MGNREGA'S 2012
6. MGNREGA Breifing Book January,2013

Table-3: performance of the mahatma gandhi national rural employment guarantee schememgnrega (National Overview) (Reported till 12/02/2013)

	FY 06-07 200 districts	FY 07-08 330 districts	FY 08-09 619 districts	FY09-10 626 districts	FY10-11 626 districts	FY 11-12 632 districts	FY12-13 636 districts
Total job Card issued	3.78 Cr	6.48 Cr	10.01 Cr	11.25 Cr	11.98 Cr	12.39 Cr	12.59 Cr
Employment Provided to households	2.10 Cr	3.39 Cr	4.51 Cr	5.26 Cr	5.49 Cr	5.04	4.48 Cr
Person Days per HH	43 Days	42 Days	48 Days	54 Days	47 Days	43 Days	36 Days

बाल श्रम : मानवाधिकार

डॉ. आनन्द तिवारी *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध आलेख अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं स्थानीय परिप्रेक्ष्य में बाल श्रमिकों के संमकीय तथ्यों के अवलोकन एवं विश्लेषण के साथ एक लघु प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित है। आलेख में बालश्रम हेतु क्रियान्वित संवैधानिक प्रावधानों तथा श्रम कानूनों की प्रासंगिकता पर गहन समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है और राज्य स्तर पर किए गए प्रयासों का मूल्यांकन कर एक सार्थक एवं सारगर्भित निष्कर्ष पर पहुँचने का एक लघु प्रयास किया गया है।

बालश्रम – अवधारणा – बाल श्रमिक किसे माना जाए ? इस संबंध में आयु निर्धारण संबंधी मतभेद हैं संयुक्त राष्ट्र संघ ने 18 वर्ष से कम आयु को बाल श्रमिक माना है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संघ ने 1912 में बाल श्रमिक की आयु वर्ष निर्धारित की। 1919 में इसे 14 वर्ष निर्धारित किया गया। अमेरिका में बाल श्रमिक की आयु 12 वर्ष नियत की गई है। इंग्लैण्ड तथा यूरोपीय देशों में यह आयु 13 वर्ष निर्धारित है जहाँ तक भारत का सवाल है इंडियन साइंस एक्ट के अंतर्गत आयु 13 वर्ष निर्धारित है परंतु संविधान के अनुच्छेद 24 में 14 वर्ष निर्धारित है। कारखाना अधिनियम में 18 वर्ष की आयु को माना गया है।

भारतीय वयस्कता अधिनियम 1975 के अनुसार एक अवयस्क ही बाल श्रमिक माना गया है।

अध्ययन, उद्देश्य एवं शोध प्रविधि

1. बाल श्रमिकों की विश्व परिप्रेक्ष्य और विशेषकर भारतीय परिप्रेक्ष्य में राज्यवार व्यवसायवार कार्यभार अधिकता एवं स्वास्थ्य प्रभाव संबंधी समंकीय तथ्यों पर संग्रहण एवं विश्लेषण।
2. खुरई तहसील के चालीस बाल श्रमिकों के लघु सर्वेक्षण पर आधारित समकीय तथ्यों का अध्ययन एवं प्रस्तुतीकरण।
3. अंतर्राष्ट्रीय कानून, भारतीय संविधान तथा भारतीय श्रम कानूनों का विश्लेषण एवं व्यावहाकिर स्तर पर क्रियान्वयन संबंधी आलोचनात्मक विश्लेषण।
4. अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर बाल श्रम उन्मूलन किए गए सार्थक प्रयासों का मूल्यांकन।

समंकीय विश्लेषण – समग्र विश्व में सर्वाधिक बाल श्रमिक अफ्रीका में है और लातिनी अमेरिका दूसरे स्थान पर है परंतु यूनीसेफ रिपोर्ट के अनुसार समग्र विश्व में सर्वाधिक अशिक्षित बालश्रमिक भारत में है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के नवीनतम सर्वेक्षण के अनुसार विश्व में 10 करोड़ बच्चे आजीविका हेतु श्रम करते हैं जिनमें से 2 करोड़ भारत में हैं अर्थात् संपूर्ण विश्व का भारत में 1/5 भाग है परंतु सेंटर फार कन्सर्ज ऑफ चाइल्ड लेबर ने भारत में बालश्रमिकों की संख्या 12 करोड़ आँकी है, श्रम मंत्रालय के सर्वेक्षण के अनुसार भारत के प्रत्येक तीसरे परिवार में एक बालक श्रमिक है, दूसरे शब्दों में 5 से 14 वर्ष आयु का प्रत्येक चौथा बच्चा बाल श्रमिक है।

बाल श्रम संबंधी स्वास्थ्य समंक – देश के 80 प्रतिशत बच्चे आग तपने वाले कारखानों में कार्यरत हैं, 30 लाख बच्चे ईंट भट्टों में कार्यरत हैं, माचिस उद्योग में 500 बच्चे कार्यरत हैं जिनमें 20 प्रतिशत बच्चे 3 वर्ष से 5 वर्ष आयु वर्ग के हैं। फिरोजाबाद के काँच उद्योग में 50,000 बाल श्रमिक नारकीय जीवन जीने को विवश हैं। गर्मी में जब तापमान 130 डिग्री सेल्सियस से अधिक होता है उस तापमान में बच्चे 12 घंटे से अधिक समय तक कार्य करते हैं। फिरोजाबाद एक ऐसा शहर जहाँ सर्वाधिक क्षयरोगी हैं। बीड़ी उद्योग में तंबाकू पत्ती से फेफड़ों का कैंसर एवं अल्सर की बीमारियाँ होने की आशंका होती है। चर्म उद्योग में गोंद व रसायन से त्वचा संबंधी बीमारी, माचिस व पटाखा में ज्वलनशील पदार्थ से अस्थमा की बीमारी पैदा होती है, बर्तन उद्योग, काँच उद्योग, खनन उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों की आँखों, फेफड़ों व चर्म रोग के लक्षण होते हैं। देश में आर्थिक अभाव एवं कठोर श्रम के कारण लगभग एक तिहाई बाल श्रमिक कुपोषण के शिकार हैं।

शोषण की पराकाष्ठा संबंधी समंक – शोषण की कहानी में तमिलनाडू में शिवकाशी का दियासलाई उद्योग तथा पटाखा उद्योग देश में अग्रणी है। श्रम कानून के मानकों के अनुसार बाल श्रमिकों को एक सप्ताह में 40 घंटे कार्य करना चाहिए परंतु बाल श्रमिक 60 से 65 घंटे कार्य करते हैं। भारत के 70 प्रतिशत श्रमजीवी बच्चे अवैतनिक कार्य करते हैं यह प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में 81 हो जाती है। ईंट भट्टा में कार्यरत 30 प्रतिशत बच्चों को उनकी न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिलती।

बालश्रम संबंधी कानूनी प्रावधान – संवैधानिक प्रावधान – भारत के संविधान के अनुच्छेद 23, 24, 39, 41 तथा 47 में बच्चों के मौलिक अधिकार की बात कही गयी है। संविधान के अनुच्छेद 24 में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, खानों तथा अन्य जोखिमपूर्ण कार्यों में काम पर नहीं रखा जा सकता है। अनुच्छेद 39 में राज्य द्वारा बच्चों को संरक्षण एवं शोषण मुक्त रखने का निर्देश दिया गया है।

श्रम कानून – बाल श्रमिकों के शोषण एवं अन्याय की रोकथाम हेतु भारत में जो अधिनियम बनाये गये हैं उनमें प्रमुख इस प्रकार हैं – ट्रेड श्रमिक संघ अधिनियम 1926, बालश्रम अधिनियम 1933, कारखाना अधिनियम 1946 न्यूनतम वेतन अधिनियम 1948 खान अधिनियम 1952 वाणिज्य पोत अधिनियम 1958 प्रशिक्षु अधिनियम 1961 बीड़ी सिगार कर्मकार अधिनियम 1966 खतरनाक मशीन अधिनियम 1983 इस संदर्भ में बाल श्रम (निषेध एवं नियम) 1986 विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसके अंतर्गत बाल श्रम एक अपराध घोषित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार 13

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (वाणिज्य) विभाग शासकीय स्वशासी उत्कृष्टता स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

खतरनाक व्यवसायों तथा 57 जोखिम वाली प्रक्रियाओं में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों में कार्य करवाना वर्जित है। राष्ट्रीय श्रमनीति 1987 का प्रयास सराहनीय है। 10वीं योजना में खतरनाक कारखानों में बालश्रम को पूर्णतया हटाने का लक्ष्य रखा गया।

राज्यवार स्थिति – बाल श्रमिकों की राज्यवार स्थिति का विश्लेषण किया जाए तो स्पष्ट होता है कि म.प्र. में बीड़ी उद्योग, झारखण्ड एवं पश्चिमी बंगाल की कोयला खानों, तमिलनाडु के दियासलाई तथा आतिशबाजी कश्मीर के गलीचा एवं दस्तकारी उद्योग, असम के चाय बागाम में, मेघालय के खान उद्योग, मिर्जापुर के कालीन उद्योग, फिरोजपुर के चूड़ी उद्योग, गुजरात के रत्न उद्योग जयपुर के मूर्ति निर्माण एवं अलीगढ़ के ताला उद्योग में बाल श्रमिक कार्य करने को विवश हैं।

उ.प्र. में 1 करोड़ 10 लाख, उड़ीसा में 50 लाख, पश्चिम बंगाल में 5 लाख बाल श्रमिक हैं। भारत के 132 जिलों में खतरनाक उद्योगों में बाल श्रमिक कार्य कर रहे हैं। 25 अक्टूबर 1996 के इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित समाचार के अनुसार गुजरात राज्य के भावनगर शहर के 300 उद्योगों में 13000 बाल श्रमिक हैं।

व्यवसायवार स्थिति पर अवलोकन किया जाए तो कृषि क्षेत्र में 80 प्रतिशत चाय बागान, पशुपालन एवं मत्स्यपालन में 6 प्रतिशत कुटीर एवं लघु उद्योग में 4 प्रतिशत शेष 10 प्रतिशत जोखिम एवं खतरनाक उद्योगों में कार्यरत हैं।

कार्य अधिकता संबंधी स्थिति पर विचार किया जाए तो एक सर्वेक्षण के अनुसार देश के 65 प्रतिशत बालश्रमिक 8 से 12 घंटे कार्य करते हैं। राज्यवार स्थिति कतिपय राज्यों की इस प्रकार है – आंध्रप्रदेश और कलकत्ता में 4 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे हैं जो क्रमश: 16 घंटे तथा 14 घंटे कार्य करते हैं। कर्नाटक, दिल्ली व महाराष्ट्र में 12 घंटे कार्य करते हैं कार्यभार संबंधी स्थिति के संबंध में देश के तमिलनाडु राज्य की स्थिति कतिपय सीमा तक संतोषजनक है। इस राज्य में 80 प्रतिशत बाल श्रमिकों को 8 घंटे से कम कार्य करना पड़ता है। बालश्रमिकों के संदर्भ में शैक्षणिक वातावरण संबंधी जो तथ्य सामने आये हैं वे भी चिंताजनक हैं देश के 9 प्रतिशत गाँव आज भी ऐसे हैं जो विद्यालय विहीन हैं तथा देश के 30.5 प्रतिशत विद्यालयों में एक ही शिक्षक हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 10 करोड़ बच्चे ऐसे हैं जो गरीबी के कारण विद्यालय का दरवाजा तक नहीं देख पाए। दिल्ली शहर में लगभग एक लाख से अधिक ऐसे बच्चे हैं जो विद्यालय नहीं गए और 30 प्रतिशत बच्चे प्राथमिक शिक्षा से पूर्व विद्यालय छोड़ देते हैं। कलकत्ता की स्नलम संस्था का सर्वेक्षण बताता है कि विद्यालय जाने वाले आयु के 80 प्रतिशत बच्चे विद्यालय नहीं जाते हैं जिनमें से 49 बाल श्रमिक हैं। बाल श्रम तथा शिक्षा का निकटतम संबंध है भारत के बाल श्रमिक पर हुए अब तक शोध निष्कर्षों के अनुसार यह निष्कर्ष आया है जिस राज्य में साक्षरता अधिक होगी वहाँ बाल श्रमिक उतने कम होंगे केरल राज्य में बालश्रम 1.48 प्रतिशत है

म.प्र. तथा कर्नाटक में क्रमश: 7.90 प्रतिशत तथा 7.64 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं।

सर्वोच्च न्यायालय के प्रावधान –

1. देशभर में बाल श्रमिकों का सर्वेक्षण करवाया जाए।
2. बच्चों को काम पर रखने से पहले उनकी सही उम्र का पता लगाना मालिक/ठेकेदार की जिम्मेदारी होगी।
3. किसी भी बालक को 6 घंटे से अधिक कार्य पर न रखा जाए।
4. अवयस्क बच्चों को 4 घंटे से ज्यादा कार्य पर न रखा जाए।
5. बच्चों को तीन घंटे कार्य के बाद एक घंटे का आराम देना होगा।
6. जो लोग बच्चों को काम पर रखते हैं उन्हें 20,000 रूपये एक निधि में जमा करना होगा और फण्ड का प्रयोग बच्चों की शिक्षा हेतु किया जाए।
7. मालिक/ठेकेदार द्वारा उपरोक्त शर्तों का उल्लंघन करने पर न्यूनतम तीन माह का कारावास और 10 हजार से 20 हजार रूपये तक जुर्माना तथा अधिकतम 2 वर्ष का कारावास दिया जा सकता है।

बालश्रम के उन्मूलन हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास – संपूर्ण विश्व में बच्चों के बुनियादी अधिकार सुनिश्चित करने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ का गठन 24 अक्टूबर 1945 में किया गया। बच्चों के सर्वांगीण विकास हेतु बाल कोश यूनीसेफ नाम से बनाया गया इसी संदर्भ में अन्य प्रयास भी किया गया जिसके अंतर्गत 1979 को अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष घोषित किया गया। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन यू.एस.डी.ओ.एल. ने राज्य एवं गैर सरकारी संस्थानों के सहयोग से 602 करोड़ रूपये का बजट आवंटन बाल श्रम कल्याण हेतु किया है ओस्लो अंतर्राष्ट्रीय बाल श्रम सम्मेलन में बहुराष्ट्रीय कंपनियों से अपील की गई है कि वे हीरा जवाहरात उद्योग में बाल श्रमिकों को हटाने में सहयोग करें। अमेरिका डेमीक्रेट सीनेटर के राय हरसिन ने सीनेट में बिल प्रस्तुत किया है जिसमें ऐसी वस्तुओं के आयात पर प्रतिबंध लगाया है जिनमें 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों का श्रम लगा हो।

राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास – भारत समूचे विश्व में ऐसा पहला राष्ट्र है जिसने श्रम उन्मूलन हेतु अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम पर सहमति व्यक्त की है 31 अगस्त 2000 से भारत व अमेरिका ने इण्डस बाल श्रम परियोजना का क्रियान्वयन किया है जो भारत के चार राज्यों, म.प्र. महाराष्ट्र, तमिलनाडु, उ.प्र. में क्रियान्वित की गई प्रत्येक राज्य के 80 जिलों के ऐसे श्रमिक जो बीड़ी, ईंट, पटाखे, माचिस, जूते काँच पत्थर खान कार्य में संलग्न हैं। ऐसे 100 बाल श्रमिक जो 5-8 वर्ष आयु के हैं, 2000 बाल श्रमिक 9-13 वर्ष आयु, 1000 बाल श्रमिक 14-17 वर्ष को चयनित कर विद्यालय भेजना है। मानव संसाधन विभाग द्वारा सर्वशिक्षा अभियान इस दिशा में किया गया सारगर्भित प्रयास है।

निष्कर्ष – बाल श्रम एवं बाल शोषण संबंधी आँकड़े भयावह एवं चौकाने वाले हैं और प्राप्त तथ्य दुखद व दहला देने वाले हैं ये आँकड़े आधुनिकता, प्रगतिशीलता तथा विकास के बड़े-बड़े दावों पर प्रश्नचिह्न लगा देते हैं। अमानवीय परिस्थितियों में बाल श्रमिक मानसिक व शारीरिक शोषण के बाद उनका बालपन/चंचलता एवं मस्ती लुप्त हो जाती है कुण्ठा व तनाव के कारण बाल मजदूर मानसिक रूप से विक्षिप्त भी हो जाते हैं, अर्थशास्त्री बेनर के अनुसार बालश्रम का एक बड़ा कारण निरक्षरता है।

आज हम सूचना प्रौद्योगिकी (आई.टी.) में अव्वल होने का दावा करते हैं। अमेरिका में भारतीय बच्चें की बुद्धिमत्ता की सराहना होती है। परंतु इसे दुर्भाग्य कहा जाय या दिखावा कि शिक्षा को अभी तक हम मौलिक अधिकार नहीं बना सके हैं।

****

विश्व पर्यटन मानचित्र पर मध्यप्रदेश की सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों का उभरता स्वरूप

डॉ. अमरचंद जैन *

शोध सारांश – वैश्वीकरण एवं भूमंडलीय युग में मनुष्य, मनुष्य न रहते हुये मशीनी प्राणी का रूपधारण करता जा रहा है। मनुष्य अपने जीवन को बेहतर से और बेहतर बनाने की प्रतिस्पर्धा में व्यस्तता की गलाकाट होड़ में शामिल हो रहा है। अपनी व्यस्तता की थकान और उससे निजात पाने तथा शारीरिक/मानसिक शांति और सुकून के लिए वह नित्य नये-नये स्थानों पर भ्रमण करने हेतु सदैव तत्पर रहता है। अपने आप को तरोताजा बनाने एवं नवीन ऊर्जा अर्जित करने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण दिल ओर दिमाग में शांति लाने का प्रयास करता है। भ्रमण मानव की जन्मजात प्रवृत्ति है विश्व में प्रत्येक जीव जन्म लेते एवं आंखे खोलते ही चलना एवं घूमना आरम्भ कर देता है। अनादिकाल से जनमानस यात्रा करता रहा है। वह एक स्थान पर रहते हुए एकरूपता का अनुभव करता है अत: इसे दूर करने के लिए वह भ्रमण की ओर अग्रसर होता है। जब भ्रमण आत्मिक शांति, जिज्ञासा की पूर्ति प्राकृतिक सौन्दर्य दर्शन व मनोविनोद करने आदि से जुड़ जाता है तो यही भ्रमण पर्यटन का रूप ले लेता है।

प्रस्तावना – पर्यटन आज एक उद्योग का रूप ले चुका है जो बिना चिमनी धुंए का एक ऐसा बड़ा उद्योग बन गया है जो जनमानस को किसी स्थान विशेष की तरफ आकर्षित करने, उन्हें वहां तक पहुंचने, प्रवास करने, खान-पान एवं मनोरंजन आदि की व्यवस्था करने एवं अन्त में उन्हें घर तक पहुंचने से सम्बन्ध रखता है। पर्यटन उद्योग में उद्यमी को पूंजी एवं बाजार की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही ग्राहक को सामग्री का विक्रय करना पड़ता है वरन् (ग्राहक) पर्यटक स्वयं आकर क्षति पहुंचाए बगैर बड़ी मात्रा में कीमत चुका कर वापिस लौट जाता है। किसी क्षेत्र के पर्यटन स्थल पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित होने से उस क्षेत्र का बहुमुखी विकास का मार्ग प्रशस्त होने लगता है, तथा युवाओं को रोजगार प्रदान कराने में सहायक सिद्ध होता है।

भारतीय योजना आयोग ने वर्ष 2020 तक रोजगार के जो चार क्षेत्र चिन्हित किए हैं, उनमें पर्यटन उद्योग का सर्वोच्च स्थान हैं। विश्व पर्यटन संगठन के पूर्वानुमान के अनुसार पर्यटन प्रतिवर्ष 4% की दर से आगे बढ़ रहा है और 2025 तक पर्यटन उद्योग अंतरिक्ष में भी अपनी नींव डाल लेगा ।पर्यटन की दृष्टि से भारत पर्यटकों के लिए स्वर्ग समान है। पर्यटन उद्योग के लिए जितना आकर्षण के स्रोत भारत में हैं, उतने शायद ही विश्व के किसी भी अन्य देश में विद्यमान हो। न्यूयार्क टाइम्स ने अप्रेल 2005 के अपने लेख में लिखा कि '**भारत अत्यन्त प्राचीन, सुंदर और विविध रंगों से भरा देश है।**' सितम्बर 2002 में भारतीय पर्यटन को विश्व मंच पर लाने के उद्देश्य से '**अतुल्य भारत**' अभियान शुरू किया गया था। इस अभियान ने भारत के पर्यटन उद्योग को ऐतिहासिक उछाल मिला। आज विश्व व्यवसाय में पर्यटन उद्योग का हिस्सा 30% से भी अधिक हो चुका है, लेकिन भारत की हिस्सेदारी इसमें से मात्र 45% ही है जिसे बढ़ाने के लिये हमारे योजनाकार प्रयासरत हैं और हमारे पास संसाधन भी उपलब्ध है। जरूरत है उपलब्ध संसाधनों के समुचित उपयोग की, और सुविधाओं और सेवाओं में बदलाव लाने की जरूरत इस बात की भी है कि हम पर्यटन का प्रचार-प्रसार नये सिरे और आधुनिक तरीके से करें, ताकि पर्यटकों की संख्या में वृद्धि हो सके तथा देश का आर्थिक विकास एवं रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि के साथ-साथ भरपूर विदेशी मुद्रा अर्जित हो सके।

भारत का हृदय प्रदेश मध्यप्रदेश पर्यटन की दृष्टि से समृद्ध प्रदेश है। विन्ध्यांचल और सतपुड़ा की हसीन वादियों में बसा यह प्रदेश सचमुच अनूठा प्रदेश है। मध्यप्रदेश अपनी पर्यटन क्षमता के पूर्ण दोहन एवं पर्यटन विकास की दिशा में तेजी से अग्रसर हुआ है। 12वीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) में पर्यटन को विशेष जगह दी गई है। पुरानी गढ़ियों (किला) और महलों को हैरिटेज में बदलने की दिशा में प्रयास किये जा रहे हैं। ग्रामीण पर्यटन को विश्व मंच पर स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है। प्रदेश के 10 पर्यटन क्षेत्रों को विशेष पर्यटन क्षेत्र घोषित किए गये हैं। म.प्र. पर्यटन मित्र प्रदेश के रूप में अपनी पहचान बनाने, पर्यटकों को गुणवत्ता पूर्ण सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए स्केल डेव्लपमेंट स्कीम के तहत युवाओं को प्रशिक्षित करने का कार्य भी किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश की सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ एक ऐसा क्षेत्र है, जहां अद्वितीय प्राकृतिक सौंदर्य, बेमिसाल ऐतिहासिक व पुरातात्विक संपदा, अनुपम धार्मिक व सांस्कृतिक विरासतें, मनमोहक वन एवं वन्य प्राणी विद्यमान है। सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों में छोटे-बड़े घोषित-अघोषित, विकसित-अविकसित, प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक, धार्मिक, सांस्कृतिक महत्व वाले अलग-अलग विशेषताएं लिये घरेलू व विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने वाले अनेक पर्यटक स्थल विद्यमान है।

सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ प्रमुखत: तीन खण्डों यथा- पूर्वी सतपुड़ा (मैकल पर्वत) पर्वत श्रेणियाँ, केन्द्रीय सतपुड़ा (महावेद पर्वत) पर्वत श्रेणियाँ एवं पश्चिमी सतपुड़ा (राजपीपला पर्वत) पर्वत श्रेणियों में विभक्त मुख्य रूप से 14 जिलों में फैला हुआ है। इन जिलों के प्रमुख पर्यटन स्थल इस प्रकार है।

पूर्वी खण्ड - मैकल पर्वत श्रेणियाँ -

अनूपपुर जिला – इस जिले में नर्मदा, सोन व जोहिला नदियों का उदगम स्थल, सोन भद्र संकाय कुंड, कपिल धारा, दुग्ध धारा जलप्रपात, दुर्गाधारा एवं शंभूधारा, प्राकृतिक सौन्दर्य स्थल है। ऐतिहासिक एवं पुरातत्व धरोहर में कलचुरी, गांगेयदेव कर्णकला की स्थापत्य कला के 30 से अधिक मंदिर है, नर्मदा के दिव्य कन्यामहल, रंगमहल, सोनमूड़ा आदि प्रसिद्ध पर्यटक स्थल हैं। धार्मिक/पौराणिक केन्द्रों में अमरकंटक, मृगुकमंडल, माई का बगीचा, माई का मंडप, श्री आदिनाथ जैन मंदिर, जालेश्वर मंदिर, गायत्री मंदिर,

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय ,सागर (म.प्र.) भारत

चक्रतीर्थ, गणेश मंदिर एरण्डी पवित्र संगम, पुष्कर बांध एवं अमरकंटक का जैव रिजर्व आदि पर्यटकों को लुभाने वाले स्थल विद्यमान हैं।

डिण्डोरी जिला – इस जिले में राष्ट्रीय जीवाश्म उद्यान, धुधुवा, डगोना फाल, नेवसा प्रपात, देवनाला प्रपात, लक्ष्मण मंडप, कुकरमित्र (ऋणमुक्तेश्वर मंदिर) राष्ट्रीय उद्यान धुधुआ आदि प्रमुख पर्यटक स्थल हैं।

मंडला जिला – इस जिले में सहस्त्र धारा प्रपात (नर्मदा नदी), गोड़वाना साम्राज्य केदरगढ़ मंडला, दुर्ग, रामगढ़ महल, एवं दुर्ग मोती महल बघेलिन महल, विष्णु मंदिर, रामनगर, त्रिवेणी तीर्थ–मंडला, रेवा–बंजर–संगम मंडला, मनोहारी नर्मदा प्रतिमाएँ एवं मंदिर ऐतिहासिक बावड़ी, झिरिया नैनपुर, सीतारपटन संगम घाट कान्हा राष्ट्रीय उद्यान– फेन अभ्यारण्य मंडला आदि दर्शनीय स्थल हैं।

बालाघाट जिला – इस जिले मे वैन गंगा, बावनथड़ी बांध, बंजर हेलोन नदियां, गागुलपारा जलाशय एवं प्रपात, नाहलेश्वर बांध धुती बांध, भवरगढ़ पहाड़ियों पर पुरातत्व प्रतिमाएँ गिरेगांव में गोड़कालीन प्रतिमाएं, गोमजी–सोमजी पहाड़ियों की पुरातन प्रतिमाएँ जगपुर में मौजूद प्राचीन धरोहर, गोंगलई की ऐतिहासिक प्रतिमाएं डेमी की पुरातात्विक धरोहर, बिरसा की पाषाण प्रतिमाएं, त्रिपुर सुन्दरी मंदिर, कालीपाठ मंदिर, शिवमय जेल वारा, अम्बाई दरबार, माँ ज्वाला देवी, एवं माँ अन्नपूर्णा देवी मंदिर प्रमुख पर्यटक स्थल है।

सिवनी जिला – इस जिले में भीमगढ़ संजय सरोवर बांध बैनगंगा–मोतीनाला नदी संगम स्थल, आमोढ़ा गढ़, सोनारानी महल, परतापुरगढ़ किला, घपारा का किला, सूर्यमंदिर सिवनी, ऐतिहासिक बावड़ी लखनवाड़ा, दल सागर तालाब सिवनी घपारा, माता ज्वाला देवी दरबार सिवनी, वैष्णो धाम सीतादेवी, माँ काली मंदिर सिवनी, बैनगंगा नदी का उद्गम स्थल, शिवमंदिर, डिघोरी, शिवदयाल धाम एवं आश्रम चंदन बाग सिवनी, पेंच अभ्यारण्य राष्ट्रीय उद्यान आदि प्रमुख पर्यटक केन्द्र हैं।

छिन्दवाड़ा जिला – इस जिले में चौरागढ़ नागद्धारी कला पहाड़, खापा पहाड़ी, तामिया घाटी, छिंदी घाटी, दूल्हादेव घाटी, भीमसेन घाटी, सिल्लेवानी घाटी, कुंड कुकड़ी खापा, घोघरा, लिलाही, रानी कला, प्रताप घोटा महोदव झरना, तुलतुला झरना, सतधारा, अमोनी–समोनी गर्म जलकुंड, अन्होनी, मुत्तौर, तामिया, पातालकोट गुलाबगढ़ हर्रई, डोंगरदेव, गोहड़देव नीलकंठी का प्राचीन शिव स्थल, देवरानी दाई, प्राचीन कुंड परासिया, देवगढ़ किला, ऐतिहासिक जैन मंदिर मोहखेड, चांदशाह वली पहाड़ी, फरीद वाटिका, बढ़ाबिचोली पांढुर्ना, राधादेवी गुफा बिछुआ, पातालेश्वर धाम छिन्दवाड़ा, शिव आराधना केन्द्र चौरागढ़ नागद्धारी, विशाल (जामई) अर्द्ध नारीश्वर ज्योर्तिलिंग, प्राचीन शिवमंदिर मुजावर, शक्ति आराधना केन्द्र माँ हिंगलाज अंबाडा, माँ खेड़ा छति चांदा मेरा माँ षष्टी देवी कपूर्दा, बंजारी माता हनुमान मंदिर जाम सांवली, छूनीवाले दादा का मंदिर आँचलकुंड़ आदिवासी संग्रहालय छिन्दवाड़ा, आदि प्रमुख पर्यटक स्थल हैं।

नरसिंहपुर जिला – सतधारा प्रताप, बरमानघाट, झिकोपीघाट, शोकलपुर घाट, नरहरिया ऐतिहासिक तालाब, चौरागढ़ किला, बरहरा विराटनगर वोहनी आल्हा ऊदल के पिता एवं चाचा का गढ़, बरमान के धार्मिक मंदिर नरसिंह मंदिर मंदिर नरसिंह पुर, केशवानंद दादा दरबार, सांई खेड़ा शिवधाम डमरूघाटी, राजराजेश्वरी त्रिपुर सुंदरी भोलेश्वर आदि इस जिले के प्रमुख पर्यटकों के केन्द्र हैं।

होशंगाबाद जिला – नर्मदा के सुंदर घाट, महादेव पहाड़ियाँ, पांडव गुफाएँ, नागद्धारी गुफाएँ, अस्ताचल गुफाएँ, जम्बूद्धीप गुफाएँ, निम्बूभोज गुफाएँ, पंचमढ़ी, आदमगढ़ गुफाएँ, भितीचित्र पंचमढ़ी, पांचालगढ़, तिलक सिंदूर खरामा, जटाशंकर, बड़ा महादेव, पंचमढ़ी, बांद्रामान नर्मदा–तवा संगम, आंवली घाट– नर्मदा भीलटदेव–संत समाधी बोरीवन अभ्यारण्य, पंचमढ़ी अभ्यारण्य, सतपुड़ा राष्ट्रीय उद्यान, पचमढ़ी बायो स्फियर रिजर्व, आदि इस जिले के प्रमुख पर्यटक एवं दर्शनीय स्थल हैं।

हरदा जिला – बाण गंगा नदी पर सुंदर प्रपात, गौमुख झरना, जलकुंड खिरकिया, प्राचीन किला हंडिया, जोगा का किला, हिंडोन नाथ गुफा, सिंदूर त्रिशूल आकृति, मकडाई प्राचीन किला, स्वास्तिक चक्रव्यूह मॉडल चारूवा, गुप्तेश्वर मंदिर, ऋद्धेश्वर मंदिर, पढ़तविराम मंदिर, पीपलेश्वर मंदिर, त्रिकाल चौपीसी मंदिर आदि इस जिजे के प्रमुख पर्यटक स्थल हैं।

बैतूल जिला – कालीमीत ग्वालगढ़, ताप्ती नदी का उद्गम मुतलाई, मोरंड घाटियाँ, खेंडला किला बैतूल, शेरगढ़– मुलताई, भवरगढ़ शाहपुर, सांवलीगढ़ बैतूल, भैंस देही किला, रूकमणी बालाजी मंदिर बैतूल, गुरू साहब महाराज मंदिर, भटकाबड़ी, तप्तेश्वर शिवमंदिर, मुलताई, राममंदिर धनगौरी, विठ्ठल रूकमणी मंदिर सांईखेड़ा कुकरू काफी बागान, कालीमीत अभ्यारण्य खालीगढ़ पहाड़ी गुफाएँ एवं रॉक पेंटिंग्स, माँ कामांक्षा मंदिर डडुआ, मुक्तागिरी जैन तीर्थ, श्रीराम मंदिर सारणी आदि इस जिले के प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं।

बुरहानपुर जिला – पश्चिमी सतपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ, राजपीपला पर्वत श्रेणियाँ, हन्ती पर्वत श्रेणियाँ, असीरगढ़ पहाडियाँ, बुरहानपुर ऐतिहासिक नगर, बीवी मस्जिद, जामी मस्जिद शाही किला, मकबरे आहूरखाना, जल वितरण प्रणाली, खूनी भंडारा, असीरगढ़ का प्राचीन किला, महल गुलाटा बहादुरपुर प्राचीन शिवालय असीरगढ, उच्छादेवी मंदिर इच्छापुर आदि इस जिले के प्रमुख प्राचीन पर्यटन स्थल है।

खण्डवा जिला – घार तथा घामड़ी जलकुंड एवं प्रपात, गौरीकुंज आडिटोरियम, खण्डवा, शंकराचार्य गुफा, ओंकारेश्वर, काजल टानी गुफाएँ–ओंकारेश्वर, नागचून के प्राचीन बांध, शक्तिधाम, ओंकारेश्वर सिद्धनाथ चौबीस अवतार, सप्तमातृका तीर्थ अन्नपूर्णा मंदिर, पंचमुखी गणेश मंदिर, सिद्धवरकूट जैन मंदिर, सिंगाजी संत समाधी इंदिरा सागर एवं ओंकारेश्वर विशाल जलाशय, ओंकारेश्वर राष्ट्रीय उद्यान, मांधावत वन अभ्यारण्य, सुरमाव्यावन अभयारण्य आदि इस जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल हैं तथा इनमें से कुछ का निर्माण प्रस्तावित है।

खरगोन जिला – बीजागढ़ की पहाडियाँ, विन्ध्य कगार, सिरवेल झरना, सहस्त्रधारा जल प्रपात, सगूर–मगूर अमृतकुंड नागेश्वर कुंड, बीजागढ़ का किला महेश्वर, मंडलेश्वर दुर्ग, देवी अहिल्या संग्रहालय, ऊन जैन तीर्थ, कसरावड़, नावडा टोली, रावेरखेड़ी, दरियाव महल, नर्मदा महल, पुरानी गढ़ी भीकनगांव दत्तात्रयधाम, नवग्रह मंदिर, महेश्वर के मंदिर देवड़ा जलाशय, महेश्वर तालाब, कमलताई–गुफाओं का तालाब आदि इस जिले के दर्शनीय पर्यटन स्थल है।

बड़वानी जिला – बड़वानी हिल्स, सेंधवा पहाड़ी, बावनगज पहाड़ी, ऐतिहासिक नगर बड़वानी, पुरानी चम्पा बावड़ी वड़वानी, आवारूगढ़ किला, भंवरगढ़ किला कसराबइ चिखलड़ा छत्रियां शिलालेख भित्तिचित्र, अवसगढ़ किला, पानसेमल का किला, सिद्धनाथ मंदिर, भीलटदेव मंदिर, बावनगज के जैन मंदिर चूलगिरी बड़वानी, गायत्री धाम, जानकी, भोलेश्वर महादेव मंदिर, प्राचीन मंदिर सोन्दुल, आदि इस जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल हैं। सपपुड़ा पर्वत श्रेणियाँ विभिन्न पठार व पहाड़ियों से युक्त है। पश्चिम में बड़वानी से प्रारम्भ होकर बैतूल छिन्दवाड़ा परसवाड़ा मैकल पठार पूर्व की ओर चले जाते हैं। संपूर्ण पर्वत श्रेणियों में पर्यटन स्वरूप के विकास की अपार संभावनाएँ तो हैं ही इसके साथ ही यहां कृषि पर्यटन, ग्रामीण पर्यटन, जलाशय पर्यटन, ईको पर्यटन आदि की विकास की पूर्ण संभावनाएँ हैं।

सतपुड़ा की सुरम्य वादियों में बसे छिंदवाड़ा जिले के पर्वतीय अंचल में तामिया, पातालकोट क्षेत्र में कई स्थान अपने नैसर्गिक सौन्दर्य और आकर्षण का सबसे बड़ा केन्द्र हैं । इस प्रकार सतपुड़ा पर्वत श्रेणियों में प्राकृतिक सौन्दर्य के पर्यटन स्थल, वन एवं वन्य प्राणी पर्यटन स्थल, ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक पर्यटन स्थल, शैलाश्रय एवं शैलचित्र धरोहर वाले पर्यटन स्थल, धार्मिक पर्यटन एवं पौराणिक पर्यटन स्थल एवं सांस्कृतिक विरासत से परिपूर्ण पर्यटन स्थल है तथा इस क्षेत्र में पर्यटन उद्योग तथा रोजगार की असीम संभावनाएँ विद्यमान हैं । जिसके द्वारा यहां का सामाजिक तथा आर्थिक विकास संभव हो सकता है ।

मध्यप्रदेश के पर्यटक स्थल एवं पर्यटको की स्थिति – मध्यप्रदेश में पर्यटन के विकास की संभावनाओं से परिपूर्ण राज्य है पर्यटन की दृष्टि से प्रदेश प्राकृतिक एवं नैसर्गिक पर्यटक स्थान विद्यमान है। भीमबैठका, खजराहो, सांची, मांडू, पुरातात्विक महत्व के प्रसिद्ध पर्यटन केन्द्र तथा कान्हा, बांधवगढ और पेंच जैसे वन्य जीवो से भरपूर राष्ट्रीय उद्यान और पंचमणी जैसे सुंदर पर्वतीय क्षेत्र हैं धार्मिक दृष्टि से भी मध्यप्रदेश महत्वपूर्ण प्रदेश हैं। प्रदेश की उज्जैन नगरीय जहॉ हर बारह वर्ष में सिंहस्थ मेला का आयोजन किया जाता है, चित्रकूट, ओरछा, मैहर और सांची जैसे तीर्थ स्थल है। जहॉ देष के साथ –साथ विदेशी शैलानियो को देखा जा सकता है। इस प्रकार प्रदेश अपने आकर्षक स्थलो के कारण राष्ट्रीय अन्तराष्ट्रीय पर्यटको और तीर्थ यात्रियों को आकर्षित करता है,

म.प्र. शासन तथा म.प्र. पर्यटन विकास निगम के सफल प्रयासो के कारण पर्यटको की संख्या में वद्धि करने के साथ–साथ प्रदेश को देश के प्रथम पर्यटक –स्थल के रूप मे विकसित करने के लिए सतत् प्रयत्न किये जा रहे है। मध्यप्रदेश में वर्ष 2011–2012 में राज्य में कुल 4 करोड 20 लाख 6 हजार 140 पर्यटको ने मध्यप्रदेश के विभिन्न स्थानो का भ्रमण किया जो कि निम्न सारिणी से स्पष्ट किया जा सकता है।

मध्यप्रदेश के विभिन्न पर्यटन केन्दो पर पर्यटको के भ्रमण की स्थिति

पर्यटन केन्द्र	भारतीय	विदेशी	योग
अमरकंटक	1906500	15	1906515
भेड़ाघाट	470587	774	471361
बांधगढ़	109947	36623	146570
चित्रकूट	9264468	290	9264758
ग्वालियर	770096	19137	789233
कान्हा	148017	21138	169155
खजुराहो	256068	98504	354572
महेश्वर	533922	4345	538267
मांडू	738203	6648	744850
ओरछा	1978000	37342	2015242
ओंकारेश्वर	4025000	1346	4026346
पचमढ़ी	903517	415	903932
शिवपुरी	33124	112	33236
साँची	205222	7196	212418
बुरहानपुर	48869	202	49071
भीमबैठका	45636	1918	47554
पन्ना	93957	15093	109050
पेंच	60490	5720	66210
उज्जैन	2740400	791	2741191
भोपाल	555727	1143	556869
इंदौर	825290	169	825459
जबलपुर	571343	1040	572383
दतिया	177996	131	178127
होशंगाबाद	1125000	164	1125
मैहर	11150000	0	11150000
सलकरपुर	3006815	1792	3008607
योग	**41744194**	**261948**	**42006140**

स्रोत: म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण, म.प्र. शासन, 2011–2012

मध्यप्रदेश में पर्यटन गतिविधियों के संचालन हेतु पर्यटन विभाग के आधीन मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम कार्यरत है। पर्यटन विकास निगम के अनुसार राज्य में 382 ऐसे केन्द्र हैं जो पर्यटकों को अपनी ओर आकृर्षित करते हैं इनमें अधिकांश केन्द्र ऐसे हैं जो राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त हैं।राज्य के विकास में शासन के आय स्त्रोतो के के साथ–साथ निजी क्षेत्रों की भागीदारी का विशेष योगदान होता है । इस दिशा में पर्यटन के क्षेत्र में निजी भागीदारी काफी कम है । निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए शासन द्वारा पर्यटन नीति 2010 में संशोधित किया गया तथां राज्य सरकार ने पर्यटन नीति 2012 को लागू कर पूर्व नीतियों को समाप्त कर दिया, जिससे निजी क्षेत्र को अधिकाधिक भागीदारी किये जाने का प्रयास किया जा रहा है । मध्यप्रदेश पर्यटन निगम ने गत पाच वर्षों मे आय अर्जित की यह निम्न सारिणी से देखी जा सकती है।

मध्यपदेश पर्यटन विकास निगम द्वारा आर्जित आय

वर्ष	आय राशि करोड रूपयो मे	पर्यटकों की संख्या करोड में
2008–2009	51.00	1.58
2009–2010	60.00	2.65
2010–2011	70.00	2.72
2011–2012	84.70	6.67
2012–2013	72.00 (दिस. 2012)	5.35

स्रोत म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण म.प्र. शासन भोपाल ,

उपरोक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि प्रदेश मे निरंतर पर्यटको की संख्या में वद्धि के साथ–साथ प्रदेश की आय में भी वद्धि हो रही है। पर्यटन उद्योग के विकास से जहॉ लोगों के मनोरंजन एवं ज्ञान में वद्धि हो रही है वही यहा के जन समूह को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार अच्छी आय के संसाधन प्राप्त हो रहे है आवश्यकता है शासन की सक्रियता की पर्यटक स्थल में सुविधाएं बढाने की पर्यटक हेतु, परिवाहन व्यवस्था बढाने की, तथा पर्यटक स्थलो को आधुनिक तर्ज पर विकसित करने की, ताकि पर्यटक उद्योग का और अधिक प्रचार–प्रसार हो एवं प्रदेश के पर्यटक स्थलों की लोक प्रियता बढे तथा हमारे पर्यटन उद्योग से राज्य की आय के साथ–साथ यहा के जनमानस को सीधे तोर पर रोजगार प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा, अंजलि, भारत में पर्यटन विकास और संभावनाएँ ओमेगा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली 2008
2. अमित एवं जोशी महिमा – भारत में आधुनिक पर्यटन रावत पब्लिकेशन्स जयपुर 2010
3. शर्मा, सोलंकी एवं सिंह आर.के. म.प्र. जिला दर्शन एवं सामान्य ज्ञान उपकार प्रकाशन आगरा –2, 2012
4. तिवारी कपिल देव : छिंदवाड़ा दर्पण, अरूणोदय प्रकाशन नई दिल्ली 2009
5. वरे, एस,एल, मध्यप्रदेश में पर्यटन, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल 2009
6. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण, म.प्र. शासन भोपाल

भारत में बैंकिंग क्षेत्र की स्थिति का अध्ययन

डॉ.आर. बी. गुप्ता * जया कैथवास **

प्रस्तावना – भारत में बैकिंग का इतिहास काफी पुराना है। ब्रिटिश शासन के दौरान बैकिंग की परिभाषा बदली और वित्तिय विस्तार के दौर में नई प्रवृत्तियों का समावेश हुआ। वर्तमान बैकिंग युग ग्लोबलाइजेशन से प्रभावित है, जिसे समझने के लिये वैश्विक लेन–देन से परिचित होना आवश्यक है। इस शोध पत्र में भारत में बैकिंग विकास की प्रक्रिया को समझाया गया है।

किसी भी देश की समृद्धि में उसकी वित्तिय संस्थाओं की भूमिका होती है। बैकिंग व्यवस्था वित्तिय सेवाओं का अहम केन्द्र बिन्दु है। भारत की वर्तमान प्रवृत्ति का आरम्भ दसवी शताब्दी के अन्त में आरम्भ हुआ था। आधुनिक बैकिंग सेवा का सम्बन्ध बीसवी शताब्दी से है।

भारतीय बैकिंग व्यवस्था के विकास को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है:–

- **अस्तित्व का दौर**– वर्ष 1935 से पहले का दौर अस्तित्व का दौर कहलाता है।
- **राष्ट्रीयकरण का दौर–** 1935 से 1983 तक का सफर राष्ट्रीयकरण का दौर कहलाता है। बैकों के राष्ट्रीयकरण की सुत्रधार तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी थी।
- **विलय का दौर–** 1984 से 2006 तक का समय विलय का दौर माना जाता है। इस दौर में लगभग 45 से अधिक निजि क्षेत्रो के बैंकों का विलय एक–दूसरे में हुआ।
- **आधुनिकीकरण का दौर–** 2006 से अब तक आधुनिकीकरण का दौर माना जाता है। इसके तहत भारत में बैकिंग बहुत सुविधाजनक और परेशानी मुक्त हुई है।

उद्देश्य– इस शोध का मुख्य उद्देश्य निम्नानुसार है:–

1. बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली आम सेवाओं का संक्षिप्त अध्ययन करना।
2. बैंकिंग प्रणाली की संरचना का संक्षिप्त अध्ययन करना।
3. देश की प्रमुख बैकिंग संस्थाओं का संक्षिप्त अध्ययन।

विवेचना–भारत में बैंकिंग प्रणाली की संरचना को समझने के लिये बैकिंग कार्य में लगी सभी कम्पनियों का संक्षिप्त परिचय जानना आवश्यक होगा। यहां हम बैंकिंग कार्य में लगी कुछ कम्पनियों का परिचय जानेगे। बैकिंग प्रणाली की संरचना को निम्नलिखित रुप मे प्रदर्शित किया जा सकता है।

- **अनुसूचित बैंक–** अनुसूचित बैंक वे बैंक होते है जो रिजर्व बैंक की दूसरी अनुसूची में सम्मिलित है। इनकी प्रदत्त पूंजी तथा आरक्षित कोश का योग कम से कम पांच लाख रुपये के बराबर है। तथा रिजर्व बैंक के निर्देशानुसार ये अपनी जमा का निर्धारित प्रतिशत नगद आरक्षित कोश के रुप मे रिजर्व बैंक के पास रखते है।
- **गैर– अनुसूचित बैंक–** गैर अनुसूचित बैंक से तात्पर्य एक बैंकिंग कम्पनी से है इसे बैकिंग रेग्युलेशन एक्ट वर्ष 1949 के सेक्शन 5 के क्लास में परिभाषित किया गया है। इसकी आरक्षित पूंजी पांच लाख रुपये से कम होती है। बैंक भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम द्वारा शासित नहीं होते और भारतीय रिजर्व बैंक से कोई सुविधा भी प्राप्त नहीं करते।
- **सहकारी बैंक–** सहकारी समिति अधिनियम के अंतर्गत सहकारी बैको को पंजीकृत किया जाता है एवं बैंकिंग रेग्युलेशन एक्ट 1949 और बैंकिंग विधि अधिनियम,1955 द्वारा प्रशासित किया जाता है, सहकारी समितियां जब बैकिंग व्यवसाय करती है तो उन्हे सहकारी बैंक कहा जाता है। इनका कार्य सामान्यत: छोटे किसानों, कर्मचारीयों एवं लघु उधोगों को ऋण सुविधाऐं प्रदान करते है। ये बैंक ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रो में कार्य करते है। इन्हे प्राय: केन्द्रीय सहकारी बैंक, राज्य सहकारी बैंक एवं प्राथमिक सहकारी बैंक समितियों में वर्गीकृत किया जाता है।
- **वाणिज्यिक बैंक–** इन्हे व्यापारिक बैंक भी कहते है। व्यापारिक बैंक प्राय: व्यापार का ही अर्थ प्रबन्धन करते है अर्थात ये बैंक केवल व्यापारियों को ही अल्पकालीन ऋण देते है। इनके कार्यो का मूल्यांकन करने के लिऐ रिजर्व बैंक ऑफ इन्डिया ने इन्हे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ओर निजी क्षेत्र के बैंक के रुप में वर्गीकृत किया है।
- **क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक–** क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना वर्ष 1975 में की गई थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य दूर–दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में उन लोगों को बैंकिंग सुविधाऐ देना जिनके पास मे सुविधाऐ नही है। समाज के कमजोर वर्गो के लोगो को रियायती दर पर संस्थागत ऋण उपलब्ध कराना इनका मूल उद्देश्य है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मे केन्द्र सरकार राज्य सरकार तथा प्रवर्तक बैंक 50:15:35 के अनुपात में पूंजी लगाते है।

इस प्रकार बैंकिग संरचना के अन्तर्गत आने वाले उपरोक्त बैंक अपना बैंकिंग कार्य सम्पन्न कर रही है, तथा भारत में वित्त की स्थिति बनाती है।

देश की प्रमुख बैंकिंग संस्थाएँ देश में बैंकिग प्रक्रिया को सफल बना रही है। जिसमें क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण क्षेत्रो में बैंकिंग प्रक्रिया को प्रभावी रुप से चला रही है, तथा भारतीय लघु उद्योग विकास बैक (SIDBI) के माध्यम से उद्योगो को बेहतर वित्त पोषण दिया जा रहा है।

देश की नई बैंकिंग व्यवस्थाएँ– भारत में कुछ नई बैंकिंग व्यवस्थाएँ निर्मित हूई है जिनमे से कुछ इस प्रकार है–

- **भारतीय महिला बैंक (बी एम बी)** – यह भारत का पहला महिला बैंक है इसकी शुरुआत 19 नवम्बर2013 को हुई है। इसका मूख्यालय दिल्ली मे है। शुरुआत मे इस बैंक की सात शाखाएँ मुम्बई, बेंगलुर,

* प्राध्यापक (वाणिज्य) कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र.) भारत

कोलकाता, चेन्नई, अहमदाबाद, लखनऊ तथा गुवाहाटी में खोली गई है। इस बैंक के निर्देशक मण्डल की सभी सदस्य महिलाएँ है। वर्तमान में इस बैंक की प्रबन्ध निर्देशक उषा अनन्तसुब्रहमण्यम है। इस बैंक के लिये वर्ष 2013 मे आम बजट में प्रस्ताव रखते हुए 1000 करोड़ की पूंजी आवण्टित की गई थी। इसमे बचत खाते में सामान्य बैकों की तुलना में 0.05 से 1प्रतिशत तक ज्यादा ब्याज देने का विकल्प है।

- **इस्लामिक बैंकिंग** – भारतीय रिजर्व बैंक ने 17 अगस्त 2013 को केरल सरकार को इस्लामिक वित्तिय सिद्धान्तों पर आधारित संस्था शुरु करने की मंजूरी प्रदान की है। इसके तहत केरल राज्य औधोगिक विकास निगम चेयरमेन वित्त सेवाएँ लिमिटेड के नाम से गैर–बैंकिंग वित्त कम्पनी की शुरुआत की। इसकी आधारिक पूंजी 100रु करोड़ होगी। इस्लामिक बैंक मे शरीयत के अनुसार ब्याज लेना व देना, दोनों स्वीकार्य नही है। अत: नया संस्थान न तो कर्ज पर ब्याज लेगा और न ही जमा पर ब्याज देगा।

उपरोक्त दोनों संस्थाऐ देश में अपना बैंकिंग कार्य कर रही है। तथा वित्ति सम्बधी सहायता देश को प्राप्त करा रही है।

बैंको द्वारा भारत में दी जाने वाली आम सेवाएँ–आधुनिकीकरण के दौर मे भारत में बैंकिंग बहुत ही सुविधा जनक हो गयी है। इसके द्वारा भारत में निम्न आम सेवाएँ प्रदान की जा रही है–

- **बैंक खाते** –यह बैकिंग क्षेत्र की सबसे आम सेवा हैं। जिसके तहत बचत खाता, चालू खाता या जमा खाता आदि खोले जाते है।
- **ऋण खाते** – इसके तहत आवास ऋण, कार ऋण, व्यक्तिगतऋण, शेयर के विरुद्ध ऋण, शैक्षिक ऋण, आदि सुविधाएँ दी जाती है।
- **धन हस्तान्तरण** –बैंक, विश्व के एक कोने से दूसरे कोने मे पैसा स्थानान्तरण करने के लिऐ ड्राफट, धनादेश या चैक जारी कर सकते है।
- **क्रेडिट और डेबिड कार्ड** –सभी बैंक अपने ग्राहको को कार्ड के तहत उधार पैसा देने की सुविधा तथा डेबिड कार्ड से एटीएम से पैसा निकासी की सुविधा भी देता है।
- **लॉकर्स सुविधा** –यह महत्वपूर्ण दस्तावेज, किमती गहने सुरक्षित रखने के लिए बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली एक सुविधा है।

हाल ही में भारत सरकार ने स्वाभिमान योजना का शुभारम्भ किया है जिसके तहत आम आदमी तक बैकिंग सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए वित्तिय समादेश हो सके। केन्द्र सरकार द्वारा 10 फरवरी 2011 को इस योजना को आरंभ किया गया।

- **बैंको की वस्तुस्थिति** – वर्तमान में भारत में 168 वाणिजिक बैंक कार्यरत है। जिनमें से 164 अनुसूचित वाण्यिजिक बैंक है जबकि 4 गैर–अनुसूचित बैंक है। अनुसूचित बैंकों में 82 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मथा 27 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक है। जिसमें स्टेट बैंक एवं उसके 7 सहयोगी बैंक, 18 राष्ट्रीयकृत तथा 1 आई.डी.बी.आई बैंक ही जबकि 32 विदेशी तथा 26 निजी क्षेत्र के बैंक है।

हाल ही में रिजर्व बैंक ऑफ इन्डिया द्वारा किए गए स्ट्रेस टेस्ट के अनुसार भारतीय बैंकिग प्रणाली किसी भी तरह के आर्थिक संकट और ऊँची नॉन परिसम्पत्तियों के झटकों को सहन करने में सक्षम है। महत्वपूर्ण बात यह है कि अब रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के पास सोने का दुनिया में 10वां सबसे बडा भण्डार है। नवम्बर 2009 में भारतीय रिजर्व बैंक ने 6.7 अरब अमेरिकी डालर की लागत से अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से 200 मीट्रिक टन सोने की खरीदी की थी। जिसमें उसने विदेशी मुद्रा कोश में गोल्ड होल्डिग्स की हिस्सेदारी बढ़ गई। पहले यह 4प्रतिशत थी, अब 6 प्रतिशत हो गई है।

निष्कर्ष– उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है, कि भारतीय बैंकों का वर्तमान परिदृश्य काफी बेहतर हो गया है। हाल ही में यूनाईटेड किंगडम स्थित ब्राण्ड फाइनेन्स द्वारा किए गए वार्षिक अन्तर्राष्ट्रीय रैकिग अध्ययन के अनुसार 20 भारतीय बैंकों को ब्राण्ड फाइनेन्स ग्लोबल बैंकिग 5 की सूची में शामिल किया गया है। वस्तुत: स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया भारत का ऐसा पहला बैंक बन गया है, जिसे दुनिया के पचास बैंको की सूची में स्थान मिला है। इसे 36 वां स्थान मिला है। वर्ष 2009 मे जहां इस बैंक की ब्राण्ड वैल्यू 1.5 अरब अमेरिकी डॉलर थी वही वर्ष 2010 में यह4.6 अरब डॉलर हो गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वाणिज्य बैंक प्रबंध– वी.पी. अग्रवाल
2. समाचार–पत्र, मासिक पत्रिका,
3. इन्टरनेट

****

उद्योग, विकास और पर्यावरण

डॉ. प्रीति श्रीवास्तव *

शोध सारांश – उद्योग और विकास का सीधा संबंध है पर इसका पर्यावरण के साथ क्या सम्बंध है यह समझना जरूरी है क्योंकि पूर्ण विकास तभी संभव है जब पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए आर्थिक विकास किया जाए। इस के लिए चेन्नई में स्थित इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेंशियल मैनेजमेंट एण्ड रिसर्च का ताजा अध्ययन एनवायरमेटंल सस्टेनेबिलिटी इंडेक्स फॉर इंडियन स्टेटस (भारतीय राज्यों का पर्यावरण स्थिरता सूचकांक) 28 राज्यों की स्थितियों का इसमें विवरण किया गया है। आर्थिक प्रगति से किसी राज्य के असली विकास का पूर्ण चित्रण नहीं हो पाता क्योंकि इसमें परिस्थितिक और प्राकृतिक संसाधनों पर उसके प्रभाव की चर्चा नहीं होती। इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेशियल मैनेजमेंट एंड रिसर्च ने 0 – 100 से पैमाने पर सभी राज्यों के पर्यावरण दृश्य को परखा, इसमें 100 के निकटतम रहने वाले राज्यों में पर्यावरण का सबसे कम नुकसान हुआ है जबकि 0 के निकट आने वाले राज्यों में पर्यावरण का नुकसान सर्वाधिक है। इस अध्ययन में यह बताया गया है कि यह आवश्यक नहीं है कि किसी राज्य में पर्यावरण का नुकसान, उद्योगों के ही कारण होगा। अत: यह कहना गलत नहीं होगा कि औधोगिकरण से प्राकृतिक संसाधनों का नुकसान सीधे जुड़ा हुआ नहीं है।

प्रस्तावना – यह एक लंबी बहस है कि उद्योगों से पर्यावरण पर क्या असर पड़ता है। अभी तक इस पर कोई समग्र और अधिकारिक अध्ययन उपलब्ध नहीं था, क्योंकि इसके लिए आवश्यक कोई दीर्घकालीन आंकड़े ही उपलब्ध नहीं थे। हालाकि अब इस क्षेत्र में कुछ प्रगति हुई है और कुछ नये और उपयोगी अध्ययन सामने आये है इस अध्ययनों से किसी अंतिम निष्कर्ष पर चाहे न पहुँचा जा सके पर ये एक निश्चित दिशा की ओर इंगित अवश्य करते है।

चेन्नई में स्थिर इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेंशियल मेनेजमेंट एंड रिसर्च का ताजा अध्ययन एनवायरनमेंटल सस्टेनेबिलिटी इंडेक्स फॉर इंडियन स्टेटस (भारतीय राज्यों का पर्यावरण स्थिरता सूचकांक) 28 राज्यों की स्थितियों की जांच पड़ताल का नतीजा है। इस अध्ययन में 5 प्रमुख मानक थें। ये है जनसंख्या का दबाब, पर्यावरण का दबाब, पर्यावरण प्रणाली, पर्यावरण स्वास्थ पर प्रभाव, पर्यावरण प्रबंधन। इन राज्यों के अध्ययन के समय वायु प्रदुषण, वायु की गुणवत्ता, जल प्रदूषण, कूडे की उत्पत्ति आदि का भी ध्यान रखा गया।

आर्थिक प्रगति से किसी राज्य के असली विकास का पूर्ण चित्रण नहीं हो पाता, क्योंकि इसमें परिस्थितिक और प्राकृतिक संसाधनो पर उसके प्रभाव की चर्चा नहीं होती। राज्य का आर्थिक प्रगति और विकास के विश्लेषण में यदि इन मानकों को भी शामिल कर लिया जाए तो राज्य के वास्तविक विकास को बेहतर समझा जा सकता है। पर्यावरण स्थिरता सूचकांक तय करना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। इस तरह से राज्य के विकास और पर्यावरण की आवश्यकता का विश्लेषण करके प्राथमिकताओं को तय करना आसान हो जाता है। इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेशियल मैनेजमेंट एण्ड रिसर्च के भारतीय राज्यों के पर्यावरण स्थिरता सूचकांक मानक अध्ययन से प्राथमिकताएं तय करने में मदद मिलेगी।

इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेशियल मैनेजमेंट एंड रिसर्च ने जब भिन्न–भिन्न राज्यों के पर्यावरण स्थिरता सूचकांक का अध्ययन किया तो यह पाया गया कि पर्यावरण स्थिरता सूचकांक के मानको में मणिपुर सबसे आगे है। मणिपुर के बाद क्रमश: सिक्किम, त्रिपुरा, नागालैंड़, और मिजोरम प्रथम 5 राज्यों में शामिल है। उनके उल्लेखनीय है कि छत्तीसगढ़ जहां औद्योगिकरण बहुत अधिक है सातवें स्थान पर है, जबकि पंजाब, गुजरात, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान सबसे नीचे के पायदानों पर है। सतही तौर पर देखने पर ऐसा लगता है कि चूँकि सिक्किम में बड़े उद्योग नहीं है अत: उसका सबसे ऊपर की पायदान पर होना तथा गुजरात जैसे औद्योगिक प्रदेश का सबसे निचले पायदानों में से एक पर होना स्वाभाविक है, पर यदि बारीक विश्लेषण करे तो एक अलग ही तस्वीर उभरती है।

पर्यावरण पर दबाब के मानकों में प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण, प्रदूषण, कूडा बनाना आदि कारण शामिल है। इनकों ध्यान में रखते हुए यह तय किया जाता है कि किसी राज्य में पर्यावरण की हानि का पैमाना कैसा है।

इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेशियल मैनेजमेट एंड रिसर्च ने 0–100 के पैमाने पर सभी राज्यों थे। पर्यावरण दृश्य को परखा, इसमें 100 को निकटम रहने वाले राज्यों में पर्यावरण का सबसे कम नुकसान हुआ है जबकि 0 के निकट आने वाले राज्यों में पर्यावरण का नुकसान सर्वाधिक है। विश्लेषण में मणिपुर को 98, हिमाचल प्रदेश को 82, छत्तीसगढ़ को 77 महाराष्ट्र को 51, गुजरात को 30 और गोवा को 27 अंक मिले है।

उपरोक्त अंक तालिका से स्पष्ट है कि गोवा को गुजरात से भी कम अंक मिले जबकि महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ को गोवा के मुकाबले में बहुत अधिक अंक मिले। सब जानते है कि गोवा प्रसिद्धि उद्योगों के कारण नहीं है और महाराष्ट्र तथा छत्तीसगढ़ जहां उद्योगीकरण बहुत अधिक है, वहां वातावरण का नुकसान गोवा जैसा नहीं है। इस तालिका से यह सिद्ध होता है कि यह आवश्यक नहीं है कि किसी राज्य में पर्यावरण का नुकसान उद्योगो के कारण ही होगा, यानि ये भी आवश्यक नहीं है कि उद्योग पर्यावरण के लिए नुकसान देह होगे ही।

इस प्रकार जब प्राकृतिक संसाधनों के कारण का विश्लेषण किया गया तो यह पाया गया कि गुजरात में यह नुकसान सबसे ज्यादा है जबकि महाराष्ट्र में वैसा नहीं है। छत्तीसगढ़ को यहां भी अच्छे नम्बर मिले है और हिमाचल प्रदेश ने जहां कुछ वर्षो में औद्योगीकरण हुआ है, काफी अच्छे नम्बर

* अतिथि विद्वान, संजय गांधी स्मृति महाविद्यालय, गंजबासोदा, विदिशा (म.प्र.) भारत

लिये है। अत: यह कहना गलत नही होगा कि औद्योगिकरण से प्राकृतिक संसाधनों का नुकसान सीधे जुड़ा हुआ नहीं है, वरना हिमाचल प्रदेश और छत्तीसगढ़ जहां सीमेंट प्लांट भी है, प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण में सबसे आगे होता, जबकि वस्तु स्थिति ऐसी नहीं है।

पहाड़ी राज्य होने के कारण उत्तरांचल व हिमाचल प्रदेश जैसे राज्यों में अकसर औद्योगीकरण को लेकर पर्यावरण संतुलन तथा प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण की बहस चलती है। लोगों में और कई बार मीडिया में भी इन बहस को लेकर भ्रम की स्थिती बनी रहती है। क्योंकि लोगों के पास असल विकास या पर्यावरण के नुकसान को मापने का कोई मान्य, वैज्ञानिक, अथवा तर्कसंगत तरीका नहीं होता।

कई लोग भिन्न-भिन्न कारणों से औद्योगीकरण के खिलाफ है। उनमें से कई कारण वैध है, लेकिन बहुत बार या तो निहित स्वार्थ के कारण अथवा अज्ञान और गरीबी की मानसिकता के कारण भी लोग बड़े उद्योगो का विरोध करते है। वे यह भूल जाते है कि सरकारी नौकरियों का जमाना खत्म हो गया है, कृषि लाभदायक व्यवसाय नही रह गया है और विकास के लिए और रोजगार के नये अवसर पैदा करने के लिए आपको बड़े उद्योग का सहारा लेना ही पड़ेगा। देश में गरीबी की समस्या को हल करने का एकमात्र तरीका रोजगार के नये अवसरों को पैदा करना हैं। इसके लिए उद्योगो की जरूरत है। कृषि क्षेत्र में पहले से भी बहुत कम पगार पर बहुत से लोग लगे हुए है, इसलिए आपको मैन्युफैक्चरिंग और सेवा क्षेत्रों में रोजगार पैदा करना होगा। अत: हमें यह सोचना होगा कि पर्यावरण को क्षति पहुँचाएं बिना औद्योगीकरण कैसे हो सकता है ताकि रोजगार के अवसर बढ़े और देश समृद्धि आये।

निष्कर्ष – हम इक्कीसवीं सदीं में प्रवेश कर चुके है और सत्रहवी सदी की मानसिकता से हम देश का विकास नहीं कर सकते। नई स्थितियों में नई समस्याएं है और उनके समाधान भी पुरातन पंथी नहीं हो सकते। यदि हमें गरीबी, अशिक्षा से पार पाना है और देश का विकास करना है तो हमें इस मानसिक यात्रा में भागीदार होना पड़ेगा जहां हम नये विचारों और आत्मसात कर सके। और जमाने से साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Media Reporting.
2. Industries and enviroment "Attemative Journalism"
3. Alternative Journlism and PK Khurana
4. पर्यावरण चेतना, प्रधान संपादक प्रोफेसर धनंजय वर्मा प्रकाशक : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी
5. मासिक पत्रिका उद्यमिता मार्च 2014 अंक 11
6. मासिक पत्रिका उद्यमिता जनवरी 2014 अंक 9

****

Export Potential Of Agricultural Commodities Of India

Dr. S.T. Warade *

Abstract - Agricultural sector is the mainstay of the rural Indian economy around which the socio economic privileges and deprivations revolve and any change in its structure is expected to have a corresponding impact on the existing pattern of social equality. The growth of India's agriculture sector during the 50 years of independence remain impressive at 2.7 % per annum. About two-third of this production growth is added by gains in crop productivity. The need based strategies adopted since independence and intensifies after mid-sureties' primarily focused on feeding the growth population and making the country itself reliant in food production. According to experts, India has needed to play a bigger role in the global markets in agriculture products in the future. The country is expected to strengthen its position among the world's leading exporters. But recently the GDP is decline & in GDP share of agriculture also gradually decline. Exports during May 2010 were valued at US $ 26796.54 million during May 2010. Due to worldwide deflation the estimated growth of Indian economy may stand 6% from 8% of previous years. It is also key- challenge to policy makes that in declining growth rate how to bust agricultural production & export of agricultural produce. **Keyword -** Agricultural produce, Commodities, Export, Socio economic

Introduction - India ranked second worldwide in form output. Agriculture and allied sectors like forestry, logging and fishing accounted for 15.7% of the GDP in 2009-10, employed 52% of the total workforce, and despite a steady decline of its share in the GDP, in still the largest economic sector and a significant piece of the overall socio-economic development of India. Yields per unit area of all crops have grown since 1950 due to special emphasis placed on agriculture in the five year plans and steady improvement in irrigation, technology, application of modern agricultural practices and provision of agricultural credits & subsidies since the green revolution in India. India is the largest producer in the world of jute, milk and pulses. Also has the world's second largest cattle population. It is second largest producer of rice, wheat, sugarcane cotton and ground nuts, as well as the second largest fruit and vegetable producer. India is also second largest producer of silk.

But India is second largest country of population in worldwide& basically most of population based in rural India & dependent on agriculture &Agri. practices related field. After green revolution farm output increased. International comparisons reveal the average yield in India is generally 30 % 50% of the highest average yield in world. But main problem of Indian farmers is how to better marketing to get good price to their produce. Farmers can't get better price to their produce so after 65 years of independent the living of standard is really poor.

One of the main reasons of less productivity of agriculture in India is agricultural marketing. Farmers must get adequate marketing facilities so that they get better earning. But an inadequate marketing facilities farmers dispose of his surplus mainly locally. Most common method is to sell away his surplus produce to the village money-lender cum trader, who my buy it either on his own or as on agent of a bigger merchant of the neighbouring 'Mandi' town. It is estimated that in the Punjab 60 present of wheat, 70 present of oilseed and 35 present of cotton are sold in the village itself. The second method of marketing by the Indian farmer is to dispose of his produce in the weekly village markets, fairs and religion festivals. The third method of agricultural marketing is through the Mandi's in small and large towns.

The Indian farmers are very poor, illiterate and ignorant. As well as Indian agriculture sector belongs to unorganized sector so farmers didn't get better price of their produce. Farmer is so poor & didn't have adequate storage facilities so that he was no capacity to wait for better price, transport condition in rural areas are so bad, condition of Mandi's are poor, the method of transaction in Mandi's are against farmer the number of intermediaries and middlemen between the farmer & final consumer of his produce, lack of warehouse facilities, farmers do not ordinarily get information, about the ruling price as a result farmers have to accept whatever price is quoted to them. To change these scenario steps to be taken to improve agricultural marketing in domestic markets but also promote export of agri. commodities so that farmers get better price of their produce so it improve his living of standard as well as enhance agricultural productivity.

Agricultural sector is the mainstay of the rural Indian economy around which the socio economic privileges and deprivations revolve and any change in its structure is expected to have a corresponding impact on the existing pattern of social equality. The growth of India's agriculture sector during the 50 years of independence remain impressive at 2.7 % per annum. About two-third of this production growth is added by gains in crop productivity. The need based strategies adopted since independence and intensifies after mid-sureties primarily focused on feeding the growth population and making the country itself reliant in food production. Indian agriculture has attained an impressive growth in the production of food grains that has increased around four fines during the planned area of development from 51 million tons in 1950 -51 to 1991 militia tonnes in 1997-98 in several agricultural sectors India is the world's leading or one of the largest producers. For example the country is second largest milk producing county in the world. As well as other commodities like sugar, cotton tea, coffee spices like cardamom black pepper, coriander, etc. is major producer & exporter also.

Agricultural expert were 44% of total exports in FY 1960 they decreased to 32% in FY 1970 to 31 % in FY 1980 and to 15.3% in FY 1993 this drop in share of agriculture in total exports was somewhat showing burden of excessive population on agricultural sector. In early 1950 India were export raw agricultural product such as cotton and jute. After 1960 India have been exported as cotton yarn, fabrics, readymade garments and coir yarn.

* P.G. Department of Economics, G.S. Sci., Art & Commerce College Khamgaon, Distt. Buldana (M.S.) INDIA

The composition of agricultural and allied products for export changed primarily due to the continuing increase of demand in the domestic market. This demand cut's into the excess available for expert in spite of a continuing desire, on the part of government to shore up the invariant foreign exchange shortage in FY 1960, tea was the major export by value oil cakes, cashew kernels, tobacco, raw cotton and spices were equal in value but were only on eighth of the value of tea export. By FY 1980 tea was still a major export commodity however rice coffee fish and fish products came close, followed by oil cakes, cashew kernels & cotton. In 1992-93 fish and fish products became the main agricultural export followed by oil meals then cereals and then tea. The share fish & fish products became the main agricultural export followed by oil meals then cereals and then tea. The share of fish & fish produce rose steadily.

Export of principal commodities (Table See in bottom)

In above table we see the export date of agricultural goods & allied of India. The data of agricultural export of 2010-11 year of various items like tea, coffee, cereals, pulses, nuts seeds, processed food like vegetable fruits farm fresh vegetable & fruits, meat poultry products floriculture& spirit & beverages. In total Indian export the share of agriculture is decline &very negligible so it is need to improve or make a such export policy to increase share of agriculture products in export.

The national agri. cultural co-operative marketing federation of India Ltd. (NAFED) need to key roll to enhance export of agricultural products. The national co-operative development corporation (NCDE) also promote for the production processing, storage marketing of agricultural produce. To bust export of agricultural produce these institution as well as other co-operative institution, & private players need to work hard. India is great opportunity to enhance export in agricultural goods like floriculture, fruits &vegetable seeds, fresh onion, fresh mangoes grapes, other fresh fruits, dried &preserved vegetable, mango pulps, pickles & chutneys processed fruits, buffalo meat, goat sheep meat, dairy product, poultry products, gaur gum, ground nuts, jiggery& confectionery, pulses, cereals, basmati rice, non-basmati rice, natural honey, cotton & silk product, sugar etc.

According to experts, India has needed to play a bigger role in the global markets in agriculture products in the future. The country is expected to strengthen its position among the world's leading exporters. But recently the GDP is decline & in GDP share of agriculture also gradually decline. Export during May 210 were valued at Us $ 26796.54 million during May 2010. Due to worldwide deflation the estimated growth of Indian economy may stand 6% from 8% of previous years. It is also keychallenge to policy makes that in declining growth rate how to bust agricultural production & export of agricultural produce.

References -

1. Acharary S.S. and N.L. Agrawal (2010) Agricultural Marketing in India, Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi.
2. Rudra Datt and K.P.M. Sundaram (2003) S.Chand& company Ltd. New Delhi.
3. Dr.Sudhakar Shastri (2004), Indian economy, Vishva Publishers, Nagpur.

Export of principal commodities

Commodity	Apr-mar 2010	Apr. – mar 2011	% growth	% share
A) Plantation	4975.59	6154.47	38.83	0.58
1) Tea	2943.53	3246.75	9.75	0.26
2) Coffee	2032.06	2907.72	75.96	0.32
B) Agri. & Allied Prodts.	59723.66	81596.29	62.98	7.82
1) Cereals	14228.15	14405.93	76.63	1.56
a) Rice	11254.90	10800.89	71.91	1.25
b) Wheat	0.05	0.60	41	0.03
c) Others	2973.19	3604.44	79.41	0.28
2) Pulses	407.35	848.86	31.98	0.09
3) Tobacco	4344.40	3820.73	-19.52	0.24
a) Unmanufactured	3621.44	3000.57	-28.84	0.17
b) Manufactured	722.96	820.16	20.86	0.07
4) Spices	6157.33	7864.67	73.41	0.93
5) Nuts & Seeds	5773.46	6952.24	90.16	0.86
a) Cashew InclCSNL	2829.20	2626.76	65.79	0.31
b) Sesame &Niger Seed	1518.33	2231.41	43.89	0.21
c) Ground Nllt	1425.93	2094.06	186	0.66
6) Oil Meals	7831.79	10810.52	21.85	0.66
7) GuerGum Meal	1133.31	2811.95	289.42	0.63
8) Carter Oil	2179.28	2855.38	64.83	0.40
9) Shellac	71.30	139.03	36.99	0.01
10) Sugar & Molasses	129.99	11017.76	229.02	0.64
11) Processed Foods	9362.79	9146.01	11.99	0.76
12) Meat & Preparations	6286.10	8762.46	67	0.07
13) Poultry & Dairy Products	915.47	1057.00	17	0.06
14) Floriculture	294.46	286	12.28	0.03
15) Spirit & Beverages	608.48	817.30	58.11	0.08

Source- commerce.nic.in

****

कमजोर वर्गों के सामाजिक - आर्थिक समावेशीकरण की योजना मनरेगा : उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ

प्रो. अलका जैन * डॉ. अर्चना शर्मा * *

समावेशीकरण की आवश्यकता – समावेशीकरण से तात्पर्य broad based growth, shared growth and pro-poor growth अर्थात् विकास की सामान्य धारा में सबको शामिल करना जिससे कि आर्थिक विकास से सभी वर्ग, सभी क्षेत्र, मुख्य रूप से ग्रामीण–शहरी गरीब तथा कमजोर वर्ग स्त्री तथा बच्चे सभी लाभान्वित हो सके। समावेशी विकास की प्रक्रिया के दो मुख्य पहलू हैं – आर्थिक विकास की ऊँची वृद्धि दर जिससे राष्ट्रीय उत्पादन का आकार बढ़े तथा दूसरा आर्थिक विकास से उत्पन्न लाभ का बंटवारा जिससे ग्रामीण शहरी कमजोर वर्ग अधिक लाभान्वित हो। आज भारत में गॉवों और शहरो के बीच की खाई तथा अन्तर्क्षेत्रीय विषमता बढ़ रही है।कृषि की GDP में कम हिस्सेदारी के बावजूद जीवन यापन में कृषि पर निर्भरता अनुपात कम नहीं हो पा रहा है, गरीबी तथा बेरोजगारी बढ़ रही है। जनसंख्या का एक बढ़ा तबका, दुनिया की आबादी का 25 प्रतिशत हिस्सा, 24 करोड़ लोग भारत में गरीबी एवं भूखमरी का शिकार हैं, वह शिक्षा, बिजली, आवास, साफ पानी तथा आधारभूत सुविधाओं से वंचित है। कुपोषण से मरने वाले बच्चों में भारत अग्रणी देश है। 10 में से 2 बच्चे कक्षा 5 वीं से आगे नहीं जाते। कुल कार्यबल का 92 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में कार्यरत है। लगातार रोजगार की दर में वृद्धि के बावजूद बेरोजगारो की संख्या में वृद्धि हो रही है। आर्थिक विषमता एवं गरीबी बढ़ रही है। यही कारण है कि आज भारतीय अर्थव्यवस्था में समावेशी विकास को इन समस्याओं का समाधान माना जा रहा है। समावेशी विकास की प्राप्ति के लिए भारत सरकार अनेक गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार सृजन के कार्यक्रम कार्यान्वित कर रही है। जिनमें मनरेगा एक महत्वपूर्ण महत्वाकांक्षी वित्तीय रोजगार योजना है जो गॉव में प्रत्येक परिवार को वर्ष में न्यूनतम 100 दिवस के रोजगार की कानूनी गारंटी देकर गरीबी एवं बेरोजगारी को कम करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। गांवों में व्याप्त मौसमी, अदृश्य, अकुशल, बेरोजगारी दूर करने, गांवों से शहरो की ओर पलायन रोकने तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकास कार्यों में रोजगार देकर ग्रामीण विकास करने की महात्वाकांक्षी, व्यापक वित्तीय योजना मनरेगा 2 फरवरी 2006 से भारत के 200 जिलों में प्रारंभ की गई। वर्तमान में यह भारत के सभी 600 जिलों में क्रियान्वित है। यह योजना गांवों में रोजगार प्रदान कर निर्धन ग्रामीणों की आय में वृद्धि तो कर ही रही है साथ ही गांव में स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण कर, ग्रामीण अर्थवयवस्था का ढांचा मजबूत कर, भारतीय अर्थव्यवस्था के समावेशी विकास का आधार स्तम्भ बन रही है।

अध्ययन के उद्देश्य एवं अध्ययन विधि – भारत एक कल्याणकारी राज्य है, जो सामान्य रूप से अपने सभी नागरिकों और विशेष रूप से समाज के कमजोर वर्गों तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कल्याण के प्रति वचनबद्ध हैं। यही कारण है कि सरकार देश के सभी वर्गों व सभी क्षेत्रों विशेष रूप से निर्धन एवं ग्रामीण क्षेत्रों, गंदी बस्तियों एवं पिछड़े क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के आर्थिक उत्थान के लिए योजनाओं का निर्माण कर उन्हें क्रियान्वित करती है। 'मनरेगा' उनमें एक बड़ी वित्तीय एवं महत्वाकांक्षी योजना है। यह अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों में कितनी सफल रही है? क्या उनका अपेक्षिक प्रभाव हुआ है? उनके क्रियान्वयन में क्या बाधाएं आ रही है? उनमें क्या सुधार किए जाने चाहिये? यह शोध का विषय है। मेरे इस शोध पत्र के अध्ययन के उद्देश्य मुख्यत: है –

1. मनरेगा योजना की प्रगति एवं क्रियान्वयन प्रक्रिया ज्ञात करना।
2. ग्रामीण गरीबी,बेरोजगारी,रोजगार के लिए की गयी मांग एवं उपलब्ध कराये गये रोजगार का विश्लेषण करना।
3. मनरेगा योजना में कमजोर वर्गो की भागीदारी का अध्ययन करना।
4. योजना के क्रियान्वयन में आ रही कठिनाईयों का अध्ययन करना।
5. अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर सुझाव देना।

शोध विधि – यह अध्ययन द्वितीयक समंको पर आधारित है, जिसमें भारत में मनरेगा के अन्तर्गत हुई प्रगति का अध्ययन किया गया है। अध्ययन की अवधि योजना प्रारंभ 2006 से 2013 तक की ली गई है। आंकड़े मुख्यत: पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, भारत के आर्थिक सर्वेक्षण, पत्रिकाओं तथा मनरेगा की वेबसाईट www.nrega.nic.in द्वारा एकत्रित किए गए हैं। आवश्यकतानुसार समंको का सारणीयन कर माध्य एवं प्रतिशत का प्रयोग किया गया है।

आय की असमानता–निर्धनता – भारत में आजादी के 65 वर्ष बीत जाने के बाद भी आज भारत गरीबी बेरोजगारी की समस्याओं से जूझ रहा है। भारत में योजना अवधि के दौरान तमाम आर्थिक विकास के बावजूद 2004–05 में 41.6 प्रतिशत जनसंख्या विश्व बैंक द्वारा परिभाषित 1.25 डालर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन की गरीबी रेखा के नीचे थी। जनसंख्या का यह बड़ा हिस्सा आज भी तमाम अभावों की जिन्दगी में जी रहा है। गरीबी रेखा को एक ऐसे न्यूनतम उपभोग स्तर के रूप में परिभाषित किया जाता है जो जीवन का एक निम्नतर स्तर प्राप्त करने के लिए व मूल आवश्यकताओं को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति या परिवार को उपलब्ध होना चाहिए। तालिका क्र.1 में भारत में योजना आयोग द्वारा लगाये गये गरीबी के अनुमान को दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 1 (पीछे देखें)

तालिका क्र. 1 से स्पष्ट है कि आर्थिक विकास के साथ गरीबी का प्रतिशत कम हुआ है। 1973–74 में जो लगभग 55 प्रतिशत था, वह 2009–2010 में घटकर 30 प्रतिशत हो गया है। किन्तु आज भी लगभग 35 करोड़ जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे निवास कर रही है। जिनकी मूलभूत, जीवनरक्षक आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं हो पा रही है और उनके लिए

* सहायक प्राध्यापक श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
* प्राध्यापक, नवीन कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रोटी, कपड़ा पाना मुश्किल और मकान के रूप में झोपड़ी भी नहीं है। यह आधुनिक चकाचौंध की विकसित दुनिया में अत्यन्त भयावह स्थिति है जो रोटी, कपड़ा और मकान के रूप में इंसान के लिए एक चुनौति है। संयुक्त राष्ट्र संघ की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत में 22 करोड़ लोग आज भी प्रतिदिन भूखे पेट सोते है। 'सेव द चिल्ड्रन' रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिदिन 5000 से भी अधिक बच्चे कुपोषण के चलते मौत की नींद सो जाते है। धनी देशों में जहाँ लोग अपनी आमदनी का 10 से 20 फीसदी ही भोजन पर खर्च करते है वही भारत की जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा अपनी कमाई का 55 फीसदी भोजन जुटाने में खर्च कर देता है। गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले 30 प्रतिशत जनसंख्या का कमाई का 70 फीसद भोजन पर ही खर्च हो जाता है। अगर रिपोर्ट पर गौर करे तो अगले दस सालों में भारत की ग्रामीण इलाकों में रहने वाली जनसंख्या का एक चौथाई हिस्सा भूख से मर जायेगा। अर्थव्यवस्था की चमक सिर्फ मेट्रो सिटी तक ही सीमित रह जायेगी।

इसमें संदेह नहीं कि भारत की राष्ट्रीय आय एवं प्रतिव्यक्ति आय बढ़ी है लेकिन न तो इससे गरीबी की व्यापकता में कमी हुई है और न ही आय की असामनताएँ कम हुई है। वर्ष 2011 में भारत के सबसे धनी 100 लोगों के पास सकल घरेलु उत्पाद का लगभग 17 प्रतिशत हिस्सा है। सबसे सम्पन्न 20 प्रतिशत जनसंख्या के पास कुल वैयक्तिक आय का 47 प्रतिशत तथा सबसे निर्धन 20 प्रतिशत जनसंख्या के पास 7.5 प्रतिशत हिस्सा है जो व्यापक आय की असमानता एवं निर्धनता को दर्शाता है।निर्धनता का एक मूल कारण निरन्तर रोजगार बढ़ने के बावजूद भारत में बेरोजगारी निरन्तर बढ़ती जा रही है तालिका क्र. 2 भारत में बेरोजगारी की दरे एवं ग्रामीण-शहरी क्षेत्र की बेरोजगारी दरों की तुलनात्मक स्थिति को दर्शाती है।

तालिका क्र. 2

भारत में ग्रामीण एवं शहरी बेरोजगारी की स्थिति (प्रतिशत में)

क्र.	अनुमान	2004-05			2009-10		
		ग्रामीण	शहरी	कुल	ग्रामीण	शहरी	कुल
1.	UPSS	2.1	4.4	2.3	1.6	3.4	2.0
2.	CWS	3.8	5.2	4.4	3.3	4.2	3.6
3.	CDS	8.0	7.5	8.2	6.8	5.8	6.6

UPSS – सामान्य मूल तथा गौण स्थिति, CWS :– चालू साप्ताहिक स्थिति, CDS – चालू दैनिक स्थिति

स्त्रोत : Govt. of India, Economic Survey 2011-12, Table 13.7, P. 307

तालिका क्र. 2 से स्पष्ट है कि भारत में शहरी क्षेत्र की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र में अधिक बेरोजगारी विद्यमान है। भारत में बेरोजगारी दरों के अनुमान CDS (चालू दैनिक स्थिति) के अनुसार सबसे अधिक है क्योंकि इसमें खूली तथा आंशिक सभी प्रकार की बेरोजगारी शामिल होती है। CDS बेरोजगारी की सर्वोत्तम माप प्रस्तुत करती है तथा नीति निर्धारण के दृष्टिकोण से इसका सबसे अधिक महत्व है। CDS के बेरोजगारी के आंकड़ों को देखा जाए तो ज्ञात होता है कि भारत में 2004-05 में बेरोजगारी दर 8.2 प्रतिशत थी जिसमें ग्रामीण क्षेत्र में 8.0 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र में 7.5 प्रतिशत थी। वहीं 2009-10 में बेरोजगारी की दर 6.6 प्रतिशत थी जिसमें ग्रामीण क्षेत्र में 6.8 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र में 5.8 प्रतिशत थी। तुलनात्मक रूप से देखे तो 2004-05 एवं 2009-10 दोनों में ही ग्रामीण क्षेत्र में शहरी क्षेत्र की अपेक्षा बेरोजगारी की दर अधिक रही है। किंतु यदि 2004-05 से 2009-10 की स्थिति की तुलना करें तो ज्ञात होता है कि बेरोजगारी की दर में कमी आई है। जहां 2004-05 में बेरोजगारी की दर 8.2 प्रतिशत थी वह 2009-10 में कम होकर 6.6 प्रतिशत हो गई जिसमें ग्रामीण क्षेत्र में 2004-05 में 8.0 प्रतिशत से कम होकर 2009-10 में 6.8 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्र में 7.5 प्रतिशत से कम होकर 5.8 प्रतिशत हो गई। जो यह स्पष्ट करती है कि 2004-05 की तुलना में 2009-10 में बेरोजगारी की दर कम हुई है। उल्लेखनीय है कि विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी की दर 1.2 प्रतिशत कम होने का एक महत्वपूर्ण कारण महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम 'मनरेगा' का क्रियान्वयन है जिसने व्यापक रूप से ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार सृजन कर ग्रामीण परिसंपत्तियों का निर्माण एवं ग्रामीण विकास किया है। स्पष्ट है भारत में गरीबी और बेरोजगारी एक भयावह गंभीर समस्या के रूप में विद्यमान है जो सामाजिक अपराध चोरी, डकैती हत्या, नशा आदि को जन्म देती है। भारत सरकार 'मनरेगा' जैसी योजनाओं के माध्यम से समावेशी विकास द्वारा गरीबी एवं बेरोजगारी उन्मूलन के लिए प्रयासरत है।

● **मनरेगा के मुख्य बिन्दु –** मनरेगा अधिनियम 2005 के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले प्रत्येक परिवार के वयस्क सदस्य को जो अकुशल श्रम करने का इच्छुक है कि आजीविका सुरक्षा बढ़ाने के उद्देश्य से एक वित्तीय वर्ष में 100 दिन के रोजगार की कानूनी ग्यारंटी दी गई है। इसके अंतर्गत पंजीकृत परिवार का वयस्क सदस्य अकुशल मानव श्रम हेतु आवेदन करने का पात्र है। जॉब कार्ड प्राप्त होने पर रोजगार हेतु आवेदन ग्राम पंचायत में प्रस्तुत किया जाता है। मजदूरी श्रम आयुक्त द्वारा कृषि श्रमिकों के लिए निर्धारित दर से अथवा केन्द्र सरकार द्वारा इस अधिनियम के लिए निर्धारित दर से दी जायेगी। वर्तमान में म.प्र. में न्यूनतम मजदूरी दर 100 रू. निर्धारित की है। रोजगार की मांग के दिनांक से 15 दिनों में रोजगार उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है अन्यथा आवेदक को बेरोजगारी भत्ते की पात्रता है। जिसके व्यय का वहन राज्य सरकार को करना होता है। योजना के क्रियान्वयन में ठेकेदारी प्रथा प्रतिबंधित है। मानव श्रम के स्थान पर कार्य करने वाली मशीनों का प्रयोग प्रतिबंधित है। कार्य स्थल पर तात्कालिक उपचार सुविधा पेयजल, छांव हेतु शेड, झूलाघर आदि उपलब्ध कराये जाने का प्रावधान है। योजनान्तर्गत कार्यरत व्यक्ति की मृत्यु या स्थायी अपंगता की स्थिति में 25000 रू. बतौर मुआवजे के तौर पर दिये जाने का प्रावधान है। योजना में महिलाओं के लिए 33% सहभागिता अनिवार्य है। इसके अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए किसी प्रकार के आरक्षण की व्यवस्था नहीं है।

● **मनरेगा में वित्तीय प्रबंध –** मनरेगा में वित्तीय प्रबंधन के अंतर्गत केन्द्र सरकार द्वारा योजना के अधीन अकुशल मजदूरी के लिए दी जाने वाली मजदूरी की सम्पूर्ण राशि, सामग्री की लागत की तीन चौथाई राशि तथा प्रशासनिक खर्चो के लिए कुल लागत का तय किया गया प्रतिशत उपलब्ध कराये जाने का प्रावधान है। राज्य सरकार द्वारा बेरोजगारी भत्ता, सामग्री लागत की एक चौथाई राशि तथा राज्य परिषद का प्रशासकीय खर्च उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

● **भारत में मनरेगा की प्रगति –** NREGS एक मांग आधारित योजना है जिसके अधीन जलसंरक्षण, सुखाग्रस्त क्षेत्रों का उद्धार वानिकी, वृक्षारोपण, भूमि विकास, बाढ़ नियंत्रण/सरंक्षण, सड़कों का निर्माण इत्यादि कार्यक्रम अपनाये जाने की व्यवस्था है। भारत में नरेगा सन् 2006-07 से लागू है। विभिन्न वर्षो में मनरेगा की प्रगति को तालिका क्र. 3 द्वारा दर्शाया गया है –

तालिका क्र.3 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्र. 3 से स्पष्ट है कि मनरेगा योजना के अन्तर्गत भारत में सन् 2006-07 में जॉब कार्ड प्राप्त परिवारों की संख्या 3,78,50,390 थी जो सन् 2011-12 में बढ़कर 12,12,68,914 हो गई जो लगभग चार गुना है। इसी अवधि में कार्य की मांग करने वाले परिवारों की संख्या में लगभग तीन गुना तथा रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या में भी लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। कुल सृजित मानव दिवस में भी 2006-07 की तुलना में 2011-12 में लगभग तीन गुना वृद्धि हुई है। लेकिन महत्वपूर्ण है कि 2009-10 की तुलना में 2010-11 में कुल सृजित मानव रोजगार दिवस में कमी आई है जो 9.32% है। कुल सृजित रोजगार मानव दिवस में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की स्थिति में महत्वपूर्ण तथ्य सामने आए हैं। वर्ष 2006-07 से 2009-10 तक लगातार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के सृजित रोजगार मानव दिवस में वृद्धि हुई है लेकिन 2009-10 की तुलना में 2010-11 में सृजित रोजगार मानव दिवस में कमी आई है जो 8.9% है।कुल में महिलाओं का प्रतिशत बढ़कर 2011-12 में 49.33% हो गया है।

- **भारत में मनरेगा में वित्तीय प्रदर्शन एवं कार्य निष्पादन स्थिति -** यह योजना इतनी व्यापक एवं महत्वाकांक्षी है कि इसके द्वारा बड़े पैमाने पर वित्तीय अन्तर्वेशन हुआ है। लाखों परिवारों का बैंक में खाता खुला है। योजना के प्रारंभ से अब तक 2 करोड़ 14 लाख (लाख रू. में) रू. व्यय हो चुका है। व्यय की राशि में 2006-07 से 2012-13 तक लगातार वृद्धि हुई हैं, लेकिन वृद्धि दर के प्रतिशत में कमी आई है। तालिका क्र. 4 इसे स्पष्टत: दर्शाती है।

तालिका क्र. 4 (अगले पृष्ठ पर देखें)

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार ग्यारंटी योजना न केवल रोजगार उपलब्ध कराती है बल्कि ग्रामीण क्षेत्र में विकास आधारित कार्य जैसे सड़कों का निर्माण, वृक्षारोपण, जल संरक्षण, भूमि विकास इत्यादि चलाये जा रहे हैं जिनकी निष्पादन स्थिति को तालिका क्र. 5 में दर्शाया गया है :

तालिका क्र. 5 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्र. 5 से स्पष्ट है कि सन 2006-07 में मनरेगा के अंतर्गत कुल 841588 कार्य किये गये जो 2013-14 में बढ़कर 10482533 हो गये अर्थात 1146 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वृद्धि दर में अन्तर रहा है जो अधिकतम 111.67% (2007-08 में) न्यूनतम 34.56% (2013-14) में रही है। 2013-14 में 22 oct तक की प्रगति है। यह स्थिति स्पष्ट करती है कि मनरेगा में व्यापक पैमाने पर कार्य चल रहे है, जिसने गांव में विकास की स्थिति को परिवर्तित किया है।

- **मध्यप्रदेश में मनरेगा की प्रगति -** म.प्र. में 2006-07 में 18 जिले में यह योजना शुरू की गई थी जो 2008-09 में 31 जिलों में तथा 2010-11 से सभी 50 जिलो में लागू हो गई है। म.प्र. में मनरेगा के अन्तर्गत प्रगति एवं अनुसूचित जाति-जनजाति की स्थिति को तालिका क्र. 6 में दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 6 (पीछे देखें)

तालिका क्र. 6 से स्पष्ट है कि म.प्र. में सन् 2008-09 में जॉब कार्ड प्राप्त करने वालो की संख्या 1.12 करोड़ थी जो 2011-12 में बढ़कर 1.87 करोड़ हो गई अर्थात 66% वृद्धि हुई। लेकिन कार्य की मांग करने वाले तथा रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 2008-09 से क्रमश: कम होकर 2010-11 में 52.6% कम हो गई।

इसी तरह कुल सृजित रोजगार मानव दिवस में भी 2008-09 की तुलना में 2009-10 में 10.95% की कमी तथा 2009-10 की तुलना में 2010-11 में 16.22% की कमी हुई है जो यह स्पष्ट करती है कि मध्यप्रदेश में मनरेगा की प्रगति में क्रमश: कमी आई है।

म.प्र. में मनरेगा में अनुसूचित जाति एवं जनजाति की स्थिति को देखे तो कुल सृजित रोजगार मानव दिवस संख्या में कमी आई हैं, लेकिन उल्लेखनीय है कि जहां कुल सृजित रोजगार मानव दिवस में अनुसूचित जाति के प्रतिशत हिस्से में वृद्धि हुई है (17.82% से बढ़कर 19.34%) वही अनुसूचित जनजाति के प्रतिशत हिस्से में कमी आई है (46.81% से घटकर 43.44%)। यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि म.प्र. में कुल सृजित रोजगार मानव दिवस में अनुसूचित जाति की तुलना में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत ढाई गुना है। इसका कारण म.प्र. में अनुसूचित जाति की तुलना में जनजाति की जनसंख्या का अधिक होना है।

इसी तरह से महिलाओं की भागीदारी को देखे तो कुल सृजित रोजगार मानव दिवस की संख्या में 2008-09 की तुलना में 2011-12 तक क्रमश: कमी आई है किन्तु कुल के प्रतिशत हिस्से में क्रमश: वृद्धि हुई है।

यह योजना साल में 100 दिन रोजगार की ग्यारंटी देती हैं। कुल रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवार की संख्या में 100 दिन का रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार की संख्या बहुत कम है। 2008-09 में यह 18.8%, 2009-10 में 14.4%, 2010-11 में 10.6% रही है।

- **म.प्र. में मनरेगा में वित्तीय प्रदर्शन एवं कार्य निष्पादन स्थिति -** 'मनरेगा' एक व्यापक महात्वाकांक्षी वित्तीय योजना है। तालिका क्र. 7 में म.प्र. में मनरेगा में वित्तीय प्रदर्शन को दर्शाया गया है :

तालिका क्र. 7 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका क्र. 7 से स्पष्ट होता है कि म.प्र. में मनरेगा में कुल उपलब्ध राशि की तुलना में कुल व्यय की राशि कम है। यह 2008-09 में 73.9%, 2009-10 में 63.82% तथा 2010-11 में 45.19% ठ हुई है।

वित्तीय अन्तर्वेशन की दृष्टि से मनरेगा एक महत्वपूर्ण योजना है जिसने लाखों व्यक्तियों को बैंकिंग से जोड़ा है। 2008-09 से क्रमश: खातों की संख्या में वृद्धि हुई है। 2008-09 में 55.64 लाख थी जो 2010-11 में बढ़कर 73.36 लाख हो गई। अर्थात 29.97% वृद्धि हुई है। इसी प्रकार कार्य निष्पादन स्थिति को तालिका क्र. 8 में दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 8

मध्यप्रदेश में मनरेगा में कार्य निष्पादन स्थिति

वर्ष	प्रगतिरत कार्य	पूर्ण कार्य	कुल कार्य	प्रतिशत वृद्धि
2008-09	313657	184864	498521	-
2009-10	311869	241030	552899	10.90
2010-11	749281	27509	776790	40.49

स्त्रोत: मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 2010-11, पृष्ठ संख्या 120

www.narega.nic.in, 16 जनवरी 2012

तालिका क्र. 8 से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में मनरेगा में कार्य निष्पादन की स्थिति में वृद्धि हुई है। जहां 2008-09 में कुल कार्य संख्या 498521 थी वह बढ़कर 2010-11 में 776790 हो गई अर्थात 51.39% वृद्धि हुई है। यह स्थिति स्पष्ट करती है इस योजना से गांवों में सड़क निर्माण, जल संरक्षण, वृक्षारोपण भूमि विकास इत्यादि कार्यों से गांवों का विकास हुआ है।

- **तुलनात्मक अध्ययन -** मनरेगा योजना का भारत और मध्यप्रदेश का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते हैं, जिसे तालिका क्र. 9 में दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 9
मनरेगा में कमजोर वर्गो की स्थिति तुलनात्मक अध्ययन
(कुल सृजित रोजगार मानव दिवस का प्रतिशत में)

वर्ष	कुल लाभार्थी में अनुसूचित जाति का प्रतिशत		कुल लाभार्थी में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत	
	भारत	म.प्र.	भारत	म.प्र.
2006-07	25.36	-	36.44	-
2007-08	27.44	-	29.27	-
2008-09	29.29	17.82	25.43	46.81
2009-10	30.48	18.48	20.71	45.34
2010-11	30.62	19.34	20.85	43.44
2011-12	22.75	20.56	17.11	27.01

स्त्रोत : शोध अध्ययन से प्राप्त

तालिका क्र. 9 से स्पष्ट है कि भारत में मनरेगा में अनुसूचित जाति के प्रतिशत हिस्से में लगातार वृद्धि हुई है। वहीं अनुसूचित जनजाति के प्रतिशत हिस्से में लगातार कमी आई है। मध्यप्रदेश में भी लगातार अनुसूचित जाति के प्रतिशत हिस्से में वृद्धि तथा अनुसूचित जनजाति के प्रतिशत हिस्से में कमी आई। भारत एवं म.प्र. की तुलनात्मक स्थिति पर दृष्टि डाले तो स्पष्ट होता है कि भारत की तुलना में मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति का प्रतिशत हिस्सा बहुत कम है, जबकि भारत की तुलना में म.प्र. में अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत हिस्सा बहुत अधिक है।

• **निष्कर्ष एवं चुनौतियां -** अदृश्य, मौसमी एवं ग्रामीण बेरोजगारी दूर करने, गरीबी दूर करने, ग्रामीण क्षेत्र का समावेशी विकास करने की अद्भूत, महात्वाकांक्षी, व्यापक वित्तीय योजना 'मनरेगा' अपने उद्देश्य में सफल रही है जैसा कि सम्पूर्ण अध्ययन से ज्ञात होता है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए कोई निर्धारित प्रतिशत लाभ व्यवस्था नहीं होने के बावजूद उन्हें अच्छा लाभ मिला है। महिलाओं के लिए एक तिहाई हिस्सा निर्धारित होने के बावजूद उससे अधिक महिलाओं की भागीदारी महिला सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। लेकिन हाल ही के वर्षो में इस योजना के क्रियान्वयन में थोड़ी कमी आई है। वास्तव में कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियां है जैसे इसको लागू करने की लागत अत्यधिक होना (40000 करोड़ रू.), स्फीतिकारी शक्तियों का बढ़ना, दोषपूर्ण कार्यान्वयन, भ्रष्टाचार, इत्यादि जिन्हें दूर करना होगा। योजना में पूर्ण पारदर्शिता एवं इमानदारी रखनी होगी, तभी यह योजना अपने स्वर्णिम उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगी। निश्चित ही गरीबी एवं बेरोजगारी दूर कर कमजोर वर्गो का आर्थिक उत्थान कर सकेगी। इस संदर्भ में आर.एस. गोपाल का मत महत्वपूर्ण है कि -

'सरकारी दावों के बावजूद यह एक ऐतिहासिक योजना है, इससे संभावित लाभों के बारे में संदेह है। यदि सही प्रभावी कदम नहीं उठाये जाते तो ग्रामीण निर्धनों को इस कार्यक्रम से भी बहुत कम फायदा ही मिल पायेगा।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र एवं पुरी, भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाउस पृष्ठ क्र. 140 से 142.
2. मध्यप्रदेश ग्रामीण रोजगार ग्यारंटी योजना 2005-06 पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, मध्यप्रदेश भोपाल।
3. सुखादों थोरेट प्रो. अर्थशास्त्र जे.एन.यू., दिल्ली - शोध पत्र New Economic policy and impact on employment and poverty of the scheduled castes some observations.
4. यास्मिन अखतर - शोध पत्र NREGA Case Stury of Betul District - कुरूक्षेत्र नवम्बर 2009.
5. भारत का आर्थिक सर्वेक्षण 2010-11, पृष्ठ क्र. 300, 301.
6. संयुक्त राष्ट्र रिपोर्ट 2013
7. नई दुनिया समाचार पत्र 19/03/2011, पृष्ठ क्र. 6
8. www.mgnega.nic.in
9. www.nrega.nic.in
10. www.pib.nic.in
11. www.mpgov.in/des

तालिका क्र.3
भारत में मनरेगा की प्रगति

वर्ष	जॉबकार्ड प्राप्त परिवार की संख्या	कार्य की मांग करने वाले परिवार की संख्या	रोजगार उपलब्ध किये गये परिवार की संख्या	कुल सृजित मानव दिवस लाख में	अनुसूचित जाति मानव दिवस लाख में	कुल में अनु. जाति का %	अनुसूचित जनजाति मानव दिवस लाख में	कुल में अनु. जन जाति का %	महिलाऐं मानव दिवस लाख में	कुल में महि-लाओ का %	अन्य
2006-07	37850390	21188894	21016099	9050.54	2295.23	25.36	3298.73	36.44	3679.01	40.64	3456.59
2007-08	64740595	34326563	33909132	14367.95	3942.34	27.44	4205.60	29.27	6109.10	42.51	6219.98
2008-09	100145650	45518907	45115358	21632.86	6336.18	29.29	5501.64	25.43	0357.32	47.87	9795.06
2009-10	112548976	52920154	52585999	28359.57	8644.83	30.48	5874.39	20.71	3640.51	48.91	3840.34
2010-11	119824438	55763244	54954225	25715.25	7875.65	30.62	5361.80	20.85	2274.23	47.73	12477.81
2011-12	121268914	38294824	37855866	12087.19	2750.18	22.75	2068.68	17.11	5962.98	49.33	7268.36

स्त्रोत :www.nrega.nic.in 2 फरवरी 2012

तालिका क्र. 4

भारत में मनरेगा के अंतर्गत वित्तिय स्थिति का विवरण

वर्ष	उपलब्ध कुल राशि (लाख रू. में)	केन्द्र द्वारा स्वीकृत राशि (लाख रू. में)	कुल व्यय, (लाख रू. में)	कुल व्यय में प्रतिशत वृद्धि
2006-07	1207362.72	418432.42	882335.55	-
2007-08	1927877.71	1229592.4	1585844.15	79.73
2008-09	3630045.57	2994544.33	2725068.7	71.84
2009-10	4568551.32	1178076.46	3790522.78	39.09
2010-11	5264889.48	1038287.82	3937727.03	3.88
2011-12	3715426.88	790071.73	3707272.93	-5.85
2012-13	-	-	3964164.20	6.93
2013-14	-	-	1741254.43	-56.07

स्त्रोत: भारत का आर्थिक सर्वेक्षण 2010-11, पृष्ठ क्र. 300, 301, www.nrega.nic.in, 22 oct 2013

तालिका क्र. 5

भारत में मनरेगा में कार्य निष्पादन स्थिति का विवरण

वर्ष	प्रगतिरत कार्य	पूर्ण कार्य	कुल कार्य	वृद्धि दर % में
2006-07	444806	396782	841588	-
2007-08	961280	820168	1781448	111.67
2008-09	1560485	1214139	2774624	55.75
2009-10	2357423	2259444	4616867	104.33
2010-11	2496763	2585824	5082587	96.56
2011-12	5328673	2753670	8082343	59.02
2012-13	8407389	2809145	11216534	38.77
2013-14	9885378	597155	10482533	34.56

स्त्रोत: www.nrega.nic.in, 22 oct 2013

तालिका क्र. 6

मध्यप्रदेश में मनरेगा की प्रगतिवर्ष

वर्ष	जॉबकार्ड प्राप्त संख्या (करोडों में)	कार्य की मांग करने वाले परिवार की संख्या	रोजगार उपलब्ध गये परिवार की संख्या	कुल सृजित मानव दिवस (लाख में)	अनुसूचित जाति मानव दिवस (लाख में)	कुल में अनु. जाति का %	अनुसूचित जनजाति मानव दिवस (लाख में)	कुल में अनु. जन जाति का %	महिलाऐं मानव दिवस लाख में	कुल में महि-लाओ का %	अन्य
2008-09	1.12	5207862	5207665	2946.97	525.07	17.82	1379.55	46.81	1275.39	43.28	1042.35
2009-10	1.12	4714916	4714591	2624.03	485.04	18.48	1189.84	45.34	1160.55	44.23	949.15
2010-11	11.13	4445781	4407643	2198.16	425.18	19.34	955.02	43.44	976.02	44.40	817.96
2011-12	1.87	2739760	2718841	892.341	183.55	20.56	241.09	27.01	378.96	42.46	467.69

स्त्रोत :www.nrega.nic.in 2 फरवरी 2012

तालिका क्र. 7

म.प्र. में मरेगा में वित्तिय प्रदर्शन

वर्ष	उपलब्ध कुल राशि (करोड में)	कुल व्यय (करोड में)	उपलब्ध कुल राशि में से कुल व्यय का %	अकुशल श्रम हेतु मजदूरी	खाते की संख्या (लाख में)	खाते से भुगतान राशि (करोड में)
2008-09	4809.87	3554.95	73.90	2156.21	55.64	876.32
2009-10	5922.85	3779.71	63.82	2231.39	68.67	2258.69
2010-11	4078.50	1843.16	45.19	973.18	72.36	1669.00

स्त्रोत : म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण 2010.11, पृष्ठ क्र. 120 . www.narega.nic.in, 16 जनवरी 2012

ग्वालियर जिले में बढ़ते आर्थिक अपराधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – ग्वालियर जिला म. प्र. राज्य का हृदय स्थल कहलाता है। मध्य प्रदेश के उत्तरी भू भाग पर ही ऐतिहासिक ग्वालियर जिला स्थित है। यह जिला न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से बल्कि पौराणिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। वर्तमान में ग्वालियर संभाग में 6 जिले शामिल हैं। उनमें ग्वालियर प्रमुख जिला है जो संभाग का मुख्यालय है।

वर्तमान समाज जटिल एवं गतिशील होने के कारण नित्य नई समस्याओं को जन्म दे रहा है। मानवीय क्रियाओं का क्षेत्र विस्तृत एवं बहुमुखी होन के कारण कानून की परिधि पूर्ण रूप से समाहित नहीं कर सकती है। अपराधों के इस दृष्टिकोण ने समाज और वैज्ञानिकों को ध्यान आर्थिक अपराधों की ओर आकृष्ट किया है। आधुनिक युग में केवल आर्थिक दुर्बलता या शारीरिक और मानसिक दोषों को ही अपराध का कारण समझना भूल होगी। अब निर्धन और बेकार लोगों के अतिरिक्त कुछ वे लोग भी अपराध करते हैं जो आर्थिक दृष्टि से संपन्न होते हैं और सामाजिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित पदों पर आसीन होते हैं और समाज में व्यवस्था, नैतिकता और सदाचार के स्तंभ समझे जाते हैं। गगनचुम्बी अट्टालिकाओं का निर्माण और संरक्षण आर्थिक अपराधों में लिप्त, श्वेतवसन अपराधियों द्वारा जो कि समाज के उच्चतम वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, किया जाता है।

बड़े – बड़े व्यापारी, मिल मालिक एवं सरकार के स्तंभ प्रशासकीय अधिकारी और मजदूरों के नेता सभी श्रेणियों के कुछ लोग अपराध करतें हैं। ये लोग अपनी सामाजिक स्थिति, उच्च पद, धन संपत्ति आदि के कारण अपने दुष्कृत्यों के लिये अपराधी प्रमाणित होने से बच जाते हैं। आज भौतिकवादी मनोवृत्ति के कारण अपराधों में निरंतर वृद्धि हो रही है। विज्ञापनों द्वारा झूठा प्रचार करने वाले व्यापार, निगम, कॉपीराइट एवं ट्रेडमार्क आदि से संबंधित नियमों का उल्लंघन करने वाली संस्थाएं गबन, फ्रॉड एवं युद्ध संबंधी कानूनों का उल्लंघन करने वाले लोग आर्थिक अपराधी हैं। कभी कभी कुछ राजनेता जिनके हाथ में सत्ता होती है एवं व्यवस्था और कानून के संरक्षक समझे जाने जाते हैं, सरकारी कर्मचारियों से मिलकर जनता के धन का दुरुपयोग करते हैं।

कतिपय बड़े बडे पूँजीपति, मिलमालिक और दुकानदार प्रतिदिन आर्थिक अपराध करते हैं। हिसाब किताब में उलट फेर करना, कर बचाने हेतु मंदिर बनवाना, सरकारी निरीक्षकों को रिश्वत देकर अनेक प्रकार के गैर कानूनी कार्य करना इन व्यक्तियो के कार्य हैं। कालाबाजारी करना, मिलावट करना, नकली सामान बेचना इत्यादि विरोधी कार्यों में दुकानदार और व्यापारी लगे रहते हैं।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन ऐतिहासिक पद्धति अंतर्गत पुस्तकालय अनुसंधान पद्धति से किया गया है। वर्तमान परिदृश्य में आर्थिक अपराधों की प्रासंगिकता एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन हेतु विधि की उपलब्ध पुस्तकों, भारतीय दंड संहिता, भारत का संविधान, अपराध शास्त्र एवं अपराधिक प्रशासन, विधि शास्त्र के अलावा पत्र पत्रिकाओं, समाचार पत्रों व प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों को अध्ययन का केन्द्र बिन्दु बनाया गया है। वर्तमान परिदृश्यों में समाज में बढ़ते जघन्य अपराधों, आर्थिक अपराधों, अपराध बढ़ने के कारण एवं अपराध पर नियंत्रण हेतु दण्डादेश की व्यवस्था के अंतर्गत दंड की प्रासंगिकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य –

1. वर्तमान में बढ़ते आर्थिक अपराधों की प्रासंगिकता का अध्ययन करना।
2. आर्थिक अपराधों के सुधारात्मक सिद्धांतों का अध्ययन करना।
3. समाज में बढ़ते आर्थिक अपराधों पर नियंत्रण के उपायों का अध्ययन करना।

ग्वालियर जिला बड़ा जिला होने के कारण आर्थिक अपराधों की संख्या यहाँ अधिक है। जैसे जैसे मानव समृद्धि की ओर बढ़ता है वैसे वैसे आर्थिक अपराधों की प्रवृत्ति की समृद्धि के पथ पर अग्रसर हो जाती है। इस आधार पर ग्वालियर जिले के आर्थिक अपराधों की संरचना में जो आर्थिक अपराध प्रमुखत: पाये जाते हैं उनमें म. प्र. विकास अधिनियम 1958 की धारा 18 व 19 के अंतर्गत विक्रय कर चोरी एवं पब्लिक फूड एडल्ट्रेशन (पीएफए) अधिनियम 1954 की धारा 7/16 के अंतर्गत एवं म. प्र. खाने योग्य दाल, तेल, बीज अनुच्छेद 1977 के अंतर्गत मिलावट संबंधी, म. प्र. आबकारी अधिनियम 1915 की धारा 34 ए तथा एफ के अंतर्गत अवैध मादक द्रव्य संबंधी, म. प्र. नापतौल प्रवर्तन 1959 संशोधित 1971 की धारा 11/25, 14/28, अधिनियम की धारा 139/1, 139/4, 140, 143, 271, 272, 276, 277, 278, 280, के अंतर्गत आयकर संबंधी आर्थिक अपराध प्रमुख हैं।

ग्वालियर जिले के आर्थिक अपराधों में कर वंचन, कर चोरी, काला बाजारी, विदेशी नियमों का उल्लंघन नापतौल संबंधी नियमों का अनदेखी, राशनिंग कीमत की वस्तुएं अधिक कीमत पर बाजार में बेचना, लाइसेंस परमिट, कोटा किसी व्यक्ति को दिये जाने पर कार्य करने वाला व्यक्ति अन्य होना, अनुचित तरीके से धन एकत्रित करना, धोखाधड़ी, भ्रष्टाचार, स्वजन पक्षपात ये सभी आर्थिक अपराधों का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

ग्वालियर जिले के सामान्य अपराधी प्रवृत्ति को सर्वप्रथम निम्न तालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया है–

तलिका क्र. – 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

वर्ष 2001 में सबसे अधिक चोरी की संख्या 122 एवं सबसे कम बलात्कार की संख्या 4 है। कुल अपराधिक घटनाओं की संख्या 502 है। वर्ष 2005 में सबसे अधिक चारी की संख्या 175, बलात्कार की संख्या 7 कुल अपराधिक घटनाओं की संख्या 989 है। इसी प्रकार वर्ष 2010 में 689 चोरी की घटनाएं, 24 लूटपाट, 26 अपहरण तथा कुल 2164 अपराधिक घटनाएं

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

हुई हैं। इस समयावधि में अपराधिक घटनाओं में कमी एवं वृद्धि हुई है किंतु कुल प्रभाव देखने पर अपराध का ग्राफ बढ़ता हुआ दिखाई देता है। यदि प्रतिशत रूप में देखें तो लगभग 23 प्रतिशत अपराधों में वृद्धि हुई है।

तालिका क्र. – 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका में चोरी एवं मिलावट से संबंधित विभिन्न अधिनियमों को दर्शाया गया है किन्हीं वर्षों में कुछ वस्तुओं से संबंधित जानकारी कार्यालय से उपलब्ध नहीं हो पायी। जिले में खाने योग्य दाल, तेल, बीज अनु. 1977 के अंतर्गत लगातार प्रकरणों की संख्या में हुई है। केरोसिन एवं सीमेंट के तहत दर्ज प्रकरणों की संख्या में वृद्धि हो रही है। इस समयावधि में यद्यपि कर चोरी एवं मिलावट संबंधी प्रकरणों की संख्या में घट बढ़ हुई है तथा प्रकरणों की संख्या 17 से बढ़कर 37 हो गई है।

तालिका क्र. – 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका में आयकर संबंधी अपराधों को दर्शाया गया है जिनमें रिटर्न, देरी से रिटर्न, त्रुटि रिटर्न, आयकर नहीं जमा करने वाला कोई प्रकरण पंजीकृत नहीं है। ग्वालियर जिले में वर्ष 2010 में बढ़क 395092 हो गई है।
इस प्रकार एक ओर आयकर दाताओं की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है वहीं दूसरी ओर इसी समयावधि में आयकर चोरी संबंधी कोई आर्थिक अपराध नहीं पाया जाता है।

तालिका क्र. – 4 (देखे अगले पृष्ठ पर)

वर्ष 2001 में मध्य प्रदेश विक्रय कर अधिनियम 1958 की धारा 18 व 19 के अंतर्गत चोरी से संबंधित 57 प्रकरण दर्ज किये गये जिनमें राशि 130738 रूपये हैं। इसके पश्चात् तालिका देखने से स्पष्ट है कि वर्ष 2010 तक लगातार धारा 18 व 19 के अंतर्गत विक्रय कर चोरी के प्रकरणों में वृद्धि दिखाई देती है जो कि वर्ष 2010 में 296642 रूपये है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह बात स्पष्ट है कि जहाँ एक ओर ग्वालियर जिले में सामान्य अपराधों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है वहीं इस समयावधि में आर्थिक अपराधों में कमी होना या आर्थिक अपराध संबंधी यथा स्थिति बनी रहना अथवा कोई आर्थिक अपराध का पंजीबद्ध न होना। इस बात संकेत है कि ग्वालियर जिले में आर्थिक अपराधों के नियंत्रण में भ्रष्टाचार की एक कड़ी गुप्त रूप से कार्यरत है। इससे जहाँ एक ओर उपभोक्ता वर्ग का शोषण हो रहा है वहीं दूसरी ओर आर्थिक अपराध वर्ग अत्याधिक लाभ अर्जित कर काले धन की वृद्धि में तेजी से अभिवृद्धि कर रहे हैं। जो कि भीषण मंहगाई तथा अन्य प्रकार के आर्थिक अपराधों को जन्म दे रहे हैं। काले धन का दुष्चक्र न केवल तेजी से घूम रहा है बल्कि इसकी प्रवृत्ति और फैलाव में भी तेजी से वृद्धि हो रही है। यह स्थिति अत्यंत चिंताजनक है और इस पर कठोर नियंत्रण आवश्यक है।

वर्तमान समय में युवकों में बेरोजगारी के कारण भी अपराधिक प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है। राजनैतिक नेताओं के प्रशासनिक कार्यो में अत्याधिक हस्तक्षेप के कारण कार्यकारी अधिकारी वर्ग एवं पुलिस का नैतिक मनोबल क्षीण हो गया है जिसके परिणामस्वरूप अपराधों में असाधारण वृद्धि हुई है।

आर्थिक अपराधों को कम करने हेतु उपाय –

1. आर्थिक अपराधों को जनसामान्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है। लोगों को ईमानदारी, चारित्रिक एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिये।
2. प्राथमिक स्तर पर छात्रों को मिलावट संबंधी आर्थिक अपराधों एवं उनके परिणामों के बारे में शिक्षा प्रदान की जानी चाहिये। आर्थिक अपराधों के प्रति घृणा को भाव पैदा करना चाहिये। यह शिक्षा उन्हें पाठ्यक्रम, ब्लैकबोर्ड, चित्रों, कार्टून फिल्मों, कहानियों, नाटकों के द्वारा दी जानी चाहिये।
3. माध्यमिक स्तर पर छात्रों को कालाबाजारी, संचयीकरण, धोखाधड़ी इत्यादि आर्थिक अपराधों के बारे में पूर्ण जानकारी दी जानी चाहिये। यह शिक्षा उन्हें पाठ्यक्रमों में शामिल कर टी.वी., रेडियो सीरियल एवं समाचार, फिल्म, रंगीन पोस्टर, नाटक आदि के द्वारा कर चोरी, भ्रष्टाचार, तस्करी, संपत्ति चोरी, गबन, आदि आर्थिक अपराधों के बारे में शिक्षा दी जानी चाहिये।
4. सरकार द्वारा उपभोक्ताओं को जागरूक बनाने हेतु उपभोक्ता संरक्षण कानून का प्रचार एवं प्रसार किया जाये। इसके साथ ही सरकार ने आर्थिक अपराधों पर नियंत्रण हेतु विक्रय कर अधिकारी, विक्रय कर निरीक्षक, नापतौल अधिकारी, नापतौल निरीक्षक, खाद्य निरीक्षक, आबकारी अधिकारी, केन्द्रीय उत्पादक निरीक्षक, आयकर अधिकारी की नियुक्ति की है जो समय समय पर अचानक व्यवसायों के लेखे जोखे एवं माल गोदामों का निरीक्षण करते हैं। यदि व्यवसायी के कार्य में किसी प्रकार की अनियमितता पाई जाती है तो उसके विरूद्ध कड़ी कार्यवाही कर दंडित भी किया जाता है।
5. सामाजिक मूल्यों के प्रति आस्था का भाव निर्माण करना एवं सामाजिक मान्यताओं के उल्लंघन में कष्ट का भय जागृत करना भी दण्डनीति का उद्देश्य है। न्यायालय आर्थिक अपराधों के लिये दण्ड इसलिये देता है कि ताकि सरकारी आय में वृद्धि हो। सरकार द्वारा दण्ड इसलिये दिया जाता है ताकि अपराधों पर पूर्णत: प्रतिबंध लगाया जा सके। सरकार द्वारा अपराधियों में सुधार हेतु प्रोबेशन, पैरोल आदि की व्यवस्था है। दण्ड विधान में परिवर्तन आवश्यक है।
6. राजनीति में भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिये वर्तमान राजनीतिक संरचना में सुधार करना आवश्यक है। जो राजनेता, पूँजीपति, भ्रष्ट, बेईमान व्यापारी, अधिकारीगण को शरण दे उन्हें तुरंत राजनीति से हटा देना चाहिये।
7. आर्थिक अपराधों के नियंत्रण हेतु प्रोमिस प्रणाली आवश्यक है।
8. केन्द्र एवं राज्य सरकारों को चाहिये कि वह ऐसी कर प्रणाली बनाये जिसमें करदाता को कम से कम कर देना पड़े तथा कर देने में किसी प्रकार की असुविधा न हो।
9. आर्थिक अपराधों की रोकथाम हेतु सरकार द्वारा स्थानीय विभिन्न समितियां बनाई जायें जो समय समय पर आर्थिक अपराधों के संबंध में शासन को जानकारी दें ताकि अपराधियों के विरूद्ध शीघ्र कार्यवाही की जा सकें।
10. आर्थिक अपराधों के उन्मूलन के लिये समाचार पत्र में आर्थिक घटनाओं से संबंधित व्यक्ति का फोटो सहित पूर्ण विवरण नाम ग्राम स्थान बडे बड़े अक्षरों में प्रकाशित करें ताकि आर्थिक अपराध प्रकाश में आए और आर्थिक अपराधों पर नियंत्रण हेतु अधिकारी गण प्रभावशाली कदम उठाने हेतु विवश हो जायें।

ग्वालियर जिले में आर्थिक अपराधों के परिणामस्वरूप जहाँ एक ओर काले धन ने भौतिक समृद्धि को प्रोत्साहित किया है तथा लोगों के रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाया है, वहीं दूसरी ओर ईमानदारी से जीवन यापन कर रहे लोगों को आर्थिक अपराधों की ओर अग्रसर किया है। ईमानदारी से जिंदगी बसर कर रहा है उसके लिये मंहगाई तथा अन्य कारणों ने जीना मुश्किल कर दिया है तथा इस प्रकार आर्थिक अपराधों ने अमीर गरीब के बीच खाई पैदा कर दी है। ग्वालियर जिले में आर्थिक अपराधों के उपयुक्त नियंत्रण

एवं दंड में भयवादी दंड, सुधारवादी तरीकों एवं पुनर्स्थापना की पर्याप्त व्यवस्था दृष्टिगोचर नहीं होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. विधि शास्त्र एवं विधि के सिद्धांत – डॉ. एन. वी. परांजये
2. भारतीय दंड संहिता – डॉ. एन. वी. परांजये
3. भारत का संविधान – डॉ. जे. एन. पाण्डेय
4. अपराध शास्त्र एवं आपराधिक प्रशासन – डॉ. एम. एस. चौहान

तलिका क्र. – 1

ग्वालियर जिले में अपराधिक घटनाओं की प्रवृत्ति

वर्ष	हत्या	बलात्कार	लूटमार	दंगा उपद्रव	अपहरण	चोरी	गृह भेदन	अन्य	योग
2001	13	4	35	11	08	122	107	202	502
2002	16	9	25	18	03	119	109	305	604
2003	20	8	19	07	09	203	115	350	731
2004	22	5	35	17	11	207	120	400	817
2005	27	7	40	29	06	175	130	575	989
2006	15	17	12	16	07	198	155	612	1032
2007	25	12	32	24	12	305	192	836	1438
2008	21	9	26	18	21	417	209	798	1519
2009	32	11	29	31	18	663	301	927	2012
2010	29	8	24	27	26	689	398	963	2164

तालिका क्र. – 2

ग्वालियर जिले में आर्थिक अपराधों के अंतर्गत कर चोरी एवं मिलावट संबंधी प्रकरणों की प्रवृत्ति

वर्ष	जिले में खाने योग्य दाल, तेल, बीज अनु. 1977 के तहत दर्ज प्रकरणों की संख्या	अत्यावश्यक वस्तु अधिनियम 1955 के तहत दर्ज प्रकरणों की संख्या	जिले में खाद्यान्न व्यापारी अनु. आदेश1965 के तहत के तहत दर्ज संख्या	जिले में केरोसीन अनु. आदेश 1979 प्रकरणों की संख्या	जिले में सीमेंट डीलरलाइसेंस आदेश 1973 दर्ज प्रकरणों की प्रकरणों की संख्या	जिले में शुगर डीलर लाइसेंस आदेश 1963 के तहत के तहतदर्ज की संख्या	प्रकरणों की कुल संख्या दर्ज प्रकरणों
2001	17	7	6	7	6	–	43
2002	10	2	3	–	7	2	24
2003	15	5	5	9	3	3	40
2004	18	4	7	10	6	–	45
2005	20	–	–	13	9	–	42
2006	22	6	5	19	–	6	58
2007	29	8	7	14	17	–	75
2008	25	5	6	20	19	–	75
2009	32	7	9	23	21	7	99
2010	37	9	–	26	23	9	104

स्त्रोत– कार्यालय जिला खाद्य अधिकारी ग्वालियर (म. प्र.)

तालिका क्र. – 3

ग्वालियर जिले में आर्थिक अपराधों के अंतर्गत आयकर चोरी के प्रकरणों की प्रवृत्ति

वर्ष	रिटर्न फायल नहीं करना धारा 139(1)	देरी से रिटर्न फायल करना धारा 139(4)	त्रुटि को सुधार करने के पश्चात् रिटर्न फायल करना धारा 139(9)	आयकर नहीं जमा करना धारा 140, 147, 271, 272, 276, 277, 278, 280	आयकर दाताओं की संख्या
2001	–	–	–	–	75151
2002	–	–	–	–	85303
2003	–	–	–	–	110125
2004	–	–	–	–	151751
2005	–	–	–	–	250105
2006	–	–	–	–	320137
2007	–	–	–	–	331243
2008	–	–	–	–	351459
2009	–	–	–	–	373678
2010	–	–	–	–	395092

स्त्रोत– कार्यालय आयकर अधिकारी, ग्वालियर (म. प्र.)

तालिका क्र. – 4

ग्वालियर जिलें में आर्थिक अपराधों के अंतर्गत विक्रय कर चोरी के प्रकरण

वर्ष	मध्य प्रदेश विक्रय कर अधिनियम 1958 की धारा 18 व 19	कर चोरी संबंधी दर्ज किये गये प्रकरणों की संख्या	राशि
2001	धारा 18 व 19	57	130738
2002	धारा 18 व 19	60	150378
2003	धारा 18 व 19	62	165344
2004	धारा 18 व 19	41	80415
2005	धारा 18 व 19	76	175666
2006	धारा 18 व 19	84	182378
2007	धारा 18 व 19	91	189442
2008	धारा 18 व 19	98	196776
2009	धारा 18 व 19	105	209556
2010	धारा 18 व 19	128	296642

स्त्रोत – कार्यालय जिला विक्रय कर ग्वालियर(म. प्र.)

****

भारत में लिंगानुपात संरचना का विश्लेषण

डॉ. निशा मिश्रा *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र में द्वितीयक समंकों पर आधारित है। 1991, 2001, 2011 की जनगणना के अनुसार लिंग अनुपात में परिवर्तन का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषणात्मक व तुलनात्मक अध्ययन विधि का प्रयोग निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है।

प्रस्तावना – भारत का जनसंख्या की दृष्टि से चीन के बाद दूसरा स्थान है। विश्व के 2.4 प्रतिशत क्षेत्रफल में रहने वाली भारत की 17.5 प्रतिशत जनसंख्या का विश्व की राष्ट्रीय आय में 1.2 प्रतिशत योगदान है। जो जनसंख्या के बढ़ते दबाव को दर्शाता है। लिंग अनुपात, किसी जनसंख्या के संख्यात्मक लिंग संघटन मापन को कहा जाता है। लिंग अनुपात में असंतुलन, आर्थिक जीवन को अत्यधिक प्रभावित करता है। 2011 की जनगणना के अनुसार 121.43 करोड़ जनसंख्या वाले देश में 1000 पुरुषों पर 980 स्त्रियां हैं, अत: घटता लिंगानुपात व लिंग असंतुलन एक दीर्घकालीन गंभीर समस्या है। जो जनांकिकीय संरचना को विघटित कर रही है। कन्या भ्रूण हत्या में निरन्तर वृद्धि से लिंगानुपात में बढ़ता अंतर आज एक चुनौती बनकर उभरा है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. भारत की जनसंख्या में लिंगानुपात की वर्तमान स्थिति
2. लिंग अनुपात की दृष्टि से भारत की सर्वाधिक जनसंख्या व कमी वाले राज्य व केन्द्र शासित प्रदेश
3. 0–6 वर्ग के आयुसमूह में लिंगानुपात
4. लिंग असंतुलन के कारण व प्रभाव
5. निष्कर्ष एवं सुझाव

भारत में लिंगानुपात की संरचना व स्वरूप – किसी देश की जनसंख्या में स्त्री पुरुष अनुपात व लिंग अनुपात काफी महत्वपूर्ण होता है। जो जन्मदर – मृत्युदर से प्रभावित होता है। प्रतिकूल लिंगानुपात की स्थिति (स्त्रियों की संख्या कम होती) में भिन्न नैतिक व सामाजिक बुराइयाँ उत्पन्न होती है।

लिंगानुपात किसी विशेष समयावधि पर किसी देश, स्थान व जाति विशेष के स्त्री व पुरुषों की संख्या के बीच अनुपात को प्रदर्शित करता है। लिंगानुपात में हुए परिवर्तन को तालिका 01 में दर्शाया गया है।

तालिका नं. 01

भारत में लिंग अनुपात (1901–2011)

(1000 पुरुषों पर महिलाएँ)

वर्ष	लिंग अनुपात	वृद्धि/कमी
1901	972	–
1911	964	–8
1921	955	–9
1931	950	–5
1941	945	5
1951	946	1
1961	941	–5
1971	930	–11
1981	934	4
1991	927	–7
2001	933	–6
2011	940	–9

Source - Census of Inda 2011, Provisional Pag-81.

तालिका से स्पष्ट है कि भारत में लिंगानुपात में निरन्तर कमी हुई है। 1901 में लिंगानुपात जहाँ 972 था वह घटकर 2001 में 933 रह गया वर्तमान जनगणना 2011 के अनुसार भारत में लिंगानुपात 940 हो गया है। भारत में सामान्यत: 937 मादा शिशुओं के जन्म की तुलना में प्रति 1000 नर शिशु जन्म लेते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में उच्च स्त्री मृत्यु दर जो प्रत्येक आयुवर्ग में होती है जो दोनों लिंगो के मध्य अंतर को बढ़ा देती है। स्त्रियों के प्रति लापरवाही के कारण बाल्यावस्था में स्त्री मृत्यु दर उच्च होती है साथ ही उच्च जन्म दर के कारण भी प्रजनन अवस्था में मृत्युदर उच्चतर होती है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,21,01,93,422 में 62,37,24,248 पुरुष व 58,64,69,174 स्त्रियाँ अर्थात लिंगानुपात 940 हैं। अत: भारत में घटता लिंगानुपात महिलाओं के लिए अहितकारी है।

तालिका नं. 02

विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में लिंगानुपात 2001–2011

देश	वर्ष 2001	वर्ष 2011	वृद्धि/कमी
विश्व	986	984	– 2
भारत	933	940	7
चीन	944	926	– 8
सोवियत रूस	1140	1167	27
यू.एस.ए.	1029	1025	– 4
इंडोनेशिया	1004	988	– 16
ब्राजील	1025	1042	17
जापान	1041	1055	14
नाइजीरिया	1016	987	– 29
पाकिस्तान	938	943	5
बांग्लादेश	958	978	20

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय के. आर. जी. महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

Source - Census of India 2011 provisional provisional production total statement 11P.79

तालिका से स्पष्ट है कि जनसंख्या की संरचना में भिन्नता है। विश्व के प्रमुख 10 देशों में यू.एस.ए. ब्राजील, व जापान में 1,000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या अधिक है। जबकि अन्य छ: देशों में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम है। पिछले दशकों की तुलना में चीन, इंडोनेशिया, नाइजीरिया व यू.एस.ए. में 2011 में लिंगानुपात घटा है।

भारत में लिंगानुपात की तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन – भारत में यदि विभिन्न केन्द्र शासित प्रदेशों व राज्यों में लिंग अनुपात की स्थिति पर प्रकाश डालें तो बहुत अन्तर दिखाई देता है। यह अधिकतम 1084 व न्यूनतम 618 अर्थात 466 अंको का अन्तर है। जिसे तालिका में तुलनात्मक स्थिति को दर्शाया गया है –

तालिका नं. 03

भारत में विभिन्न राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में लिंगानुपात की स्थिति

राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश	लिंगानुपात		वृद्धि/कमी	2011 में स्त्री पुरुष अनुपात
	2001	2011		
भारत	933	940	07	940 <1
जम्मू-कश्मीर	892	883	- 9	883 <1
हिमाचल प्रदेश	968	974	6	974 <1
पंजाब	876	893	17	893 <1
चंडीगढ़	777	818	41	818 <1
उत्तराखंड	962	963	- 1	963 <1
हरियाणा	861	877	16	877 <1
दिल्ली	821	866	45	866 <1
राजस्थान	921	926	5	926 <1
उत्तर प्रदेश	898	908	10	908 <1
बिहार	919	916	- 3	916 <1
सिक्किम	875	889	14	889 <1
अरूणाचल प्रदेश	893	920	27	920 <1
नागालैण्ड	906	931	25	931 <1
मणिपुर	974	987	13	987 <1
मिजोरम	935	975	40	975 <1
त्रिपुरा	948	961	13	961 <1
मेघालय	972	986	14	986 <1
असम	935	954	19	954 <1
पश्चिम बंगाल	934	947	13	947 <1
झारखण्ड	941	947	6	947 <1
उड़ीसा	972	978	6	978 <1
छत्तीसगढ़	989	991	2	991 <1
म.प्र.	919	930	21	930 <1
गुजरात	920	918	- 2	918 <1
दमन व द्वीप	710	618	- 92	618 <1
दादरा नगर हवेली	812	775	- 37	775 <1
महाराष्ट्र	922	925	3	925 <1
आंध्र प्रदेश	978	992	14	992 <1
कर्नाटक	965	968	3	968 < 1
गोवा	961	968	7	968 < 1
लक्षद्वीप	948	946	- 2	946 <1
केरल	1058	1084	26	1084 <1
तमिलनाडु	987	995	8	995 <1
पांडिचेरी	1001	1038	37	1038 <1
अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह	846	878	32	878 <1

Source - Provisional Population totals Govt.of India Ministory of Home affairs Page-88.

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 2011 की जनगणना में केरल व पांडिचेरी को छोड़कर सभी राज्यों व केन्द्र शासित प्रदेशों में स्त्री-पुरुष अनुपात 1 से कम है। अधिकतम लिंगानुपात दक्षिण राज्यों - केरल, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश में क्रमश: 1084, 995 एवं 992 है तथा उत्तर पूर्वी राज्यों में सिक्किम, जम्मू-कश्मीर, हरियाणा में क्रमश: 889, 883 एवं 877 न्यूनतम लिंगानुपात है। केन्द्र शासित प्रदेशों में अधिकतम लिंगानुपात पांडिचेरी (1038) लक्ष्यद्वीप (946) व अण्डमान निकोबार द्वीप समूह (878) में है। वहीं दमन और द्वीप, दादरा नगर हवेली व चंडीगढ़ में क्रमश: 618, 775 एवं 818 न्यूनतम लिंगानुपात है।

2011 की जनगणना में देश में लिंगानुपात में अल्पवृद्धि होना एक शुभ संकेत है जहाँ 2001 में देश का लिंगानुपात 933 स्त्रियों प्रति 1000 पुरुष था वहीं 2011 में बढ़कर 940 पर पहुंच गया है। दमन और द्वीप, दादरा नगर हवेली, जम्मू कश्मीर में लिंगानुपात तेजी से क्रमश: 92, 34 व 9 अंक कम हुआ है। जो अत्यन्त चिन्तनीय है।

तालिका नं. 04

लिंगानुपात में सर्वाधिक वृद्धि/कमी वाले प्रदेश (2001 - 2011)

प्रदेश	वर्ष 2001	वर्ष 2011	परिवर्तन (वृद्धि + /कमी -)
वृद्धि वाले प्रदेश			
मिजोरम	935	975	+ 40
नागालैण्ड	900	931	+ 31
अरुणाचल प्रदेश	893	920	+ 27
केरल	1058	1084	+ 26
असम	935	954	+ 19
कमी वाले प्रदेश			
जम्मू कश्मीर	892	883	- 9
बिहार	919	916	- 3
केन्द्र शासित प्रदेश वृद्धि वाले प्रदेश			
दिल्ली	821	866	+ 45
चंडीगढ़	777	818	+ 41
पांडिचेरी	1001	1038	+ 37
अंडमान निकोबार	846	878	+ 32
कमी वाले प्रदेश			
दमन और द्वीप	710	618	- 92
दादरा नगर हवेली	812	775	- 37

Source - Census of India 2001-2011 Primary Census Abstract Total Population Table A-5 and 2011 provisional population total.

तालिका द्वारा स्पष्ट है राज्य दमन और द्वीप में लिंगानुपात 92 अंकों की भारी कमी दादरा नगर हवेली में 37 अंक की कमी हुई है वहीं प्रदेश में जम्मू कश्मीर में 9 व बिहार में 3 अंक की कमी आई है।

भारत में बालिका लिंगानुपात की स्थिति – भारत में 0–6 वर्ष से अधिक आयुवर्ग की बालिकाओं में लिंगानुपात में लगातार कमी आई है। 1961 में यह 976 से घटकर 2011 में 914 रह गयी जो चिन्ता का विषय है। 1961 से 1991 तक बालिका लिंग अनुपात अधिक था। किन्तु 1991 से 2011 में लिंगानुपात 945 से घटकर 914 रह गया मात्र दो दशक में 31 अंकों की गिरावट आई है। जो कन्याभ्रूण हत्या की ओर संकेत करता है साथ ही समाज में पुत्र को महत्व, बालिका कुपोषण आदि।

तालिका नं. 05

भारत में (0–6 वर्ष आयु समूह में) बालिका लिंगानुपात की स्थिति
(प्रति 1000 पुरुष पर)

वर्ष	0–6 वर्ष के आयु समूह में लिंगानुपात	समग्र औसत लिंगानुपात
1961	976	941
1971	964	930
9181	962	934
1991	945	927
2001	927	933
2011	914	940

Source - Census of India 2011 provision population on totals P-90.

0–6 वर्ष से अधिक आयुवर्ग के लिंगानुपात के आंकड़ों के अनुसार 2001 में 933 व 2011 में बढ़कर 940 हो गया। किन्तु 1961 से 1991 तक बालिका लिंग अनुपात भारत के समग्र लिंग अनुपात से अधिक रहा किन्तु 2001 व 2011 में यह घटा है। 2001 में भारत में लिंगानुपात 933 तथा जबकि बालिका लिंगानुपात 927 रहा वहीं 2011 में भारत में समग्र लिंगानुपात 7 अंक बढ़कर 940 हो गया जबकि बालिका लिंगानुपात 927 से घटकर 914 रह गया 13 अंकों की कमी आई – देश के 25 राज्यों में लिंगानुपात में वृद्धि हुई है। वहीं हिमांचल प्रदेश, बिहार, गुजरात में गिरावट आई है। केन्द्र शासित प्रदेशों में से 5 प्रदेशों में वृद्धि व 2 प्रदेशों 'दमन और द्वीप' तथा 'दादरा नगर हवेली' में लिंगानुपात में कमी आई है। अधिकांश केन्द्र शासित प्रदेशों 9 राज्यों में सुधार से यह संकेत मिलते हैं कि स्त्रियों–शिशुओं में मृत्युदर में सुधार हुआ है। लीला विसारिया के अनुसार 2001 के जनगणना में हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र में 0–6 वर्ष की आयु के बच्चों से लड़कों की भरमार से यह सिद्ध होता है कि व्यापक पैमाने पर कन्याओं की भ्रूण हत्या हो रही है।

भारत में प्रतिकूल लिंगानुपात के कारण – भारत में 1901 से 1991 तक लगातार लिंगानुपात का कम होना व 2001 से 2011 तक कुछ अंक बढ़ना तथा उत्तर भारत में लिंगानुपात का प्रतिकूल होना अत्यन्त चिंताजनक व विचारणीय प्रश्न है। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 10 लाख से अधिक भ्रूण हत्याएं हो रही है। प्रति 30 मिनट में एक भ्रूण हत्या हर डेढ़ घंटे में दहेज के कारण हत्या भयावह की स्थिति को दर्शाती है। कई कारण है जो प्रतिकूलता को जन्म देते हैं।

- सामाजिक व आर्थिक पिछड़ापन
- लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की मृत्युदर अधिक होना
- पुत्रों से विशेष लगाव व आकर्षण के कारण पुत्र को भविष्य की आयकर स्त्रोत व वृद्धावस्था का सहारा व अनेक धार्मिक अनुष्ठान में पुरुषों द्वारा सम्पन्न कराना
- निर्धनता व गरीबी के कारण बेटियों को परिवार का बोझ समझा जाता है।
- कन्या शिशुओं की हत्या – बेटी को जन्म होते ही मार डालना, बालिका मृत्युदर का अधिक होना
- आर्थिक पराधीनता, बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा, दहेज–प्रथा व स्त्रियों में साक्षरता की कमी का भी लिंगानुपात पर विपरीत प्रभाव डालता है।
- कुपोषण का शिकार होना

अमर्त्यसेन – 'अधिक मृत्युदर का कारण लड़कियों के स्वास्थ्य आहार व अन्य संबंधित आवश्यकताओं की उपेक्षा है। खास तौर पर उत्तर भारत में' भारत की अनेक जातियों में कन्या जन्म को हेय की दृष्टि से देखा जाता है।'

निष्कर्ष एवं सुझाव – आज वर्तमान में सामाजिक परिवर्तन व जागरुकता भ्रूण हत्या कन्या शिशु हत्या को रोकने व लिंगानुपात बढ़ाने में प्रमुख भूमिका निभा रहे हैं। नवजात शिशु हत्या, कन्या भ्रूण हत्या, कुपोषण भारत में लगातार घटता लिंगानुपात में असमानता, बालिका लिंगानुपात का गिरना, उत्तर भारत में लिंगानुपात का कम होना – महिला प्रगति, महिला सशक्तिकरण, नारी स्वतंत्रता व समानता के युग में एक चिन्तनीय पहलू है। लिंग असंतुलन समाज में अराजकता, अनैतिकता व असंतुलन को पैदा करता है। जिससे हमारी सामाजिक व्यवस्था खतरे में पड़ सकती है।इसके अलावा आर्थिक पराधीनता, बाल–विवाह, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा व स्त्रियों में साक्षरता की कमी का भी लिंगानुपात पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

कन्या भ्रूण हत्या बाल विवाह दहेज प्रथा जैसे सामाजिक कुप्रथाओं पर रोक सोनोग्राफी मशीनों पर नियंत्रण निरीक्षण की प्रभावी व्यवस्था जैसे सोनोग्राफी को Online करना, भ्रूण हत्या रोकने हेतु दण्ड दुर्माने का प्रावधान करना, शासकीय व निजी अस्पतालों में गरीब परिवारों को मुफ्त इलाज व दवाईयों की सुविधा शादी का अनिवार्य पंजीयन जिससे बाल विवाह जैसी कुप्रथा पर रोक, सरकार को विभिन्न रोजगार प्रदान करने वाली योजनाओं में ऐसे परिवारों को प्राथमिकता। लड़कियों को व्यवसायिक तकनीकी, मेडिकल में स्थान सुरक्षित कर कम फीस पर शिक्षा उपलब्ध कराना। महिला साक्षरता में वृद्धि, आय के स्तर को बढ़ाना। आदि उपायों को प्रोत्साहन देकर लिंगानुपात की भिन्नता को कम किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार, वि.एवं गुप्ता शिवनारायण (2009) जनांकिकी साहित्य भवन,आगरा
2. विसारिया प्रवीण – Demographic Aspect Development the Indian Experience in Uma Kapila (ed) Indian Economy since Indepandence (New Delhi - 2007 Page 193-194)
3. टोंग्या एवं पाटनी – जनांकिकी एवं जनसंख्या अध्ययन पृष्ठ 60–68 संजीव प्रकाशन, मेरठ
4. दत्ता एवं सुन्दरम – भारतीय अर्थव्यवस्था (एस.चंद एण्ड कं.लि.दिल्ली 2012)
5. Government of India Economic Survey 2011-12
6. http://Censusindia.gov.in
7. http://en.wikipedia.org/wiki/2011
8. आर्थिक समीक्षा 2009, 2010, 2011, 2012 प्रकाशन विभाग, भारत सरकार
9. बेटी बचाओ योजना (अभियान की बदलती तस्वीर, नई दुनिया, 18 अक्टूबर 2012
10. Visaria Leela - I mortality Frends and Transtiion in Tim oyson robert casson and Leela Visaria (ed) Twenty Firts.

कृषि विकास एवं उसके पर्यावरणीय प्रभाव

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – भारत देश के आर्थिक विकास में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। कृषि भारत देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नहीं बल्कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। भारत देश कृषि प्रधान देश है इसलिए कृषि क्षेत्र को अनदेखा नहीं किया जा सकता। यदि कृषि असफल रहती है तो सरकार एवं राष्ट्र दोनों ही असफल रहते हैं। भारतीय कृषि 58.2 प्रतिशत जनसंख्या को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करती है। बहुत से महत्वपूर्ण उद्योगों एवं लघु उद्योगों का आधार कृषि ही है। सरकारी आँकड़ों के अनुसार (आर्थिक सर्वेक्षण 2011–12) देश की सकल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि एवं उससे संबंधित क्षेत्र का हिस्सा 13.9 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त विदेशी व्यापार व राजस्व में भी कृषि क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान हे।

भारत देश की ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व की आबादी बढ़ी है। विश्व की आबादी में भारत का दूसरा स्थान है। 121 करोड़ जनसंख्या वाले भारत देश को खाद्यान्न उपलब्ध कराने की समस्या देश के सामने आ सकती है। क्योंकि कृषि योग्य कृषि भूमि सीमित ही नहीं है बल्कि सिकुड़ रही है। इस तरह कृषि क्षेत्र से संबंधित पहली समस्या बढ़ी हुई आबादी के लिए खाद्यान्न उपलब्धता है तो दूसरी समस्या कृषि विकास से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्या है। विस्तृत एवं गहन खेती, कृषि योग्य भूमि का छोटा होना, उर्वरकों एवं कीटनाशकों का बढ़ता प्रयोग, भूमि तथा जल संसाधनों का अत्यधिक शोषण पर्यावरणीय समस्या को उत्पन्न कर रहा है बढ़ा रहा है।

प्राचीन काल से ही कृषि भारत देश के निवासियों की आजीविका का प्रमुख साधन रही है। विदेशी ब्रिटिश सरकार की कृषि एवं ग्रामीण उद्योगों को नष्ट करने की सोची समझी रणनीति के कारण स्वतंत्रता के समय देश की कृषि की दशा अत्यंत खराब एवं असंतोषजनक थी लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश के खाद्यान्न की कमी को दूर करने के लिए कृषि के विकास पर ध्यान दिया गया कृषि को प्राथमिकता दी गयी। सन् 1966 में हरित क्रांति के आगमन से भारत में पारंपरिक कृषि व्यवहारों का प्रतिस्थापन, औद्योगिक, प्रौद्योगिकी एवं फार्म व्यवहारों से किया जाने लगा जिससे कृषि की दशा में तेजी से सुधार हुआ वर्तमान में भारत की स्थिति कृषि के क्षेत्र में सुदृढ़ एवं सम्मानजनक है। जिसे निम्न तालिका में दिखाया गया है –

तालिका क्रमांक – 1(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

भारत में कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि हुई है फिर भी अन्य देशों की तुलना में भारत में कृषि की निम्न उत्पादकता की प्रवृत्ति है जबकि भारत के भौगोलिक क्षेत्र में लगभग 54 प्रतिशत भाग पर कृषि की जाती है। कृषि के निम्न उत्पादकता के कई कारण सामने आते हैं जैसे भूजोतों का अनार्थिक आकार, कृषकों की गरीबी, अशिक्षा, ऋणग्रस्तता, बुनियादी सुविधाओं का अभाव, मृदा अपरदन, कृषि शोध, शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव आदि।

स्वतत्रंता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार पंचवर्षीय योजनाओं में निरंतर कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता दे रही है। बजट 2012–13 (वास्तविक) में 24254.42 करोड़ रूपये व्यय कृषि क्षेत्र में प्रावधान रखा तथा 2014–15 में 31062.94 करोड़ रूपये का कृषि में बजट अनुमान है जो जीडीपी का 0.24 प्रतिशत है। कृषि उत्पादन संतोषजनक है। भविष्य में 2020 में खाद्यान्न की आवश्यकता 36 करोड़ टन हो जायेगी। बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न की आवश्यकता की पूर्ति तथा अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह–तरह के रासायनिक खादों व जहरीले कीटनाशकों के उपयोग, प्रकृति के जैविक व अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान के चक्र (इकोलाजिकल सिस्टम) को प्रभावित करता है जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति कम होती है, पर्यावरण प्रदूषित होता है मानवीय स्वास्थ्य में गिरावट आती है।

कृषि उत्पादन व व्यवसाय में वृद्धि के पिछले कुछ दशकों में पर्यावरण पर हानिकारक प्रभाव को कुछ तथ्यों के द्वारा देखा जा सकता है –

1. कृषि के उपयोग किये जाने वाले उर्वरकों व रसायनों का पर्यावरण पर प्रभाव – खाद्य पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि हेतु अनेक प्रकार के रासायनिक खादों और कीटनाशकों का उपयोग अधिक मात्रा में किया गया जिससे जमीन की गुणवत्ता प्रभावित हुई भूमि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण के साथ सबसे अधिक जल प्रदूषण बढ़ा। जल प्रदूषण में कृषि व उद्योगों का बहुत बड़ा हाथ है उर्वरकों व रसायनों के अधिक प्रयोग से युट्रोफिकेशन की समस्या उत्पन्न होती है। युट्रोफिकेशन अर्थात खेतों में आवश्यकता से अधिक उर्वरक डालने से ये उर्वरक पानी के साथ बहकर तालाब, झीलों और नदियों में जा मिलते हैं इससे वहाँ का पानी पोषक तत्वों से सम्पन्न हो जाता है फलस्वपरूप जलीय वनस्पतियों में तेजी से वृद्धि होती है जिससे जल में घुली आक्सजीन कम हो जाती है और आक्सीजन की कमी से मछलियाँ व अन्य जलीय जीव मर जाते हैं। कृषि क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशी, रोगनाशी, कृत्रिम रसायनों से जल प्रदूषित हो जाता है जो जल वर्षा के समय खेतों में धरातलीय वाही जल (Surface Runoff) इन रसायनों को बहाकर पास स्थित झीलों, नदियों व तालाबों में पहुँचा देता है जिस कारण इन संसाधनों का जल प्रदूषित हो जाता है ये रसायन जल के साथ भूमि में रिसकर नीचे पहुँच जाते हैं तथा भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं। जल का प्रदूषण सदा बढ़ता ही जाता है। जब जल का विभिन्न मार्गों से होकर संचरण होता है तो उसके साथ मिले रासायनिक पदार्थों का भी विघटन होता जाता है।

विषाक्त रसायनों से प्रदूषित जल के कारण पौधों और जंतुओं की मृत्यु हो जाती है। इस प्रदूषित जल द्वारा सिंचाई करने से फसलें नष्ट हो जाती हैं अत्यधिक प्रदूषित जल के कारण मिट्टियों का भी प्रदूषण हो जाता है उनकी उर्वरता घट जाती है तथा उपयोगी मृदावाली सूक्ष्म जीव बैक्टीरिया मर जाते हैं। केंचुआ जो भूमि में अपना महत्वपूर्ण योगदान भूमि सुधारक के रूप में देता

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

रहा है वह भी अब भूमि व मिट्टी प्रदूषित होने के कारण मर जाते हैं आज वर्तमान में अलग से वर्मी कम्पोस्ट के रूप में उनका उपयोग किया जा रहा है। पहले अलग से इस तरह की खाद की जरूरत नहीं पड़ती थी। आधुनिक खेती में रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक के उपयोग ने केंचुएं की उपस्थिति मिट्टी में नगण्य कर दी है।

उर्वरकों व कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग ने भूमि व जल प्रदूषण के साथ-साथ मानव व जानवरों पर भी विपरीत प्रभाव डाला है। मानव स्वास्थ्य पर इसका बहुत ही गंभीर प्रभाव पड़ा है और मनुष्य को कैंसर जैसी असाध्य बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। जल प्रदूषण के कारण कई महामारी (कालरा) तथा कई जानलेवा रोग जैसे तपेदिक, टाइफाइड, पीलिया, पैराटाइफाइड, डायरिया आदि प्रदूषित जल के सेवन से पहाड़ी क्षेत्रों में पेट के रोग तथा पेट का कैंसर, स्कलेरॉसिस आदि रोग, अस्बेटस के रेशों से प्रदूषित जल द्वारा अस्बेस्टोसिस (फेफड़े के कैंसर का एक रूप) रोग, सीसा अधिक होने पर सीसा विषायण (Lead Poisiong) तथा पारा से प्रदूषित जल द्वारा मिनामाता रोग हो जाता हैं कई चर्म रोग भी हो जाते हैं।

पंजाब देश जो कृषि के उत्पादन में सर्वोच्च स्थान रखता था परंतु आज देखने व सुनने में आता है कि वहाँ अत्यधिक रासायनिक उर्वरक के प्रयोग में वहाँ की धरती खेती योग्य नहीं रहा। वहाँ का पानी संपूर्ण रूप से बर्बाद हो गया वहाँ हजारों लोग कैंसर व अन्य खतरनाक बीमारियों से पीड़ित हैं तथा वहाँ की स्त्रियों के दूध के नमूनों में तक इन कीटनाशकों की बढ़ी मात्रा पायी गयी है। आज इन अत्यधिक रसायन व कीटनाशकों का प्रयोग पंजाब के लोग व प्रकृति भुगत रही है।

भारत में हरित क्रांति के बाद उत्पादन तो बढ़ा लेकिन पर्यावरण को बहुत ही नुकसान हुआ पर्यावरण को प्रदूषित होने में सबसे प्रमुख योगदान इन रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का है। 1960-61 में देश में घरेलू उर्वरकों का उत्पादन मात्र 1501 हजार टन था तथा कुल उर्वरकों का उपभोग केवल 292 हजार टन था जो बढ़कर 2008-09 में 24,909 हजार टन हो गया तथा देश का उत्पादन 14,334 हजार टन है शेष विदेशों से उर्वरकों का आयात किया जाता है। भारत उर्वरकों के कुल उत्पादन और खपत की दृष्टि से चीन और अमेरिका के बाद तीसरा स्थान रखता है। उर्वरकों का बढ़ता प्रयोग पर्यावरण के लिए बहुत नुकसानदायक है। 2010-11 के अनुसार भारत में रासायनिक उर्वरकों की खपत 28.12 मिलियन टन है। भारत में उर्वरकों के उत्पादन व खपत एवं किया जाने वाले आयात की निम्न तालिका में दिखाया गया है -

तालिका क्रमांक - 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

कृषि में तेजी से विकास होने से पर्यावरण में निम्न रूपों से अवनयन होता है

1. वन विनाश तथा संबंधित भूमि उपयोग में परिवर्तन होने से।
2. खेतों में रासायनिक खादों कीटनाशी एवं शाकनाशी के प्रयोग से।
3. सिंचाई की सुविधाओं एवं सिंचाई की मात्रा में वृद्धि होने से।
4. जैविक समुदायों में परिवर्तन होता है।

- बढ़ते कृषि व्यवसाय के लिए जल का अत्यधिक उपयोग होता है जल की उपलब्धता के लिए अधिक भूजल दोहन कर सिंचाई करनी पड़ती है जिससे नहरों के पास के क्षेत्रों का जल लवणीकरण हो गया। लवण युक्त जल से फसलों की सिंचाई करने मिट्टी की क्षारीयता बढ़ जाती है खेत खेती के योग्य नहीं रहते हैं। अत्यधिक जल दोहन से भूजल का स्तर नीचे चला जाता है तथा जल की कमी भी भविष्य में हो सकती है।
- कृषि विविधता की हानि - कृषि व्यवसाय में वृद्धि बढ़ाने से कृषि की बहुत सी किस्में समाप्त हो जाती हैं जैसे छत्तीसगढ़ व मध्यप्रदेश के क्षेत्र विशेष चावल की अनेक किस्मों वाले क्षेत्र के रूप में जाने जाते थे परंतु अधिक पैदावार किस्मों एवं खेती के व्यवसायीकरण के रूप में कई किस्मों को चलन से बाहर कर दिया है।
- मृदा प्रदूषण के कारकों में सबसे महत्वपूर्ण कारक रासायनिक उर्वरक व कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग है। खाद्यान्नों के उत्पादन के लिए मृदा मुख्य आधार होती है। मृदा बहुत ही महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक तत्व है। यह महत्वपूर्ण क्षयशील प्राकृतिक संसाधन है क्योंकि इसके एक बार नष्ट हो जाने या इसके समाप्त हो जाने पर इसकी स्थानापूर्ति नहीं की जा सकती।
- गहन खेती से मिट्टियों की उत्पादकता घट जाती है।
- कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए रासायनिक खादों का अधिक उपयोग किया जाता है। फसलें समस्त रासायनिक पोषक तत्वों का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाती है इस तरह अप्रयुक्त रसायनों का मिट्टियों में लगातार संचय होता रहा है जिससे रसायनों के अत्यधिक सान्द्रण के कारण मिट्टियों का प्रदूषण प्रारंभ हो जाता है। फिर इन्हीं रसायनों का कुछ भाग वर्षा के जल के साथ बहकर तालाबों, झीलों, नदियों तक पहुँच जाता है तब जल प्रदूषण प्रारंभ हो जाता है। कुछ रसायन रिसकर नीचे चले जाते हैं तथा भूमिगत जल को प्रदूषित करते हैं। इसी तरह खरपतवार एवं फसलों को रोगों से बचाने के लिए प्रयोग किये जाने वाले मृदा कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के कारण एवं जल प्रदूषण होता है।
- जब वन क्षेत्रों का कृषि क्षेत्रों में रूपांतरण के कारण कई श्रृंखलाबद्ध पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो जाती है जैसे वन विनाश द्वारा मृदा अपरदन में वृद्धि होती है → जिससे उर्वर मिट्टियों का क्षय होता है → मिट्टियों की उत्पादकता का ह्रास होता है → मृदा अपरदन के द्वारा नदियों में अवसाद भार बढ़ जाता है → जिससे नदियों का तल ऊपर उठ जाता है → नदियों की जलधारण क्षमता कम होती है → नदियों के बाढ़ मैदान क्षेत्रों के फसलों की क्षति होती है।
- इसी तरह रासायनिक उर्वरक कीटनाशी के अत्यधिक प्रयोग से किस तरह संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र प्रभावित होता है। उर्वरक व कीटनाशक का अत्यधिक उपयोग → मृदा प्रदूषित होती है → भूमिगत जल प्रदूषित होता है → नदी, तालाब, झील का जल प्रदूषित होता है → जलीय जीव जंतु मर जाते हैं → मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है → कृषि उत्पादकता में कमी आती है → खेती कृषि योग्य नहीं रहती है → इकोलाजिकल सिस्टम प्रभावित होता है → भूमि की उर्वरा शक्ति खराब होती है ।

बढ़ती हुई जनसंख्या वृद्धि के लिए एक अनुमान के अनुसार 2020 तक 36 करोड़ टन खाद्यउन्न की आवश्यकता होगी इसके लिए कृषि विकास आवश्यक है। कृषि विकास का पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों एवं उत्पन्न पर्यावरण समस्याओं के समाधान के लिए देश प्रयत्नशील है लगभग दो दशकों से भारत कई उपायों को कर रही है यदि कुछ प्रमुख बातों को ध्यान में रखकर कृषि विकास किया जा सकता है जैसे -

सर्वप्रथम धारणीय अथवा पोषणीय विकास जो बहुआयामी पर्यावरण प्रबंधन को इंगित करता है इसके अंतर्गत पर्यावरण एवं समाज के हितों के अनुकूल विकास के कार्यक्रमों को योजनाबद्ध रूप से निर्मित कर क्रियान्वित किया जाता है। पर्यावरण पर शत्रुतापूर्ण व्यवहार करके किया गया विकास स्वयं मानव के लिए आत्मघाती सिद्ध हुआ जिससे पर्यावरण प्रदूषण, संसाधनों का संकट, असाध्य रोगों से ग्रसित मानव जीवन आदि इसके दुष्परिणाम है। धारणीय विकास वह है जो भावी पीढ़ियों को अपनी आवश्यकताओं को

पूरी करने की क्षमता को क्षति पहुँचाये बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकता को पूरा करें तथा पर्यावरण को हानि पहुँचाये बिना जीवन की गुणवत्ता जारी रख सके।

धारणीय कृषि (Sustainbale Agriculture) विकास में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के स्थान पर जैव उर्वरकों एवं जैव कीटनाशकों का प्रयोग कर कृषि उत्पादन को बढ़ावा दिया जाता है इससे भूमि की उर्वराशक्ति को भविष्य में भी बनाये रखना संभव होगा तथा मृदा में जो खतरनाक रसायन प्रवेश कर उसे प्रदूषित करते हैं उससे मुक्ति मिले एवं पर्यावरण अवनयन या ह्यास की स्थिति उत्पन्न न हो। नई कृषि नीति में धारणीय कृषि को बहुत महत्व दिया गया उसका अमल होना बहुत ही आवश्यक है।

सबसे महत्वपूर्ण उपाय रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशी एवं शाकनाशी कृत्रिम रसायनों के प्रयोग में कटौती की जाये तथा जहाँ इनके प्रयोग की बहुत आवश्यकता समझ में आये तो इनका उपयोग विवेकपूर्ण किया जाये।

खाद्य उत्पादन हेतु पूर्णत: उर्वरकों पर निर्भर रहकर उपलब्ध पोषक तत्वों के वैकल्पिक तत्वों के वैकल्पिक स्रोत – कार्बनिक खाद, हरी खाद, वर्मी कम्पोस्ट व जैव उर्वरकों का प्रयोग किया जाये जिससे उत्पादन में टिकाऊ वृद्धि के साथ ही मृदा के भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों में भी सुधार हो सके। सरकार ने गत वर्षों में निरंतर टिकाऊ खेती के सिद्धांत की सिफारिश की जिसे जैविक खेती के नाम से जाना जाता है। यद्यपि जैविक खेती कृषि की पुरानी पद्धति है। जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके जैविक खाद तैयार की जाती है। नेशनल प्रोग्राम आन आर्गेनिक प्रोडक्शन के अनुसार 'जैविक कृषि एवं कृषि प्रणाली एक प्रबंध है जो एक पारिस्थिति तंत्र को तैयार करता है जिसमें कृत्रिम बाह्य आयाम जैसे – रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के उपयोग के बिना स्थायी उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।' जैविक खेती के दो उद्देश्य हैं प्रथम प्रणाली को टिकाऊ बनाना दूसरा उसे पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाना।

- भारतीय कृषि में शुद्ध जैविक खेती को अपनाकर रासायनिक उर्वरकों में कमी लाने की संभावना मौजूद है इसके लिए जैविक खाद जो केंचुएं से निर्मित की जा सकती है जिसमें सामान्य कम्पोस्ट खाद से 40–50 प्रतिशत अधिक पोषक तत्व होते हैं यह सामान्य उत्पादन से दोगुना उत्पाद देती है, जमीन की उर्वरा शक्ति को बनाये रखती है, उपजाऊ क्षमता में वृद्धि होती है, भूमि की गुणवत्ता में सुधार होता है, भूमि में पानी का वाष्पीकरण कम होता है, पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी होती है। किसानों ने अपने अनुभव से बताया कि इस खाद के प्रयोग से पहले से अधिक उत्पादन हुआ एवं मौसमी प्रभाव का अस्वर भी तुलनात्मक रूप से कम हुआ।
- इसके लिए किसानों को कम्पोस्ट खाद तैयार करने का प्रशिक्षण, उसकी उपयोगिता बताना अत्यधिक आवश्यक है। किसानों को देशी बीज उपलब्ध कराना होगा क्योंकि कई बीज कंपनियाँ किसानों को विदेशी खाद व रासायनिक उर्वरक सहजता से उपलब्ध करा रही हैं। यदि भारत को कृषि को जहरमुक्त करना है तो इन विषमताओं को समझकर सरकार द्वारा व्यवस्थित कदम उठाना होगा। यद्यपि सरकार ने इस संबंध में फर्टिलाइजर बिल में संशोधन करने की बात कही है तथा पेस्टी साइडस मैनेजमेंट बिल 2008 पेशे होने वाला है अत: सरकार को इस संबंध में गंभीरता व दूरदर्शी प्रभाव देखकर निर्णय लेना आवश्यक है।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार प्रतिवर्ष 5 लाख से अधिक व्यक्ति इन उर्वरकों व कीटनाशकों का शिकार होते हैं। डी.डी.टी. आदि के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना आवश्यक है। कई देशों ने पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया है भारत देश को भी सख्त नियम बनाना होगा एक बार इसका उपयोग होने पर उसका अंश मिट्टी में 20 से 25 वर्ष तक मौजूद रहता है। पंजाब आदि देश इसके उदाहरण है जहाँ की खेती कृषि योग्य नहीं रही एवं कई पर्यावरणीय समस्याओं का वहाँ की प्रकृति को सामना करना पड़ रहा है।
- जैव प्रौद्योगिकी अस्सी के दशक से प्रचलित है जिसने कृषि में एक नये युग की शुरूआत की। कम समय एवं कम लागत में बढ़ी उत्पादकता जैव प्रौद्योगिकी का लक्ष्य है। जीव अभियांत्रिकी (जैनेटिक इंजीनियर) तथा तथा ऊतक संवर्द्धन कुछ अचूक विधियों का उपयोग इसकी विशेषता है। इसके अंतर्गत पराजीवी (ट्रांसजैनिक) फसलें, खरपतवार प्रभाव शून्य पौधे, कीट संक्रमण मुक्त पौधे, विषाणुमुक्त पौधे, बी.टी. फसलें, पोषकता में वृद्धि, खाद्य संवर्द्धन, वातावरणीय लाभ प्राप्त हो रहे हैं। एक प्रमुख लाभ यह है कि इससे अनेकानेक प्रजातियों का विकास हो रहा है तथा ऐसी फसलें आ रही हैं जिन पर न वातावरणीय दबाव का कोई असर हो, न ताप का, न सूखे का न बाढ़ का। भविष्य में जैव प्रौद्योगिकी की अच्छी संभावना है। वर्ष 1986 में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा अलग जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना की जा चुकी है।
- जैव उर्वरकों के प्रयोग को बढ़ावा देना होगा। जैव उर्वरकों की यह विशेषता होती है कि जब ये एक बार खेत को व्यवस्थित कर देते हैं तो बार–बार इन्हें डालने की आवश्यकता नहीं होती। पौधों की जड़ों को रोगों से बचाते हैं। मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं, रासायनिक उर्वरक को जहाँ पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक माना गया है वहीं जैव उर्वरक पर्यावरण के अनुकूल माने जाते हैं।
- किसानों को शिक्षित करना एवं उन्हें कृषि उत्पादन की समस्याओं से अवगत कराना एक महत्वपूर्ण उपाय है। वर्तमान में कृषि विकास के लिए ई–खेती का चलन बढ़ रहा है किसान इससे कृषि के संबंध में जानकारी प्राप्त करते हैं। किसान काल सेंटर 1800–180– 1551 पर नि:शुल्क बात कर किसान अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर रहे हैं। यह सेवा देश की 22 भाषाओं में संचालित हो रही है। यहाँ योग्य व अनुभवी प्रशिक्षक किसानों को उचित सलाह, मार्गदर्शन देते हैं तो वर्तमान कम्प्यूटर व नेटवर्किंग युग में ई–खेती महत्वपूर्ण कृषि विकास व पोषणीय कृषि विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।
- कृषि के व्यवसायीकरण के फलस्वरूप रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशक के उत्पादन एवं उपभोग में निरंतर वृद्धि हुई है जिसे तालिका क्रमांक–2 में दिखाया गया है। ये रसायन पहले मिट्टी में स्थिति कीटाणुओं तथा अवांछित पौधों को विनष्ट करते हैं तत्पश्चात् मिट्टी की गुणवत्ता को कम करते हैं इन रसायनों को रेंगती मृत्यु (Creeping Deaths) कहा है। भारत देश को कृषि को जहरमुक्त करना अति आवश्यक है। देश के बहुत सारे संगठन नैसर्गिक खेती की दिशा में प्रयोग कर रहे हैं। सुभाष पालेकर शून्य बजट वाली खेती को लेकर देशभर में अभियान चला रहे हैं। उत्तर प्रदेश में विनोबा आश्रम और ऐसे संगठन कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयोग कर रहे हैं। सरकार को इस संबंध में उचित कानूनी प्रावधान (संशोधन) द्वारा प्रयास करना होगा तथा पोषणीय कृषि विकास को महत्व देना होगा। यद्यपि कृषि प्रशिक्षण व शिक्षा के लिए देश में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत 97 संस्थान केन्द्र, 65 राज्य कृषि विश्वविद्यालय, 5 डीम्ड कृषि विश्वविद्यालय, 2 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, 592 कृषि विज्ञान केन्द्र कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त चार केन्द्रीय विश्वविद्यालय में भी उच्च स्तर की

कृषि शिक्षा दी जाती है तथा उच्च गुणवत्ता कृषि अनुसंधान कार्य भी किया जाता है।

खाद्य उत्पादन की बढ़ती हुई माँग की आपूर्ति क लिए उनकी कीमतों को काबू में रखने के लिए कृषि उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। कृषि विकास के लिए नवीनतम तकनीकों का प्रयोग करने की आवश्यकता है। भारत में फरवरी 2009 से 2011 तक कृषि क्षेत्र 705 नवप्रवर्तन हुए हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में नवप्रवर्तन को प्रोत्साहन देने के लिए नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन (राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान) कई वर्षों से नवप्रवर्तकों की खोज कर रहा है उन्हें सम्मानित व प्रोत्साहित कर रहा है। यह कृषि विकास के लिए एक प्रभावशाली कदम है।

अत: खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए उत्पादन लागत घटना तथा उपलब्ध संसाधनों जैसे उर्वरक सिंचाई जल, कीटनाशी आदि के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करते हुए मृदा उत्पादकता एवं उर्वरकता को बनाये रखना नितांत आवश्यक है। सरकार प्रयत्नशील है आवश्यकता है किसानों को जागरूक करने की शिक्षित करने की, जिससे कृषि विकास टिकाऊ व पोषणीय हो। जो कि वर्तमान समय की आवश्यकता है। 2014 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने पारिवारिक खेती का वर्ष या छोटे किसानों का वर्ष घोषित किया है इसका उद्देश्य व पूरा परिवार को रोजगार प्राप्त होना है एवं रासायनिक पदार्थों से मुक्त कृषि विकास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण भूगोल - सविन्द्र सिंह
2. कृषि अर्थशास्त्र - डॉ. जय प्रकाश मिश्र
3. भारतीय अर्थव्यवस्था - जे.पी. मिश्र
4. विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र - वी.सी. सिह्वा
5. विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र - डॉ. अनुपम गोयल
6. विकास एवं पर्यावरणीय अर्थशास्त्र - डॉ. जे.पी. मिश्रा
7. कृषि भूगोल - शर्मा भारद्वाज
8. कुरूक्षेत्र पत्रिका, जून, जुलाई, अगस्त-2014
9. योजना - सितम्बर 2014
10. दैनिक भास्कर - 7 सितम्बर 2014

तालिका क्रमांक - 1 : कृषि उत्पादन की दशकीय वृद्धि (प्रति हैक्टर उत्पादकता किलोग्राम में)

फसल	1950-51	1954-55	1961-62	1971-72	1981-82	1991-92	2001-02	2011-12
चावल	668	820	1028	1141	1308	17510	2079	2346
गेहूँ	655	803	890	1380	1691	2394	2762	3026
ज्वार, बाजरा, मक्का	-	520	519	564	733	778	1131	1574
दालें	441	500	485	501	483	533	607	649
मूंगफली	-	766	725	823	7972	818	1127	1294
सरसों	-	425	425	396	541	895	1002	1161
सोयाबीन	-	-	-	426	741	782	940	1206
Sugarcane	-	36303	42349	48322	58359	66069	67370	68879
चाय	876	-	-	1182	1461	1800	1670	1879
काफी	-	-	-	814	624	805	937	868
काटन	-	100	103	106	152	216	186	491
जूट	-	1021	1104	1032	1130	1662	2007	2285
तंबाकू	-	737	842	810	1065	1369	1565	-

स्रोत - आर्थिक समीक्षा, 2012-13

तालिका क्रमांक - 2 : उर्वरकों (NPK) का उत्पादन, आयात एवं उपभोग (हजार टन)

मद	1960-61	1970-71	1980-81	1990-91	2000-01	2007-08	2008-09
घरेलू उत्पादन	150	1059	3005	9045	14705	14707	14334
आयात	419	629	2759	2758	2090	7721	10151
उपभोग	292	2177	5516	12546	16702	22570	24909
प्रति हे. उपभोग (कि.ग्रा.)	02	13	32	68	86	116.8	128.6

स्रोत - आर्थिक समीक्षा, 2012-13

निर्धनता - कारण, परिणाम और कम करने के उपाय

डॉ. ए. के. जैन *

प्रस्तावना – वर्तमान युग अन्तर्विरोधो का है जिसमें विज्ञान, नवीन प्रौद्योगिकी, संचार क्रांति, कम्प्यूटर एवं अनेक नवीनतम शोधो की सहायता से कल्पनातीत समृद्धि, सुख - साधनों की भरमार है जबकि, दूसरी ओर दारूण गरीबी भूख और विषमताओं का क्रूरतम यर्थाथ विद्यमान है। आज मानव रोग, शोक, भूख, अभाव से लड़ने और सृष्टि के अनन्त रहस्यों को खोलने में पहले से अधिक समर्थ और साधन सम्पन्न है किन्तु इसके साथ यह भी सच है कि 'आज पहले से कहीं अधिक बड़े पैमाने पर लोग गरीबी और अभाव से ग्रस्त है सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि व्यक्ति सम्पन्नता की संभावनाओं के बीच विपन्नता की विडम्बनापूर्ण स्थिति में जीने को विवश है।'

आज इस बात पर विचार करना प्रासंगिक होगा कि मानव की स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व के जो मानवीय लक्ष्य लेकर हमने विकास यात्रा आरंभ की थी वह परतंत्रता, असमानता और अलगावबाद में तो नहीं रूपान्तरित हो गई है। विषमता की खाई निर्धनता की डोर में वृद्धि तो नहीं हुई है ? यदि हम आज भी मानव को स्वतंत्रता, समानता एवं सम्मानपूर्ण सुखी जीवन प्रदान करने में असफल रहे है तो हमसे चूक कहां हुई है ? इन सब बातों पर गहन चिन्तन विचार विमर्श ओर एक सुनियोजित नीति की व्यूह रचना आज की परम आवश्यकता है।

खाद्यान के क्षेत्र में आत्म निर्भरता, शिक्षण संस्थाओं, स्वास्थ्य सेवाओं, परिवहन, संचार, बैंकिंग, ऊर्जा एवं इलैक्ट्रॉनिक अधोसंरचना एवं क्षेत्रों में विकास हुआ है यह सच है कि हमने चतुर्दिक सफलताएं प्राप्त की है लेकिन फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि हम उतनी प्रगति की उतनी ऊँचाई पर नहीं पहुंच सके, जितने पर पहुँच सकते थे या पहुँचना वांछनीय था। देश के समक्ष वर्तमान में जो विभिन्न समस्याएं है वह सभी गंभीर है लेकिन उन सब में सर्वाधिक गंभीर एवं चुनौतीपूर्ण समस्या निर्धनता ही है।

निर्धनता की समस्या आज की या कुछ समय पूर्व की न होकर सदियों पुरानी है विशेष रूप से 200 वर्षो के उपनिवेशकारी शोषण का प्रतिफल है। निर्धनता का स्थिति का निरूपण करते हुए प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो. बी.एम डांडेकर एवं नीलकंठ रथ ने लिखा है कि 'पिछले 20 वर्षो में देश के आर्थिक विकास को एक अनिष्ठ मोड़ मिला है। एक तरफ गरीबों के जीवन के लिये आश्यक वस्तुओं का उत्पादन एवं आपूर्ति अपर्याप्त है जबकि दूसकी तरफ अमीरो के उपयोग की नयी-नयी वस्तुओं का निर्माण धडल्ले से हो रहा है।' विगत कुछ दशकों में जिस तीव्रगति से उन्नति हुई और आर्थिक विकास हुआ उसके कारण इसकी गम्भीरता और चुभन अधिक अनुभव हो रही है। 'गरीबी अपने सभी प्रकट रूपों मे कुपोषण, गन्दगी, बीमारी, तंग व गन्दी बस्तियों में निवास, बाल मृत्यु आदि के साथ अभी तक मौजूद है।'

गरीबी की अवधारणा – गरीबी एक सापेक्ष कल्पना है। सामान्य अर्थो में गरीब एक ऐसा व्यक्ति है जो अभावो से पीडित है। जो जीवन की आवश्यक सुविधाओं तथा न्यूनतम जीवन निर्वाह के साधनों से वंचित है जिसे हमेशा असुरक्षा का भय व्याप्त रहता है और जो रोजी रोटी, के लिए निरंतर संघर्षरत रहता है। कुपोषण, स्वच्छता रहित वातावरण, अशुद्ध पेयजल, भुखमरी तथा बेघर होने की आशंका जिसकी नियति बन चुकी है। बुनियादी आवश्यकताओं रोटी, कपड़ा, मकान के अभाव से ही अन्य अभाव जैसे शैक्षिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक अभाव उत्पन्न होते है।

1962 में दांडेकर, रथ समिति ने गरीबी और गरीबी को रेखांकित करने वाली गरीबी रेखा के मानदण्ड तैयार किये और न्यूनतम पोषण को आधार बनाया। ग्रामीण क्षेत्र के लिए प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी एवं नगरीय क्षेत्र के लिये 2100 कैलोरी की मात्रा, निश्चित की गई। न्यूनतम पोषण आहार को गरीबी रेखा का आधार मानना अव्यवहारिक है क्योंकि उदरपूर्ति ही मानव की आवश्यकता नहीं है और अन्य आवश्यक मदें भी है। नोबल पुरस्कार प्राप्त प्रो. अमर्त्य सेन ने गरीबी की परिभाषा और उसके मापने के निर्देशांक पर काफी कार्य किया है। उन्होंने सामान्य रूप से प्रचलित गरीबी निर्देशांक को ठुकराकर गरीबी आकलन के लिये एक नये फार्मूले का प्रवर्तन अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक पावर्टी एक्ड फेमिन्स एन एस्से इनटाइटिलमेंट एण्ड डिप्रावाश्नेशन (1981) में किया। जिसे सेन सूचकांक के नाम से जाना जाता है। उनकी व्याख्या तार्किक प्रतीत होती है और वर्तमान प्रचलित विधियों में सर्वश्रेष्ठ है। उनके गरीबी सूचकांक का प्रयोग मानव विकास सूचकांक की गणना के कार्य में किया जा रहा है।

गरीबी के आकार का अर्थशास्त्र– प्रो. दांडेकर एवं रथ के अनुसार 1967-68 में भारतीय जनसंख्या का गरीबी रेखा से नीचे 40 प्रतिशत भाग थी। 1987-88 में 39.3 प्रतिशत थी। 1994-95 में 39.4, 2004-05 में 37.2 एवं 2009-10 में 20.8 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी।.

निर्धनता का माप दण्ड – दांडेकर एवं रथ ने भोजन में कैलोरी की मात्रा को निर्धनता रेखा के निर्धारण का एक मात्र आधार माना जिसे 1971 से इस्तेमाल किया जा रहा है। इसके पश्चात सुरेश तेंदुलकर समिति के नए फार्मूले में निर्धनता रेखा का आकलन भोजन में कैलोरी की मात्रा के बजाय प्रति व्यक्ति मासिक उपयोग व्यय के आधार पर किया गया है तथा प्रत्येक राज्य में निर्धनता रेखा के लिये शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति मासिक उपयोग व्यय अलग - अलग निर्धारित किया गया है। अखिल भारतीय स्तर पर 672.8 रूपये प्रतिमाह व शहरी क्षेत्रों में 859.6 रूपये प्रतिमाह के उपयोग व्यय को 2009-10 में निर्धनता रेखा की पहचान के लिए निर्धारित किया गया है।

योजना आयोग के सदस्य डॉ. अभिजीत सेन ने अपनी अध्ययन रिपोर्ट में बताया कि 2004-05 व 2009-10 इन पांच वर्षो में देश में निर्धनता अनुपात में जहां कमी आयी है वही निर्धनों की संख्या में वृद्धि हुई है। 2004-05 में देश की कुल 100 करोड़ जनसंख्या में लगभग 37.0 करोड़ निर्धन थे

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

जबकि 2009-11 में 121 करोड़ जनसंख्या में 38.5 करोड़ निर्धन थे। अर्थात देश में 32 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा से नीचे थी।

योजना आयोग ने डॉ. सी रंगराजन की अध्यक्षता में एक नवीन विशेषज्ञ टेक्नीकल समूह का गठन 24 मई 2012 को किया है। जो निर्धनता आकलन की सर्वमान्य तथा सटीक विधि सुझाएगा।

गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालो की संख्या का विश्लेषण करने के उपरांत अब मुख्य प्रश्न यह है कि संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में प्रत्येक को जीविका के पर्याप्त साधनों एवं संतोषजनक जीवन स्तर के अधिकार दिये जाने की घोषणा के बावजूद देश की लगभग 30 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा से नीचे रहने को विवश क्यों है ?

वैश्वीकरण के इस प्रौद्योगिकी के उन्नतिशील युग में गरीबी जारी रहना एक अभिशाप है इस विसंगति पर चिन्तन करने के लिये निर्धनता के मूल कारणों पर विचार आवश्यक है।

निर्धनता के कारण – निर्धनता के आर्थिक कारणों में सम्पत्ति का स्वामित्व केवल कुछ ही हाथों में केन्द्रित होना, पूंजी की अपर्याप्तता, निम्न बचत, निम्न उत्पादकता, उन्नत प्रौद्योगिकी का अभाव, निर्धनता का दुष्चक्र, ग्रामों में कृषि आधारित एवं रोजगार परख उद्योगों का न होना, कुटीर एवं लघु उद्योगों का घटता आकार निरक्षरता कालाधन व काली आय राष्ट्रीय आय के 40 प्रतिषत के बराबर होना, विकास की रणनीति अमीरों के पक्ष में व गरीबों के विरूद्ध होना इत्यादि प्रमुख हैं।

निर्धनता के अनार्थिक कारणों में रूढिवादिता, सामाजिक मान्यताएं, परम्पराएं भाग्यवादिता, उदासीनता, अन्धविश्वास, मंहगे रीति रिवाज, राजनैतिक अस्थिरता, धार्मिक क्रिया कांड आदि प्रमुख है। निर्धनता दूर न होने का एक प्रमुख कारण नीति निर्माताओं अर्थशास्त्रियों का यह विश्वास कि जैसे-जैसे आर्थिक विकास होता जायेगा देश की गरीबी और विषमता की समस्या अपने - आप हल होती जायेगी डॉ. एस.पी. गुप्ता पूर्व सदस्य योजना आयोग ने राष्ट्रीय सैंपल के सर्वेक्षण के आंकड़ो के अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले है वे साबित करते है कि जीडीपी में तीव्र वृद्धि होने मात्र से गरीबी अपने आप कम नहीं हो जाती और न ही विकास का अमृत छन-छन कर अपने आप नीचे पहुॅच जाता है। जैसा कि ट्रिकल डाउन में विश्वास करने वाले अर्थशास्त्री मानते है।

निर्धनता दूर करने हेतु अभी तक बनाई गई नीतियों के अपेक्षित परिणाम नहीं निकलने का कारण यह है कि इन योजनाओं को पूर्ण ईमानदारी, उत्साह और शक्ति से अमल में नहीं लाया गया हैं। निर्धनता का एक कारण 'यह है कि विश्व की 80 फीसदी आबादी विकासशील देशो में है किन्तु ग्लोवल जीडीपी को ये देश सिर्फ 20 फीसदी का ही योगदान कर पाते है इससे विकासशील देशों की आर्थिक क्षमता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

विकास की पश्चिमी अवधारण जो सबको रोजगार, समृद्धि व खुशहाली देने का वादा करती है जब वह पश्चिम में ही अपनी प्रासंगिकता खोती जा रही है वो विकास की दौड़ में काफी पिछड गये तीसरी दुनिया के भारत जैसे देशों को क्या प्राप्त होगा? इस पर आज फिर गौर करने की आवश्यकता है। हमने विकास की रणनीति और तकनीकी विकसित देशों से ली है। जिनके विकास का आधार प्रकृति को एक वस्तु मानकर मानव की भोग लिप्सा के लिए उसका अधिकतम शोषण है यह विकास नीति प्रकृति एवं कमजोर लोगों के उपयोग एवं राष्ट्रों के शोषण के आधार पर आश्रित है।

उदारीकरण वैश्वीकरण मुक्त व्यापार, इन सभी अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों के कारण गरीब - अमीर के बीच खाई और चौड़ी हुई है। यही वजह है कि धनाढ्य व औद्योगिक देश लगातार अकूत सम्पत्ति के मालिक बनते जा रहे है और शेष दुनिया, गरीबी और अभावों की ओर बढ रही है। निर्धनता के कारणों पर गहन विचार करने के पश्चात इस चुनौती के निवारण के ठोस उपायों पर सार्थक कदम उठाने का आवष्यकता है।

निर्धनता दूर करने के ठोस उपाय – युवाओं का देश भारत खनिज संपदा, जनशक्ति, प्राकृतिक संसाधनों से सम्पन्न होते हुए भी यह कैसी विडम्बना है कि यहां निर्धनता व्याप्त है। कई व्यक्ति विपन्नता की स्थिति में जीने को विवश है। निर्धनता दूर तभी हो सकती है जब हम ईमानदारी से नीतियों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करें। इस हेतु कुछ सुझावों को अमल में लाया जा सकता है।

1. न्यायोचित वितरण व्यवस्था – गरीबी मूलत: मनुष्य निर्मित है। यदि समाज में विकास के प्रतिफलो का न्योयोचित वितरण हो तो संभवत: निर्धनता रहेगी ही नहीं । यदि हम समाजवादी समाज की अवधारणा के अनुरूप राष्ट्रीय आय का अधिक न्याय संगत वितरण कर सके तो भारत की गरीबी की तस्वीर कुछ कम बद रंग नजर आने लगेगी। धन एवं आय का वितरण इतना आसान नहीं है। इसलिए हमारे भारतीय चिन्तकों ने एक बहुत अच्छा उपाय सुझाया है। राजगोपालाचार्य के अनुसार धन पैदा कर लेने के बाद उसका समवितरण आप नहीं कर सकते आप उसके लिए मनुष्यों को राजी करने में सफल नहीं हो सकते किन्तु आप धन इस प्रकार पैदा कर सकते है कि उसके पहले ही उसका समवितरण निश्चित हो जाये।' महात्मा गांधी द्वारा अभिकल्पित विकेन्द्रीकृत उत्पादन तंत्र से वितरण की समस्या अपने आप हल हो जाती है क्योंकि इस व्यवस्था में वितरण की समस्या का हल ऊपरी सतह पर न कर उसकी जड़ में खोजा गया है।

2. यंत्रो की मर्यादा – यंत्रीकरण की दौड़ में मानव की उपेक्षा आज के युग की भीषण त्रासदी है। हमें यंत्रीकरण की ऐसी नीति का नियोजन करना होगा जिसमें रोजगार विकास का परिणाम न होकर लक्ष्य हो। यह उद्देश्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब हम मानव श्रमका अधिक उपयोग तथा यंत्रों की मर्यादा सुनिश्चित करें। महात्मा गांधी के अनुसार ' में ऐसी मशीनों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूॅ जो अनेक लोगों की कीमत पर, कुछ लोगों को धनी बनाए या बिना किसी कारण के अनेक लोगों को बेरोजगार बनाए।'

डॉ. राम मनोहर लोहिया का मत था कि प्रत्येक हाथ को काम और प्रत्येक मुख को रोटी का आदर्श लघु यंत्रों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ शूमाकर ने 'स्माइल इज ब्यूटी फुल' में छोटे यंत्रों के उपयोग का पुरजोर समर्थन किया। यंत्रीकरण में परिश्रम को बचाने का मानवीय भावना न होकर मुनाफे का शुद्ध लोभ है इसलिए गांधी जी उन्हीं मशीनों को स्वीकार करने के पक्ष में थे जो सभी को रोजी रोटी उपलब्ध कराये । प्रो0 ई.एफ. शूमाकर 'अधिकाधिक बड़े उद्योग प्रचंड स्वचालित यंत्र आदि प्रतिष्ठित होने के कारण उन लोगों की जिनके पास श्रम ही एक पूॅजी है पूर्ण अवहेलना हो रही है।'

3. संयमित उपभोग – महात्मा गांधी का विचार था कि दुनिया में प्रत्येक व्यक्ति की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त साधन है लेकिन ये साधन किसी एक व्यक्ति के लालच की पूर्ति नहीं कर सकते। यदि हर एक आदमी जितना उसे चाहिए उतना ही ले, ज्यादा न ले तो दुनिया में गरीबी न रहे और कोई आदमी भूखा न मरे।

प्रसिद्ध विचारक पं. दीनदयाल जी का मत था कि 'प्राकृतिक सम्पदाएं सीमित है अत, नियंत्रित एवं संयमित उपभोग के द्वारा ही उन्हें दीर्घकाल तक संरक्षित किया जा सकता है। अधिकाधिक उपभोग का सिद्धांत दु:खों का

कारण है यदि हम देश की गरीबी दूर करना चाहते है तो संयमित उपभोग का सिद्धांत स्वीकार करना होगा।' उनका मत था कि हमारी अर्थ व्यवस्था का लक्ष्य अमर्यादित उपभोग नहीं, संयमित उपभोग होना चाहिए।

4. उपयुक्त प्रौद्योगिकी – डॉ. शूमाकर का मत है कि हमें ऐसी मध्यवर्ती टैक्नोलॉजी का उपयोग करना होगा, जो उपलब्ध पूँजी और श्रमके अधिकतम उपयोग के साथ ताल मेल बैठा सके। बड़ी मशीन का प्रौद्योगिकी और उससे प्रभावित सामाजिक, राजनीतिक तंत्र से मुक्ति के लिए तो वास्तव में एक नयी क्रांतिकारी प्रौद्योगिकी का अविष्कार आवश्यक है। जो उत्पादन क्षमता के आर्थिक लक्ष्य और मानव व्यक्ति के समग्र विकास के सामाजिक नैतिक लक्ष्यों को एक दूसरे का पूरक बनाने में समर्थ है।

डॉ. राम के बेपा ने मनुष्य केन्द्रित ग्राम समुदाय पर आधारित तकनीकी के प्रयोग पर बल दिया। मशीनें मानव का स्थान न लें उन्हें बेरोजगार न बनाए। इस तरह प्रोद्योगिकी का स्वदेशीकरण बांछनीय है।

5. शिक्षा – निर्धनता का निवारण के लिए सभी को साक्षरता एवं गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा मूल शर्त है विकसित देश शिक्षा पर राष्ट्रीय उत्पाद का 9 से 10 प्रतिशत व्यय करते है लेकिन भारत अभी केवल लगभग 5 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करता है। शिक्षा के महत्व को रेखांकित करती चीन की एक कहावत है कि 'यदि आप एक वर्ष के लिए योजना बना रहे है तो चावल उगाओ, यदि आप 30 वर्ष के लिए योजना बना रहे है तो पेड़ लगाओ। और यदि आप 100 वर्ष की योजना है तो शिक्षा की योजना बनाओ।' प्रो. अमर्त्य सेन के अनुसार ' शिक्षा से विकास, जनसंख्या नियंत्रण, सामान्य स्वास्थ्य और जीवन पर अनुकूल प्रभाव ही नहीं पडेगा बल्कि मानव संसाधन में गुणात्मक विकास से नया सामूहिक मनोविज्ञान जन्म लेगा।'

शिक्षा और रोजगार का परस्पर अनुकूल संबंध है। यह महत्वपूर्ण मानव पूँजी निर्माण निवेश और आर्थिक विसंगततियों को दूर करने में सहायक है। आय के पुनर्वितरण का स्थायी उपाय रोजगार के अवसर बढाना है।

6. मानव को केन्द्र बिन्दु मानना – इस तथ्य की ओर ध्यान देना अति आवश्यक है कि आर्थिक प्रगति मनुष्य के लिये है न कि मनुष्य धन के लिये इस विचार के परिप्रेक्ष्य में सबसे पहले हमें मनुष्य को केन्द्र बिन्दु मानना होगा। मानवीय सुख के लिये अर्थ महत्वपूर्ण है। लेकिन सुख की प्राप्ति में प्रमुख साधन मानवीय शक्ति ही होना चाहिये। देश की श्रम शक्ति को बेकार रखकर आर्थिक विकास प्राप्त करना सामाजिक दृष्टि से घाटे का सौदा होगा।

7. आर्थिक प्रगति का मापदण्ड – आर्थिक प्रगति की माप समाज में सबसे ऊपर की सीढ़ी पर खड़े व्यक्ति से नहीं अपितु सबसे नीचे के स्तर पर खड़े व्यक्ति से होना चाहिये ।तब हमें निर्धनता से जूझने की ऊर्जा प्राप्त होगी। अन्तिम छोर के व्यक्ति के कल्याण से सभी व्यक्तियों के कलयाण की भावना गांधी जी की थी। उन्होंने लिखा कि में ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा जिसमें गरीब से गरीब व्यक्ति भी यह महसूस करेंगे कि वह उनका देश है जिसके निर्माण में उनकी आवाज का महत्व है। प्रत्येक व्यक्ति को यदि काम प्राप्त करने का अधिकार मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किया जाये तो निर्धनता की समस्या स्वमेव समाप्त हो जायेगी।

8. निर्धनता निवारण की व्यूह रचना – प्रो. अमर्त्य सेन का विचार है कि गरीबी का मामला बहुत जटिल है और गरीबी दूर करने की व्यूह रचना और भी कठिन है। क्योंकि एक तो गरीबो के हित में आर्थिक व सामाजिक नीतियां बन नहीं पाती यदि बनती भी है तो वह सही तरीके से लागू नहीं हो पाती। गरीबी हटाने के कार्यक्रमों के दुरूपयोग की पूरी संभावना बनी रहती है यही कारण है कि गरीबी हटाने के उपायो की सामाजिक लागत बहुत ऊँची आती है। विकासशील देशों के सन्दर्भ में विकास की नयी अवधारणा विकसित करनी होगी। व्यक्ति को गरीब बनाये रखने में शोषण प्रमुख है यदि हम केन्द्रीकृत व्यवस्था के स्थान पर विकेन्द्रित व्यवस्था को अपनाये तो निर्धनता, दूर करने में सहायता मिलेगी। क्योंकि तब व्यक्ति और परिवार उत्पादन की इकाई और आधार होगा जिससे शोषण की भी संभावना नहीं रहेगी।

निश्चित रूप से निर्धनता की समस्या एक चुनौती है और इसके निदान का रास्ता दुरूह है। हमें डॉ शूमाकर के इस कथन को स्वीकार करना होगा कि 'विश्व के गरीबों की सहायता अधिक व्यक्तियों के द्वारा उत्पादन से की जा सकती है न कि अधिक मात्रा में उत्पादन से।' इसे दूर करने के लिए हमें आर्थिक लोकतंत्र को अंगीकार करना होगा। जिस प्रकार वोट राजनीतिक प्रजातंत्र का आधार है ठीक उसी प्रकार काम का अधिकार आर्थिक लोकतंत्र का मापदंड है। यह अर्थव्यवस्था का आधार भूत लक्ष्य होना चाहिए। अर्थव्यवस्थाओं का दृष्टिकोण इतना विकृत हो गया है कि प्रत्येक प्रश्न आर्थिक धुरी के चारो ओर घूमने लगा है आर्थिक लक्ष्य की प्रमुखता ने मानव को विस्मृत कर दिया है। हमें इस तथ्य पर विचार करना होगा कि 'क्या मानव की उपेक्षा करके आर्थिक प्रगति उचित होगी ?' इस तरह जब तक हम अर्थव्यवस्था का उद्देश्य निश्चित नहीं करेंगे तब तक विकास की सभी उपलब्धियां बेमानी होगी।

यदि हम वास्तव में गरीबी को दूर करना चाहते है तो हमें एक ऐसी अर्थव्यवस्था का निर्माण करना होगा जो मानवीय उद्देश्यों से परिपूर्ण हो एवं समाज के सर्वांगीण विकास का आधार बन सकने में सक्षम हो। प्रोफेसर अमर्त्य सेन के विचार हमारा मार्गदर्शन कर सकते है। मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा, ईमानदारी, सत्य अहिंसा एवं स्वदेशी के मार्ग पर चल कर निर्धनता से मुक्त होकर हम एक खुशहाल समाज का निर्माण कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मंत्री गणेश– मार्क्स गांधी और सम सामयिक सन्दर्भ
2. बाजपेयी ए.डी.एन.– कौटिल्य वार्ता वर्ष 1998
3. शूमाकर ई. एफ.– स्माल इस व्यूटीफुल
4. डपाध्याय पं. दीनदयाल – एकात्म दर्शन
5. प्रधान आनन्द – नई फसल गरीबी की
6. तिवारी डॉ आर.एस.– अमर्त्य सेन का नोवल चिन्तन
7. दांडेकर प्रो. बी.एम. एवं रथ– भारत में गरीबी की योजना
8. वैश्य डी.सी. – निर्धनता निवारण और सामाजिक भागीदारी योजना
9. प्रसाद डॉ. महादेव प्रसाद – महात्मा गांधी का समाज दर्शन
10. भारतीय अर्थव्यवस्था– अतिरिक्तांक प्रतियोगिता दर्पण
11. मिश्र एवं पुरी – भारतीय अर्थव्यवस्था 2012 मानव विकास रिपोर्ट

****

नव उदारवादी आर्थिक नीति के पश्चात् भ्रष्टाचार - एक विश्लेषण

डॉ. रिखबचन्द जैन *

प्रस्तावना – भ्रष्टाचार का अर्थ है कि भ्रष्ट + आचरण है जिसका आचरण बिगड़ गया, अपने स्वार्थ के कारण दूसरो को किसी प्रकार कीहानि पहुँचाता है अर्थात दूसरों को हानि न पहुँचाते हुए भी अपना अनैतिक लाभ को बढाने का प्रयास करता है। आज के परिपेक्ष्य में भ्रष्टाचार एक महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दा बन गया है। भ्रष्टाचार से जनता परेशान हो गई है और संस्थानिक भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए जनमत तैयार हो रहा हैं।

भ्रष्टाचार = (एकाधिकार + विवेकाधिकार) - (जवाबदेही + ईमानदारी + पारदर्शिता)

भ्रष्टाचार में निम्नांकित मामले शामिल है

- नियमो, नियमनो ,नीतियों एवं कानून का अभाव
- कमजोर प्रवर्तन प्रणाली
- निगरानी की कमजोर प्रणाली
- जवाबदेही का अभाव
- पारदर्शिता का अभाव
- प्रणाली के नियंत्रण का अभाव
- ईमानदारी का अभाव
- एकाधिकार
- अत्यधिक विवेकाधिकार
- अपराध अनुसंधान की निम्न दर

प्रधानमंत्री पी.वी.नरसिंहाराव की सरकार में तात्कालिक वित्तमंत्री मनमोहन सिंह ने सन् 1991 में नव उदारवादी आर्थिक सुधार नीति की घोषणा की। आर्थिक सुधारों का आधारभूत उद्देश्य भारत के लोगों के जीवन की गुणवत्ता में तेजी से एवं स्थिरता से सुधार लाना है।

1991 में आर्थिक सुधारों के पाँच उद्देश्य रखे गये

- स्वतंत्र व्यापार
- स्वतंत्र विनिमय दर
- वित्तीय प्रणाली ऐसी हो कि प्रतियोगी बाजार हो
- कुशल एवं गतिशील औद्योगिक क्षेत्र
- स्वतंत्र ,प्रतियोगी एवं धारा प्रवाह सार्वजनिक क्षेत्र हो

नव उदारवादी आर्थिक सुधार कार्यक्रम –

1. **राजकोषीय घाटे को कम करना** – राजकोषीय घाटा कम होने पर भुगतान संतुलन में स्थिरता तथा मुद्रास्फीति कम रहने की संभावना है।

2. **औद्योगिक नीति में सुधार**

- सरकारी क्षेत्र के लिए आरक्षित तीन उद्योग रहेगे जो परमाणु ऊर्जा, रेलवे परिवहन एवं परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा निर्दिष्ट पदार्थ अर्थात निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन।
- औद्योगिक लाइसेंस पांच उद्योगों के अलावा मुक्त रहेंगे जो निम्न है- एल्कोहल युक्त पेयो का आसवन एवं इनसे शराब बनाना, तम्बाकू के सिगार, ऐरोस्पेस तथा रक्षा उपकरण, औद्योगिक विस्फोटक सामग्री, खतरनाक रसायन
- विदेशी तकनीक के प्रवेश की स्वतंत्रता
- MRTP गृहो को विनियोग की अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं

3. **व्यापार एवं विनिमय दर नीतियाँ** – प्रशुल्क कम कर दिया, आयात का उदारीकरण किया गया विनिमय दर विनिमय की माँग व पूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित की गई।

4. **विदेशी विनिमय नीतियाँ-** अधिक से अधिक FDI को आमंत्रित किया गया अब तो बीमा व रेलवे में भी 50 % FDI किया जा सकेगा।

5. **कर सुधार** - व्यक्तिगत कर की अधिकतम दर 30 % कर दी गई आयात कर कम व सरल बनाये, उत्पाद शुल्क में सरलीकरण करते हुए G.S.T लागू कर रहे है।सेवा कर का दायरा बढाया जा रहा है।

6. **वित्तीय क्षेत्र में सुधार** -इसके अन्तर्गत रेपो रेट, रिवर्स रेपो रेट,CRR, SLR की सीमा कम की जा रही है, ताकि मुद्रा कि तरलता बडे।

नव उदारवादी आर्थिक सुधारो के पश्चात भ्रष्टाचार – नव उदारवादी आर्थिक सुधारो को शुरू हुए जब दो दशक पूरे हो चुके हे तब भी शीर्ष पदों पर भ्रष्टाचार का मुद्दा देश के सामने सबसे बडे सवाल के रूप में खडा है जब नव उदारवादी आर्थिक सुधारों की शुरूआत हुई तब यह तर्क दिया जाता था कि लाइसेंस कोटा परमिट राज का खात्मा हो जायेगा और इस कारण भ्रष्टाचार पर अंकुश लग जायेगा परन्तु पिछले दो दशको के अनुभव से साफ है कि भ्रष्टाचार खत्म होना तो दूर उल्टे उसका आकार और प्रसार बहुत ज्यादा बढ़ता चला गया। भ्रष्टाचार और घोटाले राष्ट्रीय पहचान बनते जा रहे है।ट्रांसपेरेसी इंटरनेशनल की ताजा रिपोर्ट में भारत भ्रष्ट देशों की सूची में 87 वें स्थान पर है भ्रष्ट देशों की सूची में भारत अफ्रीका एवं एशिया के कई देशो से भी नीचे पायदान पर है यह सब पिछले वर्षो भ्रष्टाचार में एक के बाद दूसरे बडे घोटाले सामने आने से है।

भ्रष्टाचार का संबंध आर्थिक सुधारो से है या याराना पूँजीवाद (रिश्तेदारो, चहेतो और करीबियो के एक छोटे से समूह का वैध-अवैध तरीको से लाभ पहुँचाने वाला पूँजीवाद) का नतीजा ।

आर्थिक सुधारों के बाद भ्रष्टाचार का भी उदारीकरण हो गया है। सर्वे की रिपोर्ट के आधार पर आजादी के बाद से आज तक जो कालाधन भारत से विदेशों में गया उसका 68% आर्थिक सुधारो के बाद का है। ग्लोबल फिनान्सियल इंटीग्रिटी (G.F.I) की रिपोर्ट अनुसार 1948 से 2008 तक अवैध तरीके से देश से लगभग 213 अरब डालर की रकम विदेशो में खासकर

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोतर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

आफशोर बैंकों में चला गया है। इन साठ वर्षो में भ्रष्टाचारियों ने कोई 432 अरब डालर की रकम विदेशों में कालाधन के रूप में भेज दी है। इस राशि का 68% अर्थात 314 अरब डालर आर्थिक सुधारो के शुरू होने के बाद गया है।

आर्थिक सुधारों के पहले जहाँ प्रति वर्ष औसतन 9.1% अवैध कालाधन विदेशो बैंको में जा रहा था वह सुधारों की शुरूआत के बाद प्रतिवर्ष औसतन 16.4 % की दर से जाने लगा।इस रिपोर्ट के अनुसार 2002 से 2008 के बीच औसतन हर साल 736 अरब रूपया (16 अरब डालर) प्रतिवर्ष कालाधन अवैध तरीके से देश से बाहर चला गया है।

जीएफआई रिपोर्ट के अनुसार देश के कुल जीडीपी में 50% कालेधन की अर्थव्यवस्था है कालेधन की अर्थव्यवस्था का बडा हिस्सा भ्रष्टाचार घोटाला सार्वजनिक सम्पदा की लूट तथा कर चोरी आती है।

आज माइनिंग लाइसेंस व पट्टों की मारामारी मची हुई है क्योंकि यह निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया जबकि संसाधन सीमितहै और इन संसाधनों को हासिल करने का सुविधा शुल्क भी बढ गया है।कई राज्यों में खनन माफिया ही सरकार चला रहे है यानि उदारीकरण के पश्चात् याराना पूँजीवाद फला फूला है।

लाइसेंस-कोटा-परमिट पर जब नियंत्रित व बंद अर्थव्यवस्था थी भ्रष्टाचार के दांव इतने ऊँचे नहीं थे बल्कि खुली अर्थव्यवस्था में भ्रष्टाचार के दांव पेच और ऊँचे हो गये। यह एक आम धारण बन चुकी है कि सत्ता के शीर्ष से लेकर सबसें निचले पायदान तक बिना 'कट' दिये या 'सुविधा शुल्क' चुकाए कोई काम नहीं होता ।

सार्वजनिक तौर पर यह धारणा होती जा रही है कि भ्रष्टाचार रूपी चिकनाई (ग्रीस) बिना गतिशीलता और बेहतर कार्यक्षमता नहीं हो सकती अर्थात विकास चाहिए तो भ्रष्टाचार सहने के लिए तैयार रहिये क्योंकि उसके बिना व्यवस्था काम ही नहीं करती है।

जब प्रधानमंत्री जीरो टोलरेंस की बात करते है विपक्षी नेता विदेशी बैंको से कालाधन वापिस लाने की बात करते है तथा मिडिया भ्रष्टाचार के मुद्दे उछालते है तो यह सब भ्रष्टाचार के सामने सफेद झूठ लगते है । भारत में भ्रष्टाचार के विरूद्ध जितने छापे पडते है जितने कानून बनते है। भ्रष्टाचार की रकम उसी अनुपात में और बढ जाती है।

संक्षेप में नव उदारवादी आर्थिक सुधारो से भ्रष्टाचार कम होने के स्थान पर और अधिक हो रहा है।उसका मूल कारण संसाधन (पूर्ति) तो सीमित है जबकि खुली अर्थव्यवस्था हो जाने से माँग बढ जाती है जिससे भ्रष्टाचार के दांव पेच और ऊँचे हो जाते है।

भ्रष्टाचार पर अंकुश -

1. वर्तमान परिपेक्ष्य में नागरिक समाज के साथ साथ न्यायिक सक्रियता और राजनैतिक पहलकदमियों से उम्मीद बँधी है कि भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाया जा सकता है।
2. सूचना के अधिकार 2005 अधिनियम द्वारा शासन को पारदर्शी बनाना
3. लोकपाल एवं लोकायुक्त का गठन करना जिससे जवाबदेही बढती जा रही है।
4. व्हिसल-ब्लोअर कानून से ईमानदार लोकसेवको को संरक्षण देने से विश्वास पैदा हुआ है।
5. सीटीजन चार्टर कानून के अन्तर्गत नागरिकों के सशक्तिकरण, शासन प्रषासन नागरिकों के प्रति जवाबदेही बनाने और लोक सेवक को सक्षम बनाने में मदद मिलेगी।
6. याराना पूँजीवाद से निपटने की व्यवस्था को मजबूत करना होगा। इस तर्ज पर भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अपने मंत्रियों व अधिकारियो से कहा है कि अपने रिश्तेदारो को निजी सहायक न बनाया जाय तथा ठेके भी रिश्तेदारो को न दिये जाये यह भ्रष्टाचार दूर करने का बहुत अच्छा कदम है आशा है मंजिल भी मिलेगी।
7. लोक सेवा गारंटी अधिनियम 2011 लागू किया गया।
8. चुनावी सुधारो और राजनैतिक दलों के लोकतंत्रीकरण को मजबूत किया जाय।
9. जनचेतना जागृत की जाये।
10. भ्रष्टाचार के विरूद्ध चलाये गये अभियान , छापे ,कानून इत्यादि का क्रियान्वयन सही तरीके से होना चाहिए अर्थात पारदर्शिता , जवाबदेही और कठोर दण्ड पर आधारित हों।

निष्कर्ष- नव उदारवादी आर्थिक सुधारों 1991 के लागू होने के पश्चात बढ़ते भ्रष्टाचार का मुख्य कारण खुली व अनियंत्रित अर्थ व्यवस्था है जिससे भ्रष्टाचार के दावपेच ऊँचे है यह केंसर रूपी बीमारी कि तरह फैलकर अर्थव्यवस्था को धूमिल करता है। इससे निपटने के लिए हमे याराना पूंजीवाद की व्यवस्था को खत्म करना है। और यह तभी संभव होगा जब हम सभी पारदर्षी, जवाबदेही एवं ईमानदारी से कार्य करेगे। आशा है कि भारत से भी भ्रष्टाचार कोसो दूर हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रतियोगिता दर्पण भारतीय अर्थव्यवस्था 2012 विशेषांक
2. योजना मार्च 2014
3. लोक प्रशासन के सिद्धांत - विष्णु भगवान एवं विद्या भूषण 2001
4. भारत में लोक प्रशासन - डॉ. रमेश दुबे एवं हरिशचन्द्र शर्मा 2007
5. भारतीय सरकार एवं राजनीति - डॉ. आर.एन. त्रिवेदी एवं एम.पी.राय 2011
6. भारतीय शासन एवं राजनीति - पुखराज जैन, बी.एल. फडिया 2000
7. भारतीय शासन एवं राजनीति बी.एल. फडिया 2010
8. मध्यप्रदेश शासन एवं राजनीति - रश्मि श्रीवास्तव 2008

****

बाल विकास में पालक की भूमिका

डॉ. बिन्दु श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – किसी भी विकासशील या विकसित देश के निर्माण में एक परिवार की महती भूमिका होती है क्योंकि परिवारों से मिलकर ही राष्ट्र का निर्माण होता है इसी तरह परिवार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग उस परिवार की सन्तान होती है बालकों के आचार, विचार, व्यवहार और संस्कार ही परिवार को समृद्ध और सुखी बनाते हैं अत: आवश्यक है कि समाज और देश की रीढ़ कहे जाने वाली नव पीढ़ी शिक्षा और संस्कारों से परिपूर्ण हो जो अपनी संस्कृति के भविष्य में श्रेष्ठ और सुदृढ़ संवाहक सिद्ध हो सके किन्तु यह दायित्व का निर्वाहन तभी भली भाँति हो सकेगा जब परिवार के पालक अपनी सन्तानों को इस योग्य बना सके एक बच्चा सर्वप्रथम अपनी माँ के गर्भ से ही संस्कार और शिक्षा लेना आरंभ कर देता है अत: माँ के आचार, विचार, व्यवहार का बच्चे पर तभी से प्रभाव पड़ना आरंभ हो जाता है जो लगभग माँ के जीवन-पर्यन्त तक चलना है जब बच्चा परिवार में जन्म ले लेता है तो समूचे परिवार का एवं परिजनों का उस पर प्रभाव पड़ना शुरू हो जाता है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि 4 से 5 वर्ष की आयु तक बच्चे का बौद्धिक विकास बहुत तेजी से होता है अत: इस आयु वर्ग में बालक का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है क्योंकि फ्रायड ने लिखा है – व्यक्ति की मनो विकृतियों के बीज अधिकतर उसके बाल्यकाल के तीखे अनुभवों से संबंधित होते हैं। अर्थात् पहले चार या पाँच वर्ष की आयु तक के कड़वे अनुभव जो बालक को घर के वातावरण से प्राप्त होते हैं वही उसके मानसिक द्वंदों का कारण है।

अध्ययन का उद्देश्य – इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बाल विकास में पालक की भूमिका का अध्ययन करता है।

परिकल्पना – बाल विकास में बालक-बालिकाओं की मनोदशा को जानकर पालक ही उसे सर्वोत्तम राह दिखाकर स्वस्थ मानसिकता प्रदान करने में अहम् भूमिका निभाते हैं।

बालक के विकास में पालक ही अहम् भूमिका होती है क्योंकि बालक की प्रथम पाठशाला उसका परिवार होता है उसके विकास पर पालक की गहरी छाप होती है। यही कारण है कि पालक के अपने बाल-बालिकाओं के दृष्टिकोण में विभिन्नता होने के कारण उसका प्रभाव भी बच्चे के मानसिक विकास एवं व्यवहार पर अलग-अलग दिखाई देता है। पालक के व्यवहार में विभिन्नता होने के कारण उन्हें Hkh वर्गीकृत किया गया है –

1. सुव्यवस्थित बच्चों में रुचि लेने वाले अभिभावक
2. बच्चों को सख्त नियंत्रण में रखने वाले अभिभावक (कठोर व्यवहार)
3. बच्चों के प्रति उदार दृष्टिकोण रखने वाले अभिभावक
4. बच्चों के विकास के प्रति चिंतित रहने वाले अभिभावक

उपरोक्त अभिभावकों के प्रकारों से बालक के संबंधों का घनिष्ठ संबंध होता है क्योंकि इन्हीं प्रकारों के कारण बालक कभी अत्यधिक सामाजिक मैत्रीपूर्ण स्वभाव वाला बनता है तो कभी शर्मीला या कम सामाजिक बनता है। तो कभी अभिभावकों का विरोध करने वाला बनता है क्योंकि बालक के लिए अभिभावक कुम्हार का काम करते हैं बालक उस कमजोर मिट्टी के समान होते हैं। जिसे चाहे जिस दिशा में मोड़ा जा सकता है। परिवार में उचित प्यार मिलता है तो उसका विकास संतुलित ढंग से हो सकता है। माता-पिता के आपसी संबंधों का भी बालक के विकास से सीधा संबंध होता है यदि माता-पिता के संबंध सुखद नहीं होंगे तो बच्चे के साथ भी उनके संबंध मधुर नहीं होंगे, घर का वातावरण मुख्य रूप से तीन बातों पर निर्भर करता है –

1. माता-पिता का परस्पर संबंध
2. माता-पिता का बच्चों के साथ संबंध
3. भाई बहनों का परस्पर संबंध

यही नहीं परिवार की आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियाँ भी बालक के मनोविकास के लिए उत्तरदायी होती है। परिवार में माता-पिता का भी अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। माताओं के स्वभाव में विभिन्नता के कारण बालक के स्वभाव में भी भिन्नता दिखाई देती है।

1. जो माताएं बच्चों से कम स्नेह करती हैं वहां पर बच्चे अधिक काल तक आश्रित भावना को प्रकट करते हैं।
2. जो माताएं अधिक सुरक्षा में रखती हैं बालकों के मन में अन्योश्रित भावना को बढ़ावा मिलता है।
3. जो माताएं बालक-बालिकाओं में भेद करती हैं या छोटे बड़े में भेद करती हैं उन बच्चों में आक्रामक भावनाएं उत्पन्न होती हैं।
4. जो माताएं बच्चों के प्रति सहानुभूति एवं प्रजातंत्रीय व्यवहार करती है उन बच्चों का मानसिक स्वास्थ्य एवं सम्पूर्ण विकास होता है।
5. जहाँ माताएं अपने बच्चों को बहुत अधिकार में रखती है उन बच्चों में अपने आप किसी काम को करने का उत्साह नहीं होता है, आलोचना के भय से।

इस प्रकार माताओं के स्वभाव व व्यवहार का बालक के जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है और उसी अनुरूप उसमें भावनाओं का विकास होता है। पिता के व्यवहार का भी बालक के मनोविकास व व्यवहार से गहरा संबंध होता है। पिता परिवार में न्यायाधीश की भूमिका अदा करता है, उसकी परिवार में उपस्थिति और अनुपस्थिति बालक के मन को प्रभावित करती है, पिता की अनुपस्थिति बच्चों के मन की भावनाओं को कमजोर बनाती हैं साथ ही वे विनम्र होते हैं और उनमें चिंता का भाव ज्यादा रहता है, माता के अलावा दूसरों से स्नेह या प्रेम नहीं होता है और जिनके पिता उपस्थित रहते हैं उनमें अधिक आक्रमणकारी भावनाओं का विकास होता है।

माता-पिता की बच्चों के प्रति सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाएं बालक के मस्तिष्क के चेतन एवं अचेतन दोनों पक्षों पर अपना प्रभाव डालती

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

हैं इसलिए माता-पिता का या अभिभावक का कर्त्तव्य है कि बालक के साथ मधुर संबंध स्थापित करें उनकी रुचियों और क्षमताओं को जाने तथा उचित दिशा में विकसित करें। बच्चे का शारीरिक एवं मानसिक विकास तभी होगा जबकि इस आधुनिकता व व्यस्तता के दौर में अभिभावक अपने बच्चे के विकास की ओर विशेष ध्यान दें तथा उसके मनोभावों को समझे। परिवार में बच्चों के क्रम में विभिन्नता होने के कारण भी उनके व्यवहार के कारण अभिभावक का व्यवहार स्वत: ही बदल जाता है। जैसे ज्येष्ठ पुत्र या पुत्री परिवार के उत्तरदायित्व का निर्वाह करें माता की अनुपस्थिति में, ऐसी अभिभावक की सोच रहती है। निचले एवं छोटे और इकलौती संतान के प्रति भी अभिभावक की धारणाएं अलग-अलग होती हैं।

अभिभावक के बालक के संबंधों के साथ में कुछ ऐसे तत्व होते हैं जो उनके संबंधों को निर्धारित करते हैं, वे इस प्रकार हैं -

1. माता पिता की अभिवृत्ति
2. माता पिता द्वारा अति संरक्षण
3. माता पिता द्वारा अनुचित अपेक्षायें
4. माता पिता द्वारा तिरस्कार
5. पुरस्कार
6. दण्ड
7. वंचित करना
8. अभिभावकों का पक्षपात
9. कठोर अनुशासन
10. गलत आदर्श
11. स्वीकृति
12. अत्यधिक छूट देना
13. जन्म क्रय
14. मगन परिवार

उपरोक्त तत्व अभिभावकीय व्यवहार में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं क्योंकि बालक नन्हें पौधे की कोमल टहनी की तरह होते हैं उसे इच्छानुसार मोड़ा जा सकता है परन्तु जब टहनी कड़ी या सख्त पड़ जाती हैं तो उसमें लोचकता समाप्त हो जाती है फिर मुड़ती नहीं है सीधे टूट जाती है। अत: माता पिता को अपने बालकों के विकास की जय यात्रा नन्हें बालकाल से ही करना चाहिए, उन्हें उचित प्यार, उचित संरक्षण और उचित मार्गदर्शन तथा अच्छे संस्कारों को पुष्पित एवं पल्लवित करना चाहिए ताकि बालक के संपूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण हो सके। इन सबके अभाव में बालक की मनोविकृतियों के पनप जाने का भय रहता है। अत: बालक में बाल मनोविकृतियों को रोकने एवं बालक के मनोविकास के लिए सुझाव निम्न हैं -

1. सर्वप्रथम तो माता-पिता के आपसी संबंधों का अच्छा होना नितांत जरूरी है, परिवार नामक संस्था इनके स्नेह प्रेमपूर्ण संबंधों पर आधारित है। संबंधों की मधुरता ही बालक के मनोविकास में सहायक होकर उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती है।
2. माता पिता का दृष्टिकोण सभी बच्चों के प्रति एक सा होना चाहिए एक के प्रति सकारात्मक और दूसरे के प्रति नकारात्मक नहीं होना चाहिए। बालक और बालिकाओं के प्रति भी भेदभाव की भावना नहीं होना चाहिए नहीं तो भाई बहिन में आपस में संबंधों में मधुरता नहीं होती।
3. माता पिता को बच्चों में निहित क्षमताओं के अनुसार ही उनसे अपेक्षाएं रखना चाहिए नहीं तो अभिभावक एवं बालक के संबंधों में तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है जिससे बालक का व्यवहार अभिभावक के प्रति नकारात्मक एवं परेशानी उत्पन्न करने वाला बन जाता है।
4. अभिभावकों को बालकों के विकास के संबंध में अपने आत्म विश्वास एवं आत्म निर्णय नहीं खोना चाहिए। आधुनिकता की दौड़ में कोई आत्म ग्लानि नहीं पनपने देना चाहिए क्योंकि वे ही बालक के आत्म सबल है।
5. माता पिता का भरपूर लाड़ प्यार बच्चे को मिलना चाहिए पिता की अपेक्षा माता का प्रभाव बच्च के मानसिक विकास एवं व्यवहार पर पड़ता है क्योंकि वह मां के साथ में अधिक समय बिताता है अत: माता का महत्व सभी की नजरों में अधिक होने के साथ ही साथ परिवार में पुरुष द्वारा उसे उचित मान्यता स्वतंत्रता एवं महत्व मिलना चाहिए ताकि वह अपने व्यवहार से बालक के मनोविकास का समुचित ध्यान कर सके। बालकों के बाल अपराध भी कहीं न कहीं अभिभावकीय व्यवहार में कमी के कारण पनपते हैं।
6. पालक को खुले विचारों का होना चाहिए आधुनिक परिवेश के अनुसार बालक को ढालना अपनी शिष्टिता और सभ्यता के बीज बालक में डालना, यथासम्भव सद् साहित्य पढ़ाना। बालक सुसंगत प्रदान करना, आधुनिक तकनीक के साथ प्राचीन परम्पराओं से भी अवगत कराना चाहिए।
7. कौतूक से भरी सहज क्रियाओं में अनुभूति के साथ बालक को निरन्तर प्रेरणा देते रहना चाहिए उसके आहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए बच्चों की नींद, खिलौने, भय से मुक्त, कल्पना शक्ति का विकास, बाल पुस्तकालय, टी.वी. देखने का समय निश्चित करना बाल रंगमंच की बातें, बाल फिल्में, दिखाना और कोई भी अपराध न परपने देना चाहिए।

उपरोक्त सुझावों के साथ आज वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महती आवश्यकता ये महसूस की जा रही है कि पालक अपने व्यवहार से बाल मनोविकृतियों को रोकने के लिए समसामयिक चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में बालक को सामर्थ्यवान बनाए ताकि देश को एक अच्छा नागरिक प्राप्त हो सके। समाज और देश की रीढ़ नयी पीढ़ी अर्थात् बाल वर्ग वह मेरुदण्ड है जो भावी प्रगति और विकास के संरचनात्मक ढाँचे को यथार्थ रूप देना है नव विचारों को मस्तिष्क धरा की उर्वर भूमि में कर ज्ञान विज्ञान और अनुसंधान की नई पौध विकसित करता है। इन सब को प्रदेयता में पालक ही अहम् भूमिका निभाते हैं। इसलिए बाल विकास में पालक का यथा- सर्वोपरि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 श्रीवास्तव डॉ. रामजी : आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान आर्टीकल, अभिभावक बालक संबंध डॉ. कृपा सिंह, पृष्ठ 532

2 मित्तल डॉ. श्रीमति संतोष : बाल मनोविज्ञान मित्तल डॉ. श्रीमति दीपशिखा, यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा.) लि., जयपुर, पृष्ठ 143

3 खान डॉ. बेंजामिन खान : बाल मनोविज्ञान कमल प्रकाशन इंदौर, पृष्ठ संख्या 197

4 गुप्त रामबाबू :बाल मनोविज्ञान रतन प्रकाशन मंदिर आगरा, पृष्ठ 383

5 समाचार पत्र दैनिक भास्कर, भोपाल मधुरिमा

6 गोस्वामी सुबुद्धि : बाल विकास की दशाएं, श्याम प्रकाशन, जयपुर, पृ. 65, 83

7 वाजपेयी सुमन : बाल विकास विश्व भारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. 51

भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था

रावेन्द्र सिंह *

शोध सारांश – आज तमाम चुनौतियों के बीच इसमें कोई दो राय नहीं है कि भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था विकास की नई शक्ति के रूप में उभरी है। गाँव लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर है और न केवल अपने लिए संसाधन जुटा रहे है बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। अगर यह कहा जाए कि आने वाले समय में विश्व मानचित्र पर भारतीय अर्थव्यवस्था के मजबूती से उभरने में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का ही हाथ होगा तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। भारतीय ग्रामीण बाजार भारतीय कार्पोरेट के लिए एक चमकता सितारा है, जिसमें लाभ की असीम संभावनाएं है।

आज गाँव लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर है और न केवल अपने लिए संसाधन जुटा रहे है बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। अगर यह कहा जाए कि आने वाले समय में विश्व मानचित्र पर भारतीय अर्थव्यवस्था के मजबूती से उभरने में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का ही हाथ होगा तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। भारतीय ग्रामीण बाजार भारतीय कार्पोरेट के लिए एक चमकता सितारा है, जिसमें लाभ की असीम संभावनाएं है।

प्रस्तावना – आज भारतीय अर्थव्यवस्था पर जैसे बादल मंडरा रहे हैं, उन्होंने भारत के उद्योग जगत को ग्रामीण बाजारों को गंभीरता से लेने को मजबूर कर दिया है। ऑटोमोबाइल और एफएमसीजी कंपनियों को अब समझ में आ गया है कि ग्रामीण बाजारों की ओर संजीदगी से देखने का यही सही वक्त है। अनुमानों के अनुसार अगले तीन वर्षों में देश में रोजमर्रा इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं (एफएमसीजी) के कुल इस्तेमाल में से 60 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण भारत से मिलेगा। एफएमसीजी के लिए ग्रामीण बाजारों में उपभोक्ता खर्च में 20 प्रतिशत की वृद्धि की गई है जो कि शहरों के लिए सिर्फ 17 प्रतिशत है। अप्रैल-सितम्बर 2008 की अवधि में देखे तो एसी नेल्सन के ऑकड़ों के मुताबिक स्किन क्रीम और लोशन बालों के तेल, टूथपेस्ट, टॉफी आदि उत्पादों की श्रेणियों में आकार और मूल्य लिहाज से बढ़त शहरी बाजारों के मुकाबले गॉवों में ज्यादा रही है। ऑटो सेक्टर में मारूति सुजुकी इंडिया, जनर्ल मोटर्स, हुंदई मोटर इंडिया जैसी कंपनियाँ खासकर अपने ग्रामीण परिचालन के लिए अपनी रणनीति को दोबारा बना रही है। अब उनका मुनाफा गांवों में होने वाली ब्रिक्री पर निर्भर हो चुका है। इसी तरह जीएम इंडिया की बिक्री में ग्रामीण उपभोक्ताओं का योगदान करीब 40-50 फीसदी है। एमएसईआई के कार्यकारी अधिकारी, मार्केटिंग एण्ड सेल्फ मयंक पारिख कहते हैं, यह तो सिर्फ हिमखण्ड की सतह है जो हम देख रहे हैं।

भारत गाँवों का देश है। आज भी देश की 70 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है। सरकार द्वारा ग्रामीण विकास पर बहुत जोर दिया जा रहा है। ग्रामीण उपभोक्ताओं के हाथों पर पैसे पहुँचाने की केन्द्र की योजना लंबी अवधि में भारत को समृद्ध बनाने में मदद करेगी। वित्त मंत्री पी चिदम्बरम ने इस साल के लिए ग्रामीण विकास पर 80194 करोड़ रूपये आवंटित किए है जो पिछले वर्ष (2012-13) की तुलना में 46 प्रतिशत ज्यादा है। 46 प्रतिशत की यह वृद्धि निश्चय ही उपभोग को बढ़ाकर वस्तुओं की माँग में तीव्र वृद्धि लाएगी। वर्ष 2013-14 के इस बजट में कृषि के लिए ऋण में पिछले वर्ष की तुलना में 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस 22 प्रतिशत की वृद्धि से कृषि में सुधार आएगा, कृषि उपज व उत्पादकता बढ़ेगी जिसके परिणामस्वरूप कृषको की क्रयशक्ति बढ़ेगी और यह क्रयशक्ति उपभोग को बढ़ाने में मदद करेगी। इस प्रकार सरकार विभिन्न योजनाओं के माध्यम से ग्रामीणों की क्रयशक्ति में वृद्धि कर रही है ताकि शहरी अर्थव्यवस्था के उपभोग की कमी को पूरा किया जा सके।

हाल ही में आर्थिक सर्वेक्षण 2012-13 से ज्ञात हुआ कि 2004-05 में ग्रामीण क्षेत्र में 42 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे थे और अब 2009-10 में 33.8 प्रतिशत लोग ही गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे है इस प्रकार गरीबी में 8 प्रतिशत की गिरावट आयी है। जबकि शहरी क्षेत्र में 2004-05 में 25.5 प्रतिशत और 2009-10 में 20.9 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे है अर्थात 2004-05 की तुलना में 2009-10 में गरीबी में 5 प्रतिशत की गिरावट आयी है। इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में शहरी क्षेत्र की तुलना में गरीबी में 3 प्रतिशत की अधिक गिरावट आई है। इस प्रकार गरीबी का घटना निश्चय ही ग्रामीण उपभोक्ताओं के क्रयशक्ति में वृद्धि और परिणामस्वरूप वस्तुओं की माँग में वृद्धि का संकेत है। ग्रामीण भारत के संबंध में कुल खपत व्यय के लिए लारेंज अनुपात 0.30 है जबकि शहरी भारत के संबंध में 0.37 है जो शहरी इलाकों में सापेक्षित रूप से अधिक असमानता को दर्शाता है। ग्रामीण क्षेत्र में असमानता कम होने से उपभोग को अधिक स्थिर माना जा सकता है जो बाजार को स्थायित्व प्रदान करेगा।

वित्त मंत्री द्वारा बजट पेश करने के तुरंत बाद ईटीनाउ द्वारा आयोजित एक पैनल डिस्कशन में एफएमसीजी दिग्गज यूनिलीवर के कंज्यूमर प्रोडक्ट्स (फूड्स, एचपीसी) मानविंदर सिंह बग्गा ने कहा कि सरकार ग्रामीण इलाके के माँग बढ़ाने पर ध्यान दे रही है। श्री बग्गा ने कहा कि ग्रामीण उपभोक्ताओं के हाथ पर पैसा पहुँचाने की केन्द्र की योजना लंबी अवधि में भारत को समृद्ध बनाने में मदद करेगी। आज देशी एवं विदेशी कंपनियों का झुकाव भारतीय ग्रामीण बाजारों की ओर हुआ है। ग्रामीण मार्केटिंग के स्पेस में सबसे पहले कदम रखने वाली कंपनियों में एगमार्ट के प्रदीप कश्यप कहते हैं, मंदी की वजह से गाँवों में खपत के रूझानों पर कोई असर नहीं पड़ा है। ग्रामीण भारत का बाजार अब भी बहुत आकर्षक है। ऐसा ही मानते है प्रदीप लोखंडे, जो मौजूदा वैश्विक मंदी के दौर को पूणे में अपनी कंपनी रूरल रिलेशंस के लिए और अपनी टीम के लिए सबसे बेहतर मानते है। उनकी टीम ने हाल ही में एक बहुत बड़ा अभियान चलाया है जिसके तहत उन्होंने दस राज्यों में 1800 फ्रैंचाइजी बनाकर रिलायंस मनी के वित्तीय उत्पादों की बिक्री की है। वह कहते है, पहले वित्तीय सेवा का बाजार सिर्फ शहरी क्षेत्रों तक सीमित था, लेकिन नगदी के लिहाज से देखें तो ग्रामीण उपभोक्ता की स्थिति शहरी

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

उपभोक्ताओं के मुकाबले काफी स्थिर है और वह बाजार में होने वाली हलचलों से मोटे तौर पर काफी सुरक्षित है। लोखंडे कहते हैं, अधिकतर शीर्ष कंपनियाँ आज गाँवों की जरूरतों और वहाँ रह रहे लोगों को समझने की कोशिश कर रही हैं। भारत में उपग्रह चैनलों के आने के साथ आज गाँवों का उपभोक्ता उतना ही महत्वपूर्ण हो गया है जितना शहरी उपभोक्ता है। आखिरकर, भारत में शहर सिर्फ 5000 ही है, लेकिन गाँवों की संख्या साढ़े छह लाख है। 2001 में जब हिन्दुस्तान लीवर ने अपने ग्रामीण मार्केटिंग अभियान शक्ति की शुरूआत की जिसके तहत 2000 से कम आबादी वाले गाँवों की कब्जाया जाना था, तो उसने मार्ट की मदद ली थी। कश्यप बताते है कि'हमने देशभर में फैले महिला स्वयं सहायता समूहों को लक्ष्य बनाने का फैसला किया जिन्हें लीवर के उत्पाद के वितरक के रूप में भूमिका निभानी थी। छोटे गाँवों में जोखिम मुक्त लघु उद्यमों का यह प्रयास दुनिया में अपने किस्म की पहली चीज थी जिसे पुरस्कार हासिल हुए। आज इस परियोजना के तहत 46000 गाँव देश भर में आते हैं।'

दोपहिया वाहन निर्माता कंपनी हीरो होंडा अपने हर गाँव हर आँगन कार्यक्रम का इस्तेमाल गाँवों में ग्राम पंचायत सदस्यों तक अपनी पहुँच बनाने के लिए कर रही है। कंपनी ने इसके लिए 500 के लगभग ग्रामीण बिक्री अधिकारियों का एक नेटवर्क तैयार किया हुआ है। कंपनी की कुल बिक्री का लगभग 40 फीसदी हिस्सा ग्रामीण बाजारों से आता है और कंपनी की योजना इस वर्ष के अंत तक इसे मजबूत करने की है जिसके लिए कंपनी अपनी पहुंच 25000 गाँवों तक बढ़ाएगी। दूसरी कंपनियाँ भी कुछ ऐसा ही कर रही है। मिसाल के तौर पर गोदरेज कंज्यूमर प्रोडक्ट्स जिसका साबुन गाँवों में सबसे अधिक लोकप्रिय है, की योजना अगले दो से तीन साल में अपनी पहुँच 17500 गाँवों से बढ़ाकर 50000 गाँवों तक करने की है। डाबर कंपनी ने डाबर आँवला केश तेल को पेश किया। कंपनी ने अपनी ग्रामीण बिक्री रणनीति के तहत सात राज्यों में ऐसे गाँवों में कवर किया है, जिनकी जनसंख्या 300 लोग तक है। यहाँ इस रणनीति के तहत कंपनी ने सौन्दर्य और कौशल प्रतियोगिता 'बनके दिखाओ रानी प्रतियोगिता' शुरू की है। ब्रांड एम्बेसडर रानी मुखर्जी के नाम पर शुरू इस गतिविधि में लोगों को एक इंटरेक्टिव प्लेटफार्म मुहैया कराया है और इसके विजेताओं को उद्यमी बनने का मौका मिला है। डाबर आँवला केश तेल में साल-दर-साल के आधार पर 20 प्रतिशत की विकास दर देखने को मिली है।

वर्तमान में डीकुपलिंग सिद्धान्त को अमरीकी मंदी के संभावित उपाय के रूप में देखा जा रहा है। इस सिद्धान्त के मुताबिक अब तक विश्व की अर्थव्यवस्था को दिशा देने वाली अमरीकी अर्थव्यवस्था के मंदी में चले जाने के पश्चात भारत एवं चीन की अर्थव्यवस्था विश्व की अर्थव्यवस्था को यहाँ से आगे ले जाएंगे। इस सिद्धान्त के पीछे तर्क यह है कि इन देशों के राष्ट्रीय आय में वृद्धि से प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई हैं और अमरीकी माँग में कमी की भरपाई इन देशों में बढ़ी माँग से की जा सकती है। लेकिन वास्तव में सच यह है कि वैश्विक मंदी को उबारने में चीन की तुलना में भारत अधिक कारगर साबित होगा क्योंकि चीन में वस्तु की मांग अधिक है तो वह उन वस्तुओं की पूर्ति भी काफी हद तक स्वयं कर लेता है जिससे वह विश्व के विकसित देशों की अतिरिक्त पूर्ति को खपा नहीं सकेगा लेकिन भारत में वस्तु की माँग में जो वृद्धि हुई है उसकी पूर्ति भारत बहुत ज्यादा नहीं कर सकता है और वह विकसित देशों की अतिरिक्त पूर्ति को खपाने में कारगर साबित होगा। अत: भारत विश्व अर्थव्यवस्था को मंदी से निकालने में अपनी महती भूमिका अदा करेगा। विश्व के विकसित देशों को भारत की ओर झुकाव इसी का संकेत है।

आज वैश्विक मंदी से कोई भी देश अछूता नहीं है किन्तु ऐसे में भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था न केवल इस मंदी से बेअसर ज्यों की त्यों चल रही है बल्कि और मजबूती से उभर रही है, इसका एक बड़ा कारण है ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कृषि और कुटीर उद्योगों पर टिका होना और साथ ही, ग्रामीणजन अभी तक क्रेडिट कार्ड और बंधकपत्र से भी अछूते रहे हैं। दूसरी ओर शहरी भारत इस मंदी से नहीं बच पाया किन्तु शहरी भारत पर नकारात्मक प्रभाव ग्रामीण क्षेत्र में विद्यमान सकारात्मक निष्पादन से नगण्य हो गया। यानी ग्रामीण अर्थव्यवस्था ने देश में स्थिति को सहज बना दिया। ग्रामीण अर्थव्यवस्था ने न केवल देश को मंदी के दौर से उबारा है बल्कि आर्थिक विश्लेषकों का तो यहाँ तक मानना है कि विश्व को मंदी के दौर से निकालने में भी भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। आज बहुराष्ट्रीय कंपिनयों को भी यह समझ में आ गया है कि भारतीय ग्रामीण बाजारों की ओर संजीदगी से देखने का यही सही वक्त है। अब वे ग्रामीण परिचालन के लिए अपनी रणनीति दोबारा बनाने की होड़ में जुटी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Kumar K. Phanindra & "Indian Rural Market-opportunities and challenges," Asian Journal of Marketing & management research vl.2, issue 2, feb. 2013 ISSN 2279 - 0667
2. Ramkrishnan Ruchika " Rural marketing in india : strategies and challenges," century publication new delhi, 2003
3. Kashyap, P. & Raut, S. " The Rural Marketing " Biztantra Publication New Delhi, 2006
4. Nabi, M.K. & Raut, K.C " Problems and Imperatives of Rural Maketing an india " Indian Journal of marketing, Feb-March, 16-24, 1995
5. Raja gopal, " Rural Marketing : Development, Policy, planning & Practice" Rawat Publication Jaipur, 1998
6. Rao, K.L.K. and Tagat, R.G. " Rural Marketing : A Development Approach " Vikalpa Publication New Delhi, 1985
7. Valayudhan, S.K. " Rural Marketing : Targeting the non-urban consumer" Response Publication New Delhi, 2002
8. Kumar, Sanal " Rural Marketing " Sage Publication New Delhi , 2002
9. Kelles Anita- Viitanen " New challenges and opportunities for Rural Development " Paper Presented at the IFAD work shop, 15 to 17 Nov. 2005
10. Goplaswamy, T.P." Rural Marketing " Second Edition Excell Books, 2003
11. कुमार योगेश, ' ग्रामीण क्षेत्र में प्रगतिशील अर्थव्यवस्था से बदलता परिवेश' आलेख, कुरूक्षेत्र, अक्टूबर 2009
12. झा रतीश कुमार, 'अमेरिकी मंदी और डीकपलिंग सिद्धान्त', आलेख, सिविल सर्विसेस क्रसनिकल, मार्च 2008
13. खुराना ललित 'संपादकीय' कुरूक्षेत्र, अक्टूबर 2009
14. वर्मा जयंत, 'वैश्विक वित्तीय संकट का रोजनामचा' नीतिमार्ग, दिसम्बर 2008
15. वर्मा जयंत 'वैश्विक आर्थिक संकट का भारत पर प्रभाव' नीतिमार्ग, 31 दिसम्बर 2008
16. भारत की जनगणना 2001
17. आर्थिक सर्वेक्षण 2012-13
18. 'भारत की अर्थव्यवस्था' वार्षिक विशेषांक प्रतियोगिता दर्पण 2012
19. दत्त सुन्दरम 'भारतीय अर्थव्यवस्था' एस चन्द्र एण्ड कंपनी नई दिल्ली, 2012

पंचायती राज : विसंगतियाँ एवं निदान

डॉ. संगीता मुकर्जी *

प्रस्तावना – स्थानीय स्वशासन लोकतंत्र की आत्मा है। विकेन्द्रीयकरण शासन को सर्वोत्तम शासन माना जाता है। ऐसे शासन में आम व्यक्ति अपने स्तर पर शासन में सहभागिता कर सकता है। भारत में स्थानीय स्वशासन के सबसे निचले स्तर पर पंचायती शासन व्यवस्था आती है। महात्मा गांधी पंचायती राज व्यवस्था के बड़े हिदायती रहे है उनका विचार था।

'पंचायती राज की स्थापना होने पर जनमत वह कार्य कर दिखाएगा जो हिंसा से नहीं हो सकता ये राजे, महाराजे, जमींदार और पूंजीपति उसी समय तक प्रभावशाली है जब तक कि जनसाधरण अपनी शक्ति से अपरिचित हैं जिस दिन लोग जमींदारी या पूंजीवाद की बुराइयों से असहयोग प्रारम्भ कर देंगे उसी दिन से उनकी समाप्ति की शुरुआत हो जायेगी।'

— महात्मा गांधी

प्रजातांत्रिक व्यवस्था का संचालन केन्द्र में बैठे 20 व्यक्तियों से नहीं वरन् प्रत्येक गाँव में निवास कर रहे ग्रामीणजनों द्वारा होगा।

विसंगतियाँ: निदान – लोकतंत्र का वास्तविक सार यह है कि एक निरीह से निरीह व्यक्ति को भी सत्ता में भागीदारी का अवसर प्राप्त हो। लेनिन, लिकंन, गाँधी तथा विश्व की अन्य मानवतावादी विभूतियाँ इस शासकीय सत्ता की स्त्रोत है और वही इससे लाभान्वित होती है, इसलिए उसकी प्रभुसत्ता तथा सर्वोच्चता आधुनिक राजनीतिक प्रणालियों का अनिवार्य तत्व है। यही कारण है कि हमारे संविधान निर्माताओं ने संविधान की रचना हम भारत के लोगों के आधार पर की है।

भारत की हजारों वर्ष पुरानी सभ्यता के इतिहास में ऐसी परम्पराऐं रही है जिस पर हमें सदा से गर्व रहा है। हमारे गाँवों में ऐसी संस्थाऐं पहले भी थी और अब भी है, जहाँ बुजुर्गों एवं समझदार व्यक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। लोग उनका आदर करते है और उन पर विश्वास करते हैं। वे सब मिलजुलकर महत्वपूर्ण मामलों को सुलझाते हैं। इन पंचों का निर्णय सभी को मान्य होते है। वर्षो के औपनिवेशिक शासन और अनुचित भूमि वितरण के ढाँचे के बावजूद पुराना पंचायती राज जीवित रहा। यह संभव इसलिए हुआ क्योंकि हमारी ग्रामीण जनता को अपने लोगों के स्वरूप चिन्तन और समस्याओं को सही निराकरण करने की क्षमता में पूर्ण आस्था थी। नि:संदेह समय के साथ-साथ इन पंचायतों में स्वार्थी तत्व घुस आए जिनका एक मात्र उद्देश्य अपना वर्चस्व स्थापित करना था। ऐसी स्थिति में समाज में बहुसंख्यक लोगों की भलाई के लिए किये जाने वाले कार्यों का क्षेत्र संकुचित होना स्वाभाविक था। पंचायती राज की स्थापना भारतीय लोकतंत्र की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज दोनों एक दुसरे के पर्यायवाची है। पंचायती राज व्यवस्था का तात्पर्य उस शासन से होता है, जिसका प्रबंध उस स्थान विशेष के निवासियों के द्वारा ही किया जाये। दूसरे शब्दों में स्थानीय या पंचायती राज व्यवस्था कहते है।

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण अथवा पंचायती राज संस्थाओं की योजना तीन स्तरों में प्रस्तुत की गई है –

(1) ग्राम स्तर, (2) ब्लाक स्तर, (3) जिला स्तर। वास्तव में इस त्रिकोणात्मक व्यवस्था द्वारा देश के ग्रामीण जीवन को एक चेतना सौंपने का भी प्रयास किया गया है, ताकि राष्ट्रीय जनतंत्र का आधार व्यापक और मजबूत बन सके। पंचायती राज का उद्देश्य प्रारम्भ से लेकर अंत तक विकास योजनाओं से संबंध करना और प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर जनता को सक्रिय रूप से भागीदार बनाना है।

पंचायती राज के पीछे जो विचारधारा निहित है वह यह है कि गाँवों के लोग अपने शासन का उत्तरदायित्व स्वयं संभालें यही एक महान आदर्श है जिसे प्राप्त किया जाना है। यह आवश्यक है कि गाँवों में रहने वाले लोग कृषि, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, सिंचाई, पशुपालन आदि से संबंधित विकास क्रियाओं में सक्रिय रूप से भाग ले। ग्रामीण लोग न केवल कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में भाग ही लें अपितु उन्हें यह अधिकार भी होना चाहिये कि वे अपनी आवश्यकता और अनिवार्यताओं के विषय में स्वयं निर्णय भी कर सके। लोगों में सामान्य प्रेरणा व उत्साह उत्पन्न करने का उपाय है सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना।

भारत में पंचायती राज की आवश्यकता एवं महत्व – भारत में पंचायते बहुत पुराने समय से विद्यमान थी, मगर वर्तमान पंचायती संस्थाऐं इस मायने में नयी है कि उसको काफी अधिकार, साधन और जिम्मेदारी सौंपी गई है। नाम पुराना है मगर पंचायते नयी हैं। स्वतंत्र भारत में सन् 1959 से 1964 तक के इनके कार्यकाल को उत्थान का काल कहा जा सकता है। उसके बाद पंचायतों की ओर या उनके चुनावों की ओर लम्बे समय तक कोई ध्यान नहीं दिया गया। सन् 1977 में अशोक मेहता समिति रिपोर्ट में इन संस्थाओं को नया रूप देने की सिफारिश भी की गई, किन्तु उन्हें क्रियान्वित नहीं किया जा सका। अत: 1983 के बाद पंचायती राज संस्थाओं का पुनरोदय प्रारम्भ होता है। संविधान के 73 वें संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को सांविधानिक मान्यता प्रदान की गई है, और धीरे-धीरे सभी राज्य अपने-अपने राज्यों में पंचायती राज की स्थापना करने के इच्छुक दिखायी दे रहे हैं। पंचायती राज हमारे लोकतंत्र के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। जो निम्न तथ्यों से स्पष्ट है –

1. भारत में स्वास्थ प्रजातांत्रिक परम्पराओं को स्थापित करने के लिए पंचायत व्यवस्था ठोस आधार प्रदान करती है। जिससे वे अपने ग्राम की समस्याओं से अवगत होते हैं, तथा उन्हें शीर्ष तक पहुँचाने में सहायता मिलती है। इसके माध्यम से शासन सत्ता जनता के हाथों में चली जाती है।
2. पंचायती राज व्यवस्था भारत का भावी नेतृत्व भी प्रदान करने में सहायक होती है। पंच व सरपंच ग्रामीण भारत की समस्याओं से अवगत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय कला व वाणिज्य महाविद्यालय, जिला सागर (म.प्र.) भारत

होते हैं, इस प्रकार ग्रामों में उचित नेतृत्व का निर्माण करने एवं विकास कार्यों में जनता की रूचि बढ़ाने में पंचायतों का प्रभावी योगदान रहता है।

3. स्थानीय समस्याओं को हल करने में पंचायती संस्थाऐं राज्य और केन्द्रीय सरकार के भार को हल्का करती है। उनके द्वारा ही शासकीय शक्तियों एवं कार्यों का विकेन्द्रीकरण किया जा सकता है। प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीयकरण की इस प्रक्रिया में शासकीय सत्ता गिनी-चुनी संस्थाऐं न रहकर गाँव की पंचायत के कार्यकर्ताओं के हाथों में पहुँच जाती है।
4. पंच, सरपंच एवं अन्य पदाधिकारी स्थानीय समाज और राजनीतिक व्यवस्था के बीच कड़ी है। इन स्थानीय पदाधिकारियों के बिना ऊपर से प्रारंभ किये हुए राष्ट्र निर्माण के क्रियाकलापों में चलन मुश्किल हो जाता है।
5. इन संस्थाओं के माध्यम से जनता शासन के करीब पहुँच जाती है। जनता और शासन में परस्पर एक दूसरे की कठिनाईयों को समझने की भावनाऐं पैदा होती हैं। इससे दोनों में परस्पर सहयोग बढ़ता है। जो ग्रामीण उत्थान के लिए परम आवश्यक हैं।

पंचायती राज की स्थापना के पीछे जो दो मूल उद्देश्य है वह है शासन जनता के हाथों में होना तथा ग्रामीण विकास को प्रोत्साहन देना है। आज भी भारत के अधिकांश गाँवों में जीवन की मूलभूत सुविधाओं का अभाव पाया जाता है, जैसे ग्रामीण स्वास्थ्य, ग्रामीण पेयजल व्यवस्था व ग्रामीण विद्युतीकरण आदि। ग्रामीण रोजगार की समस्या भी भारतीय ग्रामीण विकास में बाधक बनी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की नितान्त कमी है। कृषि क्षेत्र में भी कृषकों को वर्ष भर रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है। तथा कुटीर उद्योगों के समाप्त होने और वर्ष भर कृषि न होने से ग्रामीण रोजगार के तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं, पलायन की इस गम्भीर समस्या से ग्रामीण क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था डगमगा गयी है।

पंचायती राज लोकतंत्र का ही एक रूप है। जनता और सत्ता का आपसी समन्वय भी है। इसमें गाँव से दिल्ली तक के प्रशासन के सभी स्तरों पर जनता का अधिकार है। कर्त्तव्यों का भी बराबर बँटवारा है। वास्तव में पंचायती राज अथवा लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण हमारी प्राचीन पंचायतों का ही बढ़ा हुआ रूप है। पर आधुनिक युग के अनुरूप इसमें नये उद्देश्यों, नई शक्ति और नये तरीकों का समावेष कर दिया गया, 73 वें संविधान संशोधन के द्वारा ग्राम पंचायतों को अपने क्षेत्र के विकास के लिए अधिक अधिकार सौंपे गए हैं। लेकिन जिन उद्देश्यों को लेकर पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा तथा अधिकार प्रदान किया गया है। क्या वे उनको प्राप्त करने में सफल हों पाई हैं या जिस दृढ़ इच्छाशक्ति से स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्षों बाद इन संस्थाओं को पुन:जीवित करने का प्रयास किया गया है, क्या वह प्रयास फलीभूत हो पा रहा है।

जब हम इन प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करते हैं तो पाते हैं कि पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन में अनेकानेक कठिनाईयाँ आड़े आ रही हैं, जिसको दूर करना आवश्यक है। देखने में यह भी आ रहा है कि पंचायतें जो ग्राम विकास की महत्वपूर्ण कड़ी हैं, अपने आदर्शे रूप को ग्रहण नहीं कर पा रही है। इस प्रणाली में कई विसंगतियाँ उभर कर सामने आ रही है।

1. पंचायती राज की बागडोर संभाले हुए अधिकांश प्रतिनिधि अल्पशिक्षित या अशिक्षित हैं। साथी ही उन्हें पंचायती राज की रीति-नीति संबंधी पर्याप्त एवं समुचित प्रशिक्षण नहीं दिया गया, इसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि वे अपेक्षा के अनुरूप कार्य नहीं कर पा रहे हैं। अशिक्षा के साथ-साथ निर्धनता भी ग्रामीण लोगों को अपने सीमित दायरों से ऊपर नहीं उठने देती है, परिणामस्वरूप उनमें हमेशा आपसी वैमनस्य और विद्वेष भावना बनी रहती है।
2. पंचायती राज संस्थाओं को अधिकार वितरण प्रणाली भी अत्याधिक दोषपूर्ण है। वर्तमान प्रणाली में विकेन्द्रीकरण आवश्यकता से अधिक है। भारत जैसे बहुभाषी, बहुसंस्कृति, बहु राष्ट्रीयता वाले राष्ट्र में व्यवस्था के एकीकरण का मुख्य सूत्र केन्द्रीयकृत नीति निर्माण एवं नीति निर्देशन के विपरीत अत्याधिक विकेन्द्रीयकरण से विखंडन की स्थिति उत्पन्न ही करती है।
3. वित्तीय प्रणाली का त्रुटिपूर्ण होना भी एक समस्या है। पंचायतों को करारोपण के अधिकार दिए गए हैं। परन्तु कोई भी ग्राम पंचायत करारोपण करके अपने राजनैतिक अस्तित्व को खतरे में नही डाल सकती है और यदि करारोपण नही करती है तो वह वित्तीय रूप से अपंग हो जाती है। उसे हमेशा शासकीय अनुदानों पर ही निर्भर रहना पड़ता है।
4. पंचायती राज व्यवस्था की सफलता काफी हद तक इस बात पर भी निर्भर करती है कि शासकीय एवं अशासकीय निर्वाचित प्रतिनिधियों के मध्य किस प्रकार के संबंध विकसित होते हैं। प्राय: यह देखा गया है कि दोनों एक दूसरे को ठीक प्रकार से समझने की कोशिश भी नहीं करते। शासकीय कर्मचारियों जैसे विकासखंड अधिकारी इसमें ग्राम क्षेत्र के अशिक्षित निर्वाचित प्रतिनिधियों के साथ मिलकर काम करने की क्षमता एवं योग्यता का अभाव पाया जाता है। साथ ही निर्वाचित प्रतिनिधियों में दलबंदी, गुटबंदी एंव शासकीय अधिकारियों के ऊपर प्रभुत्व जमाने की भावनाएँ पायी जाती है।
5. इन संस्थाओं में निर्णय हमेशा राजनीतिक आधारों पर लिए जाते हैं। राजनीतिक लाभ के लिए महत्वपूर्ण निर्णयों को टालने अथवा उन्हें राजनीतिक रूप से जोड़ना आदि की प्रवृत्ति भी पंचायती राज संस्थाओं के क्रियान्वयन में संदेह उत्पन्न करती हैं।
6. प्राय: यह भी देखा गया है कि जो लोग ग्राम पंचायत के लिए सरपंच पद का चुनाव लड़ते हैं, एवं सरपंच बनकर आते हैं वे केवल निर्वाचित होने के लिए चुनाव लड़ते हैं। ऐसे लोग ग्रामीण विकास की समस्याओं को भली प्रकार नहीं समझ सकते। अत: उनमें पंचायतों को सौंपे गये कार्यों के प्रति उदासीनता ही देखने को मिलती है।
7. आरक्षण के आधार पर जिन पंचायतों में महिलाऐं पदासीन हुई हैं, वे या तो निरक्षर है या किसी सम्पन्न परिवार की बहु, पत्नी या माँ है। इन अधिकांश महिला पंच सरपंचों को अपने दायित्वों का पालन करने का मौका ही नहीं मिलता बल्कि उनके पतियों द्वारा या अन्य पुरूष सदस्यों के माध्यम से दायित्वों को पूरा किया जाता है जो किसी भी लोकतंत्र के लिए उचित नहीं कही जा सकती है।

निदान –इन विसंगतियों के साथ-साथ अन्य कई प्रकार की खामियाँ भी हमें इन संस्थाओं में देखने को मिलती हैं। इन विसंगतियों को दूर करना भी आवश्यक है जिससे हमारा यह प्रयोग एक प्रयोग तक सीमित न रहे बल्कि हमारा लोकतंत्र दुनिया में एक प्रतीक बन सके।

1. सर्वप्रथम हमारे पंचायतों में चुने हुए प्रतिनिधियों, शासकीय अधिकारियों कर्मचारियों को प्रभावी तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाये। पंचायती राज व्यवस्था को उचित प्रभावी तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण पंचायती राज व्यवस्था को उचित प्रभावी तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण

पंचायती राज व्यवस्था के सफल तथा सुचारू संचालन की सर्वप्रमुख आवश्यकता है। क्योंकि सौंपे गए कार्यों का यथोचित निर्वहन किस प्रकार किया जाना है। इसकी जानकारी, कार्यप्रणाली आदि बातों का निर्वाचित प्रतिनिधियों को ठीक-ठीक ज्ञान होना जरूरी है। इनमें से कई प्रतिनिधि विशेषकर महिलाएँ तथा अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़े वर्ग के कई सदस्य पहली बार पंचायतों में चुने जाते है, उन्हें प्रशिक्षण दिया जाना अनिवार्य है।

2. हमारे अधिकांश निर्वाचित जन प्रतिनिधि या तो कम पढ़े लिखे हैं या तो अशिक्षित हैं, ऐसी स्थिति में उनके साक्षरता तथा शिक्षा का भी प्रयास जरूरी है तथा उन्हें जो प्रशिक्षण दिया जाये वह व्यावहारिक हो अर्थात् बोलचाल की भाषा में हो, जिससे वे समझ सके।
3. वित्तीय समस्याओं को हल करने के लिए विभिन्न स्तरों पर कार्यों का उचित बँटबारा किया जाए। जितना उनके वित्तीय अधिकार अनुमति देते हैं, उतना वित्त उन्हें दिया जाये। पंचायतों को जो कर, फीस, उपकर आदि लगाने है, उनकी सूची काफी लम्बी है, लेकिन सूची में सभी कर, फीस, उपकर अनिवार्य नहीं है, करों के अनिवार्य न होने के कारण ही पंचायतें इन्हें नहीं लगाती, 73 वें संविधान संशोधन के बाद भी स्थिति में कोई सुधार नहीं आया। अत: इन करों को लगाने में अनिवार्य किया जाये। जिससे पंचायतों की वित्तीय स्थिति सक्षम हो।
4. पंचायतों द्वारा ग्रामीण बंजर भूमि विकास, वृक्षारोपण, सम्पर्क मार्ग के निर्माण, प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था, प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम ग्रामीण स्वच्छता आदि के कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाये जा सकते हैं इसके लिए उन्हें समुचित अधिकार व साधन दिये जायें।
5. लोगों की आम समस्याओं को हल करने के लिए पंचायतों को अधिकार और साधन दिए जाऐ। लोगों की अधिक से अधिक स्थानीय समस्याऐं पंचायत के दायरे में लायी जाए ताकि लोग अपनी तकलीफों को दूर करा सके तथा समस्याओं को हल कर सकें।
6. पंचायती राज की कार्यप्रणाली में बहुत से दोषों का उद्घाटन हुआ है। डॉ. भाम्मरी ने लिखा है कि पंचायत राज के फलस्वरूप गाँवों में दलबंदी तथा गुटबंदी पर आधारित राजनीतिक गतिविधियाँ बढ़ी हैं। पंचायत चुनावों के कारण ग्रामीण समाज के विभिन्न वर्गों में एक प्रकार का शीत युद्ध का वातावरण विकसित हो गया है।

यह सच है कि संविधान संषोधन के बाद से ग्राम पंचायतों को शक्ति सम्पन्न बनाया गया। ग्राम पंचायतों को यह अधिकार दिया गया कि वे अपने-अपने क्षेत्र में विकास की योजनाएँ बनाएँगी। आरक्षण से महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। तथा महिला पंच अब स्वतंत्र होकर बैठकों में भागीदारी देने लगी हैं। मध्यप्रदेश, केरल, उत्तार प्रदेश, बिहार, राजस्थान और झारखंड सहित कई प्रदेशों में महिला पंचायतों ने विकास के नये आयाम दिए हैं। पंचायती व्यवस्था अपनी कमियों के बावजूद ग्रामीणों की दिनचर्या का हिस्सा बनती जा रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाम्मरी चन्द्रप्रकाश, लोकप्रशासन जयप्रकाश नाथ एण्ड कंपनी 144 सुभाष बाजालेख।
2. फड़िया व जैन, भारतीय शासन व राजनीति साहित्य भवन आगरा।
3. शर्मा हरिशचन्द्र, भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो।
4. कोठारी रजनी, भारत में राजनीति।
5. शर्मा एम.पी., लोकल सेल्फ गवर्नमेंट इन इण्डिया।

****

महिला विकास एवं शिक्षा

डॉ. ज्योति मार्टिन *

शोध सारांश – विकास वह व्यापक शब्द है जिसके अंतर्गत सामुदायिक जीवन के समस्त क्षेत्रों के समस्त पहलुओं का समावेश हो जाता है। विकास वह दशा है जिसे लोगों के जीवन की परिवर्तन प्रक्रिया में उनके कल्याण का उच्चतर जीवन स्तर आदि उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयुक्त किया जाता है। यह एक ऐसी बहुआयामी प्रक्रिया है जो प्रजातांत्रिक विकासशील राष्ट्र के लोगों की आशा आकांक्षाओं से संबंध होती है अर्थात विकास का तात्पर्य सदैव समाज के द्वारा उनकी सांस्कृतिक धरोहर व प्रतिमानों व दूसरों की रूचियों को नष्ट किये बिना ही उच्चता की ओर परिवर्तन से है।

प्रस्तावना – महिला विकास का तात्पर्य महिलाओं के माध्यम से महिला के जीवन पर पड़ने वाले वास्तविक दृश्य तथा अदृश्य प्रभावों से लिया जा सकता है। महिला विकास के प्रमुख मापक है महिलाओं के प्रति समाज के दृष्टिकोण में परिर्वतन, महिलाओं में स्वयं की स्थिति में सुधार व विकास हेतु चेतना जागृत होना, उनका स्वयं के जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण, उनकी साक्षरता, स्वास्थ्य, पोषण, रोजगार, शिक्षण, प्रशिक्षण, विवाह के प्रति दृष्टिकोण, उनकी विचारधारा, विभिन्न अंधविश्वासों, परंपराओं के प्रति भावनाओं में परिवर्तन, राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में रूचि का प्रादुर्भाव, स्वयं को अबला के स्थान पर सबला समझ पाने तथा शोषण के विरूद्ध आवाज उठाने की प्रवृत्ति का बीजारोपण, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हर पहलू के प्रति उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा उनकी जागरूकता के कारण समाज की अनेक विकारपूर्ण स्थितियों को निराकरण करके स्वयं को महत्वपूर्ण समझे जाने की भावना जागृत कर उनकी आत्मचेतना को झकझोरती हुए उन्हें आत्मनिर्भर होने व स्वावलंबी बनने की प्रेरणा देती है। जो किसी भी पक्ष में विकास हेतु अत्यंत आवश्यक है।

यद्यपि मानव समाज महिला व पुरूष दोनों की सम्मिलित रचना है व समाज के ढांचे को संवारने में दोनो ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। सिर्फ जैविक आधार पर अंतर होने के कारण महिलाओं को अत्यंत निकृष्ट माना गया है। केवल कुछ मातृसत्तात्मक समाजो में ही महिलाएं पुरूषों के समान सामाजिक स्थिति की भागीदार होती हैं तथा स्वंतत्रतापूर्वक उच्च सांस्कृतिक मानों को प्रभावित करती हैं परंतु उनकी संख्या बहुत ही कम होती है किंतु वास्तविकता यह है कि समाज के 50 प्रतिशत सदस्यों को पीछे धकेल कर राष्ट्र की समृद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करना असंभव है। महिलाओं को जागरूक एवं शिक्षित करके ही राष्ट्रीय विकास के लक्ष्य व सभ्य समाज की स्थापना करने के लिये शिक्षा को आवश्यक साधन के रूप में अपनाना होगा। महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिये स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है – 'पहले स्त्रियों को शिक्षित करो, फिर वे तुम्हें बतायेगी कि उनके लिये क्या सही है और क्या गलत, तुम कौन होते हो। उनके लिये नीति निर्धारण करने वाले।' अत: शिक्षा की अवस्थाऐं किसी देश के विकास में स्थिति को प्रकट करती हैं। एक देश में अशिक्षित एवं अज्ञानी लोगों की संख्या के आधार पर ही उसकी विकसित या अविकसित अवस्था का ज्ञान किया जा सकता है। शिक्षा को परिभाषित करते हुये **फिलिप्स** ने लिखा **है** शिक्षा वह संस्था है जिसका केंद्रीय तत्व ज्ञान का संग्रह है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव में उन गुणों का विकास किया जाता है जिसके द्वारा वह सामाजिक व भौतिक पर्यावरण से अनुकूलन करके अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। शिक्षा मानव समाज के लिये सतत् क्रिया और आधार रही है जो लोगों की बदलती परिस्थितियों के अनुरूप बनने के लिये लचीलापन प्रदान करती हैं और सामाजिक विकास के लिये प्रेरित करती है तथा उसमें योगदान देने के योग्य बनाती है। राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया में शिक्षा प्रणाली को अपनी भूमिका कारगर ढंग से निभा सकने के योग्य बनाने के लिये अनिवार्य है कि सभी लोग शिक्षा का लाभ उठा सके। इसके लिये आवश्यक है कि लोगों को शैक्षिक उपलब्धियों का स्तर महिलाओं और पुरूषों में अधिक विषम न हो।

विभिन्न कालों में भारतीय महिलाओं का इतिहास –

1. **वैदिक काल –** वैदिक युग हिन्दू समाज का स्वर्ण युग था व नारी प्रत्येक पग पर पुरूष की सहभागिनी हुआ करती थी। उसे शिक्षा प्राप्त करने व वेद पढ़ने का अधिकार प्राप्त था। वे सामाजिक नीतियों के निर्धारण नियंत्रण व संचालन में महत्वपूर्ण भूमिकायें निभाती थी। परिस्थितिकी तथा समाज विज्ञान, गणित, मानवीय विज्ञानों में भी निपुण थी। घोषा, लोपामुद्रा, विश्ववारा, माण्डवी, मैत्री आदि को चमकता हुआ नक्षत्र कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

2. **उत्तरवैदिक काल –** उत्तर वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आने लगी महिलाओं के धार्मिक अधिकार सीमित हो गये। बाल–विवाह का प्रचलन तथा विधवा पुनर्विवाह पर रोक इसी काल में प्रारंभ हुई। मनु और यारावल स्मृति में पतिव्रता, धर्म और पतिपरमेश्वर की परिकल्पनाओं को साकार रूप प्रदान किया गया तथा पिंडदान, कर्मकांड में पुरूषों की कामना की गई।

3. **बौद्ध काल –** इस काल में महात्मा बुद्ध ने महिलाओं को मठ में प्रवेश करने की अनुमति दी जिसमें स्त्रियाँ धर्म और दर्शन का अध्ययन करती थी जिसमें महिला शिक्षा को एक नया आयाम दिया परंतु यह शिक्षा भी केवल कुलीन घरानों की महिलाओं तक ही सीमित रही।

4. **मध्यकाल –** मुस्लिम शासन काल में महिलाओं के अधिकार छीनकर घर की चार दीवारी के भीतर डाल दिया गया। इस समय पर्दा प्रथा के कारण महिलाओं की शिक्षा प्राय: लुप्त हो गई केवल कुछ कुलीन तथा उच्च घरानों की महिलायें घर पर शिक्षा ग्रहण करती थी जिसमें धर्म तथा दर्शन के अतिरिक्त सैन्य संचालन, युद्ध करना, अश्वारोहण तथा धनुर्विद्या की शिक्षा प्राप्त करती थी जिनमें रजिया बेगम, नूरजहाँ, जहाँआरा, मीराबाई, रानी पद्मिनी आदि प्रमुख हैं।

5. **ब्रिटिश काल –** अंग्रेजों के भारत आगमन तथा उनके अंग्रेजी शिक्षा के प्रारंभ का समाज के विचारों, मनोवृत्तियों व मूल्यों पर गहरा प्रभाव पड़ा। स्त्री और पुरूष की समानता को महत्व दिया जाने लगा। संवैधानिक सुधारों से महिलाओं को मताधिकार व राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुआ। ब्रिटिश महिला श्रीमति ऐनीबेसेंट ने 'थियोसोफिकल सोसायटी' की स्थापना कर स्त्री शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह तथा बाल–विवाह समाप्त करने पर बल दिया। सन 1904 में लार्डकर्जन ने अपनी नीति में स्त्री शिक्षा पर अधिक बल तथा व्यय करने के

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, ढ़ाना, सागर (म.प्र.) भारत

लिये सरकार का ध्यान आकृष्ट किया। इसके अलावा महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद आदि ने भी स्त्री शिक्षा पर बल दिया ।

6. आधुनिक काल – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 के अनुसार स्त्री और पुरूष को समान अधिकार प्राप्त है। आज विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिये उनका प्रतिनिधित्व आरक्षित किया गया है जैसे – पंचायती राज, संसद, विधानसभा, सरकारी नौकरियों में आरक्षण आदि जिसके कारण शिक्षित महिलाओं में नई चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय करने में बहुत मदद मिली। महिलाएं अपने स्थिति व अपने अधिकारों के विषय सचेत होने लगी। इसी चेतना ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरूष के साथ समानता के अधिकारों की मांग करने को प्रेरित किया। भारत में जैसा कि ए.आर. देसाई ने एक आलेख में कहा है – 'भारतीय महिलाओं में नई संवेदना व चेतना का विकास हो रहा है जिससे अब उसे अधिक समय तक उन पारिवारिक, संस्थागत, राजनैतिक और सांस्कृतिक मानदंडों की घुटन में नहीं रहना पड़ेगा जिनके कारण उसकी स्थिति सदैव अपमानजनक रही है।'

महिला शिक्षा, समाज के बदलते हुए मूल्यों तथा आर्थिक स्वावलम्बन ने जहां उन्हें आर्थिक व राजनैतिक अधिकारों के प्रति सजग बनाया है । सामाजिक चेतना जागृत करने में योगदान दिया है वही आजकल महिलाओं ने नवीन भूमिकाएं ग्रहण की है। और प्रत्येक क्षेत्र में बदली हुई उनकी महत्वपूर्ण भूमिकाओं के फलस्वरूप ही विश्वमंच पर महिलाओं की स्थिति, प्रभाव, आर्थिक, वैज्ञानिक व अन्य भूमिकाओं संबंधी अध्ययनों व अनुसंधानों में निरंतर वृद्धि हुई हैं। विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संयुक्त राष्ट्र संबंधी घोषणा पत्रों के अन्तर्गत महिलाओं की भूमिका में विचारों की क्रान्ति को प्रतिबिम्बित किया है। संयुक्त राष्ट्र संघ के सुझाव पर सन् 1975 का वर्ष 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' के रूप में मनाया गया जिससे महिलाओं के पिछड़ेपन को दृष्टिगत रखते हुए उनके उत्थान की योजनाएं बनाने तथा उनकी चेतना के नये क्षितिजों की खोज पर विचार किया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला विकास संबंधी बढ़ते हुए प्रयासों को दृष्टिगत रखते हुए भारत में भी महिला जागृति व उनके विकास को सर्वोपरि महत्व दिया गया। सभी स्तरों पर उन्हें आत्मनिर्भर एवं प्रगतिशील बनाने के लिये चर्चाएं, सम्मेलन का आयोजन किया गया। देश में महिला एवं बाल विकास योजनाएं तैयार की गई।

जैसे जैसे मानवीय क्रिया-कलापों में वृद्धि हुई जीवन की जटिलताएं बढ़ी ज्ञान-विज्ञान की उन्नति हुई और मानव विज्ञान की उन्नति के शिखर पर पहुंच गया, शिक्षा की आवश्यकता बलवती होती गई। वर्तमान में महिलाएं शिक्षा के क्षेत्र में अपना परचंम लहरा रही है। अपनी उच्च शिक्षा में उत्तम प्रदर्शन के कारण भारत की लाखों महिलाएं विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में उच्च पदो पर आसीन है वर्तमान में नारियों ने नई चुनौतियों को स्वीकार किया है। उच्च शिक्षा में पारंगत होकर घर, परिवार, समाज, देश एवं विश्व के लिये अपने कार्य क्षेत्र का विस्तार कर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी वरीयता सिद्ध की है। ग्रामीण क्षेत्र की लड़कियां भी उच्च शिक्षा प्राप्त कर राष्ट्रीय एवं विदेशी कम्पनियों में उच्च पदों पर आसीन होकर ख्याति अर्जित कर रही है। हमारे देश की महिलाएं प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति करने के लिये दृढ़ संकल्प है।

इन सबके बाबजूद अधिकांश महिलाएं पीछे रह गई है । नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था होने पर भी वे साक्षर तक नहीं हो पाती । केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाएं, कार्यक्रम, नीतियों के बाद भी अधिकांश महिलाएं लाभ नहीं ले पाती है। शिक्षा की दृष्टि से परिवार में कभी विचार भी किया जाता है तो प्रथम अवसर लड़कों को दिया जाता है और महिला इच्छुक होते हुए भी शिक्षा से वंचित हो जाती है। यही कारण है कि महिला जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में शोषण व अत्याचारों की शिकार हुई है यदि गहराई से इस शोषण, दमन व अत्याचार के कारणों का विश्लेषण किया जाए तो समाज में महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति ही इसके लिए जिम्मेदार है । भारत में शिक्षा के क्षेत्र में पुरूष व महिलाओं के बीच विभेदीकरण बढ़ता जा रहा है यदि महिलाओं की साक्षरता दर की बात करे तो स्थिति निश्चित रूप से चुनौतीपूर्ण है। सन् 1991 में पुरूषों की साक्षरता दर 63.86 प्रतिशत तथा महिलाओं की साक्षरता दर 39.42 प्रतिशत था जो निरंतर बढ़ते हुए 2011 में पुरूष साक्षरता दर 82.14 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 65.46 हो गया । महिलाओं की साक्षरता में सन् 1951 से सन् 2011 तक सात गुणा तक बढ़ोत्तरी हुई है । महिलाओं की साक्षरता में वृद्धि होने के कारण पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या में भी वृद्धि हुई है और लिंगानुपात सन् 2011 की जनगणना के अनुसार 1000 पुरूषों पर महिलाओं की संख्या 933 से बढ़कर 940 हो गयी है इस प्रकार एक ओर जहां साक्षरता दर में वृद्धि हो रही है वही महिलाओं की निरक्षरता दर में भी वृद्धि हुई है। भारत में साक्षरता का विकास तथा वर्तमान में स्थिति जैसा कि सारणी से स्पष्ट है।

विभिन्न दशकों में महिला/पुरूष साक्षरता दर

क्रम	जनगणना वर्ष	कुल साक्षरता दर	पुरूष साक्षरता दर	महिला साक्षरता दर
1.	1901	5.35	9.83	0.60
2.	1911	5.92	10.56	1.05
3.	1921	7.16	12.21	1.81
4.	1931	9.50	15.59	2.93
5.	1941	16.10	24.90	7.30
6.	1951	16.67	24.95	7.93
7.	1961	24.02	34.44	12.95
8.	1971	29.45	39.45	18.69
9.	1981	43.56	56.37	29.75
10.	1991	52.11	63.86	39.42
11.	2001	64.8	75.2	53.6
12.	2011	74.04	82.14	65.46

विभिन्न दशकों में महिला/पुरूष साक्षरता दर सारिणी से स्पष्ट है कि साक्षरता दरों में वृद्धि के बाबजूद महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति में निरंतर गिरावट आई है महिलाओं में शिक्षा के अभाव का तात्पर्य उसमें आत्म निर्भरता तथा आत्म विश्वास की कमी है जिसके कारण वह अपनी समस्याओं का स्वत: ही समाधान करने में सक्षम नहीं है। महिलायें स्वयं भी भावनात्मकता से परिपूर्ण होने के कारण पुरूष वर्ग की स्थिति को ही दृढ़ करने का प्रयास करती हैं तथा स्वयं को नजर अंदाज कर देती हैं । महिलाओं की स्थिति हर क्षेत्र में द्वितीय श्रेणी के नागरिक की है । अत: भारत सरकार द्वारा उनके विकास हेतु अनेक महिला विकास कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं । जिसके अंतर्गत मुख्य लक्ष्य महिला की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में एक परिवर्तन लाने के क्रम में महिलाओं को सूचना प्रसारण, शिक्षा व प्रशिक्षण तथा सामूहिक कार्य के माध्यम से सशक्त करना है । राष्ट्रीय महिला आयोग सन् 1992 तथा कई स्वेच्छिक संगठन बनाये गये। अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं ने देश में महिलाओं हेतु कल्याणकारी विकास सेवाओं को व्यवस्थित करने का कार्य अपने अधीन में ले रखा है । भारत में नीतियों का इस प्रकार निर्धारण करने का प्रयास किया जा रहा है कि महिलाएं आत्म जागृत होकर स्वयं की स्थिति को सुधारने तथा भावी पीढ़ी व राष्ट्र को विकास की ओर पहुंचाने में पूर्ण सहयोग प्रदान कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. आशारानी-महिला विकास कार्यक्रम-इनाश्री पब्लिशर्स, जयपुर-1999
2. डी.सी.पंथ-भारत में ग्रामीण विकास-कॉलेज बुक, जयपुर
3. नारी सशक्तिकरण-हरिदास शेण्डे-ग्रन्थ विकास, जयपुर-2004
4. www.indianwomenhusorrived.blogspot.in
5. Internet

लोकतंत्र में बढ़ता भ्रष्टाचार - एक चुनौती

डॉ. अंशु सोनी *

प्रस्तावना – भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निहित शब्द समानता, भातृत्व, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के सिद्धांत भारत को एक लोकतांत्रिक देश के रूप में स्थापित करते हैं। लोकतंत्र हमारे राष्ट्र की नींव है। लोकतंत्र प्रत्येक व्यक्ति को संसार की अनुपम वस्तु मानता है। उसके अनुसार मनुष्य स्वतंत्र पैदा होता है और स्वतंत्र रहना चाहता है अत: उसे अपना विकास करने, विचार करने और विचार अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। लोकतंत्र मनुष्य में जाति, धर्म, लिंग, अर्थ और स्थान आदि किसी भी आधार पर बल देता है। परंतु समान अधिकार के साथ-साथ उससे समान कर्तव्यों के पालन की भी अपेक्षा करता है। लोकतंत्र सह अस्तित्व में विश्वास करता है। इसके अनुसार संसार की किसी भी समस्या का हल हिंसा एवं युद्ध द्वारा नहीं अपितु सौहार्दपूर्ण विचार-विमर्श द्वारा होना चाहिए।

लोकतंत्र के इतिहास पर नजर दौड़ाने पर हमें प्राप्त होता है कि भारत में लोकतंत्र का जन्म 26 जनवरी 1950 ई. में हुआ। इस लोकतंत्र की प्राप्ति के लिए भारत ने कई शताब्दी तक विदेशी शासकों से संघर्ष किया, जन-जागरूकता अभियान चलाया एवं लोगों को अपने अधिकारों की रक्षा के लिए आगे आने का संदेश दिया। पश्चिम में जनतंत्र का उदय महान विचारक रूसों के क्रांतिकारी विचारों के परिणामस्वरूप हुआ। रूसों ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक द सोशल कान्ट्रक्ट (The Social Contract) के प्रथम वाक्य में ही नवचेतना का स्वर भर दिया - 'मनुष्य स्वतंत्र रूप से जन्म लेता है किंतु यह सर्वत्र दासता की बेड़ियों में जकड़ा रहता है।'1 (Man is born free, but every where he is in chains - Rousseou) कहकर उसने जनता को उठ खड़े होने का परामर्श दिया। शिक्षा के लोकतंत्रीय सिद्धांतों का प्रयोग कुछ बाद में प्रारंभ हुआ। इस दिशा में कार्य करने का सर्वाधिक श्रेय प्रसिद्ध अमेरिका शिक्षा शास्त्री जॉन डीवी को है। डीवी की पुस्तक 'जनतंत्र और शिक्षा' प्लेटो की 'रिपब्लिक' और रूसो की 'एमील' शिक्षा के जनतंत्रीय सिद्धांतों पर आधारित उच्च कोटि की पुस्तक है। डीवी ने इस बात पर जोर दिया है कि जनतंत्र को केवल शासन पद्धति नहीं समझना चाहिए। वस्तुत: जनतंत्र जीवन पद्धति है। डीवी के लिए लोकतंत्र मूलत: सामूहिक जीवन की शैली अथवा विचारों तथा अनुभवों के आदान-प्रदान की शैली है।

'लोकतंत्र जनता का जनता के लिऐ जनता के द्वारा शासन है।' देश को उन्नतिशील बनाना और नागरिकों को खुशहाली प्रदान करना इस लक्ष्य के ताने बाने पर कानून का निर्माण किया जाता है पर हमारे यहाँ कानून बनाते समय गंभीर भूले रह गईं। फलस्वरूप लिखित कानूनों के साथ उतने ही शक्तिशाली अलिखित कानूनों ने भी जन्म ले लिया और दोनों ने मिलकर अपनी एक स्वतंत्र सरकार बना ली इस साझा सरकार की कमान क्रमश: उन लोगों के हाथ में है जो जनता को हर भूल के लिए सजा देने में विश्वास करते हैं और सत्तारूढ़ व्यक्तियों प्रशासनिक अधिकारियों और सरकारी कर्मचारियों की बड़ी से बड़ी भूल को भी नजरअंदाज कर देना देशसेवा मानते हैं। हालही में प्रकाशित एक समाचार में था कि सभी उच्च न्यायालयों में कुल मिलाकर 50 लाख से ऊपर अपीले बिना निर्णय के पड़ी हैं।

यह समस्या लंबे रूप में लंबे समय से देश के विकास में घातक हैं इस बारे में सरकार न्यायालय सभी चिंतित हैं लेकिन कोई निराकरण नहीं आता है। अपवाद स्वरूप गिने चुने कुछ लोगों को छोड़कर पूरा सरकारी प्रशासन घूस लेकर ही काम करता है और अपनी तनख्वाह के कई गुना अधिक धन कमा लेता है इससे भी बड़ी चिंता की बात यह है कि जो काम एक टी.वी. चैनल कर सकता है वह हमारी सरकार क्यों नहीं कर सकती। इतने ढेर सारे विभागों की बंदूके केवल जनता की ओर ही क्यों उठी ? सभी कानूनों की दोषपूर्ण लिखावट क्यों है ? पैसा न मिलने पर अधिकारी काम क्यों नहीं करते और पैसा मिल जाने पर उसी कार्य को तत्काल कर देते हैं। काले धन के आने के मार्ग को खोजने पहचानने और उसके नियंत्रण के लिए कारगर उपायों पर देश के परिवेश के बारे में ही सोचते रहते हैं।

भ्रष्टाचार और घोटालों को रोकने के लिए हमारे देश में भी कानून बने है लेकिन इसके बावजूद भ्रष्टाचार के मामलों में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है क्योंकि यहाँ जवाबदेही और पारदर्शिता का पूरी तरह से अभाव दिख रहा है। भ्रष्ट लोगों और भ्रष्टाचार के लिए जितने भी कानून बने है उनसे बचने के लिये भी उतने ही तरीके कानून में शामिल हैं। वर्तमान संदर्भ में हम देखें तो हम पाते हैं कि देश के सामने सबसे बड़ा मुद्दा भ्रष्टाचार का अंत करना है और अपराधिक तत्वों को राजनीति में घुसने से रोकना है। भ्रष्टाचार के वशीभूत होकर मानव राष्ट्र के कर्तव्य भूलकर अनुचित रूप से धन इकट्ठा करने की होड़ में दिन-रात लगा है। भ्रष्टाचार की जड़ इतनी गहरी है कि इसकी गहराई तक पहुँचना अत्यधिक कठिन होता जा रहा है। आज यह मानव को निश्चिंत नहीं बैठने दे रहा है। वह अधिक पैसा बटोरने के चक्कर में हर प्रकार का घिनौना कृत्य करने के लिये तैयार है। भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन ही प्रजातंत्र की रक्षा कर सकता है अत: जनसंख्या वृद्धि, स्वार्थसिद्धि, मँहगाई, झूठी मान-मर्यादा, फैशन परस्ती, अच्छी शिक्षा का अभाव एवं सामाजिक कुरीतियों जैसे बिन्दुओं पर गहराई से विचार करने की जरूरत है। इन समस्याओं ने उग्र भ्रष्टाचार को जन्म दिया है जो हमारे राष्ट्र को खोखला करने का कार्य निरंतर कर रहा है। इसने हमारी प्रगति की राह में रोड़ा अटका दिया है। ऐसे में इन उदित प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना होगा तभी भ्रष्टाचार से मुक्ति मिल सकती है।

देश की निर्बल भोली अर्द्धशिक्षित जनता हर दुर्भाग्य को अपना प्रारब्ध मानकर सह लेती है किसी भी अन्याय का प्रतिवादन नहीं कर पाती। प्रतिदान में वो केवल इतना ही चाहती है कि भारत जब सोने की चिड़िया था उस समय उसे प्रतिष्ठा दिलाने का कार्य इसी जनता ने किया था। 'यथा राजा तथा प्रजा' के अर्थ को हमारे कर्णधार तथा हमारी जनता अपने संवाद को अपने आचरण में उतारती है बिना प्रायश्चित के देश उस आलिखित संविधान श्राप से मुक्त नहीं होगा जिसने नागरिकों के मौलिक अधिकारों का हवन किया है

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

उसके हर कार्य पर कानून का पहरा है।

पहले तो वे कानून जो जनता के समय और श्रम पर बड़े बोझ हैं मगर जिनका राजस्व के रूप में थोड़ा ही योगदान है उन्हें तत्काल हटाया जाना चाहिए। इस निर्णय से देश को लाभ होगा। 50 वर्षों में पहली बार देशवासियों को लगेगा कि उनकी सरकार उनके दुख सुख के प्रति चिंतनशील हैं शासकों के प्रति उनके मन में सम्मान प्रकट होगा अनुशासन की भावना बढ़ेगी और कानूनों का पालन करवाने की प्रक्रिया में भी सुधार होगा। ऐसे प्रावधानों को जो जनता के हित में नहीं है उन्हें हटाया जाये और नवीन कानून राष्ट्रहित में होने चाहिए।

'प्रजातंत्र का अर्थ जनता की सेवा एवं आम लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना तथा उनके हित में कार्य करना ही वास्तविक लोकतंत्र का शासन हैं।' देश के संविधान को निर्मित हुये 50 वर्ष से भी अधिक समय बीत चुका है इसमें कई संशोधन भी हुये लेकिन प्रजातंत्र आज भी प्रजा का न हो सका। हमें अंग्रेजों के शासन से स्वतंत्रता मिली लेकिन हम पूर्ण स्वतंत्र आज भी नहीं है।

भ्रष्टाचार समाप्त करने के लिये व्यवस्था में शामिल लोगों के रवैये को बदलना होगा। भोगवृत्ती कम करनी पड़ेगी। समय आ गया है अब हम व्यवस्था में बैठे लोगों को देश का सार्वजनिक हित देखकर ही निर्णय लेना चाहिये व्यवस्था के शीर्ष पर लोगों को अज्ञात भय को त्यागना होगा। क्योंकि सच के लिए उठाया गया कोई भी कदम किसी का अहित नहीं कर सकता। देश का कोई कानून भ्रष्टाचार बेईमानी करने की अनुमति नहीं देता है। देश हित या जनहित विरूद्ध कार्य तो स्थापित नियमों को तोड़ने से ही होता है। भ्रष्टाचार के चलते देश का विकास पूर्व से ही नहीं हो पा रहा जिससे देश काफी पिछड़ गया है। हमें अपनी प्रगति के लिए सभी सामाजिक कठिनाइयों का मिलकर सामना करना होगा और भ्रष्टाचार को कम करने के सतत् प्रयास करने होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाण्डेय, रामशकल (2003) : 'उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक' विनोद पुस्तक मंदिर प्रकाशन, आगरा, पृ. 351
2. योगेन्द्र सिंह (2001) : 'भ्रष्टाचार का समाजशास्त्र', नई दिल्ली, पृ. 89
3. डॉ. सुभाष कश्यप : 'संविधान की आत्मा', पृ. 125
4. बी.एल. फड़िया : 'भारतीय शासन व राजनीति', पृ. 644
5. दैनिक भास्कर, 09.10.2008

****

आदिवासी क्षेत्रो में पंचायत राज की भूमिका (बालाघाट जिले के बैहर तहसील के विशेष संदर्भ में)

तरूण कुमार शेण्डे * विनोद कुमार शेण्डे **

प्रस्तावना – 'बीस आदमी केन्द्र में बैठकर सच्चे लोकतंत्र को नहीं चला सकते, इसे चलाने के लिये प्रत्येक गॉव के निवासियों को नीचे से प्रयास करना है। मेरे सपनो का स्वराज गरीबो व ग्रामीणों का स्वराज होगा। गॉव का शोषण खुद एक संगठित हिंसा है। अगर हमें स्वराज की रचना अहिंसा के पाये जाने पर करना है तो गॉव को उनका उचित स्थान देना होगा।' राष्ट्रपिता महात्मा गांधी परंतु दूसरी ओर आदिवासी क्षेत्रो में सामाजिक भेदभाव,जातिवादी,जमींदारी प्रथा,लोकतंत्रीय भावना का अभाव एवं विकास कार्यो में सहभागिता भावना की कमी जैसे कारणों के परिणामस्वरूप वर्तमान में वैश्वीकरण के इस युग में आर्थिक एवं तकनीकि विकास के बावजूद जनजातियो में परम्परावादी व रूढ़िवादिता उनमें कूट – कूट कर भरी है।

ग्रामीण अंचलो में गरीबी,अहिंसा,शोषण,जातिवाद, बहुपत्नी विवाह आदि बुराईयॉ व्याप्त रही है। सहभागिता के अभाव में सामाजिक – आर्थिक रूप से पिछडी जाति को विकास कार्यक्रम भी प्रभावित नहीं कर पाये है। पंचायती राज व्यवस्था से इन्हें जानने का प्रयास किया गया है। यह एक प्रयास है जिसके माध्यम से ग्रामीण अपनी समस्याओं का समाधान आपसी सूझ – बूझ व भाई चारे से करने के लिये साहसिक एवं व्यवहारिक कदम उठाया है।आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा के प्रति पूर्णत: सकारात्मक रूख न होने से असंख्य जनजातीय आबादी निरक्षर ही रह जाती है। चूँकि वे कम पढे लिखे या निरक्षर होते है। परिणाम यह होता है कि ये लोग मजदूरी या अन्य कार्यो से अपना जीवन व्यापन करते है अतएव रोजगार आदि का अभाव पाया जाता है। आर्थिक रूप से कमजोर होने की वजह से समाज में भी संपन्न व प्रतिष्ठित लोगों की बराबरी नहीं कर पाते है। आदिवासी क्षेत्रो में अलग – अलग स्थानों पर लोग घर बनाते है उनके समूह को फलिया कहते है। इन सभी फलियाओ को एक गॉव का नाम दिया जाता है। गॉव का मुखिया पटेल सरपंच कहलाता है। गॉव के सामाजिक – धार्मिक आदि एवं अन्य मुद्दो पर पटेल ही प्रमुख माना जाता है। वर्तमान में राजनीति में प्रत्येक फलिया से लोग अपनी उम्मीदवारी करते है एवं अपने – अपने स्तर से प्रचार – प्रसार करते है। परंतु चुने जाने के पश्चात् भी निरक्षर सीधे – सीधे प्रतिनिधियो को शासकीय कार्यो के अनुभव का अभाव एवं शासन की प्रक्रियाओ को नही समझ पाते एवं गॉवो की आधारभूत समस्याओ को हल करने मे असफल होते है ।

शोध समस्या का चयन – वर्तमान समय में देश एवं प्रदेश की सरकार द्वारा विकास के आयाम में सबसे निम्न स्तर पर खडे व्यक्ति की ओर ध्यान दिया जा रहा है। इसी तारतम्य में मध्य प्रदेश सरकार ने भी 73 वे संविधान संशोधन के अंतर्गत नवीन पंचायती राज की स्थापना की है। इस नवीन प्रक्रिया के अंतर्गत आदिवासी क्षेत्रो मे पंचायती राज संस्थाऍ किस प्रकार अपने उद्देश्यो में सफल हो रही है ? क्या पंचायती राज आदिवासी समुदाय के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है ? इन प्रश्नो पे समाधान हेतु शोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत शोध समस्या के रूप में आदिवासी क्षेत्रो मे पंचायती राज की भूमिका नामक शोध समस्या का चयन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन निम्न उद्देश्यों को लेकर किया गया है – 1. ग्राम पंचायत में आदिवासी लोगों की भागीदारी और शासकीय योजनाओकी प्रगति का अध्ययन करना ।

2. पंचायतराज व्यवस्था का ग्रामीण विकास कार्यक्रम पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र – मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले के बैहर तहसील की पॉच ग्राम पंचायतों को उद्देश्यपूर्ण विधि द्वारा चयन किया गया चयनित ग्राम पंचायतो से प्रत्येक ग्राम पंचायत से 10 – 10 साक्षात्कार अनुसूचियॉ भरी गयी है। इस प्रकार कुल 50 वयस्क उत्तरदाताओ से साक्षात्कार अनुसूचियॉ भरी गयी ।

तथ्यों का विश्लेषण एवं अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध में पंचायत राज आदिवासी लोगों के विकास में किस प्रकार सहभागी है। पंचायती राज का उनके विकास में पडने वाले प्रभावो का अध्ययन कर निम्न निष्कर्ष निकाले गए है–1. 57.8 प्रतिशत उत्तरदाता पंचायते उनके विकास में सहायक मानते है, जबकि 14.1 प्रतिशत उत्तरदाता ने कोई जवाब नहीं दिया।

2. 57.8 प्रतिशत उत्तरदाता यह मानते है कि वास्तविक हितग्रहियो को लाभ मिल रहा है।

3. 71.2 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने माना है कि नये पंचायती राज्य में महिलाओ की स्थिति में सुधार आया है। जबकि 28.2 प्रतिशत उतरदाताओं के अनुसार महिलाओ की स्थिति में कोई सुधार नहीं आया है।

4. 57.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार स्थानीय समस्याओं के निराकरण मे पंचायतें सार्थक भूमिका निभा रही है। वही 42.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार पंचायते अपनी भूमिका सार्थकरूप से नही निभा रही है।

5. अध्ययन क्षेत्र में 46.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास कृषि भूमि है जबकि 55.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास गैर कृषि व्यवसाय पर निर्भर है और जिनके पास कृषि भूमि तो है परंतु सिंचाई की सुविधा मात्र 36 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास उपलब्ध है जबकि 64 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास सिंचाई हेतु कोई सुविधा नही है।

सुझाव – 1. ग्रामीण विकास का लक्ष्य आर्थिक ही नहीं बल्कि सामाजिक न्याय का होना चाहिए। गॉव में रहने वाले निर्धन व्यक्ति का जीवन स्तर सुधारकर तथा उसे पूरी गरिमा के साथ लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भागीदारी के अवसर मिलना चाहिए।

2. लघु एवं कुटीर उद्योगों को पुन: स्थापित कर जिस वस्तु का कच्चा माल अधिक मात्रा में हो उत्पादित होता है। वहा छोटी मिले व फेक्ट्रियॉ विकसित की जाए।

3. राज्य को चाहिए कि भूमि व भूमि से सम्बंधित उपकरण,ऋण की सुविधा एवं खाद बीज की सुविधाऍ उपलब्ध कराए।

4. ग्रामीण अंचलो में सहयोग एवं सद्भावना का माहौल तैयार करना चाहिए।

5. मूलभूत सुविधाओ की पूर्ति करते हुए योजना बनाते समय ग्रामीणों और उनकी समस्याओ को केन्द्र बिन्दु मानकर बनाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चौहान आर.एस. (1989) 'पंचायती राज सत्ता विकेन्द्रिकरण का माध्यम' रघुनाथ प्रिटिंग, आगरा।
2. अवधप्रसाद (1988) 'गॉवो मे सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक परिवर्तन ' रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
3. श्री शरण (1995) 'पंचायती राज और लोकतंत्र' पाण्डूलिपी प्रकाशन कृष्णा नगर नई दिल्ली ।

* अतिथि विद्वान (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बरघाट जिला – सिवनी (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (राजनीति शास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय महाविद्यालय, लखनादौन, जिला – सिवनी (म.प्र.) भारत

लोकतंत्र के विकास में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

डॉ. रजनी दुबे *

प्रस्तावना – लोकतंत्र का विचार हजारों वर्ष पुराना है। भारत में वैदिक सभ्यता के आदिकाल में ऋगवेद की रचना के समय अर्थात आज से कम से कम 5000 वर्ष पूर्व लोकतांत्रिक शासन की सुदृढ़ नींव पड़ चुकी थी और लोकतांत्रिक इकाईयों के अन्तर्गत राजा भी आता था जिसे राज्यारोहण के समय जनहित की सिद्धि की शपथ लेनी पड़ती थी उसके काम में मदद देने के लिये सभा या समिति होती थी। मौर्य, गुप्त और हर्षकाल में ग्राम सभाओं व पंचायतों का विकास हुआ जिन्हें ग्रामीण व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व सौंपा गया। लोकतंत्र का जो रूप यूनान के नगर राज्यों में मिलता है उनमें उन्हें पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त थी। अरस्तू ने इन्हीं नगर राज्यों में प्रचलित लोकतंत्र की वकालत की। लोकतंत्र की मौलिक मान्यताओं की रक्षा के लिये चुनाव प्रणाली का विस्तार शासन का बहुमत के प्रति उत्तरदायी होना, निश्चित समय पर चुनाव होना और स्थानीय स्वशासन जैसी व्यवस्थाओं की भूमिका परिलक्षित होने लगी।

सत्तर के दशक के बाद देश की राजनीति में गैर सरकारी संगठनों की प्रासंगिकता बढ़ी है। देश की राजनीति में दो शब्द केन्द्रीय भूमिका में आ गये हैं, पहला है सिविल सोसायटी और दूसरा गैर सरकारी संगठन (एन.जी.ओ.) हालांकि दोनों ही शब्द एक ही विचारधारा की ओर ले जाते हैं, इसलिये कहा जा रहा है कि भारतीय राजनीति का एनजीओकरण हो रहा है। एक आंकड़े के अनुसार इस समय देश में तकरीबन 85 ऐसे एनजीओ सक्रिय हैं जो राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप कर रहे हैं या कह सकते हैं कि देश के राजनीतिक माहौल में एक तरह से दबाव समूह की भूमिका में है।

पिछले दो दशकों में भारत में तेजी से गैर सरकारी संगठन यानी एनजीओ का फैलाव हुआ। पर्यावरण, स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रमिकों के हित महिला या बाल कल्याण ऐसे तमाम क्षेत्रों में एनजीओ ने काम करना प्रारंभ किया और उसके काफी सकारात्मक परिणाम देखने को मिले। जनहित के व्यापक दायित्व, जिन्हें पूरा करना प्राथमिक रूप से सरकार की जिम्मेदारी है, उसे एनजीओ ने सांझा करना प्रारम्भ किया। कही झुग्गी झोपड़ी या जगह-जगह घूमकर काम करने मजदूरों के बच्चों को शिक्षित किया, कहीं स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध कराई। बेसहारा और जरूरतमंद महिलाओं को उनके पैरों पर खड़े होने में मदद की, अनाथ या विकलांग बच्चों के लिये आश्रमघर बनाये। कई शालाओं में मध्याहन भोजन की व्यवस्था किसी एनजीओं ने कराई तो कई जगह बच्चों के टीकाकरण का जिम्मा एनजीओ ने उठाया। कहीं नदियों को बचाने की मुहिम छेड़ी तो कहीं जंगल काटने का विरोध किया। एड्स और कैंसर जैसी घातक बीमारियों के निदान इलाज व रोकथाम के लिये भी एनजीओ काफी सक्रिय रहे। दंगे, प्राकृतिक आपदा या अन्य किसी आपात स्थिति में भी एनजीओ सक्रिय भूमिका निभाते देखे गये।

देश में गठित छोटे बड़े एनजीओ के अलावा कई विदेशी एनजीओ भी भारत में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कार्यरत है। कई एनजीओ विदेशों से वित्तीय सहायता प्राप्त करते हैं, कुछ बड़े औद्योगिक घरानों की मदद से संचालित होते हैं। समाज सेवा के क्षेत्र में डिग्री हासिल कर किसी गैर सरकारी संगठन के जरिये अपना भविष्य बनाने वाले युवाओं की लम्बी कतार देश में हो गई है। बहुत से उच्च शिक्षित लोगों ने बड़े पद या नौकरियां छोड़ कर एनजीओं के माध्यम से समाजसेवा का बीड़ा उठाया। देश के गरीब पिछड़े, सुविधाहीन शोषित तबके के बड़े हिस्से को एनजीओ के कारण काफी राहत पहुंची है।

महात्मा गांधी ने ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी प्रयासों की भूमिका को यह कहकर प्रोत्साहित करने का प्रयास किया था कि 'राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक दायित्व भी आवश्यक हैं।' हम भले ही राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल कर चुके हों, लेकिन विडम्बना ही कहा जायेगा कि परोपकार का जो काम कभी भारतीय समाज में नैतिक जिम्मेदारी समझ कर किया जाता था आज वह संगठित जरूर है लेकिन कई किस्म की विकृतियां उसमें घर कर गई हैं। अब इसमें सुधार की जरूरत महसूस की जा रही है।

देश भर में 400 लोगों पर एक एनजीओ है। एक सरकारी अध्ययन की रिर्पोट को आधार बनाकर प्रकाशित इस खबर के मुताबिक 2009 तक भारत में ऐसे संगठनों की संख्या 33 लाख तक बताई गई है इस रिर्पोट के अनुसार स्वैच्छिक संगठनों को 40 हजार करोड़ से 80 हजार करोड़ का अनुदान मिल रहा है। ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना में 18 हजार करोड़ रूपये का अनुदान सामाजिक क्षेत्र के लिये घोषित किया गया था जबकि 2007-8 में स्वैच्छिक संगठनों को मिली विदेशी अनुदान राशि 9,700 करोड़ रूपये बताई जा रही है।

भारत में गैरसरकारी संगठनों के रजिस्ट्रेशन के लिये बने कानूनों में सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट-1860, इंडियन ट्रस्ट एक्ट-1882 पब्लिक ट्रस्ट एक्ट-1950, इंडियन कंपनीज एक्ट-1956 (धारा-25) रिलीजियस एण्डोमेंट एक्ट-1863, चेरीटेबल एण्ड रिलीजियस ट्रस्ट एक्ट-1920, मुस्लिम वक्फ (एकटेंशन ऑफ लिमिटेशन एक्ट) एक्ट-1959 शामिल हैं।

1970 और 80 के दशक में स्वयंसेवी संगठनों को विकास कार्यों में राज्य के सहयोगी के तौर पर मान्यता मिलने लगी। जमीनी स्तर पर विकास कार्य, एडवोकेसी और विभिन्न स्तरों पर वंचितों को उनके अधिकारों के प्रति सजग बनाने में इन संगठनों की महती भूमिका रही है।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विभाग) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

वर्तमान में गैर सरकारी संगठनों के गठन से लेकर उनकी गतिविधियों एवं फंडिग पर तरह-तरह के सवाल खड़े हो रहे है। लेकिन इन संगठनों से संबंधित अधिकारिक डाटबेस तैयार करने की अभी कोई पहल नहीं हुई है और न ही उनकी गतिविधियों और फंडिग से जुड़े मामलों में पारदर्शिता कायम रखने के लिये कोई प्रयास किया गया है।

कुछ गैर सरकारी संगठनों ने स्वैच्छिक जगत की संस्थाओं के कामकाज में पारदर्शिता की स्थापना के लिये प्रयास भी किये हैं। 'वाणी' ने इन संगठनों की पारदर्शिता को लेकर कुछ मापदण्ड तय किये हैं, जिसे 'क्रेडिबिल्टी अलायंस' द्वारा क्रियान्वित किये जाने का प्रयास किया जा रहा है। कुछ समय पहले 'सीएसओ पार्टनर्स' ने भी कामकाज में पारदर्शिता बरतने वाली कई संस्थाओं को पुरस्कृत किया था।

2007 में स्वैच्छिक क्षेत्र के लिए राष्ट्रीय नीति बनाई गई। 1990 के बाद 'कपार्ट' को विकेन्द्रीकृत किया जाने लगा, जिससे कि गैर सरकारी संगठनों की उल्लिखित सेवाओं का लाभ वंचितों एवं गरीबों तक अधिक मात्रा में पहुँचाया जा सके।

राजनीति और सरकारों का एनजीओकरण क्या देश को किसी कलचरल कोल्डवार की ओर ले जा रहा है, वास्तव में यहाँ पर उद्देश्य गैर सरकारी संगठनों की महत्ता उनके काम या उनके होने पर सवाल खड़ा करना नहीं है, सिर्फ और सिर्फ उस खतरे से आगाह करना है जो दान के नाम देश के भीतर पैदा किया जा सकता है, अब यह चिंता इसलिये और भी बढ़ जाती है, क्योंकि इन्हीं रास्तों पर चलकर सरकारों व राजनीति का एनजीओकरण हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वतंत्र भारत के पचास वर्ष - भालचंद गोस्वामी
2. एगुएस.पी. और Nsmfst-ईरानी. एम (1992), कृषि विकास में गैर सरकारी संगठन राज्य संबंधों में संपूरकताओं और तनाव :AGRARIA (चिली) के प्रक्षेपवक्र.
3. Ayers. ए जे (1992) विरोध या पूरक? , ओवरसीज डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट : सैन जूलियन और बर्लिन, पूर्वी बोलीविया कृषि अनुसंधान और विस्तार नेटवर्क पेपर नंबर 37 लंदन के उपनिवेशन क्षेत्र में राज्य और गैर सरकारी संगठनों
4. Bebbigtom, ए. और Thiele. जी (सं.). (1993) गैर सरकारी संगठनों और लैटिन अमेरिका में राज्य :टिकाऊ कृषि विकास में भूमिका पुनर्विचार लंदन: रूटलेज
5. कैरोल, टी (1992) माध्यमिक गैर सरकारी संगठनों : जमीनी स्तर पर विकास में समर्थन कड़ी पश्चिम हार्टफोर्ड, सीटी Kumarian प्रेस
6. क्रॉमवेल, ई, और विगिंस, एस (1993) राज्य परे बुवाई: गैर सरकारी संगठनों और विकासशील देशों में बीज की आपूर्ति लंदन प्रवासी विकास संस्थान.

****

बैगा जनजाति में प्रचलित विवाह की पद्धतियाँ (म.प्र.के डिण्डौरी जिले के संदर्भ में)

डॉ. रश्मि दुबे *

शोध सारांश – विवाह एक सर्वव्यापी संस्था है। भारतीय समाज में इसका विशेष महत्व है। सांस्कृतिक विभिन्नता के कारण विभिन्न समाजों में इसके विभिन्न स्वरूप देखने को मिलते हैं। कुछ समाजों में विवाह का स्वरूप धार्मिक होता है, जबकि कुछ समाजों में विवाह को एक समझौते के रूप में देखा जाता है। इस प्रकार विवाह को हम उस सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकार करते हैं जो एक पारिवारिक इकाई की स्थापना करती है। अन्य सभ्य समाजों की तरह जनजातीय समाज में भी विवाह का बहुत अधिक महत्व है। जनजातियों में विवाह को सामाजिक बंधन के रूप में स्वीकार किया जाता है।

प्रस्तावना – बैगा समाज में विवाह एक सामाजिक बंधन माना जाता है। समगोत्रीय विवाह वर्जित है। परन्तु अपनी ही जाति में विवाह करते हैं। जीवन साथी के चुनाव में प्रथम स्थान कन्या का एवं वर का, द्वितीय माता-पिता का एवं तृतीय (अंतिम) स्थान जातिगत पंचायत का होता है। विवाह निश्चित् करने की तीन प्रक्रिया बैगा समाज में मान्य है। प्रथम में लड़का-लड़की आपस में जीवन साथी का चयन कर लेते हैं तत्तश्चात् माता-पिता विवाह की शर्ते तय करते हैं। द्वितीय में लड़का-लड़की स्वयं जीवन साथी का चुनाव नहीं करते हैं, माता-पिता लड़की की पूर्ण सहमति से विवाह तय करते हैं। तृतीय में अभिभावक न होने पर तथा विवाह में विलंब होने पर जाति पंचायत द्वारा वैवाहिक संबंध निश्चित् किया जाता है, किन्तु तीनों ही स्थितियों में कन्या की इच्छा सर्वोपरि होती है। डिण्डौरी जिले के ग्रामों से बैगा जन-जति की वैवाहिक पद्धतियों की जानकारी प्राप्त की गई जो इस प्रकार है।

बैगा जनजाति में विवाह की पद्धतियां-

चढ़ विवाह (मंगनी विवाह) – अध्ययन के दौरान अध्यायित ग्रामों में बैगाओं में प्रचलित विवाह पद्धतियों की जानकारी ग्राम के वयोवृद्ध बैगाओं से प्राप्त की गयी। लड़का व लड़के का पिता गांव के बुजुर्गो के साथ लड़की के घर दो बोतल शराब लेकर जाते हैं, जहां गांव के लोग आंगन में एकत्रित होते हैं। लड़के की सहमति संकेत पाकर लड़के का पिता कहता है- हमें प्यास लगी है और शराब की बोतल सामने रख देते हैं तब लड़की का पिता मंगनी का संकेत समझ कर दो बुजुर्ग स्त्रियों के साथ लड़की से विवाह के लिए पूछता है यदि लड़की कहती है- शराब मत पियो मैं कुछ नहीं जानती तो मंगनी का प्रस्ताव अस्वीकृत तथा उसके यह कहने पर मेरे से क्या पूछते हो शराब पियो प्रस्ताव स्वीकृत माना जाता हैं मंगनी प्रस्ताव स्वीकृत होने पर वर पक्ष के लोग शराब को धरती पर चढ़ाते हैं तथा ठाकुर देव, धरती माता, नागा बैगा, महारानी आदि देवी देवताओं का नाम लेकर कहते हैं- अब ते गवाह हस (अब तुम्ही इस कार्य की गवाह हो) वर का पिता दो-चार बोतल शराब और निकालकर सभी लोगों के साथ पीता-पिलाता है। इसी समय सगाई का दिन निश्चित् होता है- पन्दरवाही के मंगलवार को टीवा खांदा लेकरआओ यह घोषणा लड़की के पिता द्वारा की जाती है और भोजन करने के बाद लड़की वाले घर चले जाते हैं तथा गांव लौटकर कहते हैं कि पानी सुपारी हो गया अर्थात विवाह तय हो गया इसे मंगनी रस्म कहा जाता है। मंगनी की रस्म के दो सप्ताह पश्चात (15 दिन) सगाई की रस्म धूमधाम से सम्पन्न होती है। लड़के का पिता दस बीस लोगों के साथ (वर पक्ष के लोग) एक या दो पीपा शराब लेकर लड़की के यहां जाता है यह सगाई बारात कहलाती है। बारात आने पर पूरा बैगा समाज लड़की के आंगन में बैठकर मिलते हैं तथा दरवाजे के सामने लड़के वाले बिलमा गीत गाकर नृत्य करते हुए आनन्द व्यक्त करते हैं। इस अवसर पर आठ बोतल शराब पंचबारात के लिए निकालकर मुकद्दम ग्राम के पंचों को पिलाता है तथा कन्या पंचों की धर्म कन्या घोषित की जाती है। अब कन्या की विवाह की व्यवस्था करना सभी की जिम्मेदारी होती है जिसे प्रतिष्ठा का विषय समझकर पूर्ण उत्साह एवं लगन से निभाया जाता है, यह प्रथम पंच बारात शराब कहलाती है। इसके उपरांत पुन: आठ बोतल शराब मुकद्दम द्वारा पंचों को पिलाई जाती है जिसे द्वितीय पंचबारात शराब कहते हैं। इस प्रकार सोलह बोतल शराब पी चुकने पर सगाई पक्की समझी जाती है। बैगा विवाह की रस्मे सोमवार से प्रारंभ होती है मंगलवार को माटी खनौनी (मांगरमाटी) होती है वर या कन्या को चावल के आटे का लेप लगाकर पिछौरा (वस्त्र) ओढ़ाकर, सुवासिन और ग्राम की स्त्रियां अपने साथ लेकर गांव के बाहर आती है। उक्त प्रक्रिया के बाद मड़वा गड़ौनी की रीति दोपहर को होती है। गांवके युवक गुनिया के साथ जंगल जाते हैं। गुनिया मंत्रोच्चार से चार वृक्षों (सरई, बांस, चार व आम) की पूजा करता है फिर वृक्षों को काटता है। आवश्यकतानुसार डालियां व खम्बे लेकर सभी घर आते हैं। उक्त चारों प्रकार की लकड़ी से मंडप बनाया जाता है।

मड़वा गड़ौनी के पश्चात हल्दी तेल चढ़ौनी का कार्यक्रम आरंभ होता है। मंडप के नीचे कलश के सामने वर या वधु को पत्तल पर बैठाकर पहले सुवासिन, नातिन व साली हल्दी तेल चढ़ाती हैं। मंगलवार को बारात तैयार होती है एक पीपा शराब पी जाती है। दूल्हे को सादे ढंग से सजाया जाता है, कमर में हल्दी से रंगा लंहगा, शरीर पर कमीज तथा काली जाकेट, सिर पर चाकदार पगड़ी यही दूल्हे की पोशाक होती है शेष बराती दैनिक वेशभूषा में रहते हैं। बारात यात्रा दूल्हे सहित पैदल तय की जाती है। बारात में स्त्रियां नहीं होती।

बारात आ जाने पर वर एवं वधु से पांच घर भिक्षा मंगाई जाती है। वर के साथी, वधु की सहेलियां व सुवासा-सुवासिन इनके साथ होते हैं। भिक्षा मांगकर वर-वधु बारात एवं सबंधियों सहित मैदान में एकत्रित होते हैं। यहां परघौनी का आकर्षक कार्यक्रम आरंभ होता है- एक खाट (चारपाई) बिछाकर, दो चारपाई को त्रिकोण रूप में खड़ा करके हाथी बनाया जाता है, जिसे कम्बल से ढांक देते हैं। सूपों से कान तथा घास से सूंड-पूंछ बनाते हैं, कन्या

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

पक्ष के लोगों को इस हाथी पर बैठाकर चार आदमी उठाकर मैदान का चक्कर लगाते हैं। इस बीच दुल्हन हाथी का सूंड पकड़कर रास्ता रोकती है जिसका उसे नेग मिलता है। नगाड़े, टिमकी की मधुर ध्वनि के मध्य परघोनी का तमाशा दर्शकों को मोह लेता है।

इसके पश्चात मुंदरी रस्म में वर कन्या की बंद मुट्ठी अपने प्रयास से खोलकर मुंदरी (अंगूठी) पहनाता है। इस समय महिलायें भिक्षा में लाये गये चावल इन पर फेंकती हैं। तत्पश्चात्, नवयुवतियां चोरी से लाया चावल परछन करने वाली महिलाओं के मुंह में डालती हैं जिसे वे थूक देती हैं। यह रस्म जूठभात कहलाती है। अब दूल्हा दुल्हन को घर लाकर भोजन करा कर गांठ जुड़ौनी होती हैं हल्दी चावल दो आना पैसा बांधकर गांठ जोड़कर दूल्हा-दुल्हन मंडप में लाये जाते हैं। तथा सजन के पांच फेरे लगवाकर भांवर की रस्म पूर्ण की जाती है। विवाह में वधु का पिता लड़की को बंधौनी (बछिया) दान करता है। लड़की को थाली, लोटा, कान की बालियां एवं तीन साड़िया क्रमश: लड़की-लड़के की मां एवं नानी के लिए माता-पिता द्वारा प्रदान की जाती है। वर के यहां पुरानी गांठ छोड़कर नये कपड़े से नयी गांठ जोड़ी जाती है। दुल्हा-दुल्हन की पांव पखराई होती है। बकरा काटा जाता है। दूल्हे की मां बहु-बेटे को गोद में उठाकर थाली, कलश लेकर तीन भांवरे फिराती है ओर घर के अन्दर वर-वधु को ले जाती है।

लमसेना विवाह – अपने लड़के का विवाह करने में असमर्थ पिता एक माई साड़ी, दो बोतल शराब तथा पंचों सहित लड़की के यहां आकर लड़के को लड़की वालों के यहां बिना मजदूरी सेवा कार्य हेतु छोड़ देता है। ऐसा युवक लमसेना घर दामाद कहलाता है जो तीन वर्षो तक ससुर के यहां कृषि, लकड़ी काटना तथा मेहनत मजदूरी आदि कार्य करता है। तीन वर्ष के पश्चात लड़का-लड़की से विवाह करने का हकदार बन जाता हैं। इस रस्म में विवाह खर्च लड़की वाला करता है। विवाह की सभी रस्में लड़की के यहां पूरी होती है। विवाह की रस्में चढ़ विवाह के समान ही होती है किन्तु विवाहोपरांत लड़की ससुराल न जाकर पिता के यहां रहती है। विवाह के बाद लड़की का पिता बेटी-दामाद के रहने के लिए अलग से व्यवस्था कर, जीवन निर्वाह हेतु, हैसियत के अनुसार एक-दो खेत तथा गृहस्थी का सामान दे देता है।

पैठूल विवाह – इस विवाह में अविवाहित लड़की अपने पिता की इच्छा के विरूद्ध अपने मन पसंद लड़के के यहां सभी सदस्यों की मौजूदगी में लड़के पर धुली हुई हल्दी डाल देती है व वहीं रह जाती है। लड़के वाले लड़की का संकेत समझ कर गांव के मुखिया, कोटवार, मुकद्दम, समरथ तथा दीवान आदि को बुलाते हैं। ये लोग लड़की को वापिस करने का प्रयत्न करते हैं। लड़की के वापिस न जाने पर पंचनामा (जांच) करके उसके घर से लाये आभूषणों को लौटा दिया जाता है। लड़की वालों को बुलाकर रात में लड़के के यहां ही विवाह की रस्में पूरी होती है।

पैठूल ब्याहता विवाह – इसे पुनर्विवाह भी कहा जाता है। जब कोई विवाहित स्त्री अपनेपति को छोड़कर किसी दूसरे व्यक्ति के यहां जाकर रहने लगती है तो इस पैठूल विवाह कहते हैं। स्त्री के घर आने की सूचना जैसे ही परिवार वालों को मिलती है वे पंचों को बुलाते हैं तथा स्त्री अपनी ससुराल से क्या वस्तुएं, आभूषण व वस्त्र लायी है इसकी जांच होती है। पंचों की उपस्थिति में घर का कोई लड़का भाग कर आयी स्त्री पर गरम पानी डालता है इस प्रकार स्त्री पवित्र हो जाती है तथा इस प्रक्रिया के बाद पंचों को शराब पिलाई जाती है।

चोर विवाह – इस विवाह में लड़का-लड़की अपने मन पसंद जीवन साथी के साथ भाग जाते हैं। लड़की की इच्छा बिना भगाकर लायी लड़की को वापस माता-पिता के पास भेज दिया जाता है यदि लड़की स्वेच्छा से आयी हो तो माता-पिता को सूचित किया जाता है और अन्हें बुलाकर शादी की तिथि निश्चित् करके विवाह कर दिया जाता है। विवाह की सभी रस्में परम्परानुसार ही होती हैं।

उठवा विवाह – बैगा जनजाति में उठवा विवाह काफी प्रचलित है। दोनों पक्षों से सगाई निश्चित् हो जाने पर लड़की वाला अपने रिश्तेदारों के साथ लड़के वालों के गांव आ जाता है। यहीं पूर्व रस्मों क अनुसार विवाह सम्पन्न होता है विवाह का खर्च लड़के वाले करते हैं। उपरोक्त विवाहों के साथ-साथ बैगा जनजाति में खड़ौनी विवाह (विधवा विवाह) एवं अविवाहित माता का विवाह भी होता है। खड़ौनी विवाह में पति की मृत्यु के उपरांत क्रियाकर्म सम्पन्न होने पर मृतक की विधवा का पुन:विवाह कर दिया जाता है। विवाह से पूर्व माता बन चुकी कन्या का सम्बन्धित लड़के से विवाह पंचायत द्वारा कराया जाता है। डिण्डौरी जिले के अध्ययित तीन ग्रामों में उपर्युक्त विधियों के आधार पर सम्पन्न हुए विवाहो का विवरण निम्न सारणी से दृष्टव्य।

सारणी (अगले पृष्ठ पर देखें)

सारणी से यह परिलक्षित होता है कि ग्राम चांड़ा में 64 विवाहित बैगा दम्पत्तियों में सर्वाधिक 31.25 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह चोर विवाह पद्धति द्वारा सम्पन्न हुआ है। 23.43 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह चढ़ विवाह पद्धति द्वारा हुआ है। क्रमश: 18.75 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह पैठूल विवाह पद्धति द्वारा 10.93 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह पैठूल ब्याहता (पुनर्विवाह) पद्धति द्वारा, 6.25 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह उठवा विवाह पद्धति के माध्यम से व सबसे कम 4.68 प्रतिशत विवाह लमसेना तथा अन्य विवाह (अविवाहित माता का विवाह, खड़ौनी विवाह) द्वारा सम्पन्न हुए।

सिधौली ग्राम में 62 विवाहित वैगा जोड़ों में से सर्वाधिक 32.25 प्रतिशत जोड़ों का विवाह चढ़ विवाह पद्धति द्वारा सम्पन्न हुआ। 29.09 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह चोर विवाह पद्धति द्वारा हुआ। क्रमश: 16.12 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह पैठूल विवाह द्वारा 4.83 प्रतिशत दम्पत्तियों के विवाह उठवा व अन्य पद्धतियों (अविवाहित माता का विवाह, खड़ौनी विवाह) द्वारा हुए हैं। इस ग्राम में सबसे कम 3.22 प्रतिशत दम्पत्तियों का विवाह लमसेना पद्धति द्वारा सम्पन्न हुए हैं।

ग्राम चन्द्रगढ़ में 58 विवाहित बैगा दम्पत्तियों में सर्वाधिक 39.65 प्रतिशत बैगा दम्पत्तियों के विवाह चढ़ विवाह पद्धति द्वारा हुए हैं। 17.24 प्रतिशत दम्पत्तियों ने चोर विवाह पद्धति द्वारा विवाह किए हैं। क्रमश: 15.51 प्रतिशत के पैठूल विवाह व लमसेना पद्धति द्वारा विवाह हुए हैं 6.89 प्रतिशत बैगा दम्पतित्यों के विवाह पैठूल ब्याहता पद्धति सम्पन्न हुए हैं। इस ग्राम में सबसे कम 3.44 प्रतिशत बैगा दम्पत्तियों के विवाह उठवा व अन्य विवाह (अविवाहित माता का विवाह, खड़ौनी विवाह) पद्धति द्वारा हुए हैं।

उपरोक्त विवरण से यह परिलक्षित होता है कि चांड़ा ग्राम में चोर विवाह पद्धति द्वारा सर्वाधिक (31.25 प्रतिशत) विवाह हुए, जबकि सिधौली एवं चन्द्रागढ़ ग्राम में चढ़ विवाह पद्धति से सर्वाधिक (32.25 एवं 39.65 प्रतिशत) विवाह सम्पन्न हुए। बैगाओं में प्रचलित अनेक वैवाहिक पद्धतियों के कारण यह सुनिश्चित् रूप से नहीं कहा जा सकता कि वास्तविक सामाजिक मान्य प्राप्त स्वीकृत या अस्वीकृत पद्धति कौन सी है। पद्धतियों के विवरण से जो बात स्पष्ट होती है वह है नाते/रिश्तेदारों, समाज के विषेषाधिकार प्राप्त सदस्यों को शराब एवं भोजन की दावत देकर स्त्री-पुरूष के मध्य यौन संबंधो की स्वीकृति प्राप्त कर लेना। इनके विवाह को धार्मिक संस्कार नहीं माना जा सकता। विवाह विच्छेद अभी भी पाया जाता है। पुनर्विवाह भी

होता है। बैगाओं में बहुपत्नी रखने की भी प्रथा है। अध्ययन के दौरान ज्ञात हुआ कि हिन्दु सभ्य संस्कृतियों के प्रभाव से बैगाओं के विवाह के बाह्य स्वरूप में परिवर्तन आया है परन्तु उनकी वैवाहिक पद्धतियों के आन्तरिक स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवध, बिहारी लाल, बैगा ट्राइब्स ऑफ इण्डिया आदिम जाति सेवक संघ, नई दिल्ली 1950
2. अटल योगेश, आदिवासी भारत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1965,
3. एल्विन, व्ही., द बैगाज, ज्ञान प्रकाशन नई दिल्ली 1986.
4. एनानमस, द गोंड एण्ड बैगा ऑफ द इस्टर्न सतपुरा, कमहिल मैगजीन, वाल्यूम 26, 1872 : 595-609
5. कालिया एस.एल., संस्कृताइजेशन एण्ड ट्राइबलाइजेशन, बी.आई. आर. टी. छिंदवाड़ा 1959
6. गिलिन व गिलिन, कल्चरल सोशयोलाजी, द मेकमिलन कंपनी, न्यूयार्क 1950-54
7. टायलर, ई.बी., प्रिमिटिव कल्चर, हार्पर आर्च बुक्स, न्यूयार्क 1913
8. तिवारी, शिवकुमार, मध्यप्रदेश के आदिवासी, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल 1984
9. त्रिपाठी, रमेशचन्द्र, बैगाजनजाति एक सामाजिक अध्ययन, आदिम जाति अनुसंधान संस्थान, भोपाल 1985
10. दुबे, श्यामाचरण, मानव और संस्कृति राधाकमल प्रकाशन दिल्ली, 1969, 1982
11. बोस, एन.के., ट्राइबल लाइफ इन इंडिया, नेशनल बुक इन्स्टीट्यूट नई दिल्ली 1971
12. एल.पी. विद्यार्थी, द ट्राइबल कल्चर आफ इंडिया, कान्सेप्ट पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली एव राय बर्मन बी.के 1976
13. शर्मा, जीव लोचन, जनजातीय जीवन और संस्कृति, किताब घर आचार्य नगर, कानपुर 1971

सारणी

अध्यायित ग्रामों में विवाहित बैगाओं की वैवाहिक पद्धतियां

क्र.	ग्राम	विवाहित दम्पत्ति	प्रचलित वैवाहित पद्धतियां							
			चढ़ विवाह	लमसेना विवाह	पैठूल विवाह	पैठूल व्याहता विवाह	चोर विवाह	उठवा विवाह	अन्य विवाह	योग
1.	चांड़ा	64	15 (23.43)	3 (4.68)	12 (18.75)	7 (10.93)	20 (31.25)	4 (6.25)	3 (4.68)	64
2.	सिधौली	62	20 (32.25)	2 (3.22)	10 (16.12)	6 (9.67)	18 (29.09)	3 (4.83)	3 (4.43)	62
3.	चन्द्रागढ़	58	23 (39.65)	9 (15.51)	9 (15.51)	4 (6.89)	10 (17.24)	2 (3.44)	2 (3.44)	58

****

पर्यावरण प्रदूषण एवं समाज का अस्तित्व

डॉ. संजय खरे *

प्रस्तावना – ईश्वर ने सर्वप्रथम सृष्टि की रचना की, प्रकृति को इस प्रकार सजाया संवारा कि मनुष्य के पैदा होने से पूर्व उसके लिये जीवनदायी उपहार पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक रूप से मौजूद रहे। प्रकृति द्वारा प्रदत्त अनमोल उपहारों में हमें पेड़-पौधे, नदियाँ, पर्वत, सुरम्य झीले और अपना भरण पोषण करने के लिय असीमित उपजाऊ भूमि प्रदान की गई। हमारे निर्माणकर्त्ताओं ने हमारे लिये सभी सुविधाओं के इंतजाम हमारे जन्म से पूर्व ही कर दिये थे ताकि हमें पेड़-पौधों से शुद्ध हवा प्राप्त हो सके, नदियाँ हमें अमृत तुल्य जल पिला सके, पर्वत हमारी रक्षा में प्रहरी की तरह तैनात रहें, झीलों की सैर हमें परम आनंद दे सके। प्रकृति द्वारा प्रदत्त इन अनमोल उपहारों का संयोजन शुद्ध और स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण करता है। लेकिन संसाधनों के उपयोग को लेकर बढ़ता असंतुलन ही पर्यावरण के संकट के रूप में उभर रहा है।

जो पर्यावरण हमें सदियों पहले सुकून भरी जिंदगी दे रहा था उसे हमने अपने स्वार्थ की वजह से दूषित पर्यावरण में परिवर्तित कर डाला है। अपने स्वार्थों के कारण हमने न केवल नदियों के प्रवाह के साथ छेड़छाड़ की अपितु कृषि योग्य भूमि पर बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी कर भरण-पोषण का स्रोत बर्बाद कर दिया और यदि इन सब के लिये मानव वर्ग उत्तरदायी हो तो इसमें कदापि संशय नहीं है। कि हमने पर्यावरण को प्रदूषित करके मानवीय जीवन हेतु समस्यायों का अंबार स्वयं लगाया है।

पर्यावरण का महत्व – भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही प्रकृति और पर्यावरण को विशेष महत्व दिया गया है इतना ही नहीं वेदों में तो इसे ईश्वर के समान स्थान दिया गया है। परम्परागत जीवन पद्धति में यह व्यवस्था थी कि जितना हम प्रकृति से लेते थे उससे कहीं अधिक अपने श्रम से देने की कोशिश की जाती थी। ऋषि मुनियों द्वारा होम, यज्ञ आदि किये जाते थे, जिससे वातावरण के स्वच्छ होने के साथ वृक्षों के विकास और बढ़ोत्तरी के लिये भरपूर कार्बनडाई ऑक्साइड मिल सके।

'पर्यावरण मानव का चिर-सहचर रहा है' अन्य जीव जंतुओं की तरह मानव ने भी प्रकृति की गोद में पलकर ही ज्ञान-विज्ञान की यात्रायें की हैं। यदि वैदिक साहित्य का सूक्ष्म अध्ययन करें तो यह तथ्य स्पष्ट होता है कि जीवन समुदाय यदि अपना संरक्षण चाहता है तो उसे प्रकृति को संरक्षित करना होगा - 'रक्षायै प्रकृति पातु लोकः।'

ऋग्वेद के मंत्रों में ऐसे निश्चित संकेत हैं कि जब प्रकृति चक्र असंतुलित होता था तभी देवासुर संग्राम होते थे। पुराणों में ईश्वर के अवतारों के उद्देश्यों में यह भी निरूपित किया गया है कि प्रकृति चक्र को नियमित और संतुलित करने के लिये ही भगवान अवतार लेते हैं इस संदर्भ में श्रीकृष्णावतार के कुछ प्रसंग तो इतने जीवंत हैं कि वे समकालीन पर्यावरण की समस्याओं को भी रेखांकित करते हैं। श्रीकृष्ण ने यमुना जल में निवास करने वाले कालिया नाग का दमन इसलिए किया था, क्योंकि कालिया नाग ने यमुना के जल को अपने विष से दूषित कर दिया था। श्रीकृष्ण के लीला-चरित्र में गोवर्धन पूजा भी पर्यावरण से ही संबंधित है। मिथ्या और अहंकारी देवी-देवताओं की पूजा की अपेक्षा उस पर्वत की पूजा अधिक वांछनीय है जिससे मनुष्यों को आजीविका के साधन मिलते हैं, पशु-पक्षियों का पोषण होता है। इस तरह के और भी प्रसंग हो सकते हैं। इस सृष्टि में मनुष्य विधाता की निर्माण कला का सर्वात्कृष्ट नमूना है किंतु दुर्भाग्य है कि आज का मानव प्रकृति का दोहन अपने स्वार्थ के कारण करना चाहता है। आज प्रकृति प्रांगण में मानव द्वारा ध्वंस-लीला जारी है मनमाने ढंग से प्रकृति के प्रदूषण से निश्चित रूप से अवश्यंभावी विनाश के संकेत मिलते हैं।

समाज के अस्तित्व को खतरा – हाल ही के दशकों में जिस प्रकार तकनीकी परिवर्तन हुये हैं उसने भोग विलास की तमाम वस्तुओं को जन्म दिया है जो क्षणिक आनंद तो देती हैं लेकिन लंबे समय के लिये गले की फाँस बन जाती है। मौसम में हो रहा असंतुलन इस बात की गवाही देता है कि पर्यावरण पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। पृथ्वी का रक्षा कवच कहे जाने वाले ओजोन परत में छेद हो चुका है। ओजोन ऑक्सीजन का शुद्ध रूप है जिसकी परत मात्र 8 किलोमीटर की है ओजोन परत का इसी प्रकार क्षय होता रहा और प्रदूषण का प्रभाव वायुमंडल पर पड़ता रहा तो वह दिन दूर नहीं है जब मानव कड़ी एवं ज्वलनशील धूप से तड़प-तड़प कर मरेगा। प्रदूषण के प्रकारों में भेद करना बड़ा मुश्किल है पर कुछ मुख्य प्रदूषण हैं - वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण और रेडियोधर्मी वायु के बिना मानव जीवन की कल्पना असंभव है। प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटे में 22 हजार बार साँस लेता है और 35 पौंड वायु अपने फेफड़ों में भरता है। वायु प्रदूषण मुख्यत: सल्फर डाइ आक्साईड, हाइड्रोकार्बन, कार्बन मोनो आक्साईड आदि के कारण होता है। ये कारक आग, धूल, कारखानों, वाहन, बिजली ताप घर, परमाणु संयंत्र, उर्वरक कीटनाशक, नाभिकीय विस्फोट से निकलते हैं और हवा के साथ मिलकर शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। वह रसायन हमारे शरीर की कार्य क्षमता को धीरे-धीरे प्रभावित कर नगण्य कर देते हैं वायु प्रदूषण के कारण विभिन्न प्रकार की बीमारियों का जन्म होता है। इस प्रदूषण से व्यक्तियों को गंभीर श्वाँस, दमा आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। वाहनों से निकलने वाली गैसों में 45% कार्बन मोनो आक्साईड की मात्रा होती है जो रक्त में घुलकर ऑक्सीजन की क्षमता कम कर देती है।

वायु प्रदूषण के प्रभाव के फलस्वरूप वर्षा का जल अम्लीय होकर गिरने लगता है इस अम्ल वर्षा के जमीन की मिट्टी में अम्लीयता बढ़ जाती है और उसकी उपजाऊ क्षमता घट जाती है। आज देश के अनेक शहर इस अम्लीय वर्षा से प्रभावित हैं। मथुरा में स्थित खनिज तेल रिफाइनरी के कारण वायुमंडल में बढ़ती नाइट्रस आक्साईड के कारण होने वाली तेजाबी वर्षा में

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी उत्कृष्टता स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

आगरा के विश्व प्रसिद्ध ताजमहल के क्षय का खतरा पैदा हो गया है। वर्तमान समय में मानव की भोगविलासिता एवं स्वार्थी संस्कृति के अनुसंरण के कारण कई प्रदूषण समाज के सामने उसके अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगा रहे हैं।

अत: संपूर्ण समाज का यह दायित्व है कि पर्यावरण को अगर प्रदूषण से बचाना है तो सबसे पहले वृक्षों के संरक्षण पर बल देना होगा साथ ही प्रदूषण फैलाने वाली औद्योगिक इकाइयों को बंद करना होगा। एयर कंडीशनर जो गर्मी में आराम तो देता है लेकिन पर्यावरण को सबसे ज्यादा दूषित है। पर्यावरण संरक्षण के लिये कारगर रणनीति बनानी होगी लोगों में जागरूकता फैलाने के साथ-साथ वन संरक्षण व प्रदूषण रोकने हेतु प्रभावी कानूनों का कड़ाई से पालन कर जीवन को सुरक्षित करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवस्थी, एन.एम. एवं तिवारी आर.पी. : पर्यावरण भूगोल म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 1995
2. पुरोहित, एस.एस. वृक्ष, वृक्षारोपण एवं पर्यावरण संरक्षण, एग्रो बोटेनिका, बीकानेर, 1999
3. गुर्जर, राजकुमार : पर्यावरणीय समस्यायें, पोइन्टर पब्लिशर्स आगरा, 2000
4. प्रसाद, शुकदेव : 'पर्यावरण और हम' प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1998
5. खंडेला, मानचंद : 'पर्यावरण संरक्षण एवं सामाजिक दायित्व' पोइन्टर पब्लिशर्स, जबलपुर, 2008
6. रचना : जनवरी 2005

****

महिला उत्पीड़न एवं मानवाधिकार

डॉ. सुमित्रा वर्मा *

प्रस्तावना – उत्पीड़न का संबंध शक्ति एवं सुविधा से होता है जो विजित द्वारा पराजित का, या स्वामी द्वारा दास का, या संपन्न द्वारा विपन्न का, पुरूष द्वारा नारी का किसी भी रूप में हो सकता है यह कितना निर्मम या उदार होगा यह विषय एवं परिस्थिति पर निर्भर है। जब बात महिला उत्पीड़न की हो तो 'हिन्दू स्त्री के लिये सती होना बहुत सरल है परुंतु अपनी मानवीय इच्छा को अभिव्यक्त करना बहुत कठिन है' जयशंकर प्रसाद का यह कथन है 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' उस संदर्भ मे ही सत्य एवं सम्मानजनक स्थान ग्रहण करता है, जहाँ नारी पुरूष शक्ति के अधीन नहीं है। जहाँ उसकी स्थिति अधीनस्थ की है वहाँ वह भोग्या, वस्तु, खंडित व्यक्तित्व, उपनिवेश का पर्याय है। पुरूष ने हमेशा स्त्री के लिये निर्णय लिए हैं अधीनस्थ एवं शोषित नारी की स्थिति शूद्र पुरूष से भी अधिक दलित है। दलित पुरूष को आरक्षण मिला हुआ है। वह अपने अधिकारों के प्रति सजग है। वह मार खाता है तो दूसरों को मारता भी है। नारी हिंसा को सहती है उसका विरोध नहीं कर सकती केवल रोती है, सहती है उस का न्यायिक बोध कम क्यों है ? अल्टेकर ने कहा है कि 'नारी के प्रति सम्मान की मात्रा को समाज की सभ्यता का एक मापदंड माना जाता था।' किंतु वैदिक कालीन नारी की यह स्थिति मध्य काल से लेकर पूर्व स्वतंत्रता काल तक अध: पतन की चरम सीमा को स्पर्श कर चुकी थी। आत्म पहचान एवं स्वतंत्रता के लिये संघर्ष का इतिहास ले देकर पचास वर्षो का ही है। महिला और उत्पीड़न का संबंध सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक रहा है अवांछित, ज्ञात, अज्ञात, प्रत्यक्ष, परोक्ष एवं अत्याचारी, आचरण की परिणति नारी उत्पीड़न में होती है। नारी द्वारा नारी का उत्पीड़न भी एक घिनौना सत्य है।

नारी उत्पीड़न का प्रथम पक्ष नारीत्व अर्थात जैवकीय पक्ष से संबंधित है जो छेड़छाड़, बलात्कार, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज हत्यायें तथा मनोसामाजिक हिंसा आर्थिक भेदभाव के रूप में दिखाई देता है। उत्पीड़न का दूसरा पक्ष स्त्री सुलभ शारीरिक दुर्बलता–मारपीट, शारीरिक दण्ड, हत्या, मानसिक यातना आदि से संबंधित है। उत्पीड़न की केवल एक शर्त है विषय की उपस्थिति अर्थात प्रस्तुत प्रसंग में नारी का उपस्थित होना अत्याचारी किसी न किसी रूप में उत्पीड़ित महिलाओं के संबंधी या परिचित होते है। नशे की हालत में पीटनेवाले पतियों की संख्या से अधिक संख्या पूर्ण रूप से होशोहवास में बल प्रयोग करने वाले पतियों की होती है, विविध यौन अत्याचारों का शिकार अधिकाशंत: 20–30 वर्ष की महिलाएं होती हैं। सांस्कृतिक मूल्य प्रतिमान, लिंग गत भेदभाव एवं तथाकथित हिंसा को जन्म देते हैं। पितृ सत्तात्मकता, पुत्र श्रेष्ठता अक्षत योनि कौमार्य जौसे सांस्कृतिक मूल्य अन्तर्लिंगीय संबंधों का निर्धारण कर लिंगात्मक भेदभाव तथा हिंसा को आश्रय देते हैं। इन विषम परिस्थितियों में स्त्रियों के सम्मानजनक अस्तित्व हेतु मानव अधिकार प्रासंगिक है।

आदिम अवस्था से वर्तमान जटिल सामाजिक व्यवस्था का इतिहास प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष एवं मानव अधिकार चेतना का इतिहास है। सृष्टि के आरंभ से ही मानव अपने जीवन की मूल आवश्यकताओं, जीवन रक्षा, स्वतंत्रता के प्रति जागरूक रहा है। उसके अपने सर्वांगीण विकास हेतु अनुकूलनतम परिस्थतियों एवं प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश की आवश्यकता होती है। मानव के सम्मानजनक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए न्यूनतम अधिकारों की सार्वभौमिक स्वीकृति ही मानव अधिकारवादी अवधारणा है। मानव अधिकारों की अवधारणा मौलिक अधिकारों की अवधारणा से भिन्नता रखती है। मौलिक अधिकार लोकतंत्रीय व्यवस्था के आधार है। जबकि मानव अधिकार मानवजीवन के आधार है जो मानव को मानव होने के नाते प्राप्त होते है। मानव अधिकारों के संबंध में व्यवस्थित रूप से सोचने तथा उन्हें संगठित स्वरूप देने का प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास 25 सितम्बर 1926 को दासता के विरूद्ध हुए विश्व सम्मेलन के रूप में सामने आया। लगभग 4 वर्ष बाद 28 जून 1930 को बलात श्रम पर सम्मेलन हुआ। 18 वर्ष के लंबे अंतराल के पश्चात् मानव अधिकारों की सुव्यस्थित घोषणा 10 दिसम्बर 1948 को की गई। इसमें प्रस्तावना सहित 30 अनुच्छेद हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा की गई यह घोषणा मानव अधिकारों की विश्व घोषणा कहलाती है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकार की स्वीकृति एवं संरक्षण के लिए राष्ट्र मंडल द्वारा किये गये उपाय संयुक्त संघ की स्थापना एवं मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा एवं नागरिक सामाजिक, आर्थिक अभिसमयों के माध्यम से महत्वपूर्ण प्रयत्न हुए है। मानव अधिकारों की अवधारणा देशकाल परिस्थितियों सामाजिक दृष्टिकोणों एवं प्रचलित मूल्यों के अनुसार परिवर्तनशील रही है। 1993 की मानव अधिकारों पर विएना में आयोजित विश्व सम्मेलन में महिलाओं तथा बालिकाओं के मानवअधिकारों की घोषणा करते हुए उन्हें अहस्तातंरणीय, अविभङ्गीय तथा समग्र स्वीकार किया गया है।

हमारे संविधान में इस बात को स्वीकार किया गया कि महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव एवं असमानता को दूर करके उन्हें अपने मानवीय अधिकारों के उपयोग हेतु व्यापक अवसर मिले। राज्य को यह अधिकार दिया गया है कि वह महिलाओं के शारीरिक, जैविक, आर्थिक एवं सामाजिक सामान्य स्थिति को ध्यान में रखकर आवश्यक कानून बनाये। केन्द्र सरकार, राज्य सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा हितों की रक्षा, उनके विरूद्ध होने वाले उत्पीड़न एवं शोषण को रोकने हेतु अनेक कठोर कानून बनाये हैं तथा विभिन्न कानूनों में आवश्यक संशोधन भी किये है। यद्यपि उक्त वैधानिक कदमों से महिलाओं के ऊपर होते अत्याचारों एव शोषण में कमी तो आई है। लेकिन समाज में अभी तक महिलाओं को सम्मानजनक एवं समानता की स्थिति देने की मानसिकता न होने के कारण उनकी रक्षा एवं विकास हेतु तमाम कानूनों के बाद भी महिला भेदभाव यौन प्रताड़ना अत्याचार के मामलें सामने आते है। जहाँ घरेलू महिलाओं को उनके परिवार में चाहे वह मायका हो या ससुराल, विभिन्न कारणों से शारीरिक मानसिक अत्याचार, शोषण सहन करना पड़ता है। उन्हें परिवार के पुरूष सदस्यों के समकक्ष आर्थिक सामाजिक शैक्षणिक अधिकारों से वंचित रखा जाता है। वहीं कामकाजी स्त्रियों को अपने कार्यस्थल में पुरूष सहकर्मियों के अपमानजनक व्यवहार तथा यौन प्रताड़ना तक का सामना करना पड़ता है जिसे वे विवश्ता एवं बदनामी के डर से चुपचाप सहन

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, ढ़ाना, जिला – सागर (म.प्र.) भारत

करती हे। इस प्रकार वे दोहरी प्रताड़ना का शिकार होती है।

उक्त दिशा में भारत की न्यायपालिका ने उक्त दायित्व का निर्वाहन अच्छी तरह किया है। अनेक महत्वपूर्ण निर्णयों के साथ, महिलाओं के विशेष रूप से कामकाजी महिलाओं के विशेष रूप से कामकाजी महिलाओं के शुचिता एवं उनके अधिकार एवं उनकी निजता के बारे में नई व्याख्या भी की है।

महिलाओं की निजता एवं यौन प्रताड़ना के विरूद्ध अधिकार के संबंध में आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय में ही 'सरिता विरूद्ध वेकंट सुब्रहानियम' के प्रकरण में (ए.आई.आर.1983 ए.पी. 356) यह निर्णित था कि धारा 9 हिंदू विवाह नियम जिसके द्धारा कोई भी व्यक्ति न्यायालय में आवेदन देकर अपने पति या पत्नि के विरूद्ध वैवाहिक संबंधों की पुनर्स्थापना की 'डिक्री' दिए जाने की प्रार्थना कर सकता है, संविधान के अनुच्छेद 21 की भावना के विरूद्ध है। क्योंकि किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरूद्ध किसी अन्य व्यक्ति के साथ रहने के लिए विवश नहीं किया जा सकता अत: ऐसा कोई भी आदेश संविधान के अनुच्छेद 21 में दिए गए 'जीवन के अधिकार के खिलाफ है'। 'महाराष्ट्र सरकार विरूद्ध मधुकर नारायन' (ए.आई.आर. 1991 सुप्रीम 207) में यह घोषित किया गया है कि चारित्रिक रूप से पतित महिला को भी अपनी निजता की सुरक्षा का अधिकार है तथा किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं कि वह अपनी मर्जी से महिला की निजता को भंग करे। इसी प्रकार नीरा विरूद्ध एम.आई.सी. (1992 ए.आई.आर. सुप्रीम कोर्ट) में जीवन बीमा कार्पोरेशन को यह निर्देशित किया गया कि वह महिला कर्मचारियों की भर्ती के फार्म में इस तरह के प्रश्न हटा दें जो कि उनकी निजता को भंग करते हैं एवं उनकी शारीरिक एवं जैविक स्थितियों से संबंधित हैं। जो महिलाओं के लिये लज्जाजनक हो। इसी प्रकार एयर इंडिया की परिचारिकाओं की भर्ती के पूर्व उनकी यौन परीक्षा को भी महिलाओं की निजता का उल्लंघन माना है एवं अवैध घोषित किया है। पंजाब राज्य विरूद्ध गुरमीत सिंह ने (ए.आई.आर. 1996 सुप्रीम कोर्ट 1393) में यह निर्णीत किया गया कि बलात्कार का अपराध न केवल पीड़ित महिला की निजता एवं व्यक्तिगत पवित्रता को भंग करता है। बल्कि वह शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक रूप से गंभीर प्रभाव डालता है। तथा ऐसा कृत्य हत्या से भी जघन्य अपराध है क्योंकि वह एक असहाय महिला की आत्मा की हत्या उसके जीते जी कर देता है। आर्थिक शक्ति के अधिकार के अंतर्गत – (ए.आई.आर. 1996 सुप्रीम कोर्ट 1697) ने यह निर्णीत कि या है कि महिलाएं आबादी का आधा हिस्सा होती हैं वे काम के कुल अवधि का 2/3 अवधि कार्य करती है लेकिन वे विश्व की कुल आय का मात्र दसवां हिस्सा प्राप्त करती हैं। और उनका पूरी विश्व की संपत्ति में सौंवे से भी कम हिस्सा है। स्त्रियों के शारीरिक श्रम की कोई मान्यता नहीं है न ही इन्हें इस श्रम के कारण कोई आर्थिक अधिकार प्राप्त होते हैं । यहाँ तक कि कामकाजी महिलाएं भी आर्थिक रूप से अपने पिता या पति से स्वतंत्र नहीं है। महिला संरक्षण ग्रहों की स्थिति के सुधार में ए.आई.आर. 1983 सुप्रीम कोर्ट 378 (शीला विरूद्ध महाराष्ट्र राज्य) के प्रकरण में जेल तथा पुलिस थानों में बंद महिलाओं को केवल बंदीगृह में महिला पुलिस कर्मियों की अभिरक्षा मे रखा जाये तथा उनसे कोई भी पूछताछ केवल महिला कर्मी द्धारा की जाये।

आज समाज की नारियों में दो वर्ग स्पष्ट रूप से दिखाई देते हें शिक्षित महिलाएं एवं गृहणियाँ। शिक्षित महिलाओं को कदम-कदम पर अपमानित होना पड़ता है उनके तेजस्वी ज्ञान एवं व्यक्तित्व को नकारकर केवल उनमें एक 'एक मादा' को देखना। यह टकराव गांव के पंचायतों, सामाजिक संस्थाओं से लेकर उच्च वर्ग तक व्याप्त है, अब सवाल उठता है कि जो शिक्षा नारी को समर्थ बनाने के लिए दी जाती है वह दुर्बलता का कारण क्यों –

1. क्या नारियों का समकक्ष स्थान लेना पुरूष अहम् को कचोटता है, उसकी मानसिकता नारी को देवी का स्थान दे सकती है क्योंकि यह भी उसके अहं की संतुष्टी है लेकिन नारी उसके साथ बढ़-चढ़कर बोले उसे स्वीकार नहीं है। वह अहं दमन के स्थान पर ठेस के कारणों को नकारता है।
2. क्या पुरूष मनोवृत्ति नारी को उपभोग सामग्री से भिन्न देखने तैयार नहीं। संभवत: आई.ए.एस. जैसे उच्च पदासीन महिलाओं को इस तरह की मानसिक प्रताड़ना से रूबरू होना पड़ा।
3. क्या पुरूष अहं इस बात से डरा है कि नारी की आंतरिक शक्ति जागृत हो गई तो वह दुर्दान्त रूप ले लेगी ? पुरूषों से आगे निकल जायेगी।
4. पुस्तकीय ज्ञान नारी की क्या वास्तविक मानसिक उपलब्धि है? पुस्तकीय ज्ञान के बावजूद नारी अपनी मानसिकता को तीव्र बनाने में असफल रहती है क्योंकि अधिकांशत: सरकारी दफ्तरों में कामकाजी महिलाएं उन मुद्दों पर बहस नहीं चाहती जो देश एवं समकालीन विषय से हो।
5. क्या नारी स्वयं को सुविधाजनक स्थिति में रखना चाहती है। जाने अनजाने पुरूष के अहं का समर्थन करती है। अनेक स्थानों पर महिलाएं स्वयं को पीछे कर लेती है। यद्यपि ऐसा है तो जब तक नारी की मानसिकता को ही नहीं बदला जाए ताक दूसरों पर दोषारोपण ठीक नहीं।

उपर्युक्त प्रयास ऊँट के मुँह में जीरे के समान है महिलाओं को उनके बुनियादी मानवीय अधिकार तथा सम्मानजनक एवं समानता युक्त जीवन तब तक नहीं मिल सकता जब तक कि हमारे समाज की मानसिकता में परिवर्तन न हो समान कानून बनाने के लिए कितने आंदोलन हुए। परंतु प्रश्न है कि इसे लागू कैसे किया जाए? स्त्रियो संबंधी दोहरे मानदंडों में असमानता एवं शोषण की दरार उनके घर में विद्यमान है। पुरूष सत्ता इस असमानता को दूर करने में संशय युक्त है। परम्परा और संस्कृति में स्त्री की सेक्स और मातृत्व ये दो ही भूमिका निर्धारित की है। स्त्री के दमन को जिस निर्ममता से भारत में तामझाम भरे धार्मिक उत्सव का रूप दिया गया, सभवत: दुनिया के किसी समाज में ऐसा नहीं हुआ। वह बार बार देवी बताई गई, पर उसकी जिंदगी बंधुआ मजदूर की ही रही है।

स्त्री की स्वतंत्र पहचान, स्वतंत्र जीवन शैली, स्त्री संस्कृति रूपों के सृजन एवं गैर पुरूष संदर्भो की सृष्टि हेतु पहली शर्त है कि स्त्री स्वंय को अलग रूप में देखें। पुरूष से अपनी भिन्नता को पहचाने। माँ, बहिन, पत्नि से पहले वह स्त्री है और इंसान है। इसकी सचेत पहचान जब तक स्त्री को नहीं होगी वह पुरुषवादी सत्ता की दासी बनी रहेगी। काई स्त्री जन्मजात स्त्री नहीं होती वह तो सामाजिक निर्मिती होती है। एवं पुरूष दो विरोधी तत्व न बने बल्कि एक दूसरे के पूरक हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ए.एस.अल्टेकर, पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन।
2. नारी, एत्पीड़न : एक समानशास्त्रीय विश्लेषण, प्रो. आभा अवस्थी, लखनऊ विश्वविद्यालय, सामाजिक विकल्प।
3. मानवाधिकार : संरक्षण एवं जागरूकता, स्मारिका 31 दिसम्बर 2003
4. घरेलू हिंसा : राष्टीय संगोष्ठी, 2006
5. गार्गी मैत्रेयी के बहाने, डॉ. रति सक्सेना, पेज नं. 6 रचना।
6. महिलाओं के मानवीय अधिकार एवं न्यायपालिका, मधुकर ललोरया (श्रीवास्तव), अरविंद श्रीवास्तव पेज नं. 44।
7. स्त्री साहित्य का इतिहास, जगदीश्वर चतुर्वेदी, पेज नं. 12।
8. Human Rights And Victimology - V.V. Devasia, Leelamma Devasia. page No. 25

महिला कानून एवं अधिकार

डॉ. उमा लवानिया *

शोध सारांश – सत्ता एवं अधिकारों का संघर्ष उतना ही पुराना है जितनी मानवीय सभ्यता। यह संघर्ष तब और अधिक बढ़ा जब मनुष्य ने व्यक्तिगत जीवन व समाज की नींव रखी। एक सामाजिक प्राणी के रूप में मानवीय विकास के लिऐ यह आवश्यक था कि जहाँ एक ओर वह अपने अधिकारों की माँग करें वहीं दूसरी ओर वह अन्य मनुष्यों के उन्हीं अधिकारों का सम्मान भी करे। भारतीय संविधान में लिंग समानता को स्त्रियों के अधिकार की आधारशिला माना गया है। इस आधार पर उनको न केवल पुरूषों के समान मतदान का अधिकार दिया गया बल्कि अन्य क्षेत्रों जैसे – शिक्षा, व्यवसाय, उत्तराधिकार व्यापार तथा वैवाहिक जीवन में भी समान अधिकारों का प्रावधान किया गया है। हिन्दू संस्कृति में पत्नि को अर्द्धांगिंनी का प्रावधान किया गया है। अर्द्धांगिंनी इस बात का द्योतक है कि अपने पति के जीवन के सभी क्षेत्रों में समान रूप से अधिकारी है।

प्रस्तावना – भारत के पुराने समाज सुधाकर राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती, रानाडे आदि ने सती प्रथा, कन्या वध, पर्दाप्रथा, बाल विवाह प्रथा, वैध कर कन्याओं को शिक्षा दिलाने पर रोक आदि के विरोध में आंदोलन किया। उस समय के सुधारकों ने हिन्दू धर्म में छिपी हुई बुराइयों के विरूद्ध न केवल सुधार, संग्राम किये बल्कि तर्क युक्त एवं मान्यता के हित में प्राचीन साहित्य की पुनर्कल्पना भी की हैं मानव अधिकारी व्यक्तिव विकास, शोषण रहित समाज, आर्थिक समृद्धि और विश्वशांति के लिये अनिवार्य हैं महिलांए जो विश्व की आबादी का आधा हिस्सा हैं और जिनका समाज निर्माण में योगदान पुरूषों से किसी भी प्रकार कम नहीं है अटल बिहारी वाजपेयी जी की यह पंक्तियाँ भी पीड़िता नारी के अन्तर्गत में उठ रहे अन्तर्द्वन्द को उजागर करती है जब नारी सभी जगह से निराश हो जाए तो उसके लिऐ हमारा संविधान उसका रक्षक बन नारी के जीने का नया मार्ग प्रशस्त करता हैं संविधान भारत के अन्य नागरिकों के समान ही महिलाओं को भी सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक न्याय प्रदान करने की घोषणा करता है।

भारतीय संविधान एवं कानून महिलाओं की समस्याओं के प्रति पूर्णत: संवेदनशील है भारत सहित विश्व के कई देश 8 मार्च को विश्व के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महिलाओं की समान भागीदारी और महिलाओं की प्रतिष्ठा स्थापित करने के स्वीकृत प्रयास दिवस के रूप में मनाते है। 8 मार्च 1998 को भारत की प्रथम महिला श्रीमती उषा नारायण ने महिला विकास विचार गोष्ठी का उद्घाटन करते हुये आशा व्यक्त की, कि यदि महिलाओं को जानबूझ कर बेड़ियाँ नहीं पहनाई जाये और उनको दबाकर नहीं रखा जाये तो पिछले 50 वर्षो में राष्ट्र के निर्माण के बेहतर भागीदारी निभाने में पूर्ण सक्षम है।

सत्ता एवं अधिकारों का संघर्ष उतना ही पुराना है जितनी मानवीय सभ्यता। यह संघर्ष तब और अधिक बढ़ा जब मनुष्य ने व्यक्तिगत जीवन व समाज की नींव रखी। एक सामाजिक प्राणी के रूप में मानवीय विकास के लिऐ यह आवश्यक था कि जहाँ एक ओर वह अपने अधिकारों की माँग करें वहीं दूसरी ओर वह अन्य मनुष्यों के उन्हीं अधिकारों का सम्मान भी करे। भारतीय संविधान में लिंग समानता को स्त्रियों के अधिकार की आधारशिला माना गया है। इस आधार पर उनको न केवल पुरूषों के समान मतदान का अधिकार दिया गया बल्कि अन्य क्षेत्रों जैसे– शिक्षा, व्यवसाय, उत्तराधिकार व्यापार तथा वैवाहिक जीवन में भी समान अधिकारों का प्रावधान दिया गया है। हिन्दू संस्कृति में पत्नि को अर्द्धांगिंनी का प्रावधान किया गया है। अर्द्धांगिंनी इस बात का द्योतक है कि अपने पति के जीवन के सभी क्षेत्रों में समान रूप से अधिकारी है।

भारत के पुराने समाज सुधाकर राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती, रानाडे आदि ने सती प्रथा, कन्या वध, पर्दाप्रथा, बाल विवाह प्रथा, वैध कर कन्याओं को शिक्षा दिलाने पर रोक आदि के विरोध में आंदोलन किया। उस समय के सुधारकों ने हिन्दू धर्म में छिपी हुई बुराइयों के विरूद्ध न केवल सुधार, संग्राम किये बल्कि तर्क युक्त एवं मान्यता के हित में प्राचीन साहित्य की पुनर्कल्पना भी की हैं मानव अधिकारी व्यक्तिव विकास, शोषण रहित समाज, आर्थिक समृद्धि और विश्वशांति के लिये अनिवार्य हैं महिलांए जो विश्व की आबादी का आधा हिस्सा हैं और जिनका समाज निर्माण में योगदान पुरूषों से किसी भी प्रकार कम नहीं है अटल बिहारी वाजपेयी जी की यह पंक्तियाँ भी पीड़िता नारी के अन्तर्गत में उठ रहे अन्तर्द्वन्द को उजागर करती है जब नारी सभी जगह से निराश हो जाए तो उसके लिऐ हमारा संविधान उसका रक्षक बन नारी के जीने का नया मार्ग प्रशस्त करता हैं संविधान भारत के अन्य नागरिकों के समान ही महिलाओं को भी सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक न्याय प्रदान करने की घोषणा करता है। देश का संविधान महिलाओं के लिये तीन तरीकों से लाभ पहुँचाने की विशिष्ट मंशा रखता है –

- संविधान महिलाओं और पुरूषों में लैंगिक भेदभाव मिटाने की मंशा रखता है।
- महिलाओं को पारम्परिक रूप से प्रताड़ित किया गया है तथा हीन समझा गया है। इस अन्याय को समाप्त करने के लिए संविधान सरकार को, महिलाओं के हित में विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है।
- संविधान निहित रूप से यह उम्मीद रखता हैं कि सरकार सभी कमजोर वर्गो, जिसमें महिलाँए शामिल हैं की स्थिति सुधारने के लिऐ विशेष प्रयत्न करेंगी।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

मूल संविधान अधिकारों में समानता के अधिकार का महिलाओं के लिए विशेष महत्व हैं संविधान में महिलाओं के अधिकारों और प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए धारा 14 व 15, धारा 51 (A) (e) धारा 21, धारा 32 एवं धारा 226के अंतर्गत प्रावधान किया गया है। भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 14, धारा 354, 366, 373, 376 (एक्ट नं. 45 ऑफ 1860), धारा 125 (i) (a) में महिलाओं की देह, प्रतिष्ठा, गरिमा, सुरक्षा एवं परित्यक्ता पत्नि को पति से निर्वाह भत्ता प्राप्त करने का प्रावधान किया गया है।

संवैधानिक अधिकर –

- **सम्पत्ति संबंधी अधिकार–** हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1961 स्त्रियों को संपत्ति में अधिकार पाने का प्रावधान देता है।
- **विवाह संबंधी अधिनियम –** विशेष विवाह अधिनियम 1954, पुरूषों को 21 वर्ष से अधिक व स्त्रियों को 18 वर्ष से अधिक की आयु में विवाह की अनुमति देता है।
- **जीवनसाथी का चुनाव–** विशेष विवाह अधिनियम 1954 में 18 वर्ष से अधिक की लड़की को जीवन साथी चुनने का अधिकार है।
- **बहु-विवाह –** हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 ने हिन्दूओं के लिए बहु विवाह अपराध घोषित किया है।
- **विवाह विच्छेद:–** विशेष विवाह अधिनियम 1954 एवं हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 विवाह विच्छेद वा न्यायिक पृथकता की अनुमति देता है। जिसमें अब संशोधन हुआ है। 1976 से विवाह विच्छेद की अनुमति जीवन साथी की सहमति के आधार पर दी जाती है।
- **विधवा पुनर्विवाह–** ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयत्नों के फलस्वरूप 1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित हुआ।
- **दहेज निरोधक अधिनियम:–** दहेज निरोधक अधिनियम 1961 में दहेज लेना वा देना दोनों ही अपराध बताया गया।
- **भरण-पोषण अधिनियम:–** 1956 के अनुसार हिन्दू पत्नि व उसके बच्चों के भरण पोषण के उत्तराधिकार पति पर है।
- **कामकाजी महिलाओं के अधिकार:–** कामकाजी महिलाओं के अधिकारों के संबंध में भारत के संविधान में नीति निदेशक तत्वों में विशेष उपबंध किए गए है। संविधान में अनुच्छेद 39 में समान कार्य के लिए समान वेतन देने की बात संकल्प के रूप में दोहराई गई है। जिसे प्राप्त करने के लिए तथा महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए कानून में विशेष रूप से कामकाजी महिलाओं के अधिकार सम्मिलित किए गए है–
  - मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961
  - न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948
  - मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1948
  - कारखाना अधिनियम,
  - नियोजित राज्य बीमा अधिनियम,
  - कार्मिक अधिनियम, 1951
  - संविदा कर्मकार अधिनियम,1970
  - बंधुआ श्रमिक व्यवस्था(उन्मूलन) अधिनियम, 1976
  - अन्तर्राज्जीय प्रवहन कर्मकार अधिनियम, 1971
  - बाल कर्मकार अधिनियम, 1986

भारतीय संविधान एवं कानून महिलाओं की समस्याओं के प्रति पूर्णत: संवेदनशील है भारत सहित विश्व के कई देश 8 मार्च को विश्व के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महिलाओं की समान भागीदारी और महिलाओं की प्रतिष्ठा स्थापित करने के स्वीकृत प्रयास दिवस के रूप में मनाते है। 8 मार्च 1998 को भारत की प्रथम महिला श्रीमति उषा नारायण ने महिला विकास विचार गोष्ठी का उद्घाटन करते हुये आशा व्यक्त की, कि यदि महिलाओं को जानबूझ कर बेड़ियाँ नहीं पहनाई जाये और उनको दबाकर नहीं रखा जाये तो पिछले 50 वर्षो में राष्ट्र के निर्माण के बेहतर भागीदारी निभाने में पूर्ण सक्षम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत में मानव अधिकार, अरूण चतुर्वेदी, संजय लोढ़ा
2. महिला विश्वकोश, रमा शर्मा, एम.के. मिश्र
3. नारी सशक्तिकरण, डॉ. हरीदास रामजी शेण्डे (सुदर्शन)
4. महिला विकास, रमा शर्मा, एम.के. मिश्र
5. आधुनिक समाज शास्त्रीय निबंध, एम.एन.सिंह
6. महिला अधिकार एवं कानून, डॉ. रीता सक्सेना
7. वीमेन्स मूवमेन्ट इन इण्डिया विकास, दिल्ली 1974- अस्थाना द पी.
8. इण्डियन वीमेन पॉवर, बेग तारा अली
9. वैवाहिक हिंसा एंव भारतीय अस्मिता, डॉ. जयश्री भट्ट आदित्य पब्लिसर्श बीना
10. औरत अस्मिता और अपराध, डॉ. निशांत सिंह
11. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005

****

The Trinity Of God, Nature, And Man In Rabindranath Tagore's Poetry

Girraj Sharma *

Abstract - In Rabindranath Tagore's poetry his whole art revolves around his three philosophical and mystical constant variables of Indian Mysticism; God, Nature and Man. He has used these variables in his poetry as an instrument to produce eternal happiness, energy and satisfaction to be the part of the Supreme Soul. In his opinion God (Ishwar) has manifested himself in the form of Nature (Prakriti), and he has created Man (Purusha) from his own image. These variables are the constant interlinked to each–other. In his poetry, He has also explained God as the source of pleasure, **Sachchidanand**. These all three are the inseparable part of each other.
Keywords - God, Nature, and Man.

Introduction - Rabindranath Tagore is the one of the most famous men of letters of modern India, whose identity and reputation in the world has brought a great prestige to India. It is only Tagore, in India, who could win the Nobel Prize for Literature through his composition. In the 20th century, no work of a poet created so much sensation among poets writing in English as his **Gitanjali, a** thin small collection of 103 songs, winning the Nobel Prize for Literature in 1913. He was the only person who proved his talent throughout universe in art, culture, painting, literature, politics, social service, music, ethics, and in education. He has remained the glorious tradition and culture of Upanishadic essence, Puranas, Vedas and the great epics, Ramayan and Mahabharat. Thus, the great personality was born at Jorasanko in Calcutta on May 7, 1861. His father Maharishi **Devendranath Tagore** was a rich and Cultured Man, and his mother **Sarda Devi** was a housewife. Tagore's house was full of all artistic activities, his brothers and sisters were poet, musician, theatre artist and social reformers.

So he got a prosperous environment of artistic creeds at his home, which resulted in artistic creed. A man of versatile genius, Tagore was great and prolific writer who wrote about 250 works and 2,500 songs, written by him covering almost all the branches of literature and philosophy. Few highly notable in poetry are as follows: **Gitanjali(1913), The Gardener** (1913); **The Crescent Moon** (1913); **Translation of 100 Kabir's poems** (1914); **Fruit Gathering** (1916), **Stray Birds** (1916); **Lover's Gift and Crossing** (1918), **The Fugitive and Other Poems** (1921); **Poems from Tagore translated by C.F. Andrews** (1912); **Sheaves: Poems and Songs** (1951); **The Golden Boat** (1933); **A Flight of Cranes** (1953); **The Herald of Spring** (1960); **Wings of Death** (The last poems of Tagore, Translated by Aurbindo Bose) (1960); (b) Plays: **The King of Dark Chamber** (1914); **The Post Office** (1914); **Sacrifice and other Plays** (1917); **The Cycle of Spring** (1917); **The Curse at Farewell** (1924); **Red Oleanders** (1925); **Three Plays** (**Mukta Dhara**, **Natir Puja**, and **Chandalika**, with prefatory appreciation by K.R. Kriplani) (1950); **Devouring Love(1916).**

Tagore was also a great philosopher. If one were to put Tagore's total philosophy a nutshell, the term, popularly used to designate Sri Aurobindo's philosophy aptly fits him - 'Integral Yoga'. There is merger with and complete surrender of '**Me'** to **'Him'**, resulting in '**Us'**.[1] Tagore is a wordsmith of considerable vision and innate ability. His poetry is the product of keen observation and deep reflection. in December 1921, Tagore's dream of a World University came true when the **Vishwabharti** was established. It became a meeting forum for diverse peoples and cultures. In 1940, he fell serious by ill and breathed his last on 7th August 1941.

God - In my opinion, the best opening for this part of our title may be the lines of **Gitanjali Song, XLV** -

"Many a song have I sung in many a mood of mind, but all their notes have always proclaimed, He comes, comes, ever comes."(ll. 5–8)

His poem expresses the poet's deep-seated faith of a bond between the finite-infinite man equipped with an immortal soul and the infinite finite (God, embodying different forms and shapes). In Song I, he has used two quite telling metaphors 'this frail vessel', and 'this little flute of a reed'. Of course, the poet feels the God's touch that makes him sing melodious songs full of **Ananda**. The poet becomes at once **sat** (Truth eternal), **chit** (consciousness) and **Anand** (Pleasure); that is a replica of **Sachchidanand**. Two entity's immortal water inside the vessel (human body) does not make any mistake in remembering and recognizing its source (everlastingness); as such water moves on to get back where from it came. The repetition of the terms, **My Lord**, **My Master**, well serves the purpose of the burthen of the expanded song comprising several verses. The Term, **My Lord**, **My Master,** gives a unity of the anthem.

Tagore, like **Tulsi** and **Kabir** treats God as his master **Swami** or **Thakur** and himself as his das or servant; bat then he would not bank upon only this relationship. He has full faith and total dedication, and in moments of supreme bliss, he makes his master his friend. That is to say, **Bhakti** in Tagore is **Dasya** as well as **Sakhya**. In song no II of Gitanjali, he expressed his feelings of joy when he thinks himself to be an obedient singer of songs: Singing then, he

* **Research Scholar, Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**

has a fancy of becoming a song-bird, because it is only being winged that he could reach Him to touch his feet -

"When thou commandest me to sing.
It seems that my heart would break with pride; and I look to thy face, and tears …….. who art my lord."[2]

Nature - Tagore the great poet of God and Man was a great poet of Nature, too. A worshipper of Nature from his childhood, he dwelt upon both the beautiful physical aspects and the beneficent divine aspects of Nature. He succeeded in discovering a pre-ordained harmony between Man and nature. It may be an exaggeration to say that he makes an important figure among the poets who willingly associated themselves with the **Return to Nature** movement initiated by Rousseau. He himself learnt many a lessons from nature and advocated directly or indirectly to return to Nature for moral lessons and general good. Tagore has written about his early love of nature:

"I had a deep sense, almost from infancy, of the beauty o nature, and intimate feeling of companionship with the trees and the clouds, and felt in tune with the musical touch of the seasons in the air. At the same time I had a peculiar susceptibility to human kindness."[3]

Tagore's attitude towards nature is romantic as it was of the English romantic poets such as Wordsworth, Keats, Shelley, Thomas Gray and Indian poets like Kalidas, Valmiki, it was also mystical as found in William Blake, Coleridge, Kabir, Mira, and Aurobindo Ghose. There is a marked fondness in Nature poets for some natural objects, for example, in Keats and Shelley for birds, in William Wordsworth for flowers. Tagore is a great river poet, and an outstanding poet of the Bengali seasons. His accuracy of the details is breath-holding. Rainy season has found a considerable place in Tagore's depictions of season. Imaginative touches bringing to life and presenting the object before our eyes give Tagore supremacy. For example, he has depicted lightning as a fiery snake biting the darkness again and again. Clouds are presented as dancers on the aerial stage. The actor-clouds dance shaking their tambourines of thunder, play their part and disappear. But he is a poet not only of Rains, but also of all other Indian seasons of which he has drawn dozens of pictures all distinct from each other. Like Keats, he liked the autumn. He has personified her as Lakshmi. Noon in the summer so often caught his eye. The tense and pin-drop silence and quietness is his favourite pen-picture. And he is neither blind nor deaf to the beauty and music of spring. He can make his word-picture fragrant with Bakul flowers and musical with humming bees. Comparatively speaking, he is not a lover of winter. In sum, the variety and profusion, and the freshness and loveliness of nature have a magical effect on his reader.

Man- Tagore was a great humanist poet of Indian writing in English. He is known in the west as the great humanist and interpreter of Indian culture. As a true humanist, he was the great lover of freedom and fearlessness.

"Where the mind is without fear and the head, Where knowledge is free…….. Into that heaven of freedom, my Father, let my country awake[4]."

He believes in loving mankind, and like a true Indian, the love of the motherland occupies a unique place in his heart. Rabindranath Tagore has a high estimation and great admiration for India. He has sympathy for the dumb, toiling rural people, for the suffering human beings, for the poor and downtrodden, for the under-dogs and the exploited.

"I felt that I had found my religion at last the religion of man, in which the infinite became defined in humanity and came close to me do as to need my love and co-operation"[5].

This humanism is a part and parcel of his socialism, not of the communist type, but of the humanistic Mein, without violence and without any talk of revolution. The lust for power and materialistic gain of the west had certainly disappointed him. India has one thing of his dream that was a humanistic approach, the dignity for man, proper human values, social justice and above all, mutual respect for each other are the signs of a new social order of Tagore's dream which he wanted to see and realized by Indian people.

Tagore's love for man is all pervasive in his poetry. He has been considered as a prophet of the East coming to deliver his message of goodwill and fraternity among men. He believes in the unity of blood in the world -

"the same stream of life that runs through
My veins night and day runs through the world and dances in rhythmic measures…… and breaks into tumultuous waves of leaves and flowers" [6]

Conclusion - Summing up Tagore's views on God, Nature, and Man as we get them in his poems, songs sand verses, we can remark that his universe is man-centred and God and Nature form the periphery, if one tries to find out the influence of tripartite in his poetry, we find that it moves and harmonies the whole, theme in his poetry which is God, Nature, and Man. He has seen Nature and Man as the artistic act of creation of God, and Man as the highest creation of God. Man is greater than nature because he is blessed with reason and will. Man has to learn discipline, feeling of doing good and harmony from nature. He must enjoy her beauties as things created by God for inner-communication.

References -

Works by Tagore -

1. Gitimala : Vishwabhrati, Calcutta,1962
2. Gitali : Vishwabhrati, Calcutta, 1965
3. Gardner : Vishwabhrati, Calcutta,1988
4. Lover's Gift and : Macmillan India Limited,1992 Crossing
5. Gitanjali : Macmillan India Limited, 1995
6. Religion of Man : Macmillan Publication, Madras, 1988.

Works on Tagore -

1. Mukhouadhadhyay, P. Kumar : Rabindra Sahitya, London, Macmillan and Company, 1951.
2. Thomas, J. Edward : Rabindranath Tagore The Poet and Dramatist, London, Oxford University Press, 1948.
3. Mukherjee, Radha Kamal : A General Theory of Society, London, Macmillan and Company, 1951.
4. Mukherjee, Radha Kamal :The Dynamics of Morals, London, Macmillan and Company, 1951.
5. Mullick, B.R. : The Theory of Literature, New Delhi, S. Chand and Company, 1960.

Foot Note -

1. Sri Aurobindo's Divine
2. Tagore, Rabindranth, Gitanjali, Macmillan & Co. Ltd, India song II- ll-11-13
3. Rabindranath Tagore, Lectures and Addresses, op.cit p.8
4. Rabindranath Tagore, where the mind is without fear, India, Macmillan 1931- ll-1-14
5. Rabindranth Tagore, The Religion of Man", Macmillan company, New York,1931p.3

The Nuances Of Empathetic Realism And Benevolent Humaneness In Narayan's Stories

Vinay Dubey *

Introduction - Life is a queer mixture of joys and sorrows alike. Rather than being a static entity, life is a dynamic organization that offers its own pleasures and pains as its rewards to the human beings. The discourses in the West, in their attempt to comprehend life offer as many '-isms' and '-tions' as nihilism, existentialism, pessimism, optimism and many others that may ultimately drive one crazy in the pursuit of the essence of life. The Eastern concept however offers a fresh perspective where it perceives life not as the cruel and vindictive entity forced upon a human rather it is viewed as one that ought to be cherished by valuing and respecting the humble humanity, devoid of all the affectations and pretentions. R. K. Narayan is one such author among the Indian Writers in English who has reverence for life in its true sense as it is realized by the humble folk of a small town of Malgudi.

R. K. Narayan, Padma Bhushan and a Sahitya Akademi awardee, is one of the three most prominent voices in the Indo-Anglican fiction (Mulk Raj Anand and Raja Rao being the other two). Having the credit of portraying the true and essential India to the world audience, Narayan is hailed as an author par excellence, who, with his simplistic narrative style and a keen insight into his characters, showcases the universality inherent in human behaviour. The paper focusses on three prominent short stories of Narayan, namely *An Astrologer's Day*, *The Doctor's Word* and *The Missing Mail* analysing these as the medium through which Narayan has portrayed the vivid contours of humanity, humble and submissive, yet strong and resilient in their own way, although typically commonplace and not grand or exclusive in any sense. Besides, it would also be a study of the realism inherent in the depiction of characters and circumstances with the stories being narrated through the perspective of a sympathetic yet detached observer.

The short stories of Narayan depict India in a microcosm of Malgudi, a town which is populated with commoners and such people whom one comes across in everyday life; the curious naughty school students, the common village folks, the fruit vendors, an astrologer, a gardener, a gatekeeper, a postman, a beggar, a snake charmer to name a few. These characters are easy to relate to in their manner and mode of behaviour, in their particularities and idiosyncrasies, their typicality yet their endearing individuality. Caught in the existential tussle, away from the weighty political happenings of the country at large, these characters are contented and possessed with the petty issues that in their circumstances seem to be glaringly crucial and vital for their survival.

Short and crisp that these stories are, they serve as armoury of the author to convey his vision of life and the role of human being in it. Life takes many unprecedented twists and turns that can never be anticipated; the only choice one is left with is to accept as it comes to one. Such an artefact becomes the foundation of all the themes dealt by Narayan in his stories. The exceptionality of life that is consisted in its being unprecedented is the one that offers an opportunity to the author for inducing an ironic and twisted turn of plot which brings the character to the forefront and he is compelled to decide between the choices being offered by life only to emerge as victorious in the end. The characters in the three short stories discussed below offer an ample scope for the analysis of the strength as well as the vulnerability of a character that is trapped in the great existential dilemma.

An Astrologer's Day deals with the trick of a cunning astrologer, who is himself as ignorant of the stars and fate as any other commoner. Yet he earns his living by predicting the future of his customers. With stock phrases in his collection for all his customers, he used to beguile them. One evening when he is about to wrap up his small shop, a customer comes and demands him to predict when would he find his enemy and promises to give him a sum total of one rupee for the same. After much procrastination and bargaining, the astrologer starts telling him about his past and future. To the surprise of the customer, he also knows his name. He finally answers the last query of the man by telling him that the person he is looking for is already dead and further that there is doom that awaited him if he travels towards the place again. He commands him to return to his home and never to come back again. When he returns home after the ordeal, he shares his secret with his wife that he met a customer whom he thought of having been murdered by him long ago in the village. He feels happy as he feels unburdened of the guilt of committing a murder.

Weak and frail, this man who practices as an astrologer is one who, after a drunken brawl, runs away from his own village and people fearing that he has murdered a man, settles in another faraway place from his native village. The astrologer's fear of the man knows no bound when he sees him alive in front of him, still in the search of one who tried to

* Asst. Prof. (English) Govt. Girls College, Bina (M.P.) INDIA

kill him. Luckily, the time of sunset, the dark ambience of his prophesying spot and his appearance with vermillion and turban serve as a shield and saves him from being identified. He is forced to answer the questions of the angry customer and finally agrees to it. As is his practice, he pretends to foresee the life of his customer, but the cause this time was not only earning money but to save his own life. Saved ultimately by his talent of chicanery and verbiage, he at last feels relieved and satisfied of finally knowing that he had never committed the murder for which he considered himself guilty.

The Missing Mail is a tale of Thanappa, the postman who is a part and parcel of the lives of people in the area where he delivers the posts. A deliverer of the news about the concerning matters; the postman nonetheless also functions as one who shares the joys and sorrows of the receivers of the posts. Deft in his task of concern with the people he even suggests a proposal for Kamakshi, the daughter of Ramanujam, which is materialised but with the condition of marriage being solemnized as early as possible as there were no auspicious dates after the stipulated time and the potential bridegroom would then be moving out and so the marriage would in jeopardy for the next three years. The postman also offers his sincere services to the family in the best possible manner for making the necessary arrangements. So grave is his concern for the girl's marriage that he is unable to deliver the telegram of his uncle's death to Ramanujam as that would have spoilt the celebrations. The reason that is given by him portrays his immense dutifulness, not towards his profession, but to a cause that was he considered to be more significant:

> "Yes, sir, and the telegram followed next day that is, on the day of the marriage. I was unhappy to see it. . . . 'But what has happened has happened,' I said to myself, and kept it away, fearing that it might interfere with the wedding. . . . You can complain if you like, sir. They will dismiss me. It is a serious offence." (15)

So much overpowered is Thanappa by the desire of the girl getting married successfully that he even breaches the obligations of his duty and does not convey the telegram on time fearing that it may upset the whole plan of marriage. He commits it even when he knows that it is a grave fault on his part only to safeguard the future of Kamakshi, the girl whom he is familiar with since her childhood and whom he cherishes a lot. The desire to safeguard her future makes him forfeit his duty and the logic that he has for it displays his matured outlook as per which, something so grave as a relative's death cannot be allowed to interfere with the upcoming life of one who is standing on the threshold of a new beginning. Although wrong, the choice that he opts for at the moment ultimately infuses happiness to Kamakshi's life which otherwise would have been in trouble adding to the family's sorrow.

The Doctor's Word on the other hand is the fable about one's faith in friendship and its miraculous powers. Dr. Raman, considered by the people of Malgudi as a powerful doctor who without any unpretentious acts could speak out the truth howsoever sour it may be, finds himself at a complete loss when he is to treat his dearest friend Gopal. After the operation, although he himself is sure that the possibility of his survival is relatively low, he is unable to convey it to his ailing friend who needs to know whether he should sign his will if his life is on its verge. Knowing that telling him would be an implication towards his upcoming death, Dr. Raman, contrary to his usual response to any similar situation, tells his friend that he need not sign as he shall recover for sure, although himself aware of the fact that this time he is pretending to predict the impossible. The next morning when he reaches Gopal's house, he is taken aback by the impossible occurrence that his friend has survived. The faith on the bonds of trust in friendship helped Gopal fight his death, but the phenomenon remained a mystery for curt and truthful Dr. Raman "I will bet on it. He will live to be ninety. He has turned the corner. How he has survived this attack will be a puzzle to me all my life" (23).

Dr. Raman, who never cared for the fact that on his words depended the life of the patient, is dismayed at seeing his dearest friend Gopal in a similar condition and inquiring for signs of life in the words of his friend, the doctor. A rational and a curt professional doctor, Raman never believed the fact that kind words on the part of a doctor can work miracles for the patients. Trying to catch even the thousandth probability of the chance that his friend may survive, the doctor is finally compelled to utter a word which this time he knew to be so untrue and trying to give solace to the patient,

Dr. Raman pretended to emphasise that he would definitely survive and so there is no need for the will to be signed. Contrary to his own disbelief, the words of Raman worked miracle for Gopal who had utmost trust on the truthfulness, the expertise and the word of his friend.

Speaking of the art of characterisation and the realism inherent in the stories of Narayan, one of his critics remarks that:

> "He is free from any social or political preoccupation. He chooses matters generally from the day to day life of man and presents them through the medium of art and beauty in such a way that the readers are charmed right from the beginning to the end . . . . like a catalyst, he is always neutral and allows his plot to move in its own way. He never distorts the action of the plot in order to suit his sentiments. He relies more on keen observation and steady accumulation of small details than on evocative description…. He has no great heroes and heroines – only local nobodies and local eccentrics, and his style habitually wears a deliberated drab air so that the thrusts of his insistent irony are felt all the more sharply."(Prasad vii)

Speaking of Narayan's narrative style, one of his most prominent critic remarks that is notable for its simplicity and unaffectionate quality where, unlike the authors stuffing their stories with all sort of pedantry and erudition, Narayan simply narrates the plot as showcasing reality without the touch of elegance or pedantry, not even didacticism.

His style is limpid, simple, calm and unaffected natural in its run and tone, and beautifully measured to its purpose. It has neither the American purr of the combustion engine nor the thick marmalade quality of British English, and it communicates with complete ease a different and Indian sensibility. (Walsh 7)

It is this quality of his writings that infuses the true essence of the Indian sensibility to his stories. Consequently the stories get transformed from the mere presentation in black and white to a representation where the characters as well as the situations come alive for the reader to relish each and every passing moment. Despite the fact that he uses a medium of communication which does not belong to our natural emotional and mental setup, yet he uses it so deftly that it seems to stand tall in its reputation among the gems of English classics. The comment of Raja Rao in this relation is indispensable:

"One has to convey in a language that is not one's own the spirit that is one's own. One has to convey the various shades and omissions of a certain thought-movement that looks maltreated in an alien language. I use the word 'alien', yet English is not really an alien language to us. It is the language of our intellectual make-up like Sanskrit or Persian was before, but not of our emotional make-up. We are all instinctively bi-lingual, many of us writing in our own language and in English. We cannot write like the English. We should not. We cannot write only as Indians. We have grown to look at the large world as part of us. Our method of expression therefore has to be a dialect which will some day prove to be as distinctive and colourful as the Irish or the American. Time alone will justify it ". (Rao 1)

Owing to this Indianness in the works of Narayan, Graham Greene further writes about his friend, "Narayan wakes in me a spring of gratitude...without him I could never have known what it is like to be Indian" (1).

Rather than deliberately manipulating with the plot, Narayan proceeds with it in a matter-of-fact and placid style that offers an opportunity for the traits of the characters to highlight their own selves. His characters thus need a little introduction regarding their physical attributes; rest of their persona gets displayed by the acts and conscious and deliberate decisions that these characters opt for amidst the situations that may lead to severe consequences ranging from heartbreaks to sorrow and loss of life being the worst of them. Emotions and feelings, rather than turning loose as the frailties of humanity, gain a fresh status of the human strength and faith. Herein lies the true empathy of the author who rather that pitying for human sorrows or disappointments, sympathises with that humane faculty in human beings that leads them to feel, think and act for their fellow beings, their friends or family or even their acquaintances. Such a portrayal can be undoubtedly deemed as a thoroughly realistic in its conception, progression and conclusion. Blending such realism inherent in situations with the ironical touches of his artistic expertise, Narayan successfully draws out an artistic marvel that seems to mingle aesthetic and didactic sense in balanced proportion so that the reader can get the intended message without the author deliberately pouring it over him.

References -

1. Walsh, William. *R.K.Narayan: A Critical Appreciation*. New Delhi: Allied, 1982. Print.
2. Greene, Graham. "Introduction". *The Financial Expert by R.K.Narayan*. Mysore: Indian Thought, 1984. Print.
3. Prasad, Amar Nath, ed. *Critical Response to R.K. Narayan*. New Delhi: Sarup & Sons, 2003. Print.
4. Rao, Raja. *Kanthapura*. New Delhi: Orient Paperbacks, 1970. Print.

****

Mahesh Dattani's 'Tara' - Female Psyche And Gender Issues

Dr. Jyoti Taneja *

Abstract - Drama is the most direct form of the performing arts that appeals to the eye forming and connects immediately with the audience while maintaining aesthetics of the art.The dexterous use of the art has engraved Mahesh Dattani's name on the gigantic canvas of Anglo-Indian Drama. He is a playwright of the modern times who has made a substantial standing in today's world by focusing on the burning issues that take over the limelight. He is a versatile genius, a director, actor, dancer, teacher and a writer. 'Tara', a problem play, is an objective study of female psyche. The play presents the conflict between illusion and reality. It is a play about the gendered self, and about accepting theharsh reality of the struggles for being a female in this male dominated society. Tara the protagonist of the play highlights the plight of women who were assumed and accepted to be suitable for the householddominion only. Women may have been placed high in the realm of philosophy, yet in practice they remain undermined. The dramatist reverses the oft used male/female vernacularpair and names the play 'Tara'and jabs the audience gently laying before them the bare reality of the tradition which hold a man superior to woman. The paper is an attempt to reveal the complexities of the conflicts which arise in the psyche of women at different stages of her life. The problem of gender discrimination and the struggle for the search of identity which hovers in the psyche of women is left to the audience to ponder, reflect and tackle.

Introduction - Drama is the most direct form of the performing arts that appeals to the eye forming and connects immediately with the audience while maintaining aesthetics of the art. The dexterous use of the art has engraved Mahesh Dattani's name on the gigantic canvas of Anglo-Indian Drama. He is a playwright of the modern times who has made a substantial standing in today's world by focusing on the burning issues that take over the limelight. He is a versatile genius, a director, actor, dancer, teacher and a writer. 'Tara', a problem play, is an objective study of female psyche. The play presents the conflict between illusion and reality. It is a play about the gendered self, and about accepting the harsh reality of the struggles for being a female in this male dominated society. The plight of women who were assumed and accepted to be suitable for the household dominion only is echoed through Tara the protagonist of the play. Women may have been placed high in the realm of philosophy, yet in practice they remain undermined. The dramatist reverses the oft used male/female vernacular pair and names the play 'Tara' and jabs the audience gently laying before them the bare reality of the tradition which hold a man superior to woman. The paper is an attempt to reveal the complexities of the conflicts which arise in the psyche of women at different stages of her life. The problem of gender discrimination and the struggle for the search of identity which hovers in the psyche of women is left to the audience to ponder, reflect and tackle. Feminism in India can be traced down to the days of Ram Mohan Roy.

In the changed atmosphere of the mid-to late 1970s, socially relevant theatre and the women's movement began to show the way forward. A number of tabooed issues and women's questions found expression and acceptance through theatre in 1980s and 1990s in a large way. The form of the experimental theatre and the agenda of the women's movement shaped the content and escalation of such plays. During 19th century, many female authors also carved out an important place for themselves. The last twenty years or so have seen a significant change in this respect. The Indian theatre is no longer the male preserve as it used to be. Womenwriters like PoileSengupta(English) VarshaAadalja (Gujrati) ManjulaPadmanabhan(English), Dina Mehta(English), GeetanjaliShree(Hindi) NeelamChaudhary(Punjabi) SushmaDeshpande(Marathi) also have come to the fore.

The post-modern era seems to be productive for Indian English drama as it has received impetus from young writers like Mahesh Dattani and ManjulaPadmanabhan. Manjula was the first Indian to earn international fame with her play 'Harvest' a futuristic play that deal with the exploitation of human body in 21st century. Padmanabhan projects a dehumanized, terrifying world in which mothers sell their sons for the price of rice. Dattaniwon SahityaAkadami Award for English Literature for his play Final Solutions. He has emerged as a compelling playwright who projects the postcolonial dichotomy at various levels. He keeps women at the center of his dramatic world and may be called an unconventional feminist.

'Tara' gives us a glimpse into the modern society which claims to be liberal and advanced into thought and action .It speaks about male chauvinism prevalent in the present form and brings about the stark reality of the woman playing fiddle to man. Homosexuality is the significant subject matter chosen by Dattani.

Tara was first performed on 23rd October, 1990 as Twinkle Tara, and later it became popular as Tara. It is Mahesh Dattani's third play. A modern play in technique which has left audiences stunned ever since its first performance, it is structured in two acts with multi-level set and with characters often taking in groups. Thematically it is both novel and powerful dealing with the conflicts of twins who were conjoined

* Assistant Professor (English) S.A.B.V. Government Arts and Commerce College, Indore (M.P) INDIA

at birth, but later separated both surgically and emotionally. However it does not center on twins and their life alone and but also, reveal the elements of domestic tragedy involving grandfather, parents and children. The play revolves round four major characters – the Siamese's twins named Chandan and Tara and their parents Patel and Bharati. The central character of the play is Tara, a girl of fifteen, Chandan's twin sister and a daughter of Patel and Bharati. The play reveals the birth and bringing up of twins and marginalization of girl child of the conjoined twins. Mahesh Dattani has steadily and fearlessly exposed determinism, sexism and parental hypocrisy in Tara.

The elements of social determinism gradually emerged from the play and make it even more realistic and compelling. Society assumes the role of the determinerforcingthat a girl child's life must be patterned in such and such way on account of her being a girl child and thus the dynamics of society for the boy and girl seem to be contrastive. Thecoming of a male child in the family has traditionally come to be identified as agreeable. In the process women are taught to internalize patriarchal ideology, to accept male superiority over female.

Tara and Chandan were conjoined twins like "a fertilized egg, destined to separate and develop into different embryos, but fail to do so fully."(10). Ironically it was not a simple surgery of two bodies which nature had made one, not only a battle between nature and medical science, but it was an emotional separation of two lives. The process of discrimination against the girl child begins right from her birth. the political influence of Tara's grandfather and his act of bribing the doctor for unethical surgery reveals not only the hurried face of the cultured lot, but also expose unequal social structure which ignores a girl child. The very nature of surgery was not only dishonorable but also in human since a limb and a vital organ from the daughter was taken to favor the son. Consequently Tara loses her strength and the brother thrives. Dattani has cleverlyentrapped the demotion of the girl child inPatel family. The Patel's seem to be the product of male-dominant society who has succeeded in life without taking help from others. He imposes patriarchal ideology on his children often deciding what Chandan must not to do and Tara must to do. Parental hypocrisy has been exposed in the play especially through the character of Patel who cares more for Chandan than Tara and therefore he does not like his son Chandan getting involved in mother's knitting. When he scoldsChandan for helping his mother in knitting which was not a boy's job in any case, he said and later when he refuses Tara as heir to grandfather's property the father Mr.Patel seems to strengthen assumptions of the male dominant society. Tara must fit in the social structure for her survival and must passively receive what others give her. The irony of her tragic existence lies in: "she is an object like other objects in a cosmos, whose orbits are determined by those around". And she lives in an empty world where there are: "No shooting stars to make wishes on." Patel was against women trying to make a career.

Tara is livingin a society which separates here even more from her brother Chandan. Despite the fact that Tara and Chandan were conjoined twins, more similar than dissimilar, contrastive social reception which they get on the biases of their sex increases tension in the play. It is then the politics of difference which torches Tara and reduces her to be an unwanted thing in Patel family. Her health, intellectual power, career, status as heir, even her welfare is ignored. The mother does not bother whether Tara takes milk regularly or not, whether she has put on weight or not. Tara always wins at playing cards and she has potentials to be a great business woman, but her father fails to recognize potentials within Tara. However, Patel's failure is not that of an individual alone, but metaphorically it is of society as well. The grandfather's property would go to Chandan and Tara would not get anything because society cares for sons and grandsons too often at the cost of daughters and granddaughters. Patel's quarrel with Bharati over the issue of donating kidney to Tara reveals her overbearing attitude.

Bharati who engages herself in feminine role playing and follows the suggestive society she lives in is also a tragic protagonist in the play. Earlier she had done what her father had told her to do and now she struggles to follow her husband. But gradually she feels the burden of what she had done earlier and what she is doing now. She tries to challenge the male-dominated, the male- centered pattern of the society and thereby leftat the mercy of a psychiatrist. Once she had prepared herself for unethical surgery of conjoined twins in which injustice was done to Tara in order to ensure the physical strength of Chandan. Bharatistruggles to lessen Tara's emotional burden which seems to be compensatory. Tara had undergone operations and she understood that the girl was being neglected by her husband. In fact Bharati's efforts to flatter Roopa with Charlie bottles, lipsticks and magazines so that the latter may come to play with Tara seem to work as compensations for injustice done to Tara. Bharatipampers Tara which becomes intolerable for Patel: "Yes! Look at the way you treat Tara. As if she is made of glass. You coddle her, you pet her, and you spoiled her."The mention of 'Lady of Shallot' is very suggestive in the play. In certain respect Bharati is no less tragic figure than Tara; she has suffered in life, has come across harsh realities of life and knows well that Tara's future will be even worse. "It's all right while she is young. It's all very quiet and comfortable when she makes witty remarks. But let her grow up. Yes Chandan. The world will tolerate you. The world will accept you but not her!"

It is an irony that confidence of the daughters like Tara passes unnoticed, she is sacrificed at the altar of gender. Even though she is more intelligent, sharp and witty and could do well in all that is given to her, she is killed by the social system. The play ends with the note of failure on the part of Dan- "I move, I move, without meaning. I forget Tara. I forget that I had a sister- with whom I had shared a body, in one comfortable womb, till we were forced out- and separated." Despite her physical disablementsTara interests us for her survival instinct struggling for her identity and her courage to fight the society at large.

References -

1. Dattani,Mahesh. Tara, A play in Two Acts, New Delhi, Ravi Dayal Publishers, 1995.
2. Dhawan, RK.The plays of Mahesh Dattani; A Critical Response,New Delhi:Prestige Publishing House, 2005.

Women in Jhumpa Lahiri's Short Stories

V.M. Audichya *

Abstract - Women novelists cum story tellers in Indian Fiction in English occupy prestigious position. Kamla Das, Raj Narsimhan, Anita Desai, Shashi Deshpandey, Juliette, Banerjea, Dina Mehta and Jhumpa Lahiri are some of the prominent names in this field. Jhumpa Lahiri born in London of Bengali Parents, grew up in Rhodes Island U.S.A., is one of the outstanding women writers of the Present times. Her Prize winning stories have been published in U.S.A., U.K. and India. She won prestigious Pulitzer prize for fiction in the year 2000.

Introduction - Lahiri in her stories tell about the lives of the Indians in exile, these people dwindle between the strict traditions they have inherited and the baffling new world they encounter every day. Whether set in America or 'India (Bengal in particular) Lahiri projects on the her experience, her awareness of man, woman, society, human and subtle detail speak with universal eloquence to all.

Expressing her opinion about Lahiri noted critic Amy Jan says.

"Jhumpa Lahiri is the kind of writer who makes you want to grab the next person you see and say "read this". She is a dazzling storyteller with a distinctive voice, an eye for nuance, an ear for irony. She is one of the finest short story writers I have read."

The purpose of this paper is to study the women characters delineated in the stories of Lahiri. Her female characters belong to different age groups, most of them educated, they try to emphasis that they have their own preferences and choices in their decision about martial and extra martial relationships. They represent modern women of the 20th century who love freedom at any cost. Their hopes, aspirations, ambitions and emotions matter to them most than anything else. Some female characters present pathetic image of the women who are subjected to injustice, atrocities and constantly made to suffer in the so called civilized modern world.

Though these women differ in character, behavior likings and disliking, there is one thing common in them that they have remote or close association with culture, tradition, mortal values and the past related to India, the country of their origin.

In the story **"Temporary Matter"** Shobha, a 33 year old working woman marries a 35 years old student Shu Kumar. She is full of life, who not only runs the house but also cares a lot about her husband and sends him to Baltimore to attend a conference so he could enter the job market next year.

She begins to put in extra hours at works and take on additional projects. Loss of the baby changes their lives drastically. Power cut in their locality make them to exchange confessions each night. All the thrill from life is gone. Ultimately she finds separate apartment for herself and thus her marriage ends in a failure.

Lilia a school girl in **"When Mr. Pirzada came to Dine"** is unable to find a difference between Hindu and Muslim Bengalis. Mr. Pirzada who had been awarded a grant from the government of Pakistan to study the foliage of New England comes daily to Lilia's house at dinner, bearing confections in his pocket for her. He is concerned about his family living in civil war torn East Pakistan. She sympathizes with Mr. Pirzada and says prayers for the safety of his family. Lilia is confused when she says.

"It made no sense to me Mr. Pirzada and my parents spoke the same language laughed at the same jokes looked more or less the same." After returning to Pakistan Mr. Pirzada finds his family safe and sound.

Mina referred as Mrs. Das in **"Interpreter of Maladies"** who married Mr. Das (Raj) a middle school teacher, is a short woman with small hands like paws, her frosty pink finger nails painted to match her lips, is slightly plump, in her figure. This young Indian family under thirties dresses like foreigners and have three children two boys Ronny, Bobby and Tina (a girl). They come to India to see tourist places. During their visit to Sun temple at Konark, Mrs. Das makes a starling relavation to Mr. Kapari, the tour guide, whom she treats as guanine interpreter of maladies as he works for a doctor in the hope to find relief from the mental agony. She tells him that "Bobby is not Raj's Son" but when she finds no help from Mr. Kapari, she returns to her husband who loves her and knows nothing about it and her children.

Boori Ma sweeper of the stairwell in "A Real Durwan" is a sixty four year old woman inumerates the details of her plight and losses suffered since her deportation to Calcutta after partition. "The turmoil separated her from husband, four

* Asst. Profesor (English) Govt. College, Dhana, Distt. Sagar (M.P.) INDIA

daughters, a two story brick house, rosewood Almirah and a number of coffer boxes whose skeleton keys she still wore, along with lie savings tied to the free end of her sari". Her only belongings are now her bucket, quilts and bundle of reeds which serves as her broom all to be braced under one arm. She goes on saying "Belive me, do not belive me, such comforts you cannot even dream them". She is capable of exaggerating her past at elaborate lengths and heights. She sleeps behind the collapsible gate in the house on lower circular road and honors the responsibility and maintains vigil as if she were the gatekeeper of the house. The residents like Boori Ma and look after her. When the basin on the stair well is stolen. Boori Ma is thrown out of the house by the residents accusing her of informing the robbers.

In **"Sexy"** Miranda a 22 year young girl working for a public radio station in the fund raising department in Boston Develops an affair with a Bengali who is already married because she feels "Dev was the first always to pay for things and holds door open and reach across a table in a restaurant to kiss her hand and whisper her name again and again when they made love." She likes to be called sexy by him. But when Rohin a small boy calls her sexy and tells her "It means loving someone you do not know". She is startled and decides to break her illicit relationship with Dev completely.

In **"Mrs. Sen's"** Mrs. Sen about 30 years in age, has small gap between her teeth and faded pock marks in her chin. Her eyes are beautiful and she always wears a saree. She is Professor's wife who teaches mathematics at university. She takes care of eleven years old boy Eliot after school. In order to keep her job she needs to learn to drive. She tells the boy "You will have a wife and children of your own and they will want to be driven to different places at the same time. No matter how kind they are, one day they will complain about visiting your mother and you will get tired of it too". Her eccentric nature and nervousness during driving her car results in an accident and she gives up driving altogether and loses her job of baby sitting as well.

"The Blessed House" depicts the character of Twinkle 27 years old recently abandoned by an American who had tried and failed as an actor. She marries Sanjeev in India who works for a firm near Hartford in Connecticut. In fact fondness for Wodehouse novels, disliking for Sitar and excessively generous income of lonely Sanjeev who had never been in love before, attracts Twinkle towards him. As Sanjeev is being considered for the position of vice president, he decides to move to a new house where she finds a white porcelain effigy of Christ, a 3-D Postcard of Francis, a wooden cross key chain, a tile trivet depicting unbearded Jesus, a miniature Nativity scene which attract her and she wants to decorate the new house with them, which Sanjeev opposes vehemently saying. "We are not Christians. We should call the Reactor. Tell him there is all this nonsense left behind. Tell him to take it away" but Twinkle does not want to part with her newly found treasure. She becomes careless and does nothing except smoking and talking about her treasure to her friends. Which irritates Sanjeev. Arguments follow. Finally Sanjeev allows his obstinate wife to display a sound silver bust of Christ on the matle, discovered on the roof top during a party in the house. Sanjeev's submission saves their married life.

An orphan Bibi Halder in "The Treatment of Bibi Halder" most of her 29 years has suffered from an ailment that baffles her family. Liable to fall unconscious and enter into shameless delirium at any time she is confined to the storage room of the rented house. Treatment offered by doctors only make matters worse. She lives with her older cousin Halder and his wife and records inventory for the cosmetic shop owned by them. For her services she is provided with meals, provisions and sufficient clothes. It is revealed that Bibi needs a man but no one is ready to marry unstable, ordinary and good for nothing girl. Due to failure in Business Halder and his wife leave Bibi alone to her fate. Living alone she mysteriously becomes pregnant. No one knows about the culprit. She gives birth to a male child which cures her completely as she successfully raises her child and manages the shop as well.

Mala in **"The third and final continent"** a 27 years old girl is daughter of a school teacher who can cook, knit, embroider, sketch landscapes and recite poems by Tagore. She is rejected by a string of men on her face due to her dark complexion. As her parents were willing to ship their only child half across the world in order to save her from spinsterhood, she is married to a man who works in a library of world famous university in America. Initially he is quite indifferent towards her and feels no love for her. But when an 103 year old American lady, his former house owner, seeing traditionally attired Bengali bride declares. "She is a perfect Lady" to his great surprise, his attitude changes completely towards his wife. He begins to love and care for her. They both settle in America and enjoy happy married life.

Thus we find that Jhumpa Lahiri has portrayed responses and reactions of different women of different classes through characters like Shobha, Mina(Mrs. Das), Miranda, Lilia, Twinkle, Mrs. Sen, Boori Ma, Bibi Halder and Mala. These living female characters represent the modern age, have universal appeal and leave lasting impression on the minds of the readers.

Reference -

1. Interpreter of Maladies A short story collection byJhumpa Lahiri.

****

बुन्देलखण्ड की विवाह लोकपरम्परा के बन्ना गीत

डॉ. छाया चौकसे *

प्रस्तावना – साहित्य आदि परम्मरा से ही लोकमंगल का संवाहक रहा है इस दृष्टि से बुन्देली जगत में व्यृवहत होने वाली लोकपरम्पराओं लोकगीतों लोक कहावतों में हमें बुन्देलखण्ड के जीवन के बालक के पालने से लेकर उम्र ढलने के अंदाज में खुशी और गम को बड़ी ही सहज सरल रोमांचक और गूढ तथा दर्शन और आध्यात्म का आभास करा देने वाले गीत मिल जाते हैं। जिनमें बुन्देली जीवन शैली का बड़ी भावनात्मकता और मार्मिकता से संगोपांग चित्रण अभिव्यक्त हुआ है इसी श्रृंखला में मेरे इस लेख का उद्देश्य भी बुन्देलखण्ड विवाह की लोकपरम्परा में गये जाने वाले बन्ना गीतों पर प्रकाश डालना है।लोकगीत लोक साहित्य की एक सशक्त पद्यात्मक विधा लोकगीत है। गीत की परिभाषा देते हुए विद्धानों ने कहा है कि व्यक्तिगत सुखों दुखों की सहजानुभूति जब स्वंय द्रवीभूत होकर जब स्वयं द्रवीभूत होकर रागात्मक होती है तब उसे गीत कहा जाता है।

महादेवी वर्मा ने गीत की परिभाषा देते हुए लिखा है सुख दुख की आवेशमयी अवस्था का विशेषकर गिने चुने शब्दों में स्वर साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है। गीतों की सृष्टि तब होती है जब हृदय का दुख या सुख अपनी चरम स्थिति में होता है। जब हृदय उस अनूभूति से भर जाता है तब वही अनुभूति प्रस्फुटित होकर गीत का रूप धारण कर विस्तृत हो जाती है। अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध गीतकार पी.बी. शैली ने गीत की उत्पत्ति दुखानुभूति से मानते हुए कहा है। Gur Sweetest Songs are those that feel us saddest thoughts. कुछ इसी तरह की बात कविवर सुमित्रानंदन पंत भी कह गये है– 'वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान। निकलकर नयनो से चुपचाप, वही होगी कविता अनजान।' दुखानुभूति ही गीत सृजन में सहायक है। डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती का कथन है कि जब समस्त जन मानस में चेतन अचेतन रूप में जो भावनाएं गीतबद्ध होकर अभिव्यक्त होती है उन्हें लोकगीत कहते है। आदि मानव के हृदय से जो विकृत भावनाएं निस्सृत हुई थी वे ही आगे चलकर लोकगीत के रूप मे परिवर्तित हो गई। लोकगीतों की एक लम्बी परम्परा चलती है एक गीत लोकमानस से जब निकल जाता है तो वह आगे पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है और गाया जाता रहता है। वह कभी समाप्त नहीं होता समय–समय के अनुसार उसमें घट–बढ़ जरूर हो सकती है। परंतु उसकी मूल भावना वहीं रहती है और यदि मूलभावना की कालान्तर में परिवर्तित हो जाए तो भी उसका प्रसंग या विषय नहीं रहता है ये लोकगीत कालान्तर में भी समाप्त नहीं होते लम्बे समय तक जिंदा रहते है चलते है और चलते ही रहने हैं उसी स्फूर्ति और प्रेरणा और भावात्मकता को अपने में समेटे हुए है।

लोकगीतों में अद्भुत जादुई जीवन्तता है। जीवन की समस्त रागात्मक प्रवृत्तियों का सोगापांग चित्रण लोकगीतों में हुआ है। यह भी कम आश्चर्य नहीं कि बार–बार गाये जाने पर भी इन गीतों की ताजगी में कोई फर्क नहीं पड़ता। लोकगीत शब्द और स्वर के दोहराव से संचरित होते है दोहराव लोकगीतों का गुण है। उसकी शक्ति है, जिसके कारण नयी पीढ़ी सरलता से स्मृति कोश में गीत ग्रहण करने में सक्षम होती है। पीढ़ी दर पीढ़ी गाये जाने वाले ये लोकगीत मानस में निरन्तर हर्षोल्लास का मंत्र फूकते रहते है।

लोकगीतों में सत्यं शिवं सुन्दंर को भाव समाहित है, इसीलिए महात्मा गांधी ने कहा है लोकगीत की प्रशंसा अवश्य करूँगा क्योकि मै मानता हूँ कि लोकगीत समूची संस्कृति के पहरेदार है लोकगीत किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं होते लोकगीत समूहगत रचनाशीलता का परिणाम है। लोकगीतों में रचेता और रचनाकाल की कोई गणना नहीं होती। जितने ही अनाम रचेताओं ने अपने नाम और काल को विगलित कर दिया, इसलिए लोकगीत कालजयी हो गया। लोकगीतों में सबसे महत्वपूर्ण जीवन की मूल सत्यानुभूति की अभिव्यक्ति का सहज साक्षात्कार होता है। जीवन को अखंडित रूप में देखने की दृष्टि लोकगीतों में जबर्दस्त होती है।

लोकगीतों में व्यक्तिगत अभिव्यक्तियों का कोई स्थान नहीं होता। लोकगीतों के मूल में समष्टिगत अभिव्यक्ति होती है। एक लोकगीत को बनने में अनुभव से गुजरते हुए उसे सौ से भी अधिक वर्ष लग सकते है। एक लोकगीत पीढ़ियों के खरे अनुभव से तपकर बनता है। तभी तो उनकी मार्मिकता काव्यात्मकता रसो एकता संगीतात्मकात अधिक सरल मधुर स्पष्ट और व्यापक होती है।

लोकगीतों के प्रकार – अपने ग्रंथ लोकसाहित्य विज्ञान में डॉ. सत्येन्द्र ने लोकगीतों के निम्नलिखत प्रकारों की ओर संकेत किया है –

1. क्षेत्र की दृष्टि से 2. जातीय दृष्टि से 3. अवस्था भेद से 4. योनि भेद से 5. उपयोगिता की दृष्टि से 6. वस्तु भेद से 7. रूप भेद से 8. प्रकृति भेद से भाषा और लोक ध्वनियों के थोड़े बहुत अंतर के बाद हर आंचल के लोकगीतों में प्राय समानता दिखाई देती है। उपयुक्त प्रकारों और विशेषताओं को दृष्टि पथ में रखते हुए बुन्देली लोकगीतों का मूल्यांकन किया जा सकता है। बुन्देलखण्ड के प्रत्येक शुभकार्य का श्री गणेश लोक गीत गायन से ही होता है। लगता है कि लोकगीत और जनजीवन एक दूसरे के पूरक है। पग–पग पर लोकगीतों का विधान हैं उत्सवों त्यौहारों संस्कारों और ऋतुओं के अलग–अलग प्रकार के लोकगीत गाए जाते है। यहां के लोक गीत अलग–अलग लोक ध्वनियों में आवद्ध है। उन्हे सुनते ही श्रोतागण लोकगीत के प्रकार का अनुमान लगा लेते है। खेतों में कठिन परिश्रम करते हुए कृषक गण और मजदूरी करती हुई नारियां लोकगीतों का गायन करते हुए तन्मय हो जाती है। उनकी थकान अपने आप दूर हो जाती है। अधिकांश लोकगीत सभवेत स्वर में गाए जाते है। जिनकी मधुर ध्वनि से समस्त वातावरण झंकृत हो जाता है। यहां के लोकगीतों जैसी सहजता सरलता सरसता अत्यंत दुर्लभ है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकगीतों के निम्नानुसार वगीकृत किया जा सकता है –

1. संस्कारों के लोकगीत 2. त्यौहारों और उत्सवों के लोकगीत 3. धार्मिक लोकगीत 4. ऋतुओं के लोकगीत 5. कृषि सम्बधी लोकगीत 6. बच्चों के लोकगीत 7. कथात्मक लोकगीत 8. प्रबंध गीत

लोकगीत के नामकरण के आधार पर बुन्देलखण्ड में निम्न नामधारी गीत गाए जाते है।

1 सोहरे 2 दादरे 3 बनरा 4 गारियां 5 फागें 6 सैरे 7 ढिवारी 8 बिलवाई 9 बावा के गीत 10 नौरता के गीत 11 अकती के गीत 12 कार्तिक के गीत 13 गोंटे 14 भक्ते 15 राछेर 16 ढिमरया गीत 17 कछया भजन 18 गडरया राग 19 सावन के गीत 20 ख्याल 21 लावनी 22 वारहमासा 23 ढोला 24 पण्डवा 25 आल्हा

इन गीतों के गाने का समय निर्धारित है। समयानुसार उपर्युक्त गीतों का गायन किया जाता है। समय पर गाये जाने वाले लोकगीत अधिक सुहावने और आकर्षित होते हैं। बेमौसम के गीतों में उतना अधिक आनंद प्राप्त नहीं होता।

प्रत्येक संस्कार या उत्सव के अवसर पर उनसे संबधित लोकगीत गाने का प्रचलन हो हर लोकगीत एक विशेष लोकध्वनि में आवद्ध होता है। लोकध्वनि को सुनते ही पारखी लोकगीत के प्रकार का अनुमान लगा देते है। सुनते ही श्रोताओं के मन की कली खिल जाती है।

बुन्देलखण्ड में विवाह की सबसे पहली रस्म पक्यात होती है। पक्यात अर्थात शादी पक्की हो जाना इसमें कन्या पक्ष वाले आकर वर के घर वालों को मीठा फल दे जाते है। और मान-सम्मान के बुजुर्ग व्यक्तियों का टीका करते है। इसके बाद सबसे महत्वपूर्ण कार्यक्रम लगुन का होता है। इस कार्यक्रम में कन्या पक्ष के यहॉ से परिवार के लोग आते है। आजकल तो महिलाएं जैसे कन्या की भाभी बहने आने लगी है। लेकिन पहले पुरूष वर्ग से ही लोग जाते थे। इस कार्यक्रम में कन्या के भाई की भूमिका अहम् होती है। यह कार्यक्रम धूमधाम से सम्पन्न होता है, गाना बजाना होता है। मुख्य रिश्तेदार जुड़ते है। चौक में कन्या के भाई और वर को आमने-सामने बैठाया जाता है। कन्या के यहॉ से जो सामान वस्त्र, मेवा, मीठा,फल आदि सामान आता है उसको सजाकर रखते हैं। सबसे पहले कन्या का भाई वर का टीका करता है। हार पहनाता है। मीठा खिलाता है, व गले मिलता है। इसी प्रकार वर भी अपने होने वाले साले को टीका लगाकर हार पहनाता है, मीठा खिलाकर गले मिलता है। इसके बाद कन्या का भाई सब रिश्तेदारों के रूपये से पैर छूता है। इस अवसर पर यह बन्ना गया जाता है।

लगुन के अवसर पर गया जाने वाला बन्ना गीत

राजा दशरथ फुले न समायें, लगुन आई मोरे अंगना
आजुला फूले आजी फूली, फूला सब परिवार
बन्ना मोरा ऐसा फूला, जैसे फूल गुलाब लगुन आई मोरे अंगना
माता फूली बाबुल फूले, फूला सब परिवार
बन्ना मोरा ऐसा फूला, जैसे फूल गुलाब लगुन आई मोरे अंगना
चाचा फूले चाची फूली, फूला सब परिवार
बन्ना मोरा ऐसा फूला, जैसे फूल गुलाब लगुन आई मोरे अंगना
मामा फूले मामी फूली, फूला सब परिवार
बन्ना मोरा ऐसा फूला, जैसे फूल गुलाब लगुन आई मोरे अंगना
जीजा फूले जीजी फूली, फूला सब परिवार
बन्ना मोरा ऐसा फूला, जैसे फूल गुलाब लगुन आई मोरे अंगना

हल्दी, तेल चढाते समय बन्ना गीत

चढ गयो बन्ना को तेल फुलेल, लटक रही पंखुडियां
तेलन ल्यावे तेल फुलेल, चढाओ नौने वींदरिया
बन्ना की बहिन तेल चढावे लटक रही पंखुडियां
तेलन ल्यावे तेल फुलेल, चढाओ नौने वींदरिया

मंदिर जाते समय का बन्ना

इन गलिन हो के लइयों री, मोरे प्यारे बन्ना खो
मोर मुकुट सिर बांधो राजा बनरे
कलगिन साज सजइयों री, मोरे प्यारे बन्ना खो
कानन कुण्डल पैरो राजा बनने
पनरस साज सजइयों री, मोरे प्यारे बन्ना खो
अंगे जामा पैरो राजा बनरे
पनरस साज सजइयों री, मोरे प्यारे बन्ना खों
हाथन घडियां पैरो राजा बनरे
कंगन साज सजइयों री, मोरे प्यारे बन्ना खों
पॉवन जूता पैरो राजा बनरे
भोजन साज सजइयों री, मोरे प्यारे बन्नाा खों
डोली में तो बन्ना सोहें, ब्याह के बन्नी लइयों रे।

बारात जाने के समय का बन्ना

बन्ना तो मोरा चांद सा, लग जाये नजरिया ना
बन्ना की माय दौडी आई,
काजल का टीका लगाई, बन्ना लग जैहें नजरियां ना
बन्ना की भाभी दौडी आई,
राई नौन उतारी, बन्ना लग जैहें नजरियां ना
बन्ना की बहिन दौडी आई,
झट से आरत उतारी, बन्ना लग जैहें नजरियां ना
सखियां मिलके बन्ना गावें,
फूलों से करती बौछारें, बन्ना लग जैहें नजरियां ना।

विवाह के बाद का बन्ना

हां हां रे मोरा प्यारा बन्ना, हां हां रे मोरा प्यारा बन्ना
सारे बाराती पैदल आये, हाथी के हौदे पे आये बन्ना
हरियाला बन्ना, शाहजादा बन्ना कोई देखना (हां हां रे,)
सारे बराती तारे से चमके, चंदा सा चमके मोरा बन्ना
हरियाला बन्ना, शाहजादा बन्ना कोई देखना (हां हां रे,)
सारे बराती रूपया लायें, मोहरें अशर्फी लायें बन्ना
हरियाला बन्ना, शाहजादा बन्ना कोई देखना (हां हां रे,)
सारे बराती नीचे सोये, लाल पलंग पे सोवे बन्ना
हरियाला बन्ना, शाहजादा बन्ना कोई देखना (हां हां रे,)
सारे बराती रीते आये, छोटी से बन्नी लायें बन्ना
हरियाला बन्ना, शाहजादा बन्ना कोई देखना (हां हां रे,)

इस गीत में बन्ना की बारात का वर्णन है। गॉव का दृश्य है बन्ना तो विशेष है बाराती तो उसके साथ पैदल जा रहे है इसलिए बन्ना का विशेष महत्व है। बन्ना शादी करने जा रहा है वह हाथी पर बैठा है। बाराती उसके साथ पैदल जा रहे है। बन्ना जब ससुराल पहुॅचता है तो उसको आराम करने के लिए पलंग मिला है और बाराती लोगों का बिस्तर नीचे लगाया गया है। बराती के चेहरों पर तारे की टिमटिमाहट है जबकि बन्ना का मुॅह चंद्रमा जैसा

दिखाई दे रहा है। सारे बाराती बारात से लौटकर आये तो खाली हाथ
जबकि बन्ना अपने साथ बन्नी लेकर आया है।

दुल्हा बन्ना

मोरो पूनम कैसो चंदा, बना मोरो जग उजयारो री
मोरी चम्पा कैसी कलियां, बना मोरो छिटकत आवैरी
मोरी मोती कैसी लडियां, बना मोरो लटकत आवैरी
बना की माई हेरें बाट, बना मोरो कब घर आयेरी
मोरो पूनम कैसो चंदा, बना मोरो जग उजयारो री

.....

अबेरे दूला काये सजे महराज
बनाजू के आजुल को बडो परवार
सजत बेरा हो गई महाराज
अबेरे दूला काये सजे महराज
बनाजू के बाबूल को बडों परवार
सजत बेरा हो गई महाराज
अबेरे दूला काये सजे महराज
बनाजू के फूफा को बडो परवार
सजत बेरा हो गई महाराज
अबेरे दूला काये सजे महराज

.....

इन गलियों होकें ल्यइयो री रगनाथ बना खों
माथें हो मोरें बांदो राजा बनरे
झेला की लटक समारो री रघुनाथ बना खों
कौनां खों सोहे केसरिया बागो
कौनां खों सोहे लाल री रघुनाथ बना खों
रामजू खों सोहे केसरिया बागों
लछमन खों सोहे लाल री, रघुनाथ बना खों

.....

लयें धनुष बन्नां ठाडे री, कोऊ जोडी तो मिलादे
माथे बना के सेहरा भी सोहे
कलियों बीच सिंया जानकी
कोऊ जोडी तो मिलादे
कानो बन्ना के कुण्डल साहे
मुतियन बीच सिया जानकी
कोऊ जोडी तो मिलादे
गरे बन्ना के गोपे सोहे
मुहरों बीच सिंया जानकी
कोऊ जोडी तो मिलादे
अंग बना के बागो भी सोहे
पिताम्बर बीच सिया जानकी
कोऊ जोडी तो मिलादे
संग बन्ना के बन्नी भी सोहे
जोडी बीच सिया जानकी
कोऊ जोडी तो मिलादे

.....

शहर में शोर भारी है, न जाने किसकी शादी है।
बन्ने के आजा से पूछो, बनाकी आजी से पूछो
उन्होने हंस के फरमाया मेरे नाती की शादी है।
बन्ने के बाबुल से पूछो, बना की माता से पूछो
उन्होने हॅस के फरमाया मेरे बेटे की शादी है।
बन्ने के भैया से पूछो, बना की भौजी से पूछो
उन्होने हॅस के फरमाया मेरे देवर की शादी है।

.....

बना रस गैदिया ने मारो, हमखों लाग जैहे रे
हमखों लाग जेहे रे, गगर मोरी फूट जैहे रे
गगर मोरी फूट जैहे रे, चुनर मोरी भींग जैहे रे
चुनर मोरी भींग जैहे रे, सास मोरी रूठ जैहे रे
सास मोरी रूठ जैहे रे, रसुइया छूट जैहे रे
रसुइया छूट जैहे रे, बलम मोंसे रूठ जैहे रे
बलम मोसें रूठ जैहे रे, सिजरिया छूट जैहे रे
सिजरिया छूट जैहे रे, भाग मोरे फूट जैहे रे
बना रस गैदिया ने मारो हमखों लाग जैहे रे।

.....

बना के आंगन गेंदा फूल, कुसम रंग फीको लगावै रे
बना के आजुल सजे बरात, माई कंठ लगावै रे
बना के बाबुल सजे बरात, माई कंठ लगावै रे
बना के फूफा सजे बरात, बुआ कंठ लगावै रे
बना के काकुल सजे बरात, सो काकी कंठ लगावै रे
बना के मामा सजे बरात, सो मामी कंठ लगावै रे
बना के आंगन गैंदा फूल, कुसम रंग फीको लागै रे।

.....

मोरे राम लछन से बनरा, आली कौने विलमा लये री
उनके आजुल ने विलमा लये, आजी कंठ लगा लये री
उनके बाबुल ने विलमा लये, माता कंठ लगा लये री
उनके भैया ने विलमा लये, भौजी कंठ लगा लये री
उनके काका ने विलमा लये, काकी कंठ लगा लये री
उनके मामा ने विलमा लये, मामी कंठ लगा लये री
मोरे राम लछन से बनरा, आली कौने विलमा लये री

.....

बैठे बैठे कौशल्या की गोद हो, रामचंद्र दूला बने
माथे हो मौरा बांदो राजा बनरे, जाकी कलियन पै नाच रयी मोर
चंदन खौरें काढों राजा बनरे, जाकी टिपकन पै नाच रयी मोर
कानों में कुण्डल पैरो राजा बनरे, जाकी लडियन पै नाच रयी मोर
गरे में गोपें पैरो राजा बनरे, जाकी हंसली पै नाच रयी मोर
हांतों में चूरा पैरो राजा बनरे, जाके कंकन पै नाच रयी मोर
पांवों में तोडा पैरो राजा बनरे, जाके माहुर पै नाच रयी मोर
रामचंद्रा दूला बनें

.....

मना ल्याव, जगा ल्याव, जगा ल्याव सखी, बन्ना सोवे री अटरियों
मोरे बन्ना जू खॉ सिहरा भी सोहे, कलियों बीच अनार की कलीं
बेला फूल की कली, कचनार की कली– बन्ना सोवे री अटरियों
कानों बन्ना जू खां, कुण्डल सोहे, मुरकन बीच अनार की कली
बैला फूल की कली, कचनार की कली, बन्ना सोवे री अटरियों

.....

बना की सुसरारों सें आये, सिहरों के जोडा रे
बांदो-बांदो रे हजारी दूला, क्या छब लगी रे
बना की सुसरालों से आये, चंदन के मूठा रे
गालो-गालो रे हजारी दूला, क्या छब लगी रे
बना की सुसरारों से आये, बागन के जोडा रे
पैरो-पैरो रे हजारी दूला, क्या छब लगी रे

.....

रघुनन्दन फूले न समॉय, लगुन आई हरे-हरे
लगुन आई मेरे अंगना
आजुल सज गए बाबुल सज गए
सज गई सिगरी बरात
रघुनन्दन तो ऐसे सज गए
जैसे सिरी भगवान
ताऊ सज गये, चाचा सज गए
सज गई सिगरी बरात
रघुनन्दन तो ऐसे सज गये
जैसे सिरी भगवान
मामा सज गये, फूफा सज गए
सज गई सिगरी बरात
रधुनन्दन तो ऐसे सज गए
जैसे सिरी भगवान

.....

बने दूला छब देखो भगवान की
दुल्हन बनी सिया जानकी
ठांडे राजा जनक के द्वार
संग में चारहु-राजकुमार
दर्शन करते है नर-नार
धूम छाई है डंका निशान की
पंडत ठांडे सगुन विचारें
कोऊ-कोऊ मुख से बंद उचारें
सखियां करती है न्यौछारें
माया लुट गई सब हीरा के खान की
सर पै क्रीट मुकट के धारें, बागों बारम्बार समारें
हो रही फूलन की बौछारें
शोभा बरनी न जाये धनुषवान की
सखियां फूली नहीं समाती दशरथ जू खों गारी गाती
गारी गाती है गीत और ज्ञान की
ठांडे जनक ढोई कर जोर, सुनियो अवध किशोर
कृपा करो हमारी और
मोपै खातिर न भई जलपान की
बन्नी सिया बन रगवीर, कैसे सुन्दर बने शरीर
ये तो शोभा है सारे जहान की
जैसे दूला अवधबिहारी, जैसई दुल्हन जनक दुलारी
जाऊ तन मन से बलहारी
मनसा पूरन भई अरमान की
दुल्हन बनी सिया जानकी

.....

सखी आये है अवधकुमार
मिली हैं शुभ घडियां
पचरंग पाग पै मौर सुहावे
सेहरे पै छाई बहार
कानो में कुण्डल हाथ मे कंगन
गले में मुतियन हार
श्याम गात केसरिया जामा
गोटा लगे है किनार
मिली है शुभ घडियां

.....

कां गयेरी बन्ना इतई तो खडेते
कां गये री दूला इतई तो खडेते
मौरा के लाने बन्ना माली कें गयेते
माली की मोंडी ने मोह लये री बन्ना
बागे के लाने बन्ना दरजी कें गयेते
दरजी की मोडी ने मोह लये री बन्ना
कंकन के लाने बन्ना लुहरा कें गयेते
लुहरा की मोडी ने मोह लये री बन्ना
कुल्डल के लाने बन्ना सुनरा के गयेते
सुनरा की मोडी ने मोह लये री बन्ना
इतई तो खडेते

.....

बन्ना गीत

मोरे राम-लखन युवराज, आज फुलवगियों आये जू
पाट-पीताम्बर रही सुहाय, और सिर पंख लगाये जू
मानो प्रकट भये हों चन्द्र, मेघ से फनद छुडाये जू
कानन कुण्डल रहे सुहाय, माथे तिलक लगाये जू
टेडी भोंहे वाल घुघराले, अति दल चोर चुराये जू
आंखे रतनारी अति प्यारी, मधुर मुस्कान लुभाये जू
गर्दन सुन्दर शंख समान, भुजा गजसूड लगाये जू
सांवरी सूरत मोहनी मूरत, देखत काम लजाये जू
दशरथ पुत्र राम सुख धाम, रानी कौसल्या जाये जू
छोटे गौर बदन है भैया, लखन सुमित्रा जाये जू
गिरजा पूजन सीता गयी, तहा पे दर्शन पाये जू

.....

बन्ना छव लक मोरो जिया हुलसत है
हिया हुलसत है, उमंग बढत है
रघुवर वसन लसत कुसमानी
सो मुंदरी पै मोरो हिया हुलसत है
जनक भवन सें जे आई लगुनियां
सो सुन-सुन सखी मोरो हिया हुलसत है।
देखो सखी नृप जसरथ के घर
कंकन कलश पै दियला जरत है
बना छव लख मोरो जिया हुलसत है।

.....

लयें धनुष बन्नां ठांडे री
कोऊ जोडी तो मिला दे

जोडी तो मिलादे सिया खों मिलादे लंगे धनुष
माथे हो मौरे बांदो राजा वनरे
कलियों वीच सिया जानकी कोऊ
चंदन खोरे काडो राजा वनरे
टिपकन वीच सिया जानकी
कानो हो कुण्डल पैरो राजा वनरे
लटकन वीच सिया जानकी
गरे हो हरवा पैरो राजा वनरे
गुन्जन वीच सिया जानकी
हांतो हो कंकन बांदो राजा वनरे
चूरा वीच सिया जानकी

.....

जब रगपत दूला मेडे हो आये
सो दूव भई हरयाय भलेंजू
जब रगपत दूला तालों हो आये
सो ताल हिलोरें लेय भलेंजू
जब रगपत दूला बागों हो आये
सो फूल रहे मुस्क्याय भलेंजू
बेला-फूली चमेली फूली
केवरी की वास सुहाय भलेंजू
जब रगपत दूला कुअलों पै आये
सो मोह लई पनहार भलेंजू

.....

बैठे कौशल्या की गोद, अबधपुर में राजा बनरे
माथे में मौरे बांधो राजा बनरे
सो कलगिन पै नाच रही मोर
गले में गोफे पहिरो राजा बनरे
सो मोतिन में नाच रही मोर
केसरिया जामा पहिरो राजा बनरे
सो पनरस में नाच रही मोर
पावन तोडा पहिरो राजा वनरे
सो माहुर में नाच रही मोर

.....

सखी आज कैसी मनोहर घडी है
गले राम जयमाल सुन्दर पडी है
कलियों में कलियां और लडियों मे मोती
चमकती वो सेहरे की पंखुडी है
जरा बांध दो कोई नौसे का सेहरा
लये रंगभूमि में मालिन खडी है
नहीं आज फूला समाता अवधपुर
खुशी आज रानी कौशल्या बडी है
भई आज शादी सियाराम जी की
खुशी आज राजा जनक को बडी है।
रानी कौशल्या के ललना, सुघर वन आये बन्ना
शीश पै सोहे ककरेजी चीरा, कैसे लगे है फुंदना
तैतीस कोट बराती आये, राजा जनक के अंगना
रूप रंग सब मोह लिये है, मणि माणिक लगे कंगना
तन सोहे केसरिया जामा, सखियां गावै बन्ना

.....

बन्ना धीरे चलो ससुराल गलियां
बन्ना सेहरा संभालेगी सब सखियां
जिनके लम्बे-लम्बे हॉत हरीरी चुरियां
बन्ना बागों संभालेगी वेई सखियां
जिनके लम्बे-लम्बे हॉत हरीरी चुरियां
बन्ना डोली संभालेंगी वोई सखियां
जिनके लम्बे-लम्बे हॉत हरीरी चुरियां

.....

इन रघुनंदन धनुष उठाये
धनुष उठाये वारी सिया को ब्याह लाये
माथे सेहरो बांधो राजा बनरे
सो कलियन वीच वारी सिया ब्याह लाये
चंदन खौर काढो वारे वनरे
सो टिपकन बीच वारी सिया ब्याह लाये
कानन कुण्डल पैरो राजा वनरे
सो मुतियन वीच वारी सिया खो ब्याह लाये
मुख भर विरियां चावो राजा वनरे
सो लाली विच वारी सिया ब्याह लाये
हॉतन कंगन बांदौ राजा वनरे
सो गजरा विच वारी सिया खों ब्याह लाये

.....

मोरे रामचंद्र महराज आज वनरा वन आये जू
भरत-लखन-रिपु दमन चार सुन्दर छवि छाये जू
सिरसोहत है मौर, कान कुण्डल लटकोये जू
चन्दन और लिलाट मनो सरिव प्रात भान उग आये जू
जाया है करतार हार मानो हिरदे झलकाये जू
दुल्हा रूप निहार सखिन के वाने चित्त चुराये जू
मिथलापुर नर-नार जनक नृप धन्न कहाये जू
वे नर ना धन्न जिनने प्रभु के दरश पाये जू

इस प्रकार हम कह सकते है कि लोक गीत आस्तिक मन की उपज है मंगल रस से भरे कलश है। संपूर्ण जीवन यात्रा की कथा लोकसाहित्य में जिस ईमानदारी एवं सादगी के साथ व्यक्त होती है, उतनी शिष्ट साहित्य में मिलनी मुश्किल है। लोकगीत लोकमानस के उजले दर्पण है जो सानव समाज एवं प्रकृति के नजदीक रहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 लूर-साहित्यिक सांस्कृतिक अर्ध्द वार्षिक पत्रिका वर्ष 4 अंक 7-8 जनबरी दिसम्बर 2006
2 बुन्देली लोकगीत -पं. शिवसहाय चतुर्वेदी
3 लोकसाहित्य विज्ञान - डॉ. सत्येन्द्र प्र0 390
4 लोकसाहित्य के प्रतिमान कुन्दनलाल उप्रेती पृ. 212
5 एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका प्रो. क्रोस्जि पृ. 35

****

वर्तमान साहित्य की प्रासंगिकता और सामाजिक सरोकार परिपेक्ष्य - राजेश जोशी का काव्य साहित्य

डॉ. छाया चौकसे *

प्रस्तावना – साहित्य और साहित्यकार समाज से प्रभावित ही नहीं होता बल्कि समाज और समाजिक को भी प्रभावित करता है। यह भी निश्चित है कि मौलिक साहित्य समाज में घटने बाली स्थितियों परिवर्तनों घटनाचक्रों और उथल पुथल का ऐसा आईना होता है, जिसमें समाज का सत्य व्यक्त होता है और जिससे समाज को दिशा मिलती है कि वर्तमान में वह समाज की उपस्थित खामियों को किस तरह दूर करे।

उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द्र ने कहा भी है कि साहित्य समाज का दर्पण है। हम वैदिक युग से लेकर अधतन साहित्य के उद्देश्यों पर दृष्टिपात करें तो यही पाते हैं कि श्रेष्ठ साहित्य हमेशा सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के लक्ष्य को लेकर ही लिखा गया है, जीवन में आदर्श और मूल्यों के महत्व को प्रतिपादित करते हुये असत्य और हिंसा से प्रभावित जीवन के अन्त को भी प्रकट किया है। मनुष्य को चिन्तन की नयी दृष्टि देते हुये जीने की कला सिखाने का काम साहित्य निरन्तर करता आ रहा है।

इस संदर्भ में मै राजेश जोशी जो आधुनिक कविता के शीर्षस्थ कवि है। और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण को प्रत्यक्ष कर कविता लिखते है। कविताओं के कुछ कवितांश के माध्यम से स्पष्ट करना चाहूंगी कि उनका साहित्य किस प्रकार से सामाजिक सरोकार रखता है किस प्रकार प्रासंगिक है।

उनकी कविता है - 'उनका भरोसा' जिसमें वर्तमान में गरीब मां-बाप द्वारा अपने बच्चों से गाना गँवाकर या दीनहीनता दिखाकर उन्हें बचपन से ही कैसे संस्कार दे रहे हैं स्पष्ट करते है-

अपने छोटे छोटे हाथ फेंलाते हैं।
गिड़गिड़ाते हैं पेट दिखाते हुये कहते हैं वे कई दिन से भूखे हैं।
तुम्हें दयार्द्र कर डालने का लगभग हर हथकंडा अपनाते हैं।
हमारी पीठ फेरते ही अपने ही स्वांग पर जोर जोर से खिलखिलाते है। भीख मांगने वाले बच्चे।[1]

रोजी रोटी के लिये विस्थापित होने वाले लोगों की सामाजिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा है इसे राजेश जोशी ने बड़ी मार्मिकता से व्यक्त किया है-

बाबा को जानता था सारा शहर
पिता को भी चार मौहल्ले के लोग जानते थे
मुझें नहीं जानता मेरा पड़ोसी मेरे नाम से
सिर्फ एलबम में रहते है परिवार के सारे लोग एक साथ
टूटने की इस प्रक्रिया में क्या टूटा है, कोई नहीं सोचता। [2]

वर्तमान समय में प्रतिभावान लोगों को वह महत्व नहीं मिल रहा है जिसके वे हकदार हैं। प्रतिभावान लोग अगर दिल्ली तक भी पहुंच जायें तो भी क्या हालत है उसे कवि ने इन पंक्तियों में व्यक्त किया है-

ओ मेरे समकालीनों। प्रतिभा खाऊ नगर है दिल्ली
बचे है यहां पेड़ और दोस्त और बसें और सड़के भी।
सुरक्षित घर लौट आने की आस लेकिन नहीं बची सड़कों पर घूमते हुये,
अर्धरात्रि का आसमान देखने की सुविधा नहीं बची।
दिल्ली में बचा है आतंक और असुरक्षा /वहीं पुलिस बची है दिल्ली में उम्मीद नहीं बची। [3]

'दादा खैरियत' कविता में आज आपसी सम्मान में एक दूसरें की खैरियत के प्रति किस प्रकार का भाव समय है इसे बखूबी अभिव्यक्ति करते हुये राजेश जोशी लिखते है-

कहां बची है खैरियत
किसकी बची है खैरियत
चलन न हो कहने का
तो कौन कह सकता है
इस जमाने में खैरियत मियां खैरियत। [4]

राजेश जोशी की अनुभुति दृष्टि आज के समय में सामाजिक परिवेश का एक अहं हिस्सा 'बच्चों' पर पड़ती है तो उनकी पैनी नजर और लेखनी से उनके जीवन के बाल्यकाल की विवशता और उनकी पीड़ा का ऐसा कारूणिक भाव व्यक्त होता है जैसे वे उस पीड़ा को भोग रहे हों। निराला और पंत द्वारा लिखी गई बच्चों पर कविता से भी आगे वे समाज से प्रश्न पूछते दिखाई देते हैं ऐसे प्रश्न जो निरंतर ही हमारे समाज में प्रासंगिक बने हुये हैं-

बच्चे काम पर जा रहे हैं
हमारे समय की सबसे भयानक पंक्ति है।
यह भयानक है इसे विवरण की तरह लिखा जाना।
लिखा जाना चाहिये इसे सवाल की तरह।
काम पर क्यों जा रहे हैं बच्चे ? क्या अंतरिक्ष में गिर गई हैं सारी गेंद ?
क्या दीमकों ने खा लिया हैं सारी रंगबिरंगी किताबों को।
क्या काले पहाड़ के नीचे दब गये हैं सारे खिलौने सारे मदरसों की इमारतें ?
क्या सारे मैदान सारे बगीचे और घरों के आंगन खत्म हो गये हैं ?
एक-एक तो फिर बचा ही क्या है इस दुनिया में। [5]

राजेश जोशी की कविता अपने समय की पूरी पड़ताल करती है, चाहे सुविधाओं के बीच छूटती मानवीयता हो या राजनीति के द्वारा अपनाये जाने वाले हथकंडे हों या बाजार वाद से प्रभावित जीवन सब पर उनकी लेखनी चली है-

टूटने के क्रम में टूट चुका है बहुत कुछ अब इस घर में रहते हैं ईन मीन तीनजन। [6]

हर दिन लम्बी होती सडकों और बडे होते शहरों में अब कम होता जा रहा है, चलन किसी को लेने आने या छोडने जाने का। [7]

इस प्रकार राजेश जोशी परिवार से विलग होकर शहरों और महानगरों के रहने वाले परिवार के जीवन की वस्तुस्थिति से अवगत कराते है। उनका साहित्य वर्तमान के प्रति तो सचेत करता है और समय की प्रासंगिक समस्याओं से (जो निरन्तर बढ़ती ही जा रही है) वाकिफ कराता हुआ अपने इस सत्यता से सामना करते हुये इसके हल निकालने के लिये उत्प्रेरित करता हुआ समाज के भावनात्मक अपनत्व भरे व्यवहार को बरकरार रखने की चेतावनी देता है प्रयोगिकी के उपयोग में समाजिक रिश्तों का झरना सूखने न पाये इसके प्रति हमें सचेत करता अपने समाजिक हिस्सेदारी को स्थापित करने की पहल करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कविता संग्रह दो पंक्तियों के बीच राजेश जोशी पृ. 24
2. दो पंक्तियों के बीच राजेश जोशी पृ 55
3. दिल्ली 88 नेपथ्य में हंसी राजेश जोशी पृ 42
4. मिट्टी का चेहरा राजेश जोशी पृ 149
5. नेपथ्य में हंसी राजेश जोशी पृ 23
6. दो पंक्तियों के बीच राजेश जोशी पृ 54
7. वही पृ 17-18

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

हिन्दी साहित्य में लघु पत्रिका का उदय एक आन्दोलन का सूत्रपात है

राधा वास्केल *

प्रस्तावना – हिन्दी में लघु पत्रिका आन्दोलन कब से प्रारम्भ हुआ? विद्यमान भारतीय संन्दर्भ में लघु पत्रिका को मूलत: वामपंथी आन्दोलन की उपज माना जाता है। यद्यपि लघु पत्रिका आन्दोलन अमेरिका में प्रारम्भ हुआ किन्तु उसके कंटेड तथा भारतीय लघु पत्रिका के कंटेड में बुनियादी अन्तर है। भारत में लघु पत्रिका नामकरण अमेरिका की लिटिल मैगजीन की तर्ज पर हुआ है। किंतु नाम के अतिरिक्त इसमें किसी प्रकार का साम्य नहीं है। यह समाजवाद विचारधारा के अंगीकार करती है। लघु पत्रिका यह विशेषता उसे अन्य पत्रिकाओं से अलग व विशिष्ट बनाती है। इस परिप्रेक्ष्य में यह विवेचन करना महत्वपूर्ण होगा कि हिन्दी में लघु पत्रिका आन्दोलन का प्रारम्भ कब हुआ? इस संबंध में दो मत प्रचलित हैं। एक मत मानता है कि लघु पत्रिका आन्दोलन का प्रारम्भ सन् 1938 सुकुमार कवि सुमित्रा नन्दन पंत के द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'रूपाभ' से होती है। तीन मूर्ति भवन नई दिल्ली में 6 अक्टूबर से 10 अक्टूबर 1969 तक आयोजित एक सेमिनार 'भारत में समाजवाद' (1919–1939) नामक विषय पर हुआ था। इसमें देश के 25 भारतीय विद्धानों ने भाग लिया था। इस सेमिनार में 'हिन्दी साहित्य पर समाजवादी विचारो का प्रभाव: 1919– 1939' नामक विषय पर अपने विचार रखते हुए डॉ. प्रभाकर माचवे ने हिन्दी लघु पत्रिका आन्दोलन के बारे में अपने स्वयं स्फुट विचार प्रस्तुत किये थे[1]। उनके अनुसार हिन्दी में लघु पत्रिका आन्दोलन का प्रारम्भ सन् 1938 में सुकुमार कवि सुमित्रा नन्दन पंत द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'रूपाभ' से होता है। पंत इस पत्रिका के सम्पादक भी थे। डॉ. प्रभाकर माचवे ने अपना यह व्यक्तिगत निष्कर्ष 'रूपाभ' के विशेषांक में प्रकाशित सम्पादकीय आधार पर निकाला था। सम्पादकीय का प्रमुख अंश इस प्रकार है।

'आज के युग यथार्थ ने उग्र रूप धारण कर लिया है और इससे हमारी पुरानी मान्यताओं, भावनाओं और उस पर आधारित कल्पनाओं को झकझोर दिया है..... इसलिए इस युग की कविता स्वप्नजीवि नहीं हो सकती।' [2]

संयोग से उसी समय सुमित्रानन्दन पंत का मार्क्सवाद की ओर झुकाव हुआ था। सुमित्रा नन्दन पंत की समाजवादी विचारधारा की स्वीकृति का आभास उनके शब्दो में 'युगांत' (1934–35) में निश्चय रूप से इस परिणाम तक पहुँच गया था कि 'मानव सभ्यता का पिछला युग अब समाप्त हो गया है और नवीन युग का प्रादुर्भाव आवष्यंभावी है।'[3]

किंतु यदि इस कथन को मान लिया जाये कि लघुपत्रिका आन्दोलन का प्रारम्भ 'रूपाभ' के प्रकाशन से होता है तो यह सवाल उठता है कि सन् 1938 से लेकर सन् 1959 तक याने 'निष्कर्ष ' के प्रकाशन तक 'रूपाभ' का कोई 'सहयोगी' अनुयायी या उत्तराधिकारी नहीं दिखाई पड़ता है। यह तथ्य लघु पत्रिका आन्दोलन की विवेचना में बहुत महत्व रखता है। लधु पत्रिका आन्दोलन की विद्यमान धारणा के अर्थ में भी ' रूपाभ ' को किस सीमा तक लघु पत्रिका कहा जा सकता है, विवाद का विषय हो सकता है।

दूसरी बात यह है कि उस समय तक भारतीय लेखकों के समक्ष 'समाजवाद का स्वरूप' ही स्पष्ट नहीं हुआ था। 'क्रांति सम्बन्धित प्रारम्भिक अवधारणा कम या ज्यादा केवल गुप्त बम दर्शन समझा जाता था। जहाँ पर आत्मोत्सर्ग ही केवल दिखाई देता था। लेखकों में वर्गहीन समाज सम्बन्धी धारणा स्पष्ट नहीं थी। हिन्दुस्तानी क्रांतिकारी पार्टी जो सशस्त्र विद्रोह में विश्वास करती थी, उनकी दृष्टि में ब्रिटिश विरोधी शक्तियों से विदेशी सहायता प्राप्त करने से आगे नहीं गई थी। किन्तु सोवियत प्रयोग तथा अक्टूबर क्रांति ने उन्हें आन्तरिक विद्रोह के लिए नई प्रेरणा को जन्म दिया। नागार्जुन ने प्रभाकर माचवे को कहा कि जब वह सन् 1937 में कोलम्बो (श्री लंका) में थे तब उनका झुकाव भिख्क्षु शरणांकर की सम समाज पार्टी की ओर था। इन तथ्यों की रोशनी से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग में समाजवाद की धुंधली तरल अवधारणा मात्र थी। इसलिए इस निष्कर्ष पर पहुचाँ जा सकता है कि हिन्दी में लघु पत्रिका आन्दोलन की शुरूआत सन् 1938 से नहीं मानी जा सकती है।

मराठी भाषा में लघु पत्रिका आन्दोलन का प्रारम्भ सन् 1959 में दिलिप चित्रे की 'शब्द' पत्रिका से होता है। इस प्रकार का ट्रेण्ड बंगला, मलयलम, तमिल आदि भाषा साहित्य जगत में देखने को मिलता है। निस्संदेह यह उस साहित्य की मांग थी। इस तरह के आन्दोलन ने रचनाकारों को कुछ 'नया' करने की प्रेरणा दी। मराठी में तो नाटक के क्षेत्र में नई क्रांति ने जन्म लिया। घासीराम कोतवाल के नाटक में बिल्कुल पृष्ठ भूमि पर मानवी कर्टन का नव प्रयोग किया गया हिन्दी का लघु पत्रिका आन्दोलन का दूसरा दौर 'निकष' के प्रकाशन (सन् 1957) से प्रारम्भ होता है। जो 'नवलेखन' के प्रकाशन (सन् 1962) तक चलता है। लघु पत्रिका का तीसरा दौर नवलेखन के प्रकाशन (सन् 1962) से लेकर उत्तरार्ध (बाद में इसी नाम का परिवर्तन कर उत्तरगाथा हो गया) (सन् 1974) तक। लघु पत्रिका आन्दोलन का चौथा दौर बीसवीं सदी का अंतिम 26 साल का समय है जो आपातकाल (सन् 1974 से 1977) से लेकर बीसवी सदी के अंत तक चलता है। लघु पत्रिका आन्दोलन का पाँचवा दौर 'मोहभंग' का इक्कीसवी सदी से प्रारम्भ होता है।

अमेरिका लघु पत्रिका 'जिन' का घोष वाक्य रहा है 'विज्ञापन और पत्रिका विक्रय के लिए निकालना वेश्यावृत्ति है।' जिन के जितने अंक छपे उनमें कीमत छपी नहीं होती तथा किसी लेखक के साथ गाली–गलोच नहीं की जाती थी। लघु पत्रिका आन्दोलन में भी साहित्यिक प्रदूषण ने अपनी घुसपैठ कर ली। विज्ञापन तथा व्यक्तिगत 'अहोरूपम' 'अहोध्वनि'का स्वर सुनाई देने लगा। छपास तथा व्यक्तिगत प्रशंसा की भूख को लघु पत्रिका के नाम पर मिटाई जाने लगी। जुमलोबाजी, गुटबाजी, खेमेबाजी, तथा जुगाली की कीचड़ ने लधु पत्रिका आन्दोलन की धार को कुंद करना प्रारम्भ कर दिया। असली और नकली का भेद करना आवश्यक हो गया था। साहित्यकार

* शोधार्थी (हिन्दी) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

स्वर्गीय श्रीकांत वर्मा ने इस बाबद् अपना निर्णय सुनाया। उन्होनें कहा–

'मेरे ख्याल में व्यावसायिक पत्रिकाओं ने जो शून्य दिया है, उसे छोटी पत्रिकाएँ ही भरती हैं। साहित्यिक पत्रिकाएँ केवल लेखकों के लिए और भावी लेखकों के लिए ही होती हैं। वे बहसो के लिए व बहसो का आधार होती है। छोटी पत्रिकाएँ आत्म अभिव्यक्ति होती है। जब बड़ी पत्रिकाओं मे कुछ विशिष्ट और साहित्यिक रचनाओं का छापना संभव नहीं होता तब छोटी पत्रिकाओं की आवश्यकता होती है।'

श्रीकांत ने अपने कथन से साहित्यिक पत्रिका तथा लघु पत्रिका के बीच अन्तर रेखा को स्पष्ट नहीं किया है। किंतु अनिलकुमार घई के अनुसार– 'लघु पत्रिका का अपना व्यक्तित्व होता है। वह आवारागर्दी का मंच तो होता ही है, बड़ी पत्रिकाओं के लिए चैलेंज भी होता है । 'सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के अनुसार – 'छोटी पत्रिकाएं चिंगारियों की तरह होती है। जिनकी शक्ति या सामर्थ्य के अस्तित्व का तब तक पता नहीं चलता जब तक कि वे आग नहीं बन जाती। लघु पत्रिकाओं का उद्देश्य 'नयेय को व्यक्त करना रहा किन्तु अभिव्यक्ति करना रचनाकार के हाथो में नहीं होता है। प्रकाशन प्रतिष्ठान की अपनी समझ पर तथा स्वीकृति पर निर्भर होता है। अपनी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के लिए प्रसाद को 'इन्दु तथा पंत को 'रूपाभ' का सहारा लेना पड़ा।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में लघु पत्रिका आन्दोलन का अपना विशेष महत्व तथा स्थान है। इस आन्दोलन ने समाज में साहित्य के संस्कार को परिष्कृत व प्राणवंत कर उसे गहराई से पैठाने का प्रयास किया है। इसके कारण से चंद नामचीन साहित्यकारों के टापूओं में बसे साहित्य की पहचान की जगह पर उसे जीवन का अंग बनाया है। प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, मुक्तिबोध, शिवाजी सावंत आदि साहित्यकारों व कवियों को आम लेखको व साहित्य रसिकों की बहस बनने का श्रेय लघु पत्रिका आन्दोलन को जाता है। भारतेन्दु बाबू हरीशचन्द्र ने आधुनिक हिन्दी साहित्य का सूत्रपात करते हुए निजभाषा का सवाल उठाया। हिन्दी साहित्य में यह पहला वैचारिक प्रश्न था जिससे रचनाकारों में भाषा के बोध को जगाया। इसी बोध ने रचनाकारों को 'मनोरंजन साधन' की जगह 'स्वतंत्र चेतना' का वाहक बना दिया। साहित्य को इस आधार पर स्थापित करने के कारण से हिन्दी साहित्य में मनोरजंन साहित्य को साहित्य का दर्जा नहीं दिया गया हैं आज भारत में प्रतिवर्ष– 300–400 फिल्मों व हजारों गीतो का सर्जन होता है किंतु इसे साहित्य की संज्ञा नहीं दी गई है क्योंकि इसका उद्देश्य मात्र हर कीमत पर ,समाज की कीमत पर भी मनोरंजन करना है। भारतेन्दु हरीशचन्द्र की 'कवि वचन सुधा तथा 'हरीशचन्द्र मैगजीन लघु पत्रिकाओं ने इस उत्तरदायित्व को निभाया। साहित्य के समसामायिक व बुनियादी सवालों को उन्होंने रचनाकारों के सामने उपस्थित किया। आधुनिक साहित्य ने परम्परागत गैल ही गैल चले मार्ग को छोड़कर 'गैलन चले सिंह और सच्चा जोगी को अपनाया। नया मार्ग था नहीं उसे निर्मित करना था। साहित्य के आगे भाषा , रचना रचनाधर्मिता, उद्देश्यपरकता, जन, नये नायक व विषय वस्तु आदि के सवाल उठ खड़े हुए। बाबू हरीशचन्द्र ने जो द्वार खोला था वह, आधुनिक साहित्य को वैश्विक साहित्य जगत से रूबरू करा रहा था।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में द्विवेदी काल में 'सरस्वती' ने इस उत्तरदायित्व को निभाने की कोशिश की। परम्परा व शास्त्र की चौखट का मर्यादाबोध फिर भी बना हुआ था। हिन्दी साहित्य में छायावाद युग के उदय ने साहित्य के कलेवर स्वरूप तथा प्रकार में अमूलचूक परिवर्तन ला दिया। हिन्दी साहित्य सौन्दर्य शास्त्र से नहा उठा। साहित्य में रस, आनन्द विलक्षणता तथा वैभव के दर्शन होने लगे। इसी छायावादी युग में सन् 1936 में प्रगतिवादी युग ने जन्म लिया। एकाएक हिन्दी साहित्य ने अपने तालाब रूप छोड़कर 'महासागरीय' रूप धारण कर लिया। जयशंकर प्रसाद निराला, पंत, महादेवी वर्मा आदि ऐसे हस्ताक्षर थे जिनके कारण से छायावाद पूर्व के साहित्य को एक तरह से विस्मृत ही करा दिया गया। इसी समय सन् 1938 में लघु पत्रिका 'रूपाभ' का प्रकाशन हुआ।

पिछले 75 वर्षो से हिन्दी साहित्य में लघु पत्रिका आन्दोलन चर्चित रहा है। इस आन्दोलन से लगभग सभी प्रमुख साहित्यकार ,कवि, आलोचक, नाटककार, रंगकर्मी नाटककार, साहित्य रसिकगण किसी न किसी रूप में जुड़े हुए है। समाज में रचनाकारो व साहित्यरसिको की पूरी बिरादरी होती है। साहित्य समाज का प्रमुख संस्कार है। मनुष्य संबंधों के विश्व में जीता है। साहित्य मनुष्य के इन्ही बहुविध बहुरूपी तथा बहुकालीक व बहुउद्देश्यी संबंधो को अभिव्यक्त करता है। निसन्देह यह अभिव्यक्ति प्रकार रचनाकार विशेष की प्रतिभा पर निर्भर होता है। यही विशेषता साहित्य की गुणवत्ता व उच्चता का निर्धारण करती है। मुद्रण के अविष्कार व सार्वजनिक शिक्षा व्यवस्था के लागू होने से साहित्य का स्वरूप दायरा वस्तु तथा प्रकार में क्रांन्तिकारी परिर्वतन आ गया ।

हिन्दी साहित्य के नये पड़ावो नई धाराओं तथा दिशाओं व योगदान का इतिहास, लघु पत्रिकाओं के बिना नहीं लिखा जा सकता। लघु पत्रिकाओं को साहित्य के अखाड़े और विरोध के अड्डे कहा जा सकता है। लघु पत्रिकाओं में एक पूरा युग समाया हुआ है। इतिहास साक्षी है कि हिन्दी साहित्य में पत्रकारिता की नींव याने लघु पत्रिकाओं ने डाली है। लघु पत्रिका आन्दोलन के समक्ष प्रकाशन, वितरण, लेखन आदि संबंधी प्राणांतक समस्याएँ हैं, इनसे इंकार नहीं किया जा सकता है, इन समस्याओ के मकड़जाल से ऐसा लगता है कि लघु पत्रिका आन्दोलन अब दम तोड़ देगा किन्तु फिनिक्स पक्षी की तरह यह अपनी राख से पुन: जीवित होता है। चूंकि लघु पत्रिका आन्दोलन है, इसलिए कितनी लघुपत्रिका प्ररम्भ हुई और कितनी बंद हुई, इस तथ्य से किसी प्रकार का फर्क नहीं पड़ता है। लघु पत्रिका आन्दोलन एक नदी की धारा है जो लघु पत्रिकाओं की छोटी – छोटी बूंदो से अपना निर्माण करती हैं और इन बूंदो के निर्माण की सतत् परम्परा रही है लघु पत्रिका भले ही देखने में एक अलग 'स्वतन्त्र इकाई 'जरूर दिखाई देती हो किन्तु वह सब एक नदी की धारा में समाहित असंख्य जलकण की तरह से है। इस 'नदी की धारा' का नाम लघु पत्रिका आन्दोलन है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रोसिडिंग्स आफ सेमीनार ऑन सोशलिज्ल्म इन इण्डिया (1919–1939) नेहरू मेमोरियल म्यूजियम एण्ड लाइब्रेरी, सन् 1970, सैकण्ड वोल्यू का लेख, 'इन्फ्लयूंस आफ सोसलिस्ट थॉट इन हिन्दी लिटरेचर लेखक –डॉ प्रभाकर माचवे, पृष्ठ 712
2. वही, पृष्ठ 712
3. वही वोल्यूम विषय पर शिवदान सिंह चौहान का लेख, पृष्ठ 790
4. अणिमा (हिन्दी) लघु पत्रिकाओं द्वारा कलकत्ता में आयोजित विचार गोष्ठी में व्यक्त विचार, मार्च 1966
5. सारिका, हि.मा. जुलाई 1960 पृष्ठ 90

****

सैरन्ध्री - अहं नहीं आत्माभिमान

डॉ. संध्या गंगराड़े *

शोध सारांश – महाभारत की कथा और पात्रों में एक अनोखा आकर्षण है और अद्‌भुत सम्मोहन है। भारतीय साहित्य की इस महाकाव्यात्मक रचना ने भारतीय भाषाओं के साहित्यकारों को आकर्षित किया, और इसी कारण कुछ कालजयी रचनाएँ भारतीय साहित्य की थाती बन गई। मृत्युंजय (शिवाजी सावंत) द्रौपदी (प्रतिभा राय) अंधा युग (धर्मवीर भारती) जैसी रचनाओं ने महाभारत की कथा को युगीन रंग दिया।

प्रस्तावना – स्त्री-विमर्श और दलित-विमर्श ने भी द्रौपदी और कर्ण को अतीत से उठाकर वर्तमान पर ला खड़ा किया है। द्रौपदी, पांचाली, कृष्णा आदि नामों से अभिहित द्रुपद पुत्री का विवाह और जीवन दोनों ही आज अनेक प्रश्न लेकर खड़े है। पाँच पतियों की पत्नी, पाँच वीरों की पत्नी का जीवन कितना कण्टकाकीर्ण रहा, यज्ञ से जन्मी, अनिंद्य सुन्दरी कृष्णा ने वरण किया अर्जुन का परन्तु सहवास करना पड़ा पाँच पतियों से। धर्मराज युधिष्ठिर, गदाधारी भीम, गाण्डीव धारी अर्जुन और नकुल सहदेव जैसे पतियों के होते हुए भरी सभा में चीरहरण, सहायता को पहुँचे भी तो सखा कृष्ण और पति मूक दर्शकों की तरह देखते रहे।

नरेन्द्र कोहली के सामने था महाभारत का यही नारी-चरित्र और घटना थी पाण्डवों का अज्ञातवास। अज्ञातवास अर्थात् अपनी विशिष्ट पहचान छुपाकर स्वयं को सुरक्षित रखना। ऐसी दशा में पाण्डव अपने वरदानों या अभिशापों या अपने विशिष्ट गुणों के कारण विराटनगर में स्थान पा लेते है। द्रौपदी भी रानी सुदेष्णा की सैरन्ध्री के रूप में स्थान पा लेती है। सेविका का स्थान द्रौपदी पा लेती है परन्तु यह विराट नगरी है। विराट नगरी जहाँ राजा अपने श्यालक, सेनापति कीचक के हाथ की कठपुतली है। कीचक जो कि दंभी, अहंकारी, अविवेकी, शक्ति और सत्ता के मद में चूर है और पर-स्त्री पर वह अपनाअधिकार समझता है। यहाँ का राजा भी सौन्दर्य लोलुप है। ऐसे राज्य में द्रौपदी अपने पाँच पतियों के साथ पहुँचती है। पाँचो पति अपने योग्य विराटनगरी में रूप और कार्य तलाश लेते हैं। समस्या तो द्रौपदी की है उसे अपने पतियों की तरह कोई वरदान या अभिशाप नहीं मिला जिसके चलते वह अपना रूप बदल ले। तब वह राजप्रासाद में रानी सुदेष्णा की सैरन्ध्री का कार्य स्वीकार तो लेती है परन्तु वह यह भी जानती है कि वह यहाँ सुरक्षित नहीं है। इसीलिए वह रानी सुदेष्णा से अपनी रक्षा का आश्वासन लेती है। वह अच्छी तरह जानती है कि 'जिस राज्य का सेनापति धर्म त्याग दे और राजा उसके सम्मुख असहाय हो जाए, वहाँ तो न राजा सुरक्षित है, न रानी, प्रजा का तो कहना ही क्या।'[1] द्रौपदी जानती है कि वह असुरक्षित है और वह रानी से आश्वासन लेती है और रानी उसे आश्वासन देती भी है – 'ठीक है सैरन्ध्री। मुझे तुम्हारी दोनों बातें स्वीकार है। तुम केवल मेरी सेवा में रहोगी और जिस स्त्री अथवा पुरुष के सम्मुख तुम नहीं जाना चाहोगी उसके लिए तुम्हें कोई बाध्य नहीं करेगा। तुम न किसी के चरण छूओगी, न किसी का उच्छिष्ट भोजन'[2]

परन्तु सुदेष्णा अपने आश्वासन का निर्वाह कहाँ कर पाती है। लंपट और सत्ता के मद में चूर, स्त्री देह को भोग का साधन मात्र समझने वाले अपने भ्राता कीचक से सुदेष्णा सैरन्ध्री की रक्षा नहीं कर पाती है। और स्वयं ही अपने भाई के प्रासाद में उसे भेज देती है। सैरन्ध्री किसी तरह अपनी रक्षा तो कर लेती है परन्तु उसे भय भी बना रहता है; इसीलिए वह अपने अदृश्य पाँच गंधर्व पतियों से अपनी रक्षा का न केवल भ्रम फैला कर रखती बल्कि आवश्यकता पड़ने पर वे पाँच गंधर्व पति जो कि वास्तव में पाँच पाण्डव ही थे सैरन्ध्री की रक्षा भी करते हैं।

इस उपन्यास की विशिष्टता कथा में नहीं कथा के माध्यम से उठाए वे प्रश्न हैं जो आज भी उतने ही सामयिक हैं जितने महाभारत काल में थे। कला, जीवन, धर्म, न्याय और दण्ड विधान, स्त्री और पुरुष, पाप और पुण्य, राजा और सेनापति, राज्य और सुरक्षा, भोग और संयम, ऐसे कुछ शाश्वत प्रश्न हैं जिसके समाधान की खोज जागरूक साहित्यकार को हमेशा बनी रहती है। कला को प्रयोजन ईश साधना मानते हुए उपन्यासकार ने अर्जुन वृहन्नला से कहलवाया है 'कलाओं से सब कुछ प्राप्त हो सकता है। यश भी, धन भी, काम भी। अब यदि किसी को काम मिले और वह काम को पकड़कर कला को त्याग दे तो उसकी कला की यात्रा वहीं समाप्त हो जाती है। यही बात यश और धन लेकर भी है। यदि साधक मार्ग में मिला सब कुछ ईश्वर को समर्पित कर आगे बढ़ता चले तो अंत में वह कला उसे अपने शुद्ध रूप में प्राप्त हो जाती है, जो ईश्वर का ही एक रूप है। [3] वे कला की साधना को चरित्र की उज्ज्वलता भी मानते हैं 'कला की साधना अपने चरित्र की भी साधना है। [4]

उपन्यासकार ने जीवन के तत्व और संवेदनाओं को अत्यंत सहज रूप में रख दिया है, न आडम्बर, न उपदेशक की मुद्रा कुछ उदाहरण दृष्टव्य है।

- 'ईश्वर कला रूप भी है पुत्री! वह रस रूप भी है।' [5]
- 'अभागी द्रौपदी तूने शरीर का सौन्दर्य क्यों देखा? आत्मा के सौन्दर्य की ओर तेरा ध्यान क्यों नहीं गया?'[6]
- 'आप धर्म की रक्षा करें, धर्म आपकी रक्षा करेगा।'[7]
- 'पाप पदार्थ में नहीं व्यक्ति में होता है।'[8]
- 'स्वयं को इस शरीर से पृथक कर, तटस्थ भाव से संसार को देखो, तो तुम्हें पता चलेगा कि न सुख है, न दु:ख हैं – ये सब हमारे बनाए हुए भ्रम मात्र है।'[9]

नरेन्द्र कोहली महाभारत और रामायण के पात्रों, घटनाओं और कथाओं पर लिखने में पारंगत हो चुके हैं। इसीलिए 'सैरन्ध्री' की भाषा में सहजता है, अनावश्यक संस्कृत बहुलता नहीं हैं, जो उपन्यास की पठनीयता को बोझिल बना दे। और अंत में द्रौपदी से, कृष्णा, पांचाली और सैरन्ध्री तक की यात्रा में बार-बार द्रौपदी के स्त्री मन को ही ठेस पहुँची है। उसका संपूर्ण आक्रोश अपने आत्माभिमान की रक्षार्थ ही है। बृहन्नला अर्जुन के प्रति कटाक्ष हो या कंक युधिष्ठिर के प्रति व्यंग्य हो या बल्लब भीम के प्रति विश्वास हो सैरन्ध्री आत्मरक्षा, आत्माभिमान और आत्मसममान की लड़ाई ही लड़ती दिखाई देती है। यही हर स्त्री की लड़ाई भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 15
2. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 17
3. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 51
4. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 50
5. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 50
6. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 48
7. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 127
8. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली, पृ. - 126
9. सैरन्ध्री - नरेन्द्र कोहली

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजा बाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जनकवि नागार्जुन : व्यक्तित्व और कृतित्व

डॉ. सरोज जैन *

शोध सारांश – कबीर और निराला की परंपरा के सच्चे उत्तराधिकारी आम जन के कवि नागार्जुन हिन्दी साहित्य के प्रगतिवादी विचारधारा के ऐसे कवि थे जिन्होंने जीवन भर जनता के दु:खों को अपना बनाकर लिखा और उसके लिए प्राण पण से लड़े। वे सिर्फ एक कवि ही नहीं जिंदादिल इंसान भी थे जो संपर्क में आने वाले के भीतर छिपी हुई बेचैनी और संभावनाओं को पहचानकर उसे दिशा देते थे।

नागार्जुन का रचना संसार व्यापक है। उनकी 1935 में लाहौर के विश्वयुद्ध साप्ताहिक कविता और सन् 1940 में पहली कहानी 'असमर्थदाता' विशाल भारत में प्रकाशित हुई। इनके लगभग 15 काव्य संकलन दो प्रबंध काव्य, 12 उपन्यास और संस्कृत कविता 'धर्मलोक शतकंम'

प्रस्तावना – आजादी के बाद की हिन्दी में कोई ऐसा दूसरा साहित्यकार नहीं हुआ जिसकी रचनायें नागर साहित्य की ठसक के बीच अपनी गांव देहात की संवेदना के बावजूद 'क्लासिक कृतियाँ बन गई हो। अकाल और उसके बाद, शासन की बंदूक, मंत्र, कविता, बहुत दिनों के बाद, आओ रानी हम ढोएँगें, पालकी आदि अनेक कविताएँ से आज भी लोगों की जुबान पर बसी हैं और अत्यधिक लोकप्रिय हो गई हैं।

नागार्जुन ने बचपन, प्रकृति, सौन्दर्य, प्रेम और 'मेघदूत जैसी विदग्धता' पर भी अविस्मरणीय कविताऐं लिखी हैं। वे सिर्फ आन्दोलन धर्मी साहित्यकार नहीं थे और न ही उनकी कविताएँ विद्रोह, विक्षोभ या जनसंघर्षो को आवाज देने हेतु कोई गर्जन-तर्जन करती हैं। उनकी 'मंत्र' कविता भी अपने बीहड़ शिल्प के जरिए बहुत कुछ कह जाती है । उनकी मैथिल कविताओं जिनके लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला था, का संसार भी एक गहन देशी वातावरण से भरपूर है और आश्चर्य नहीं कि हिन्दी का यह महाकवि मैथिली का भी उतना ही प्रमुख कवि माना जाता है।

बिन्दु – प्रगतिवादी कवि, लोकचेतना, सत्ताधरियों के प्रति आक्रोश, सरल जीवन मानवीय करूणा पीडा अभिव्यक्ति, सामाजिक विषमतों के प्रति विद्रोह। 'मामूली चीजों और मामूली लोगों के प्रति गहरी प्रतिवद्धता ही नागार्जुन को इतना बड़ा और गैर मामूली कवि बनाती है कि आज उनकी कवितायँ सिर्फ कविताएँ नहीं है बल्कि एक जीवंत इतिहास हैं। वे एक जरूरी साक्ष्य और दस्तावेज हैं, जिसमें पूरी शताब्दी की धड़कनें सुनी जा सकती हैं तथा एक पूरी शताब्दी की सामाजिक-राजनीतिक हलचलों तथा उतार-चढ़ाव को देखा समझा और महसूस किया जा सकता है।' [1]

प्रगतिवादी कवि नागार्जुन – कबीर और निराला की परंपरा के सच्चे उत्तराधिकारी आम जन के कवि नागार्जुन हिन्दी साहित्य के प्रगतिवादी विचारधारा के ऐसे कवि थे जिन्होंने जीवन भर जनता के दु:खों को अपना बनाकर लिखा और उसके लिए प्राण पण से लड़े। वे सिर्फ एक कवि ही नहीं जिंदादिल इंसान भी थे जो संपर्क में आने वाले के भीतर छिपी हुई बेचैनी और संभावनाओं को पहचानकर उसे दिशा देते थे।

व्यक्तित्व – बाबा नागार्जुन का जन्म 1911 में ज्येष्ठपूर्णिमा के दिन बिहार के मधुबनी जिले के सतलखा गांव (ननिहाल) में हुआ। माता-पिता ने नाम दिया वैद्यनाथ मिश्र। आंरभिक शिक्षा गांव की संस्कृत पाठशाला में हुई। कुछ समय काशी रहे और कुछ वर्षो तक कलकत्ता में । पालि भाषा और बौद्ध दर्शन के अध्ययन के लिए केलानिया (कोलंबो-श्रीलंका) गए सन् 1930 में पहली कविता मैथिली में छपी। 1932 में अपराजिता देवी से विवाह किया। 1934 से 1941 तक बिहार से पंजाब, राजस्थान हिमाचल, गुजरात और देश के दूसरे भागों में घूमते रहे। तत्पश्चात् तिब्बत में राहुल सांकृत्यायन के संपर्क में आए। 1939 में स्वामी सहजानंद सरस्वती के नेतृत्व में भाग लेते हुए छपरा, हजारीबाग जेल में रहे । 1941 में दूसरे किसान नेताओं के साथ भागलपुर के केन्द्रीय कारागार में रहे। 1948 में गांधीजी की हत्या पर लिखी गई कविताओं के कारण तथा 1973 में जयप्रकाश नारायण के 'संघर्ष क्रांति' आंदोलन में सक्रियभागीदारी और आपातकाल का विरोध के कारण जेल यात्राएँ की। भारत चीन सीमा विवाद और फिर दोनों देशों में युद्ध के कारण कम्यूनिस्ट पार्टी से मतभेद होने पर उन्होंने पार्टी छोड़ दी।

कृतित्व – बाबा नागार्जुन ने अपने आंरभिक कार्य एक पत्रिका 'दीपक' का संपादन किया। सन् 1944 में कौमी बोली के कुछ अंकों का संपादन भी। श्रीलंका में एक अध्यापक के रूप में काम किया और राष्ट्रीय भाषा प्रचार समिति वर्धा के संपादकीय विभाग में कार्यरत रहे। कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार, समालोचक और समाचार पत्र के स्तंभ लेखक के रूप में कार्यरत रहे। दुर्निवार घुमक्कड़ी और धर्म परिवर्तन (हिन्दू से बौद्ध) होने के बावजूद पंरपरागत जीवन शैली और स्वभाव में कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

नागार्जुन रचना संसार व्यापक है। उनकी 1935 में लाहौर के विश्वयुद्ध साप्ताहिक कविता और सन् 1940 में पहली कहानी 'असमर्थदाता' विशालभारत में प्रकाशित हुई। इनके प्रसिद्ध काव्य संकलन हैं – सतरंगे पंखों वाली (1951), प्यासी पथराई आंखें (1962), तालाब की मछलियाँ (1975), तुमने कहा था (1980), खिचड़ी विप्लव देखा हमने (1981), हजार-हजार बाहों वाली (1981), पुरानी जूतियों का कोरस (1983), रत्न गर्भा (1984), ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या (1985), ऐसा क्या कह दिया मैंने (1886) और इस गुब्बारे की छाया में (1989), अपने खेत में (1998) इनके अतिरिक्त दो प्रबंध काव्य भस्मांकुर (1971) भूमिजा (1993) तथा बारह उपन्यास लिखे जिसमें रतिनाथ की चाची (1948), बाबा बटेसरनाथ (1954), वरूण के बेटे (1957), और दु:ख मोचन (1957) विशेष चर्चित हैं। इन औपन्यासिक कृतियों में नागार्जुन सामाजिक

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

समस्याओं के सधे हुए लेखक के रूप आते है। जनपदीय संस्कृति और लोक जीवन उनकी कथा सृष्टि का चौड़ा फलक है। उन्होंने कहीं तो आंचलिक परिवेश में किसी ग्रामीण परिवार के सुख-दु:ख की कहानी कही है, कहीं मार्क्सवादी सिद्धांतों की झलक देते हुए सामाजिक आन्दोलनों का समर्थन किया है और वहीं कहीं समाज में व्याप्त शोषण वृत्रि एवं धार्मिक, सामाजिक, कुरीतियों पर कुठाराघात किया है। 2 अन्य कृतियों में संस्कृत में लिखित धर्मलोक शतकम (सिंहली लिपि में प्रकाशित एक लंबी संस्कृत कविता) देश दशकम आदि है। हिन्दी में लिखित पारो, बलचनमा, नवतुरिया उपन्यास और चित्रा (1949), पत्रहीन नग्न गाछ (1967) काव्य संग्रह उल्लेखनीय है।

लोकचेतना – ' कवि नागार्जुन के लिए जन ही 'मंच' रहा और जन ही 'मंत्र'। वह कलकत्ता की सड़कों पर रिक्शा खींचने वाला मखना भी हो सकता है और जमींदार की जूतियाँ/गालियाँ खाकर किसानीया बंधुआ मजदूरी करता सूखा, दूखा या बलचनमा। वे अभिशप्त और संतप्त जनों की करूणा क्रोध और आक्रोश को स्वर देने के साथ उन्हें सदियों की नींद से जगाने के लिए भी आजीवन सचेष्ट रहे –

देखो, सौ बार मंरूगा, देखोगे सौ बार जिउंगा।।
हिंसा मुझसे थर्राएगी, मैं तो उसका खून पिउँगा।।
प्रतिहिंसा ही स्थायी भाव है मेरे कवि का
जन-जन मैं जो ऊर्जा भर दे, मैं उद्गाता हूँ उस रवि का (हजार हजार बाहो वाली)

आजादी के बाद की हिन्दी में कोई ऐसा दूसरा साहित्यकार नहीं हुआ जिसकी रचनायें नागर साहित्य की ठसक के बीच अपनी गांव देहात की संवेदना के बावजूद 'क्लासिक कृतियाँ बन गई हो। अकाल और उसके बाद, शासन की बंदूक, मंत्र, कविता, बहुत दिनों के बाद, आओ रानी हम ढोएँगें, पालकी आदि अनेक कविताएँ से आज भी लोगों की जुबान पर बसी हैं और अत्यधिक लोकप्रिय हो गई हैं। 'नागार्जुन की सबसे अच्छी कवितायें उत्तर भारतीय ग्रामीण जीवन में खुलने वाले दरवाजों- खिडकियों की तरह हैं। जिनमें प्रवेश करके हम साधारण जन के मर्म को, उसकी पीड़ा और संघर्ष को समझ सकते हैं।' [3]

राजनीति का चित्रण – 'दर असल नागार्जुन की सारी कविता एक बडी राजनीतिक और मानवीय जिरह है। उसमें जिरह करने वाला कोई एक व्यक्ति नहीं पूरा दीन हीन समाज है। आश्चर्य नहीं 1936 में नागार्जुन ने 'उनको प्रणाम' जो शीर्षककविता लिखी थी वह आज साठ वर्ष बाद बीसवीं सदी के अंतिम वर्षो में भी उतनी ही विचलित कर देने वाली है इस कविता में हाशिए पर छूट गए या नष्ट या विफल हो गए उन लोगों की स्तुति है जिनकी संख्या इन तमाम वर्षो में हमारे समाज में बढती ही गई है जो नहीं हो सके पूर्ण काम में उनको करता हूँ प्रणाम/— जो छोटी सी नैया लेकर / उतरी करने की उदधि पर/ मन की मन में ही रही , स्वयं / हो गए उसी में निराकर / उनको प्रणाम। युगीन वेदना की जबर्दस्त अभिव्यक्ति अकाल और उसके बाद जैसी कवियों में है।

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास ,
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास,
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गशत,
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद,
धुंआ उठा आंगन के ऊपर कई दिनों के बाद,
चमक उठीं घर भर की आंखे कई दिनों के बाद,
कौए ने खुजलाई पांखे कई दिनों के बाद।

नागार्जुन ने बचपन, प्रकृति, सौन्दर्य, प्रेम और 'मेघदूत जैसी विदग्धता' पर भी अविस्मरणीय कविताऐं लिखी हैं। वे सिर्फ आदोंलन धर्मी साहित्यकार नहीं थे और न ही उनकी कविताएँ विद्रोह, विक्षोभ या जनसंघर्षो को आवाज देने हेतु कोई गर्जन-तर्जन करती हैं। उनकी 'मंत्र' कविता भी अपने बीहड शिल्प के जरिए बहुत कुछ कह जाती है । उनकी मैथिल कविताओं जिनके लिए उन्हे साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला था, का संसार भी एक गहन देशज वातावरण से भरपूर है और आश्चर्य नहीं कि हिन्दी का यह महाकवि मैथिली का भी उतना ही प्रमुख कवि माना जाता है।

सत्ताधारियों के प्रति आक्रोश – जीवन के विविध क्षेत्रों में संघर्ष करने वाले नागार्जुन कविताएँ मृत्यु के विरूद्ध जीवन की तरफ जाती हैं। अपनी एक प्रसिद्ध रचना में वे एक बस के ड्राइवर के सामने कांच के पास लटकती गुलाबी चूड़ियों के द्धारा पूरे जीवन की कल्पना कर लेते हैं। यह जीवन की भविष्योन्मुखता है। शायद इसीलिए नागार्जुन निजी तौर पर नई पीढी का साथ ज्यादा पसंद करते थे। उन्हे वृद्धावस्था से ऊब होती थी और युवा आक्रोश में एक आश्वस्ति मिलती थी। 1947 में लिखी एक कविता में भी नागार्जुन लिखते हैं – मैं भी तो पहले देखा करता था सपने/ साथी, अब तो रंग ढंग ही बदल गए है। समझ गया हूँ। जीवन में इस धरा-धाम बाबा के व्यक्तित्व और रहन-सहन से कोई कुलीनता या ऐसी बनावट नहीं थी कि उनका एक प्रभामंडल बनता और नई पीढी उनका आश्चर्य चंकित गुण गान करती। वे एक साधारण जन की तरह थे जिसके सुख-दुख की आवाज ही उनकी कविता थी। शायद इसीलिए हिंदी उर्दू भाषी उत्तर भारतीय समाज ने उन्हें इतना प्यार और सम्मान दिया जितना आजादी के बाद शायद ही किसी कवि को मिला होगा नागार्जुन की सत्ताधारियों और समाज के ताकतवर लोगो के बीच नहीं गए। वे हमेशा साधारण जनो के समाज को ही अपना गुरूकुल मानते रहे। अपनी 75 वी वर्षगांठ पर जनसत्ता को दिए गए इन्टरव्यू में उन्होने कहा था – 'लोग ऋषिकुल की गुरूकुल की बात करते हैं। — हम आम जनता के बीच खुले मन से जाते हैं। वही हमारा गुरूकुल है।'[5]

सामान्य जीवन – एक आदमी कितनी कम जरूरतों के साथ मस्त रह सकता है। यह बाबा से ही सीखा जा सकता था। उनका संपूर्ण जीवन एक झोले में होता। कॉपी पेन एक दो छोटी डिबियाएँ गमछा। एक पजामा अलीगढ कट जो सफेद न होकर कुछ मटमैला बदरंग लिए होता। कुरता भी मोटी खादी का होता। दोचार दिन कहीं निकल जाते हट और लौटते वो वह वही झोला कंधे पर चिपका होता।' [6]

'ऊबड़ खाबड़ खुरदुरे चेहरे पर बेतरतीब दाड़ी पारदर्शी आँखों में झांकती चंचलता। चंचलता भी ऐसी जिसमें हर वक्त एक अजीब बेचैनी बुनती रहती है। जर्जरशरीर पर एक के ऊपर एक लदे कपड़ों की परतें। कंधे पर थैला जिसमें कोई एक किताब, डायरी पेन, ईनो साल्ट, पोस्टकार्डो का बंडल, छोटा सा ट्रांजिस्टर और नौ सफेद बडे मोतियों की माला। जब तक घुटनो में दम रहा। निरंतर भागता रहा यह व्यक्ति एक जगह से दूसरी जगह। दस दिन यहाँ तो पन्द्रह दिन वहाँ मनुष्य से मनुष्य तक की एक अविराम यात्रा पोस्टकार्डो के माध्यम से एक दूसरे से निरंतर जुड़ता। आज भी अपने गांव की मिट्टी की गर्द, वहाँ की लहलहाती फसलो के बीच की पगडंडियों के बीच की पगडंडियो, खेत खलिहान से जुडे लोगो का दर्द धूल धूसरित जीवन की मस्ती और रसमयता — यही है गांव घर के 'ठकक्न मिसिर' बैधनाथ मिश्र यात्री और नागार्जुन। [7]

मानवीय करूणा और पीड़ा की अभिव्यक्ति – एक जनकवि और समर्पित रचनाकार होने के बाबजूद नागार्जुन केवल ऐसे महाकवि या मसिजीवी होकर

नहीं रहना चाहते जो 'स्वान्त: सुखाय लिखते रहते हैं। उनके व्यक्तित्व का भास्वर पक्ष था एक लोककवि का उनकी कविताओं का मूल स्वर जनांतिक था जिसे लोक संस्कारो में रची बसी मानवीय पीड़ा और करूणा ने सींचा था। 05 नम्बर 1998 हिन्दी के शीर्षस्थ कवि बाबा नागार्जुन के महाप्रस्थान ने अपना सबसे उज्ज्वल नक्षत्र खो दिया। कविवर नागार्जुन अपनी सरलता, निश्चलता और जिजीविशा के नाते सबके लिए 'बाबा नागार्जुन' थे। उनकी काव्य यात्रा हिन्दी मैथिली और बांग्ला तीनों भाषाओं में समान गति से चलती रहीं उन्होंने संस्कृत में भी कुछ कविताऐं लिखी। साहित्य अकादमी ने उनकी मैथिली काव्य कृति पत्र हीन नग्न गाछ के लिए 1968 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया तथा समग्र साहित्यिक योगदान के लिए महत्र सदस्यता से विभूषित किया था। 'नागार्जुन बहुदिशाओं में संचरण करने वाले निर्बन्ध कवि हैं किंतु स्वच्छंद नहीं है। इसलिए कि उनका काव्य बौद्धिक विश्लेषण और राजनीतिक चिंतन का परिणाम हैं।'[8]

सामाजिक विषमता के प्रति विद्रोह – सामाजिक विषमता नागार्जुन में तीव्र व्यंग्यात्मकता को जन्म देती है। इस व्यंयों के माध्यम से कवि 'डिमालिशन एक्सपर्ट' का काम करता है। वास्तव में व्यंग्यकार के लिए किसी न किसी सैद्धांतिकवाद से प्रतिबद्ध होना आवश्यक होता है। मुक्तिबोध ने एक स्थान पर लिखा है – 'जो है उससे बेहतर चाहिए पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए'।

'नागार्जुन दुनिया की सफाई बड़ी तबीयत करते है और असंगतियों, विरोधाभास और सामाजिक तथा राजनीतिक पाखंडों पर कसके झाड़ू चलाते हैं।'[9] रानी एलिजावेथ के भारत आगमन पर कवि की प्रतिक्रिया इस संदर्भ में उल्लेखनीय है –

बीत गई सर्द, बीत गया माघ/ रानी के खसम ने ने मारा है बाघ
खुद तो विचारी को दिखी नहीं एक भी बिल्ली।
सवाई माधोपुर से सीधे आगयी नई दिल्ली
टके सी मुस्कान करोड़ों का खर्चा इस लाम झाम की कहाँ नहीं है चर्चा।'[10]

निष्कर्ष – बाबा के व्यक्तित्व और रहन–सहन में कोई कुलीनता या ऐसी बनावट नहीं थी कि उनका एक प्रभामंडल बनता। वे एक साधारण जन की तरह थे जिसके सुख–दुख की आवाज ही उनकी कविता थी उनके अंतिम दो तीन वर्ष बीमारी और अवसाद में बीते। हमारे जीवन, समाज और समय की विडम्बनाओं पर उन्होंने सबसे ज्यादा लिखा। बाबा नागार्जुन आम आदमी के स्वप्नों में, उनकी जिजीविषा में उसके संकल्प और संघर्ष में हमेशा विद्यवान रहेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रकाश मनु, आजकल मासिक पत्रिका जनकरी 1999 पृ. 11
2. डॉ. रवीन्द्र भ्रमर, हिन्दी साहित्य कोष भाग दो
3. जन सत्ता दैनिक समाचार पत्र, 7.11.98 पृ. 10
4. वही पृ. 10
5. वही पृ. 11
6. सुधीश पचौरी जनसत्ता 29.11.98 मुख
7. प्रदीप मांडव, जनसत्ता जून 1996
8. डॉ. शिवमंडल सिंह सुमन छायावादोत्तर काव्य धारा पृ. 26
9. नई कविता डॉ. कांति कुमार जैन पृ. 126
10. प्यासी पथराई आँखे, नागार्जुन पृ. 60

****

राष्ट्रीय संपर्क भाषा हिन्दी : आवश्यकता एवं क्षमता

डॉ. पुष्पा शाक्य *

प्रस्तावना – हिन्दी भाषा उतनी ही पुरानी हैं, जितनी मानव सभ्यता। मानव सभ्यता द्धारा युगों से संपादित यात्रा में भाषा ने भी संकेत ध्वनि एवं शब्द रूपी क्रमिक परिवर्तन के तौर पर विकास यात्रा पूर्ण की है एवं सदा ही अभिव्यक्ति के अमोघ साधन के रूप में प्रयुक्त होती रही हैं। भाषा संचार के बिना जीवन में संपूर्णता नहीं हो सकती। इसके बिना किसी समुदाय, आराधना या मानव गरिमा की स्थापना की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। संवाद, संपर्क समन्वय स्थापित करने के लिए भाषा सबसे शाक्तिशाली माध्यम है। इस प्रकार राष्ट्र और वैश्विक स्तर पर संपर्क के लिए भाषा महत्वपूर्ण हैं।

भाषा किसी भी संस्कृति विशेष का अभिन्न संघटक है जिसके बिना संस्कृति की कल्पना संभव नहीं है, विगत हजारों वर्षों से निरन्तर विभिन्न प्रयोगों से गुजरती रही किन्तु अभिव्यक्ति का साधन होने के गुण को प्रभावित नहीं कर सकी।

भाषा की सत्ता सार्वभौमिक है। भाषा सर्वहारा बहुजनों के कंठ से निकलकर विद्धानों एवं विचारकों की लेखनी से प्रवाहित होती है न कि विद्धानों एवं विचारकों की लेखनी से निकलकर जन सामान्य के विचार विनिमय का माध्यम बनती हैं। भारत की भव्य एवं उच्च प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति 'वसुदेव कुटुम्बकम्' पर आधारित हैं अर्थात समूचा विश्व एक परिवार हैं और एक वहद् परिवार में संपर्क भाषा की आवश्यकता है एव् संपर्क भाषा की आवश्यकता हैं एवं संपर्क भाषा के कार्य निष्पादन के लिए भारतीय भाषाओं की क्षमताऐं मजबूत होना अत्यंत आवश्यक हैं।

हमारी मातृ भाषा में जब तक हमारे सारे विचार प्रकट करने की शक्ति नहीं आ जाती और वैज्ञानिक मातृ भाषा में नहीं समझाऐं जा सकते तब तक नये ज्ञान की वृद्धि नहीं होगी यह सिद्ध सत्य हैं कि नये ज्ञान की आवश्यकता निरन्तर बनी रहेगी। हिन्दी का महत्व केवल राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में बल्कि जन भाषा के रूप में सर्वोपरि हैं क्योंकि हिन्दी तो साक्षरों की नहीं बल्कि निरक्षरों की संपर्क भाषा है।

आज हिन्दी की ही नहीं बल्कि भारत की अनेक भाषाऐं अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं के रूप में स्वीकृत हैं। हिन्दी भाषा में ही नहीं भारत के बाहर भी विश्व के अनेक देशों में बोली, समझी और पढाई जाती हैं यह मानव मुल्यों को वहन करने वाली व्यापक भाषा के रूप में विश्व –पटल पर अपना स्थान बनाती जा रही है। आज विश्व के विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्ययन अध्यापन के साथ शोध कार्य में भी आगे हैं।

हिन्दी अनेक चुनौतियों एवं प्रतिकूल स्थितियों के बावजूद बहुत कम अवधि में भाषिक विकास के अनेक पड़ाव पार करने में यशस्वी रही हैं। किसी भी भाषा में सूक्ष्मतम अर्थ भेदों के लिए अनेक पर्यायी शब्दों की उपलब्धता ही भाषा की सम्पन्नता का प्रमाण हैं। किसी भाषा या लिपि का सतत् प्रयोग ही उसे एक सुपरिचित सहज भाषा के रूप में स्थापित करता है। । अन्य भाषा भाषी के लिए दुरूह ही होगी किन्तु आज हम देखे अंग्रेजी लोग सीख रहे हैं अपना रहे हैं इसमें भी अन्य शब्दों का समावेश हैं और आने वाली पीढ़ी की अमेरिकन इंग्लिश ने अनेक शब्दों को अपरंपरागत अर्थ और वर्तनी प्रदान की हैं, फिर भी बड़े पैमाने पर प्रचलन में रहने के कारण वह हाशिये पर नहीं गई।

आज के समय में बहुभाषा भाषी होना प्रशंसनीय हैं और अनेक अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक हैं, अपनी भाषा को विश्व स्तर पर हमारी भारतीय अस्मिता को स्थापित करना होगा। विदेशी भाषा और संस्कृति के बीच अपनी भाषा और अपने मूल्यों को अबाधित रखना होगा।

हिन्दी आज भी विश्व की सर्वाधिक सशक्त भाषा हैं और हिन्दी विश्व की संपर्क भाषा के रूप में विकसित हो रहीं हैं, हिन्दी भाषा का महत्व इस बात से भी आकां जा सकता है कि, आज विश्व के 150 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का पठन पाठन ही नहीं, शोध कार्य भी हो रहें हैं। मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, हॉलैंड और इंग्लैण्ड जैसे कई देशों में हिन्दी में सृजनात्मक सहित्य की रचनाऐं भी हो रही हैं।

संपर्क भाषा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, भाषा की सहिष्णुता को देखते हुए हिन्दी भाषा की सहिष्णुता की राष्ट्रीय संपर्क भाषा की आवश्यकता को पूर्णता: देने में समर्थ हैं। हिन्दी भाषा को समग्र रूप में संसार के सामने लाने के लिए इसे लचीली एवं संग्राहक बनाये जाने के प्रयास ही विश्व भाषा के रूप में हिन्दी विकसित हो रही है क्योंकि हिन्दी में आत्मसातीकरण की जबरदस्त क्षमताऐं हैं। भाषा की खूबसूरती, सहजता इसके शब्दों के संगीत का जादू एवम वैज्ञानिकता से पूरा विश्व वाकिफ हो चुका हैं। इसलिये हिन्दी का विश्व परिदृष्य की ओर प्रवाह निरन्तर गतिमान है, इसने अपने अधिक फैलाव एवं प्रसार के लिए शक्ति अर्जित कर ली हैं, हिन्दी में भावात्मक एकता के गुण से ही विश्व के देशों को भाषाई एवं भावात्मकता के सूत्र में पिरोने में सक्षम रहीं हैं।

आज विश्व की भौगोलिक दूरियॉ कम होने के कारणों में हिन्दी का भी अप्रतिम योगदान हैं। हिन्दी का समस्त भारतीय भाषाओं में स्थान सर्वोपरि हैं क्योंकि हिन्दी समन्वयात्मक भाषा हैं। आज जब हिन्दी संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनने की ओर तेजी से बढ़ रही है तब हमारा कर्त्तव्य है कि, हम इसे अपने देश में भी सशक्त बनाने में ध्यान दे। राष्ट्र के अंतर्गत प्रांतों और वैश्विक स्तर पर संपर्क के लिए भाषा महत्वपूर्ण हैं भारत बहुभाषी देश हैं, इस सभी भाषाओं में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी हैं। हिन्दी की एक प्रमुख महत्ता यह भी है कि, उसकी महत्ता, उपयोगिता एवं समृद्धता निर्विवाद हैं।

भारत ज्ञान, विज्ञान एवं चिकित्सा के क्षेत्र में विश्व गुरू रहा हैं और वह सभी साहित्य भारतीय भाषाओं में ही उपलब्ध हैं फिर भी तकनीकी शिक्षा को भारतीय भाषाओं में नहीं पढ़ाया जा रहा हैं जबकि तुर्की के 1922 में स्वतंत्र होने के पश्चात से पूरा काम स्वभाषा में करने का निर्णय आज तक

* सहायक प्राध्यापक, माताजीजा बाई शासकीय कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अटूट हैं। हांगकांग, ब्रिटेन से चीन को हस्तांतरण के साथ हांगकांग सरकार ने अनिवार्य रूप से राष्ट्र भाषा केटनी पढ़ाने का प्रावधान रखा है। विज्ञान की शिक्षा का माध्यम हिन्दी बनाना आज भी दुश्कर हैं। आज दुनिया के लगभग 135 विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्यापनकी सुविधा है भारत के अलावा हिन्दी, मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड, इंग्लैंड अमेरिका, नेपाल, सिंगापुर, मलेशिया, रूस आदि देशों में बोली जाती हैं। रूस पौलेंड, हंगेरी, जर्मनी मॉरिशयस में तो हिन्दुस्तान की संस्कृति, परंपरा, इतिहास और संगीत को जानने के लिए वहॉ के लोग हिन्दी भाषा सीख रहें हैं। बोलने वालों की संख्या तथा भाषा की वैज्ञानिकता की दृष्टि से हिन्दी संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनने के लिए पूर्णत: सक्षम हैं।

इंग्लैंड के विद्धान डॉ. मॅगेसर के अनुसार हिन्दी दुनिया की महानतम् भाषाओं में से एक हैं, भारत को समझने के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य हैं। हिन्दी का महत्व आज इसलिये ओर बढ़ गया है क्योंकि भारत आज शिक्षा, उद्योग और तकनीकी हिसाब से दुनिया का अग्रणी देश हैं। हिन्दी भाषा विश्व की संभवत: सभी भाषाओं की तुलना में सर्वाधिक समर्थ और वैज्ञानिक भाषा है। हिन्दी केवल भारत की ही भाषा नहीं है, संप्रति वह विश्व की भाषा बनी हैं हिन्दी का आम जनता से परिचय समाचार–पत्र, पत्रकारिता, विज्ञापन के माध्यम से हुआ है।

मौखिक भाषा ही भाषा का असली रूप हैं, हिन्दी भाषा के विस्तार आावश्यकता का एक प्रबल कारण 'व्यापार' रहा हैं। आत्मसातीकरण की प्रक्रिया से एक दूसरे का हिस्सा बन जाती हैं। हिन्दी संपर्क के रूप में शीघ्रता से गतिमान है, विदेशों में हिन्दी की वर्तमान स्थिति म्यांमर, श्रीलंका, मलाया, इंडोनेशिया, मॉरिशयस, दक्षिण पूर्वी अफ्रिका, ब्रिटिश गयाना एवम् पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, फिजी, सूरीनाम आदि देशों में भी हिन्दी के महत्व को स्वीकार किया गया हैं। इनमें से त्रिनिडाड, सूरीनाम, फिजी आदि देशों में हिन्दी को वैकल्पिक राजभाषा के रूप में विकसित किया जा रहा हैं। बांग्लादेश, श्रीलंका, मलेशिया, कंबोड़िया आदि में पहले से ही हिन्दी के लिए ठोस ऐतिहासिक आधार बना हुआ हैं। देश की सीमाओं का अतिक्रमण करते हुए हिन्दी मॉरिशयस, नेपाल, फिजी आदि अनेक देशों में अभिव्यक्ति का सफल और सर्वप्रथम माध्यम बन रहीं हैं। हिन्दी को विदेशों में पहुचाने का श्रेय उन राष्ट्रभाषा प्रचारकों को भी हैं, विश्व के इन देशों में परीक्षार्थियों की बढ़ती संख्या हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की सूचक है।

हिन्दी के संपर्क भाषा बनने की सफलता उसके पूर्णरूपेण विश्व भाषा बनने के योग्य, समर्थ तथा सक्षम हैं इसका विपुल तथा समृद्ध वाड़मय हैं हिन्दी भाषा सरल, सहज एवम् आसानी से सीखी जा सकती है। भौगोलिक दृष्टि से हिन्दी विश्व भाषा हैं क्योंकि इसके बोलने और समझने वाले समूचे संसार में मिलते हैं। हिन्दी में अपनी दुनिया बसी हुई हैं उसमें आर्य, द्रविड़, आदिवासी, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेजी, फारसी, चीनी, जापानी आदि विभिन्न तथा संसार की अनेक भाषाओं के शब्द मिलते हैं जो कि उसके अन्तर्राष्ट्रीय प्रीतियुक्त स्वभाव के परिचायक हैं क्योंकि हिन्दी की लिपि संसार की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि देवनागरी हैं।

विश्व में संख्या की दृष्टि से हिन्दी भाषा भाषियों का स्थान तीसरा माना जाता है आज विदेशों में हिन्दी की भाषिक शैलियॉ अपनी स्थाई सत्ता बना चुकी हैं और अपने अपने देशों में यह भारतीयों की भाषा अभिव्यक्ति का मुख्य माध्यम हैं।

सूचना क्रांति के इस युग में 'ग्लोबल विलेज' अवधारणा ने हिन्दी भाषा साहित्य को अत्यन्त लोकप्रिय बना दिया हैं, कम्प्युटर और टेलिविजन के माध्यम से यह आज विश्व के कोने–कोने तक पहुँच गई है। विश्व में अब उसी भाषा को प्रधान मिलेगी जिसका व्याकरण विज्ञानसंगत होगा, जिसकी लिपि कम्प्युटर की लिपि होगी इसलिए इसमें अंग्रेजी, फ्रेंच आदि के अपेक्षा हिन्दी से अधिक संभावनाऐं हैं। सही अर्थों में विश्व भाषा बनने की आज हिन्दी भाषा के उत्तरोत्तर विकास में प्रवासी भारतीयों के आंगन में नई हवा बन समय की लहर में पड़कर अपने अस्तित्व को स्थापित कर सूरीनाम के ग्रहों में तुलसी बन गई इससे बढ़कर हिन्दी का महत्व एवं क्षमता और क्या होगा। फूल की सुगंध की तरह हिन्दी अपने आप इस संपर्क में बहती हुई अपनी महत्ता स्थापित कर चुकी हैं। इसलिये आवश्यकता है हिन्दी को एक ऐसी समग्र सर्वांगीण, सशक्त अभिव्यक्ति का स्वरूप दिया जाए जिससे हिन्दी विभिन्न देशों में रहने वालों की भाषिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आरक्षण कर सके और हमारे अंतर्राष्ट्रीय कार्यकलापों एवं व्यवहार के लिये संपर्क भाषा का माध्यम बन सके।

निष्कर्ष – आज संपूर्ण विश्व में हिन्दी भाषाविद प्रथम स्थान पर है भाषा वैज्ञानियों और भाषा चिंतकों का निष्कर्ष है कि, विश्व में भाषा जानने वालों के क्रम में प्रथम स्थान पर हिन्दी द्वितीय स्थान पर चीनी और तृतीय स्थान पर अंग्रेजी का है। अत: विश्व में प्रथम स्थान पर रहकर कीर्तिमान रचने वाली हिन्दी सर्वोपरी, वंदनीय, अभिनंदनीय हो। हिन्दी भाषा के प्रयोगों ने हमें आश्वस्त कर दिया है कि हिन्दी विश्व मंच पर अपनी अस्मिता बनाये रखेगी, हिन्दी जीवित भाषा है उसमें निरंतर होते परिवर्तन तथा विकास हमारी हिन्दी भाषा के महत्व को स्थापित करते है, इसकी महत्ता, क्षमता एवं समृद्धता निर्विवाद हैं।

हिन्दी में राष्ट्र की शक्ति है, राष्ट्र की भक्ति और राष्ट्र की मुक्ति उन्नति भी हैं, वैश्विक स्तर पर हिन्दी का भविष्य दैदीप्यमान हैं। भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने भाषा के इस शक्तिशाली और प्रेरक रूप को पहचाना ही नही, बल्कि स्पष्ट कहा है कि–

'निज भाषा उन्नति अहै
सब उन्नति को मूल'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रयोजनमूलक हिन्दी, डॉ. पृथ्वीनाथ पांडे
2. हिन्दी के गतिमान क्षितिज, डॉ. जोगेन्द्रसिंह
3. हिन्दी भाषा का संक्षिप्त इतिहास, भोलानाथ तिवारी
4. भाषा विज्ञान, 1. डॉ. दानबहादुर पाठक 'वर' 2. डॉ. मनहर गोपाल भार्गव
5. प्रयोजनमूलक हिन्दी, डॉ. राजेन्द्र मिश्र
6. वाणी पत्रिका
7. दैनिक भास्कर, 'हिन्दी दिवस विशेष अंक'
8. अंधेर नगरी चौपट राजा, भारतेन्दु हरिषचन्द्र (भूमिका संपादक – गिरिश रस्तोगी – पृष्ठ संख्या – 13)

****

बदलते जीवन मूल्य और समकालीन कविता

डॉ. रंजना मिश्रा *

प्रस्तावना – सन् 1960 के बाद की समकालीन कविता एक नयी चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। स्वतंत्र भारत में इस समय आम आदमी आतंक, अविश्वास, अराजकता, अपमानबोध, अनास्था, क्षणत्वबोध, निराशा और संशय के दौर से गुजर रहा था। समकालीन कवियों ने मानवता को आतंक से बचाने के लिए और मानव के हितार्थ व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व में एकता स्थापित करने के लिए साहित्य सृजन किया। समकालीन कविता का कथ्य यथार्थ पर आधारित है। इस दौर के कवियों ने किसी न किसी स्तर पर मर्यादा, शक्ति, स्वतंत्रता, सत्य, आस्था, करूणा आदि शाश्वत् जीवन मूल्यों की पुनर्स्थापना का प्रयास किया है।

सन् 1960 के बाद साहित्य में दो प्रकार की विचारधारायें लक्षित होती हैं–एक विचारधारा के अंतर्गत कवि जनसामान्य की पीड़ा की अनुभूति को गहराई से व्यक्त करता है और दूसरी विचारधारा के अंतर्गत यातनाओं के बीच से गुजरकर कवि की संवेदनशीलता विद्रोह में परिणत हो गई है। समकालीन साहित्य के दौर में मानव अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है, अत: इस कविता में मानव की समस्त घुटन, वेदना, कुण्ठा, पीड़ा, भय, संत्रास, निराशा अभिव्यक्त हुई है। जीवन मूल्यों का बिखराव कवि में निराशा और अवसाद पैदा करता है। समकालीन कवियों की व्यथानुभूति जीवन की अनुभूति को गहरा करती है–'चेहरे थे असंख्य/आँखें थीं/दर्द सभी में था।' (मुक्तिबोध) क्षण को महत्व देने वाले ये कवि मृत्यु के सत्य को निर्भीकता से स्वीकार करते हैं, उनकी धारणा है कि जीवन का दुख सब को मॉजता है और मृत्यु पहचान कराती हैं। शून्य की अवधारणा को अज्ञेय जैसे कवि अस्तित्व को परखने का एक यंत्र मानते हैं। यह शून्यानुभूति अज्ञेय के काव्य में 'सार्थक मौन' के रूप में अभिव्यक्त है।

समकालीन कवि के अकेलेपन में भी व्यष्टिबोध है–'यह दीप अकेला/स्नेहभरा मदमातासा/इसकों भी पंक्ति को दे दो।' ये कवि मानव को सृष्टि का सर्वाधिक सबल प्राणी स्वीकार करते हैं। सर्वहार के हितार्थ कवि पूँजीवादी प्रवृत्ति का विरोध करता है, धर्म और रूढियो को नकारता है। इन कवियों का क्रांतिकारी दृष्टिकोण वर्तमान से जूझने की प्रेरणा प्रदान करता है। मजदूरों और किसानों के अतिरिक्त भिखारी, रोगी और उपेक्षित भी समकालीन कविता के पात्र है– 'मेरी शस्य श्यामला माँ के/बेटे भूख लिये बैठे हैं/कभी संजीवन मूर मिली थी, अब तो जहर पिये बैठे हैं।' कवियों ने मानवीय पीड़ा के अलावा वर्तमान जीवन की विडम्बनाओं मानवीय मूल्यों के ह्रास, आत्मकेन्द्रिता, शोषण, भ्रष्टाचार आदि पर व्यंग्य प्रस्तुत किये है। भवानी प्रसाद मिश्र जैसे कवि दुखों से निराश नहीं होतें, क्योंकि उनकी धारणा है कि शायद दुख की गहराई से ही मानव कल्याण का मीठा जल प्राप्त हो। मुक्तिबोध की कविता जनक्रान्ति की कविता है, वे आत्मसजग है, वर्तमान समाज के कल्याण का उत्पीड़न और विसंगतियों के प्रति असंतोष पूर्ण सच्चाई और साहस से अभिव्यक्त कर देते हैं। कुल मिलाकर वर्तमान काल की समस्त मानवीय जटिलताओं और उनके समाधानों को समकालीन कविता अभिव्यक्त करती है। समस्त समकालीन कवियों ने अपनी मानवीय दृष्टि के अनुरूप सच्चे मानव रूपों की स्थापना का प्रयास अपने काव्य के माध्यम से किया है।

समकालीन कविता का क्षेत्र हमारे आस पास का परिवेश है। आज की कविता सहज, धारदार एवं प्रभावशाली है और वह आम आदमी की भाषा में कही गई है। इसकी शैली प्रहारक है,व्यंग्यात्मक है और साथ ही साथ सार्थक भी है। आज का कवि राजनीतिक स्वार्थपरता एवं विसंगतियों को चुपचाप नहीं देखता रहता अपितु उस पर अपनी तीखी टिप्पणी भी करता है। समकालीन कविता की एक प्रमुख विशेषता है– लोक जीवन से उसका जुड़ाव। प्रयोगवाद लोक जीवन से कट गया था किन्तु समकालीन कविता ने लोक जीवन को अनुभूति और सौंदर्यबोध दोनों स्तरो पर ग्रहण किया है । उसमें लोक जीवन के बिम्ब, उपमान प्रतीक एवं भाषा प्रयुक्त है। कवि लोक में व्याप्त असंतोष, कुण्ठा, नफरत और विद्रोह की आग को अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति देता है– 'मैं देखता रहा/हर तरफ ऊब थी/संशय था/नफरत थी/मगर हर आदमी अपनी जरूरतों के आगे असहाय था' /उसमें सारी चीजों को/नये सिरे से बदलने की/बैचेनी थी, रोष था/लेकिन उसका गुस्सा/एक तथ्यहीन मिश्रण था/आग, आँसू और हाथ का।

दुष्यंत कुमार, रघुवीर सहाय, कुंवर नारायण, लीलाधर जगूड़ी, चन्द्रकांत देवताले, बल्देव वंशी, श्याम विमल, वेणुगोपाल आदि कवियों ने समय के प्रवाह को पकड़ने का प्रयास करते हुए आम आदमी की स्थितियों एवं परिस्थितियों को सफलतापूर्वक अभिव्यक्त किया। अपनी कला के प्रति विशेष सजग रघुवीर सहाय सामाजिक यथार्थ के प्रति जागरूक रहे हैं, तथा समाज को वैज्ञानिक तरीके से समझने के पक्षधर हैं। उनकी भाषा आम बोलचाल की भाषा है, उन्होंने भाषा में नये बिम्ब, नये प्रतीक और नये उपमानों की तलाश की है। इस भाषा में नवीनता के साथ–साथ भीतर तक तिलमिला देने की क्षमता भी मौजूद है। कुंवर नारायण की कविता में वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं तर्कपूर्ण विचारों की प्रमुखता होते हुए भी पाश्चात्य चिन्तन उनके काव्य की मूल प्रेरणा को प्रभावित नहीं कर सका। आत्मजयी में कवि कुंवर नारायण नचिकेता के माध्यम से जीवनमूल्यों की खोज करना चाहता है। वह उस भौतिकता का विरोध करता है, जो आज सम्पूर्ण मानव जाति पर हावी हो रही है। नचिकेता उस वस्तुवादी दृष्टिकोण को नकारता है, जो आज का सबसे बड़ा जीवनमूल्य बना हुआ है। कवि धूमिल व्यवस्था, व्यवस्था में जीने वाले आदमियों तथा उस व्यवस्था पर पलने वाले शोषकों– तीनो को अपनी कविता में समेटते हैं– 'एक आदमी रोटी बेलता है/एक आदमी रोटी खाता है/एक तीसरा आदमी भी है/जोन रोटी बेलता है/न रोटी खाता है/वह सिर्फ रोटी से खेलता है/मैं पूछता हूँ यह तीसरा आदमी कौन है/मेरे देश की संसद मौन है।'

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कला एवं वाणिज्य अग्रणी महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

'संसद से सड़क तक' काव्य संग्रह में वर्तमान राजनीति की विसंगतियों को उजागर करते हुए अपने समष्टिबोध का ही परिचय दिया है। 'मृतात्मा की वसीयत' (लक्ष्मीकांत वर्मा) क्लर्क (देवराज) पहेली (जगदीश गुप्त) विदेह (भारतभूषण अग्रवाल) और पाषाण (अनन्त कुमार) आदि कविताओं में व्यष्टिबोध के साथ समष्टिबोध भी व्याप्त है। गजलकार दुष्यंत कुमार कृत्रिमता से दूर सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति के कवि है। 'सूर्य का स्वागत' संग्रह की कविताओं से स्पष्ट हो जाता है कि संघर्षो की चोट सहते हुए भी वे पराजय स्वीकार नहीं करते हैं। जिन्दगी तो जीने के लिए ही है। इसमें निराशा और पराजय क्यों? भवानी प्रसाद मिश्र, शमशेर, भारतभूषण अग्रवाल, चन्द्रदेव सिंह, राजेन्द्र किशोर, महेन्द्र शंकर, रामनरेश पाठक के काव्य में अनुभूति की सच्चाई, निजी अनुभूतिगत भिन्नता, नया सौंदर्यबोध, बिम्बप्रतीक, उपमानयोजना आदि की सामान्य भावभूमि है। इनमें तरलता, रसमयता, बुद्धिसंगत सहृदयता, सूक्ष्मस्तर की संवेदना और बिखरे बोधों को एकत्रित करने वाली प्रभाव क्षमता है।

अकाल, बेरोजगारी, भुखमरी, जातिवाद, भाषावाद, धार्मिक संकीर्णता और साम्प्रदायिक दंगों ने हमारे आदर्श की पोल खोल दी। अवसरवादिता, राजनीतिक स्वार्थपरता, झूठे आश्वासन, भ्रष्ट प्रशासन एवं राजनीतिक जड़ता ने जनता का मोहभंग कर दिया। राजनीतिक अव्यवस्था, उत्तरोत्तर कठिन होता जा रहा जीवनयापन सामाजिक विकृतियाँ, खोखले सिद्धांत सबको समकालीन कविता में समेटा गया है। व्यंग्य एवं आक्रोश के साथ बौद्धिकता भी प्रभूत मात्रा में है।

आज का आदमी अपने जीवन की सार्थकता इस बात में समझता है कि वह भीड़ में भी पहचान लिया जाये। व्यक्तित्व के प्रति जागरूकता और अस्तित्व की सार्थकता उसे स्वस्थ मूल्यों के प्रति अग्रसर करती है। समकालीन कविता में आधुनिक भावबोध के साथ ही तर्क, विचार एवं चिन्तन की प्रधानता होने से वैज्ञानिक बोध भी समाविष्ट है। समकालीन कविता जीवन की व्याख्या है। वह जीवन और परिवेश को संवेदना के धरातल पर अनुभव करके शिल्पगत सौंदर्य के साथ अभिव्यक्त करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी कविता का इतिहास – डॉ. लक्ष्मीनारायण चातक
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र

****

भारतीय संस्कृति और नारी स्वातंत्र्य

डॉ. चन्दा तलेरा जैन *

प्रस्तावना – संस्कृति अर्थात् संपूर्ण विश्व में जो भी श्रेष्ठतम बातें जानी, समझी और प्रयोग में लायी गई हैं वह 'संस्कृति' है। वास्तव में संस्कृति ऐसा सांचा है जिसमें समाज के विचार ढलते हैं, वह बिन्दु है जहां से जीवन की समस्याएं एवं उनका समाधान देखा जा सकता है। डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र ने भी कहा है कि अपनी–नैसर्गिक प्रवृत्तियों से प्रेरित मानव हृदय की स्वाभाविक अवस्था ही प्रकृति है। जब यह अवस्था आत्मिक ध्येय के अनुसार, मानवीय प्रयत्नों द्वारा परिमार्जित होकर शुद्ध हो जाती है, तब उसे संस्कृति कहते हैं। ऐसे में संस्कृति को आधारभूत एवं अंतर्राष्ट्रीय माना जा सकता है, परन्तु फिर भी विभिन्न राष्ट्रों की अपनी विशिष्ट स्वाभाविक मौलिकता होती है।

विश्व के आध्यात्मिक गुरू माने जाने वाले हमारे देश की संस्कृति अति –प्राचीन होने के साथ ही उत्कृष्ट मानवीय, नैतिक तथा आध्यात्मिक सद्गुणों से ओतप्रोत है। भारतीय संस्कृति की उदारता को वसुधैव कुटुम्बकम् एवं सर्वे भवन्तु सुखिन: की आत्मीय भावभूमि में स्पष्टत: समझा जा सकता है। संपूर्ण विश्व में कहीं भी देश को 'माता' नहीं कहा या माना गया है। परन्तु हमारे देश को 'भारत–माता' माना जाता है। जननी–जन्मभूमिश्च च स्वर्गादपि गरिश्यति यह बोध वाक्य भी हमारी संस्कृति के झिलमिलाते फलक का महत्तवपूर्ण भाग है। नारी स्वातंत्र्य की बात जब उठती है तो इसके विविध पक्ष सामने आते हैं। प्रकृति की अनुपम कृति नारी को (जिसके बिना इस धरती पर किसी भी प्रकार की उन्नति, संतुलित विकास एंव सृजनकार्य असंभव है) लगातार अपनी अस्मिता के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है।

पुरातन काल के मातृसत्तात्मक परिवारों की आधारभूमि नारी ही थी। ऋग्वेद काल की स्त्रियां शिक्षा के सर्वोच्च –शिखर पर पहुंचने में आजाद थी। हमारे यहां की अर्द्धनारीश्वर की धारणा, मान्यता नर–नारी के संतुलित रिश्तों का ही परिचय तो देती है। वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में भी नारियों को पुरूषों की तरह ही सभी अधिकार ससम्मान प्राप्त थे। विश्व पटल पर धरती सा धैर्य रखने वाली सती–सीता, गार्गी, तिलोत्तमा, रत्नावली, लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई, जीजाबाई आदि आज भी अपना अमिट प्रभाव रखते है।
चूंकि समय–चक्र परिवर्तित होता रहा और हालात धीरे–धीरे बदलने लगे और रामायण, महाभारत तथा मुगलकाल तक आते–आते नारी केवल उपभोग की वस्तु मात्र बनकर रह गई। नारी जिसके कदमों तले स्वर्ग माना जाता था, वह तरह–तरह से तिरस्कृत की जाने लगी, उसका जीवन नर्क होता जा रहा था। जिस देश में पुरुषों के नाम के पूर्व स्त्रियों का नाम (सीता–राम, राधेश्याम, गौरीशंकर, देवकीनंदन रमाकांत) ससम्मान लिया जाता रहा, वही बाल–विवाह, सतीप्रथा, दहेज प्रथा आदि जैसी कुरीतियों का तांडव दिखने लगा। माँ, बहन, पत्नी, कन्या, जैसे पावन एवं शक्ति स्वरुपा नारी की दयनीय स्थिति को विभिन्न समाज–सुधारकों (राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद सरस्वती ज्योतिबा फूले वगैरह) ने समझते हुए सुधार के निरंतर प्रयास किये, परिणाम स्वरुप स्थितियों में सुखद परिवर्तन की बयार बहने लगी, और स्वतंत्रता के पश्चात् तो यह दृश्य और भी स्पष्ट दिखने लगा। वर्तमान में तो नारी समाज ने विविध क्षेत्रों में विकास के नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं। गृहस्थी की गाड़ी का महत्वपूर्ण भाग मानी जाने वाली नारी एक कुशल प्रशासक, अध्यापक, वैज्ञानिक, चिकित्सक एवं कलाकार की सशक्त भूमिका अदा कर रही है। फिल्मी दुनिया में भी कुशल अदाकारी से देश विदेशों में अपनी अलग ही राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय पहचान बनायी है।

विभिन्न उतार–चढ़ाव के बाद भी अनेकता में एकता की मूल चेतना पर आधारित हमारी भारतीय संस्कृति अन्य संस्कृतियों से विशिष्ट है। हमारे यहाँ का इहलोक परलोक से विमुख नहीं है। इस तरह देखा जाये तो अतिथि देवो भव: से लगाकर संबंधों में आपसी गहराई तक फैले हुए, मनुष्य के कार्य–व्यवहार से भी संस्कृति का स्वरुप झलकता है। जैनेन्द्र कुमार के अनुसार 'स्नेहपूर्ण हृदय ' और 'कार्यशील हाथ' वाले मनुष्यों को संस्कृति ही उच्चासन पर विराजित कर देती है। इसलिये जीवन के विकास क्रम में संस्कृति का विशिष्ट स्थान है। जब यह कार्यशील हाथ एवं स्नेहपूर्ण हृदय परिवार, समाज एवं राष्ट्र में दिखाई देते हैं तो फिर संस्कृति का जो स्वरुप सामने होगा, वह मानव मात्र के लिये संजीवनी बन सकेगा। हालांकि नारी और पुरुष के बीच की संख्या का असंतुलन भ्रूण हत्या जैसी विकराल समस्याएं सामने हैं जिन पर नियंत्रण मात्र महिला दिवस मनाकर नहीं वरन् महिलाओं द्वारा ही सकारात्मक सोच एंव उदार दृष्टिकोण के साथ दृढ़ संकल्प से ही किया जा सकता है, निश्चित ही यह पुनीत कार्य भारतीय नारियां बखूबी कर सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महिला सृजन के विविध आयाम – डॉ सुश्री तारा परमार
2. संस्कृति के चार अध्याय – रामधारीसिंह दिनकर
3. काम, प्रेम और परिवार – जैनेन्द्र कुमार
4. राज एक्सप्रेस – 8 मार्च महिला दिवस
5. नई दुनिया
6. दैनिक भास्कर

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (हिन्दी अध्ययन परिषद्) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

समस्याओं से संघर्ष करती नारी और अंतर्द्वन्द्व

डॉ. रश्मि जैन *

शोध सारांश – आज नारी चाहे किसी भी क्षेत्र से संबधित हो, उसका जीवन निर्द्वन्द्व नहीं है। उसके व्यावहारिक जीवन में कई समस्यायें आती है जिनसे उसे जूझना पड़ता है, जैसे – सामाजिक रूढ़ियाँ,मान्यताएँ,ससुराल पक्ष की सोच, देर से विवाह, बेमेल विवाह, दुर्व्यसनी पति, परित्यक्ता, वैधव्य, गरीबी, संकुचित परिवेश, आर्थिक व सामाजिक शोषण आदि कई कारण है। घर के भीतर और बाहर वह अपने होने या न होने की पीड़ा से गुजर रही है। वह अपनी पहचान बनाने और यथोचित सम्मान पाने इन कठिनाईयों और समस्याओं से संघर्ष करती है। वह सुशिक्षित और आत्मनिर्भरता के बाद भी परमुखापेक्षी है। उसमें स्वेच्छा से निर्णय लेने की क्षमता, समझ एवं साहस का विकास नहीं हो पाया है। उसे अपने जीवन की सार्थकता की तलाश है। ऐसे हालातों में उसका मन उद्वेलित होता है। वह भीतर ही भीतर छटपटाती है। अपनी समस्या का हल वह स्वयं खोजना चाहती है, परन्तु तमाम प्रयत्नों के बाद भी जब वह ऐसा नहीं कर पाती, तब वह आक्रोश,घुटन,कुंठा, तनाव, उत्पीड़न, डिप्रेशन में जीते हुए अपनी जीवनलीला समाप्त कर छुटकारा पाना चाहती है। उसके अंदर की ताकत ही उसे जिलाये रखती है। उसे परिस्थितियों से जूझने की सामथ्यदेता है। आज भी वह अपनी शक्ति के बल पर संघर्षरत है। वह हार मानकर नहीं बैठी है। आज आवश्यकता है नारी को अंतर्द्वन्द्व से उबारने की। नारी के प्रति सही समझ हासिल करने की। पूर्वाग्रह से मुक्त होने की और उसे यथोचित सम्मान देने की आवश्यकता सार्थक पहचान बनाये। साथ ही पुरूष यदि अपनी सोच सकारात्मक रखें तो नारी की दुनिया बदल सकती है।

प्रस्तावना – आज विश्वधरातल पर नारी चाहे वह निम्नवर्गीय, मध्यवर्गीय या उच्चवर्गीय हो, शिक्षित हो या गैर शिक्षित, शहरी हो या ग्रामीण, घर की चहारदीवारी में हो या उससे बाहर कार्यशील, कहीं भी उसका निर्द्वन्द्व जीवन नहीं है। वह मर्माहत है, उसमें अंतर्वेदना है। इसका कारण उसके व्यावहारिक जीवन क्षेत्र से जुड़े विविध पहलू है, जो समस्याओं के रूप में उसके सामने आते है।

नारी के अंतर्द्वन्द्व का प्रमुख कारण हमारी सामाजिक रूढ़ियाँ,मान्यताएँ,आकांक्षाएँ व अपेक्षायें है। शिक्षित अथवा गैरशिक्षित नारी को दहेज की कमी के कारण ससुराल में तिरस्रेंत किया जाता हैं। वहाँ उसे व्यंग्य वाणी सुननी पड़ती है। लगता है, 'भौतिकता की चाह में मानवीय संवेदनाएँ शून्य हो गई है।' ससुराल पक्ष के इस व्यवहार से वह दु:खी होती है, वह अनजान परिवार में अकेलापन महसूस करती है और अन्तर्द्वन्द्व में जीती हैं। वह अपनी पीड़ा किससे कहे? समाज के उपेक्षित दृष्टिकोण के कारण नारी को 'भ्रूण हत्या' करनी पड़ती है तथा उसे पुत्रकी इच्छा एवं चाहना संबधी अन्तर्द्वन्द्व झेलना पड़ता है। कभी–कभी गरीबी या अन्य परिस्थितियों के कारण नारी 'सामाजिक कटाक्ष' सुनती व सहती है। समाज के विभिन्न वर्गो में किशोरवय पार कर चुकी लड़कियों को 'शादी की उम्र हो गई','लड़की इतनी बड़ी कर ली' –जैसी बाते भिन्न भिन्न रूप में डंक की तरह चुभती हुई पीड़ा देती है। उसका कोमल मन इन दबावों एवं कटाक्षों से अहात होता है। कभी–कभी नारी 'बेमेल विवाह' की स्थिति का भी सामना करती है। नारी का एकाकी निर्द्वन्द्व जीवन जीना भी समाज के समाज के 'भलेमानुसों' को रास नहीं आता वे ऐसे मौके देखते व खोजते रहते है कि कहीं कुछ ऐसा घटे कि वे चटखारे लें, विकृत कुंठित मजा लें। पति के शराबी और दुर्व्यसनी होने पर नारी शारीरिक एवं मानसिक यातना भोगती है। समाज में नारी की इस दशा पर मृणाल पांडे : 'परिधि पर स्त्री' में लिखती है– 'लिहाजा दिहाड़ी खत्म कर यह मजदूर जब घर लौटते है तो पेट में होती है शराब और जेबें होती है एकदम खाली। गृहस्थी चले तो कैसे ? महिलाएँ विरोध करती तो घर में पिटती, बाहर आती तो उपहास की पात्र बनती है। आज कचेरीदेवरयापल्ली गांव की लक्ष्म्मा आप बीती बताती है –'हम औरते' या जानती है। हम कमर तोड काम पर जाती है। घर लौटने पर दिन भर बाहर खटके फिर हम बच्चों में, खाना पकाने में खटती है, मर्द कहीं अरक पीने बैठ जायेंगे। हमारी बहुओं के जेवर दारू के ठेके पर पहुँच गए। हम भी तो कष्ट झेलती है, जो हमारे मर्द। हम तो शराब में गम नहीं डुबाती। हमें बच्चे पालने, संसार चलाना है।

पति की असामयिक मृत्यु हो जाने पर नारी सामाजिक विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए अकेले ही पारिवारिक जिम्मेदारी वहन करती है। प्रताड़ना,उत्पीड़न,शोषण नारी के जीवन का अनिवार्य हिस्से बनते चले जाते है। अन्याय और अत्याचारों को नियति मानकर 'चुपचाप सहना' नारी की विवशता है और सामाजिक संरचना है ।

जब नारी शिक्षा, योग्यता, कुशलता के बल पर या विवशता से आर्थिक सक्षमता पाने चहारदीवारी लांघकर कार्यक्षेत्र में आती है तब उसका पहला कदम ही संघर्षपूर्ण होता है क्योंकि प्रकृति पुरुष और नारी को अलग से नहीं देखती, देखता है समाज । नारी को चुनौतिपूर्ण कार्यक्षेत्र जैसे– सेल्सगर्ल, एस.टी.डी. सेवा, पेट्रोल पंप पर भी कार्य करा पड़ता है । चूड़ियों वाले हाथों में पेट्रोल पंप का हैंड सेट :दैनिक भास्कर, भोपाल, 5 जुलाई 2001 इसके पीछे के नारी के आकर्षण से धंधा अच्छा चलने की व्यापारियों की सोच भी है । ग्रामीण महिलायें भी दूधमुँह बच्चे को साथ लेकर छप्पर की छवाई, कुटाई – पिसाई करने, अकाल बाढ़ में रिलीफ वर्क का हांका लगने पर सरकारी निर्माण कार्य करने तथा फैक्ट्रियों आदि में जोखिमपूर्ण कार्य करने तैयार हो जाती है। उन्हें प्रसूति सुविधा, सावकाश वेतन और चोट लगने पर कानूनी मदद नहीं मिलती है । वे तालाबंदी या छँटनी का शिकार होती है । इन कार्यो में नारी को असुरक्षा या आत्मरक्षा का भय बराबर बना रहता है ।

कार्यक्षेत्र में नारी का आर्थिक शोषण होता है। नारी के लिए कष्टदायक तत्व है – वेतन स्तर में असमानता। अनेक व्यवसायों मे वास्तविक वेतन और

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय,बीना (म.प्र.) भारत

दर्शाये गये वेतन में अंतर होता है। परिधि पर स्त्री की सुब्बालक्ष्मी प्रति एक हजार अगरबत्ती का लगभग ढाई रूपया मेहनताना पाती है, जबकि कानून द्वारा निर्धारित न्यूनतम मेहनताना साढ़े दस रूपये बनता है। महिला और पुरूष को समान कार्य के लिए भी असमान वेतन दिया जाता है। भारतीय सामाजिक दृष्टि में नारी का स्वायत्तता का स्वीकृति में संकोच तो है ही, महिला द्वारा कार्यशीलता के प्रयासों को अधिकार की अपेक्षा आवश्यकता मात्र माना जाता है। आर्थिक दबावों के फलस्वरूप मजबूरी में नारी को जो स्वतंत्रता दी जाती है वह संपूर्ण नहीं है। कार्यशील भूमिका निर्वाह के बावजूद उसे पुरूष के समान अधिकारों का भागीदार मानने में संशय एवं प्रतिरोध बना हुआ है। व्यवस्थापक नारी की आर्थिक जरूरत और सामाजिक पराधीनता का अनुचित लाभ उठाना चाहते है, ऐसी स्थिति में नारी कर्मचारी में असंतोष व निराशा की भावना आती है। कई बार महिला कर्मचारी को अभद्र-अधिकारी की अविवेकी, तर्कहीन एवं अनुचित आलोचना भी सुनना पड़ती है। पुरूष अधिकारियों को अपने पूर्वाग्रहों के चलते कामकाजी स्त्रियों के व्यावहारिक कष्ट प्राय: पारिवारिक स्तर पर दीखते हैं, न कि दफ्तर में। पुरूष सहकर्मी के नकारात्मक एवं असहयोगी दृष्टिकोण से महिला कर्मचारी को कार्य करना कठिन हो जाता है। पुरूष सहकर्मी से सहयोग लेने पर अनुचित लाभ पाने का प्रयास करने है और समाज तथा कार्यालय में इसका वित्त अर्थ लगाया जाता है। अनेक कठिनाइयों और समस्याओं के साथ-साथ सहकर्मियों की दूषित दृष्टि से बचने का प्रयास नारी को करना पड़ता है। यदि महिला अधिकारी हो तो उसके अधीन कार्य करने से पुरूष के अहं को ठेस पहुंचती है। उसका आदेश पालन करने में पुरूष हीनता का अनुभव करते है, परिणाम स्वरूप महिला अधिकारी को सुचारू रूप से कार्य करना कठिन हो जाता है। कार्यशील महिला की दोहरी भूमिका रहती है। परिवार की उससे गैर कार्यशील गृहिणी की अपेक्षा रहती है, दोहरे कार्यभार के कारण वह तनावग्रस्त रहती है।

यदि नारी नि: स्वार्थ रूप से समाज सेवा आदि कार्य करती है तो पुलिस,प्रशासन और समाज तीनों अपनी-अपनी परम्परानुसार शोषण करना चाहते है। एक उदाहरण-'परिधि पर स्त्री' का भवरीबाई का वह राजस्थान की साधिन (समाज सेविका) है

उसने सरकारी प्रोत्साहन पर गांव में गैर कानूनी बाल विवाह रोकने का बीड़ा उठाया। सामाजिक सेवा के बदले में समाज के ठेकेदारों से उसे पुरस्कार मिला - पहले आर्थिक और सामाजिक बहिष्कार और अंतत: सामूहिक बलात्कार। प्रताड़ित उत्पीड़ित, परेशान नारियों को कानून द्वारा न्याय भी नहीं मिल पाता है क्योंकि कानून के हिमायती पुलिसकर्मी घूस रिश्वत लेकर केस को उत्पीड़िता के खिलाफ कमजोर भी कर देते है।

आज नारी परिवार की तरह राजनीति में भी बुनियादी निर्णयों के लिए अंतत: परमुखापेक्षी है। वह मजबूरन नेताओं की दृष्टि पर निर्भर है। वे नेता या सामंती पुरूष-तेवर जो पुरूषों की संगठन शक्ति से नारी की किसी खास किस्म की सार्थक भागीदारी के विरूद्ध रहे है। उच्चतम स्तर की कूटनीतिक वार्ताओं, आर्थिक संबधों की चर्चाओं में भी सूत्रधार से लेकर सारी भूमिकाएं पुरूष निभाते है। इनमें स्त्रियों का प्रवेश बहुत करके 'सेक्रेटरी (चेरी-दूती)' अथवा 'आधिकारिक प्रवक्ता' के बतौर होता है। राजनीतिक पार्टियों की बैठकों में भी यही शक्ति संतुलन रहता है।

महिला शरणार्थी की समस्याऐं भी अहं मुद्दा है गरीब देशों की स्त्रियों को नौकरी का छलावा देकर खाड़ी देशों में भेजा जाता है। वहां अरब देशों के अमीर मालिको द्वारा प्रवासी घरेलू नौकरानियों पर अमानुविक बर्बरतरपूर्ण अत्याचारों और शोषण की खबरें प्राय: पढ़ने और सुनने में आती है। प्राकृति क प्रकोप या पति के युद्ध में मारे जाने वार बेसहारा स्त्रियाँ अपने बच्चों को लेकर शरणार्थी के रुप में अनजाने पड़ोसी देश में पहुंच जाती है। वहां उन्हें घटिया तथा हाशिए के काम ही मिलते है। इनका वेतन तथा सुरक्षा दोनों की कम होते है। गरीबी तथा डर के कारण शरणार्थी स्त्रियाँ अपराधी वृत्तियों के चंगुल में भी सरलता से आ जाती है। इनमें से शायद ही किसी मामले में न्याय का पक्ष लेता हो। उपयोग और उपभोग ही माने स्त्री की नियति है। औरत के हक में तस्लीमा नसरीन कहती है - एक लड़की नारी तमाम अत्याचारों से आशंकित होती है, उसका कारण लड़की जात होना। उसकी शिक्षा, रुचि, मेधा उसे मानव जात' हीं बना सकी, सिर्फ लड़की जात बनाकर ही रख दिया। इस देश में लड़की जात अपने अंदर तमाम खूबियाँ रखने के बावजूद 'मानव जाति' में शामिल नहीं हो सकती। 'जो कुचल रहा है,अपना अपराध भले ही उसे न मालूम हो लेकिन जो पिस रही है, वह तो जानती है छिपकली खुशी से पूँछ हिला रही है या पीड़ा से।'

आधुनिकता के कारण बदलते संबंधों से कामकाजी एवं गैर कामकाजी दोनों प्रकार की नारियों का जीवन प्रभावित हुआ है। परिवार में सामंजस्य का अभाव, पति पत्नी की सोच में साम्यता नहीं होना तथा नारी की भावनाओं को दबाया जाने आदि कारणों से पति पत्नी के बीच अनबन और अंतत: तलाक की समस्या उत्पन्न हो जाती है। वह पारिवारिक टूटन-बिखराब से जूझती है। वह जीवन भर एक दूसरे से अलग रहने की पीड़ा झेलती है। उसे एकाकी जीवन बिताना पड़ता है। मायके में भाईयों या पिता पर निर्भर रहती है और दया पात्र एवं भार स्वरूप समझी जाती है।

'बाहर आने पर भी तो,
उतना ही लहुलुहान होती है,
जितनी अंदर रहने पर,
जरन नहीं पा रही,
कहाँ कम,कहाँ ज्यादा'

नारी उक्त परिस्थितियों का सामना करते हुए कभी-कभी असहनीय पीड़ा का अंतिम समाधान मजबूरन आत्मघात के रुप में करती है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि नारी घर की दहलीज के भीतर हो या बाहर वह अन्तर्द्वन्द्व से भरी है। घर के भीतर सामाजिक मान्यताएँ, रूढ़ियाँ उसे बाध्य करती है और घर के बाहर पुरूष का अहं, संकुचित परिवेश और आत्मसुरक्षा का भय। ऐसा भी नहीं है किवह इन कारणों से अनभिज्ञ है। परन्तु उसका अंतर्मन विवशता से पीड़ित है। व्यावहारिक धरातल पर वह अपनी पहचान बनाने और यथोचित सम्मान पाने इन कठिनाइयों और समस्याओं से संघर्ष करती है। सुशिक्षित एवं आर्थिक रूप से समर्थता एवं आत्मनिर्भरता के बाद भी वह परमुखापेक्षी है। उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व में स्वेच्छा से निर्णय लेने की क्षमता, समक्ष,विवके और साहस का विकास नहीं हो पाया है। उसे अपने जीवन की सार्थकता की तलाश है। ऐसे हालातों मे उसका मन उद्वेलित होता है वह भीतर ही भीतर छटपटाती है वह अपनी समस्या का हल स्वयं खोजना चाहती है परन्तु अपनी तमाम कोशिशों के बाद भी जब वह ऐसा नहीं कर पाती ज बवह तनाव,कुंठा,घुटन,आक्रोश,उत्पीड़न,डिप्रेशन आदि में जीते हुए अपनी जीवन लीला समाप्त कर छुटकारा पाना चाहती है। हाँ, यह आवश्यक है कि नारी को हर मोड़ पर पुरूष का साथ जरूरी है पर 'वह साथ सही अर्थों में' - यही नारी की विडम्बना, त्रासदी और यातना है। नारी के अंदर की ताकत ही उसे जिलाये रखती है, उसे परिस्थितियों से जूझने की सामर्थ्य देती है। आज भी वह अपनी शक्ति के बल पर संघर्षरत् है। वह हार मानकर नहीं बैठी है। आज आवश्यकता है नारी को अंतर्पीड़ा, अंतर्द्वन्द्व से उबारने

की। नारी के प्रति सही समझ हासिल करने की। पूर्वाग्रह से मुक्त होने की। नारी को यथोचित सम्मान व स्थान देने की। आवश्यकता इस बात की है कि नारी अपने में निहित शक्ति को पहचाने और उसे क्रियान्वयन में अपनाकर अपनी पहचान बनाए

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मूकमाटी : आचार्य विद्यासागर,भारतीय ज्ञानपीठ,नई दिल्ली, 1988
2. औरत के हक में : तस्लीमा नसरीन,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,1998
3. परिधि पर स्त्री : मृणाल पांडे, राधोंष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली,1998
4. कार्यशील महिलाएँ एवं सामाजिक परिवर्तन: मंजु जैन, प्रिन्टवैल, जयपुर
5. महिला विकास की नई दिशाएँ: पुष्पा मोतियानी, कर्नावती प्रकाशन,अहमदाबाद 1998
6. भारतीय महिला एवं आधुनिकीकरण: मोजम्मिल हसन, आरजू,नई दिल्ली,1993
7. हंस (पत्रिका) :संपादक-राजेन्द्र यादव,अक्षर प्रकाशन दिल्ली,अक्टूबर 1996,1998
8. रचना (द्वैमासिक) : संपादक-डॉ. शिवकुमार अवस्थी,मप्र.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,भोपाल
9. ओजस्विनी(पत्रिका): संपादक-डॉ. सुधा मलैया, वंसुधा प्रकाशन,भोपाल
10. दैनिक भास्कर, भोपाल

****

छायावादी कवियों का कल्पना विषयक दृष्टिकोण

डॉ. वंदना अग्निहोत्री *

शोध सारांश – सौंदर्यशास्त्र में कल्पना का प्रमुख स्थान है। किसी भी कलाकार की सृजन–शक्ति का नाम ही कल्पना है। जिसके बिना नवीन निर्माण करना संभव नहीं होता है। काव्य हेतुओं के अन्तर्गत जिस प्रतिभा का विवेचन हुआ। वह कल्पना ही है। कवि जब कल्पना में प्रवृत होता है तो वह प्रत्यक्ष सृष्टि में अपनी ओर से कुछ जोडकर उसे समृद्ध बनाता है।

प्रस्तावना – सभी छायावादी कवि कल्पना को काव्य–कला का तत्व स्वीकार करते हुए भी उसे इतनी प्रमुखता प्रदान नहीं करते जितनी अनुभूति को। अनुभूति को सौदंर्य प्रदान करने के हेतु ही इन्होंने कल्पना को ग्रहण किया।

छायावादी कवियों ने कल्पना का तात्विक विश्लेषण तो नहीं किया है। यत्र–तत्र उसके महत्व तथा उपयोगिता पर विचार व्यक्त किए है।

कल्पना अंग्रेजी शब्द इमेजिनेशन (Imagination) का पर्यायवाची है। जिसका शाब्दिक अर्थ है सृष्टि करना हिन्दी साहित्यकोश के अनुसार 'पूर्व अनुभूतियों की पुर्नयोजना से अपूर्व की अनुभूति उत्पन्न करने की क्रिया शक्ति को कल्पना कहते है।'[1] या कहें 'वर्तमान का अवगाहन करनेवाला प्रत्यक्ष, अतीत का अवगाहन करनेवाली स्मृति अनागत का अवगाहन करने वाली कल्पना है।'[2]

कवि–कलाकार की सृजन–शक्ति का नाम कल्पना है। जिसके बिना नव–निर्माण कर सकना संभव नहीं। भारतीय साहित्य शास्त्र में काव्य हेतुओं के अन्तर्गत जिस प्रतिभा या शक्ति का विवेचन दीर्घकाल तक हुआ है वह कल्पना ही है उसका महत्व असंदिग्ध है। पं. बलदेव उपाध्याय तथा अन्य मनीषियों की स्पष्ट धारणा है कि पाश्चात्य आलोचना का इमेजीनेशन भारतीय साहित्यशास्त्र की प्रतिभा ही है।[3] काव्य की सृजन–शक्ति के रूप में भारतीय काव्य–शास्त्र में प्रतिभा प्रतिष्ठित है और पाश्चात्य चिंतन परम्परा में कल्पना।

कवि जब कल्पना में प्रवृत होता है तो प्रत्यक्ष सृष्टि में अपनी ओर से कुछ जोडकर उसे समृद्ध बनाता है। केदारनाथ सिंह ने लिखा है 'कल्पना वह शक्ति है जो किसी भी साहित्यक रचना कोरा इतिहास बनने से बचा लेती है।'[4] छायावादी कवियों ने कल्पना का तात्विक विश्लेषण तो नहीं किया है यत्र–तत्र उसके महत्व तथा उपयोगिता पर विचार व्यक्त किए है। प्रसादजी ने कल्पना सुख में कल्पना की प्रशस्ति करते हुए कहा है

'हे कल्पना–सुखदान। तुम मनुज जीवन–प्राण
तुम विशद व्योम समान, तव अन्त नर नहीं जान।
प्रत्यक्ष, भावी, भूत, यह रंगे त्रिविध जु सूत।
तव तानि प्रकृति सुतार–पट विनत सुचि संसारा।।'[5]

उन्होने कायामनी में कहा है 'कल्पना शक्ति के द्वारा ही कवि मुधर–जगत की सृष्टि करने में समर्थ होता है।'[6] प्रसादजी ने कामायनी में लिखा है।

'आह कल्पना का सुन्दर यह जगत मधुर कितना होता
सुख स्वप्नों का दल छाया में पुलकित हो जगता सोता। '[7]

निराला ने कविता को कल्पना के'कानन की रानी' कहा है।

'कल्पना के कानन की रानी
आओ, आओ, मृदुपद मेरे
मानस की कुसुमित वाणी।
धुल जाये मल मेरे तन का मन का
देख तुम्हारी मूर्ति मनोहर
रहें ताकते ज्ञानी।'[8]

किसी अन्य युग के कवि ने कविता को 'कल्पना के कानन की रानी' नहीं कहा है। उनकी दृष्टि में कल्पना से अधिक महत्व अनुभूति ओर चिन्तन का है उनका कहना है–'कविता प्रिय मनुष्य कल्पना प्रिय हो जाता है। उससे काम नहीं होता। ललित कल्पना मनुष्य को कर्म के कठोर क्षेत्र पर उतरते भय दिखाती है। कविता की सुकुमार भावना लोगों को सौदर्योपासक बना देती है। इससे कर्म जीवन के शिथिल होने की संभावना है।'[9]

उन्होने कवि षीर्षक कविता में लिखा है।

'फूलते नही हैं फूल वैसे बसंत मे
जैसे तव कल्पना की डालों पर खिलते है।'[10]

पंतजी का काव्य सुन्दर से सत्य की ओर प्रयाण की कथा है। उनके काव्य मे सौदर्य की प्रमुखता है और कल्पना सौदर्य सृष्टि में सहायक हुई है। पंतजी ने कल्पना के विषय में लिखा है–'मैं कल्पना के सत्य को सबसे बडा सत्य मानता हूँ। मेरी कल्पना को जिन–जिन विचार धाराओं से प्रेरणा मिली है। उन सबका समीकरण करने की मैने चेष्टा की है। मेरा विचार है कि वीणा से लेकर ग्राम्या तक अपनी सभी रचनाओं मे मैने अपनी कल्पना ही को वाणी दी है और उसी का प्रभाव उस पर मुख्य रूप से हो रहा है।'[11]

छायावादी काव्य के संदर्भ में कल्पना को काव्य का प्राण मानते हुए पंतजी ने लिखा है–'जहॉ तक छायावादी कल्पना का प्रश्न है यदि उसे इमेजिनेशन का कोरा अनुवाद न मान लिया जाये। जो यथार्थ बोध के विरोधी बोध के लिए भी प्रयुक्त होता है, तो कल्पना ही वास्तव में वह अनुभूति–ग्रहिणी तथा रूप विधायिनी शक्ति है, जो काव्य का प्राण है। वस्तु के रूप में प्रच्छन्न कवित्व का उद्घाटन उसी की सहायता से संभव है। यहॉ तक की वर्णनात्मक काव्य को संजोने तथा मार्मिक बनाने में भी उसका प्रमुख हाथ रहता है। पंतजी के लिए कल्पना वह मर्मस्थल है जहॉ वेदना की अनुभूति होती है।

' कल्पना में है कसकती वेदना

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजाबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अश्रु में जीता सिसकता गान है
शून्य आहों में सुरीले छन्द हैं।
मधुर लय का क्या कहीं अवसान है।'[13]

अश्रु और शून्य आहों के साथ कल्पना का प्रयोग ध्यान देने योग्य है यहॉ कल्पना से भी अभाव व्यंजित होता है। प्रसादजी के समान ही पंतजी ने एक कल्पित देश की ओर जाने की लालसा अपने गीत-खग से कही है।

' घूट छाया तरू वन में वास
न जग के हास अश्रु ही पास
अरे दुस्तर जग का आकाश
गूढ से छाया गृथित प्रकाश'[14]

महादेवी वर्मा ने कल्पना के विषय मे कहा है 'कलाकार यदि सत्य अर्थो मे कलाकार है तो वह कल्पना को सौदर्यमय आकार देगा, उसमें वास्तविकता का रंग भरेगा और उससे जीवन-संगीत की सुरीली लय-सृष्टि कर लेगा'[15]

उन्होंने कल्पना को अत्याधिक महता देते हुए भी उसे अनुभूति से निम्न माना है'वस्तुत: कल्पना ऐसी अनुरंजनशील विधायक वृत्ति है जिसके द्वारा हम संभाव्य किन्तु अभीसिप्त वस्तु का मानसिक अंकन करते है, परन्तु पूर्णतम विधायक कल्पना भी अपूर्ण अनुभूति का स्थान लेने मे समर्थ नहीं है। क्योंकि उसमें रागात्मक तीव्रता और संवेदनीयता नहीं रहती है।'[16]उन्होंने आध्यामिक क्षेत्र में जाकर जगत और जीवन के अभावों की पूर्ति करने की प्रकृति दिखलाई यह भारतीय सांस्कृतिक नव चेतना का उन्मेश था। इससे समाज का रूचि परिश्कार हुआ और रीतिकांल की ऐन्द्रिक श्रृंगार भावना के स्थान पर आध्यामिक पक्ष में आध्यामिक श्रृंगारिक भावनाओं की प्रतिष्ठा हुई। इस तरह अनन्त् और असीम की खोज में कवि उस पार पहुॅचने की कामना करने लगे।

'फिर निकल हैं प्राण मेरे।
तोड दो यह क्षितिज, मै भी देख लूॅ उस और क्या है,
जा रहे जिस पंथ से युग कल्प, उसका छोर क्या है।'[17]

रामकुमार वर्मा एवं भगवती चरण वर्मा ने अनुभूति को कल्पना से श्रेष्ठ माना है। रामकुमार वर्मा ने कहा है- 'कल्पना यधपि कविता में नए-नए संसार की सृष्टि करती है। तथापि वह कविता में अनुभूति का स्थान नही ले सकती। उससे भावना में तीव्रता तो अवश्य आ जाती है किन्तु वह कविता में स्वंदन नहीं ला सकती।'[18]

उनकी धारणा थी कि जीवन और जगत से विछिन्न कल्पना काव्य के लिए निरर्थक है। उन्होने विशुद्ध रहस्यवादी की तरह अपने को विश्वात्मा का एक अंश मानकर उसी में लीन होने की इच्छा प्रगट की।

'एक दीपक किरण कण हूॅ
पर तुम्हारा स्नेह खोकर
भी तुम्हारी शरण हूॅ।'[19]

भगवतीचरण वर्मा ने अपने काव्य प्रेम-संगीत में भावना और कल्पना में कोई तात्विक भेद स्पष्ट नही किया है। उन्होने अनुभूति को काव्य का मूल तत्व मानते हुए कहा है- 'अनुभूति का तत्व साहित्य का मूल तत्व है। क्योंकि इसी में आनंद का सृजन है।'[20]

निष्कर्ष सभी छायावादी कवि कल्पना को काव्य कला का तत्व स्वीकार करते हुए भी उसे इतनी प्रमुखता प्रदान नहीं करते जितनी अनुभूति को। अनुभूति को सौंदर्य प्रदान करने के हेतु ही इन्होंने कल्पना को ग्रहण किया ' कविता आज भी शब्दार्थ के माध्यम से भाव की कल्पनात्मक अभिव्यक्ति है।'[21]

इसमें संदेह नहीं कि अनुभूति के पश्चात किसी अन्य तत्व की छायावादी काव्य में प्रधानता रही तो वह कल्पना ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. हिन्दी साहित्य कोश-ज्ञानमंडल प्र.बनारस-पृ. 205-06
2. हिन्दी साहित्य कोश-ज्ञानमंडल प्र.बनारस-पृ. 206
3. भारतीय साहित्य शास्त्र-प्रथम खण्ड-प. बलदेव उपाध्याय पृ. 423
4. कल्पना और छायावाद- केदारनाथ सिंह पृ. 03
5. चित्राधार- जयशंकर प्रसाद पृं.143-144
6. कामायनी-जयशंकर प्रसाद पृं 37
7. कामायनी जयशंकर प्रसाद पृ. 37
8. 8-9 चयन पृ. 25
10. परिमल-सूर्यकांत त्रिपाठी निराला पृ 208
11. आधुनिक कवि सुमित्रानंन्दन पंत पृत्र 19
12. छायावाद-पुर्नमूल्यांकन सुमित्रानंन्दन पंत पं. 28
13. वही गुंजन 14
14. साधिनी-भूमिका-महोदवी वर्मा पृ. 14
15. संधिनी-भूमिका-महादेवी वर्मा पृ.14
16. सान्ध्यगीत- महादेवी वर्मा पृ.20
17. विचार-दर्शन-डॉ. रामकुमार वर्मा पृ. 120-21
18. चंद्रकिरण- .....पृ.18
19. साहित्य की मान्यताऍ-भगवती चरण वर्मा पृ. 26
20. आस्था के चरण-डॉ. नगेन्द्र पृ. 89

****

भूमण्डलीकरण के युग में साहित्य और समाज मोहन राकेश के नाटक आधे अधूरे के संदर्भ में

डॉ. सरोज यादव *

शोध सारांश – साहित्य समाज का दर्पण है। अन्तर्राष्ट्रीयकरण की इस व्यापक प्रक्रिया में विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में तीव्र गति से बदलाव के कारण समाज और साहित्य भी प्रभावित हुआ है, जो मोहन राकेश के नाटक 'आधे-अधूरे' में परिलक्षित हुआ है। यह नाटक मानवीय संतोष के अधूरेपन को रेखांकित करता है, जिसकी परिणति परिवार में विघटन के रूप में होती है। वर्तमान परिवार आधुनिकता की देन है। जो अपने स्वार्थों से परिपूर्ण न्यूक्लियर परिवार है, जो अपने प्राचीन पारम्परिक परिवार की परिभाषा को त्याग चुका है।

शब्द कुंजी – प्रभुत्वशाली, वसुधैव कुटुम्बकम, भौतिकतावादी, अस्तित्ववादी, वैयक्तिक, परिष्कृत।

प्रस्तावना – भूमण्डलीकरण अर्थात विश्व स्तर पर रूपान्तरण की व्यापक प्रक्रिया है जिसने सारे विश्व के सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तकनीकी स्तर पर बड़ा भारी फेरबदल किया है। स्वाभाविक है, व्यक्ति जो समाज की इकाई है, विश्व के हर क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। व्यक्ति का जीवन जिसमें स्त्री और पुरूष प्रधान है। उनके जीवन में भूमण्डलीकरण का गहरा प्रभाव पड़ा है। विशेषकर भारत जो एक अत्यन्त सांस्कृतिक विरासत वाला देश है, जिसका अपना पारम्परिक दृष्टिकोण है। वह भूमण्डलीकरण के इस दौर में अछूता नहीं रहा। महानगरों में बसने वाले स्त्री-पुरूष जो समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, आधुनिकतावाद की चकाचौंध में अपने जीवन मूल्यों एवं मूलभूत संस्कारों से भटक गया।

भूमण्डलीकरण अर्थात अन्तर्राष्ट्रीयकरण भूमण्डलीकरण एक व्यापक प्रक्रिय है जो राजनीति, तकनीक अर्थव्यवस्था एवं संस्कृति को तीव्र गति से विकास की और ले जा रही है। इसके भौतिक संसार की दूरियों को मिटाकर हमारे मूल्यों, मान्यताओं, विचारों को नई अर्थवत्ता दी है। भूमण्डलीकरण की इस प्रक्रिया में स्थान और समय की दूरी सिमट गई है। इसने विश्व के विकास शील और पिछड़े देशों को आर्थिक रूप से अपने अधिकार क्षेत्र में सम्मिलित कर लिया है। इस प्रक्रिया ने प्रभुत्वशाली समाज को, सांस्कृतिक रूप को आदर्श बना कर प्रस्तुत किया है, और अन्य समाज उस तक पहुँचने का प्रयत्न कर सफलता की सीढ़ियॉ चढ रहे है। वैज्ञानिक उन्नति, औद्योगिक विकास, कम्प्यूटर, इन्टरनेट, फैक्स, ई-मेल ने युग की सोच विचार और विकास के सारे मानदंड को बदल दिये है। इसने संवेदनशीलता, मनुष्यता, नैतिकता, सामाजिकता आदि मानव मूल्यों को नया जामा पहना दिया हैं। भूमण्डलीकरण पूरे विश्व को 'वसुधैव कुटुम्बकम' अर्थात एक परिवार के रूप में देखने समझने व जीने की प्रेरणा देता है। इसके लिये इस प्रक्रिया ने वैयक्तिक स्वातंत्रय प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों में परिमार्जन तथा पुरानी पीढ़ी के विचारों को परिष्कृत करने के उद्देश्य को प्रमुखता दी है। मानव विकास के कुछ नवीन मानदण्ड निश्चित किये गये थे। परन्तु मानव ने इसका प्रयोग अपने हित के लिये न करते हुये अपना अहित कर लिया और इसके कारण समाज की लधुतक इकाई परिवार पर संकट के बादल मंड़रा रहे है। 'आज के आधुनिक युग में पारिवारिक ढ़ाँचे में स्पष्ट परिवर्तन देखने को मिल रहे है। आधुनिकता की होड़ त़ीव गति से परिवर्तित होते हुऐ आर्थिक स्वरूप एवं कुछ नया करने की चाह ने परिवार को आज इस कगार पर ला खड़ा किया है, कि उसका सम्पूर्ण स्वरूप ही परिवर्तित होता नजर आ रहा है।'[1] 'पति-पत्नी के बीच सामंजस्य स्थापित न होने के कारण तथा सामाजिक दबाव अन्य विभिन्न दबावों के कारण आज पारिवारिक स्वरूप अपने पारम्परिक ढॉचें को छोड़ रहा है। संयुक्त परिवार टूट कर एकाकी परिवार में एवं एकांकी परिवार विघटित हो कर बिखर रहे हैं।'[2] वृद्धों के प्रति सम्मान की भावना लगभग लुप्त सी हो रही है। बच्चे नई पीढ़ि के संस्कार विहिन हो रहे है, जो एक स्वस्थ सामाजिक ढॉचे के लिये दुर्भाग्यपूर्ण हैं। ऐसा ही बच्चे अपने संस्कारों में भी पाते है। वे भी बड़े होने पर अपने वृद्ध माता पिता के साथ ऐसा ही व्यवहार करते हैं। परिणाम स्वरूप दु:ख एवं क्षोभ के कारण युवक-युवतियॉ नशे की और अग्रसर हो रहे है। पारिवारिक विघटन सम्बंधी समाज के इसी पहलू को मोहन राकेश के नाटक 'आधे अधूरे' में देखा जा सकता है। इस नाटक में मध्यम वर्गीय परिवार में व्याप्त कलह, परिवार विघटन का कारण बनता हैं।

गहराई से देखा जाए तो इस नाटक में आज का युग बोलता हैं। आज के व्यक्ति की यातना गाथा अभि व्यक्त हुई हैं। आज के टूटते बदलते घर परिवार और पारस्परिक संबंध रिसते हुये रिश्ते एक दम अपने यथार्थ रूप में सशक्त एवं प्रभावोत्पादक बन कर प्रकट हुये है। नाटक का सारा कथ्य संदेश प्रदान करता है। साथ ही इसमें घटित घटनाए समस्याऐं समकालीन भाव बोध को व्यक्त करती हैं। नाटक का मुख्य उद्देश्य समकालीन पारिवारिक जीवन के यथार्थ को समाज तक पहुँचाना हैं। इसका माध्यम है, एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार का एक घर। यह घर है महेन्द्र और सावित्री का जो निस्सन्देह पति-पत्नी है, किन्तु दोनों में विवाद और टकराहट है। विवाद का कारण महेन्द्र का बेरोजगार होना, जिसके कारण परिवार अर्थ संकट से जूझ रहा है। दूसरी ओर काम कुण्ठाओं से ग्रसित सावित्री का जीवन है। दोनों परिवार के संकट का दोषारोपण एक-दूसरे पर करते है। अत्याधिक महत्वकांक्षी सावित्री की भौतिकतावादी दृष्टिकोण का प्रभाव उनके बच्चों पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। इनकी तीन संताने है बिन्नी बड़ी लड़की और किन्नी छोटी लड़की है। आज भारत के अधिकतर नगर एवं महानगरों में ऐसी समस्याएँ दिखाई देती है। तीनों बच्चों के मध्य हमेशा कलह होता रहता है। कलह से बचने के लिये महेन्द्रनाथ अधिकतर बाहर रहते हैं। कलह का कारण परस्पर असहयोग, प्रेम एवं स्नेह का अभाव है। सावित्री किसी दफ्तर में काम करती है। अत्यधिक

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

महत्वकांक्षी होने के कारण एवं अतृप्त काम वासना के कारण अनेक पुरूष मित्रों से उलझी रहती है। बड़ा लड़का निकम्मा है, बड़ी लड़की बीना प्रेम में निराश हो कर घर बैठी है। महेन्द्रनाथ आत्मविश्वास विहीन एक कमजोर व्यक्तित्व का व्यक्ति है। परिवार के सभी सदस्य उनसे अशिष्टता का व्यवहार करते है। इसके विपरित सावित्री एक आधुनिक नारी है, उनमें एक ग्रहणी के त्याग एवं सेवा का अभाव है। मातृत्व के निर्वाह को वह उपेक्षा की दृष्टि से देखती है। यही कारण है कि नाटक के सभी पात्र आधे-अधूरे उद्देश्य विहीन हैं। युवा पीढ़ी की इसी स्वतंत्र मन: स्थिति के कारण ही परिवार विघटन का कारण बना है। वैयक्तिक स्वातंत्रय का अनुचित प्रयोग माता पिता के प्रति विद्रोह की भावना, प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों का परित्याग परिवार को पतन की और ले जा रहा है।

आज युवक एवं युवतियों के मन में यह भाव भर गया है कि जब तक वे स्वच्छन्द मार्ग पर आगे नहीं बढ़ सकते, जब तक उनकी इच्छा पूर्ति में किसी प्रकार की बाधा न हो। इस वैयक्तिक स्वातंत्रय ने मनुष्य को बहुत स्वार्थी बना दिया है। भूमण्डलीकरण के कारण ही आज ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई हैं। क्योंकि 'युवा पीढ़ी जैसे ही ऑख खोलती है, साथ ही बंधन मुक्त होने की चाह उनमें सिर उठाने लगती है।' [3]'वास्तव में भूमण्डलीकरण ने तो हमें वैयक्तिक स्वतंत्रता दी थी सोचने की अपने विचार प्रकट करने की पर युवा पीढ़ी ने इस स्वातंत्रय के आकर्षण को जिस दृष्टि से अपनाया उनमें सबसे पहले परिवार का परित्याग किया, और बिना सोचे समझे काम के थपेड़े में बह कर अपने भविष्य को ही डुबो दिया है।' आज युवक-युवतियॉ नाईट क्लब, डिस्को संस्कृति में विश्वास करती है। जहॉ बड़ी देर रात तक पीढ़ी उन्मुक्त हो कर नशे में ऐसे कार्यो को अंजाम देते है जिसका परिणाम परिवार के लिये अत्यन्त दुखद हो जाता है।'[4] 'भूमण्डलीकरण की इस प्रक्रिय में युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के सम्मुख विद्रोह का दामन थामे हुये हैं। अन्तर्राष्ट्रीयकरण के कारण आये परिवर्तनो ने इस पीढ़ी के हाथ में विद्रोह का ध्वज दे दिया है।' [5] जिसमें परिवार का संतुलन डावांडोल सा हो गया है। बेरोजगारी का कारण आवारागर्दी निराशा ने गेंग रेप जैसे घिनौने कृत्यों को अंजाम दिया है, जिससे समाज में भय, हत्या जैसे कार्य देखे जा रहे है। अत: अन्तर्राष्ट्रीयकरण ने पूरे विश्व को एक परिवार मान कर जो विकास चाहा था, उसे मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिये प्रयुक्त कर विश्व को एक गम्भीर समस्या का अल्टीमेटम दे दिया है। किन्तु समय ही इसका सबसे बड़ा निर्णायक हैं, क्योंकि हर परिवर्तन के अच्छे और बुरे दो पक्ष होते है। लोगों की सोच में बदलाव आ रहा है। यह परिवर्तन भारत में भी आ रहा है। भारतीय संस्कृति इतनी गौरवशाली और महान है कि एक भारतीय कही भी चला जायेगा फिर भी संस्कृति का मजबूत आधार उसकी रक्षा करेगा।

निष्कर्ष – अति आधुनिकतावादी मनोविज्ञान, अस्तित्ववादी जैसा व्यक्ति परक जीवन दर्शन, भौतिकतावादी और उसके दुष्परिणाम, धन की अतिरिक्त लालसा और उसकी पूर्ति हेतु पारस्परिक सम्बन्धों, रिश्तों में टूटन और अलगाव में परिणति, यह भारतीय संस्कृति का परिचायक नहीं है। एक व्यवस्थित, मर्यादित, सुखी, संतुष्ट भारतीय परिवार सम्बन्धों को बदलने और अन्तर्विरोधों में नहीं जीता, बल्कि परस्पर प्रेम, सौहार्द, त्याग द्वारा जीवन के श्रेय को पा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. परिवार और समाज डॉ. एस बघेल पृ. 49
2. परिवार और समाज डॉ. डी.एस. बघेल पृ. 49
3. कृतिका पत्रिका जन. जून माह 2009 पृ. 9
4. कृतिका पत्रिका जन. जून माह पृ. 9
5. कृतिका पत्रिका जन. जून माह पृ. 11

****

भारतेन्दु युग : साहित्यिक परिदृश्य

डॉ. शबनम खान *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य के इतिहास में 1850 से 1900 ई. तक के समय को 'भारतेन्दु युग' के नाम से जाना जाता है। इस काल का नामकरण भारतेन्दु हरिशचन्द्र के नाम पर उनकी साहित्यिक सेवाओं को देखकर किया गया है। वे भारतीयों की आकांक्षाओं और राष्ट्रीयता के प्रतीक थे। भाषा, भाव, विचार, बिम्ब आदि की दृष्टि से उन्होंने गद्य और काव्य दोनों विधाओं का नेतृत्व करने के साथ ही, भाषा के लिए बहुत कम किये है।

भारतेन्दु युग में साहित्य के क्षेत्र में एक अभूतपूर्व क्रांति हुई। इसका प्रमुख कारण यह है कि हिन्दी में पहली बार नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना और जीवनी जैसी विभिन्न विधाओं का लेखन प्रारंभ हुआ और हिन्दी गद्य को एक नई दिशा मिली। परिणामत: साहित्य में नए-नए विषयों, नए शिल्प और नए विचारों को शामिल किया गया।

आधुनिक काल को प्राय: अंग्रेजी राज्य से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति रही है। सन् 1707 ई. मुगल सम्राट औरंगजेब की मृत्यु के बाद भारतीय राजनीति में काफी उथल-पुथल हुई थी। यहाँ-वहाँ अभूतपूर्व परिवर्तन हो रहे थे। मुगल राज्य का पतन होने लगा था। इन तमाम परिस्थितियों के कारण देश में अंग्रेजी राज्य की स्थापना हुई और 1757 ई. के बाद के घटनाक्रम का अध्ययन करें तो साफ दिखाई देता है कि अंग्रेजी राज्य की जड़े फैलने लगी थी। जो अंग्रेज व्यापार करने आए थे वो शासक बन गये थे। दरअसल यह युग परिवर्तन का युग था। जब भी समाज में परिवर्तन होते है, तब वे वहां के जीवन, साहित्य और संस्कृति को दूर तक प्रभावित करते है। यहां भी ऐसा ही हुआ और यही वजह है कि इसे आधुनिक काल की संज्ञा दी गई।

हिन्दी साहित्य के इतिहास को देखे तो यह काल रीतिकाल के समापन का काल था। इस समय समाज में जो आश्चर्यजनक तरीके से परिवर्तन हो रहे थे, उनके बीच नारी विलासिता का साधन बनकर रह गई थी। बडे-बड़े कलाकार और संगीतज्ञ दिल्ली छोड़ रहे थे। कला और कविता आश्रयदाताओं की खोज में जुटी हुई थी। दिल्ली, मेरठ, आगरा और उसके आसपास के व्यापारी नये-नये व्यापार-केन्द्रों की तलाश करने में लगे थे।

इतिहास गवाह है कि जयपुर, जोधपुर, बनारस, पटना, लखनऊ और मुर्शिदाबाद आदि संगीत, कला, साहित्य, दस्तकारी और व्यापार के प्रमुख केन्द्रों के रुप में उभरकर सामने आये। संगीत में नए घरानों का सूत्रपात हुआ और चित्रकारी में भी नवीन शैलियों की खोज हो रही थी।

अंग्रेज अपने साथ भाषा, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, रेल, डाकतार, टेलिफोन, प्रशासन और शासन लेकर आए थे। उनके पास 'फूट डालो और राज करो' की नीति थी। भारतीय संस्कृति और साहित्य इन सब टकराहटों को देख रही थी। अब तक प्राचीन ब्रज भाषा का प्रयोग ही काव्य में किया जा रहा था परन्तु अब खड़ी बोली हिन्दी की ओर लेखकों का ध्यान आकर्षित हुआ। पूर्व की कविताओं के विषय भक्तिपूर्ण, राष्ट्रप्रेम और नायक-नायिकाओं के चित्रण तक सीमित थे, किन्तु अब यह चेतना जाग्रत हो रही थी कि साहित्य को समाज से जोड़ना चाहिए। 'साहित्य समाज का दर्पण है' केवल इतना कह देने से काम नहीं चलेगा। सामाजिक परिवर्तन के लिए समाज को जागना होगा और नई चेतना के स्वर फूँकने होंगे। नवीन परिस्थितियों और पाश्चात्य चिंतन के प्रभाव से गद्य लेखक की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी थी। यद्यपि बंगला साहित्य के साथ-साथ पाश्चात्य साहित्य भी अपनी जगह और जड़ें गहरी बना रहा था। आधुनिकता, जो अंग्रेजों के साथ हमारे जीवन में आई, वह भाषा के माध्यम से खड़ी बोली के गद्य में प्रचारित होने लगी थी। प्रेस के आ जाने से विचारों का आदान-प्रदान आसान हो गया था। यह आधुनिकता कलकता सिविलाईजेशन और फोर्ड विलियम कॉलेज के माध्यम से अधिक साकार हुई।

हिन्दी साहित्य में आधुनिकता का प्रयोग गद्य के माध्यम से हुआ, इसलिए आधुनिक काल को 'गद्य काल' की संज्ञा भी दी जाती है। भारतीय साहित्य अंग्रेजी राज्य के फलस्वरुप उत्पन्न नवीन परिस्थितियों, शक्तियों, संघर्ष और यूरोप से आए नए विचारों से गहराई तक प्रभावित हुआ। 19वीं और 20वीं शताब्दी में जो परिवर्तन हुए, उनमें शिक्षा और वैज्ञानिक आविष्कार प्रमुख थे। जिसके कारण जीवन-शैली में सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिवर्तन हो रहे थे। यह परिवर्तन बाह्य और अन्दरुनी दोनों तरह के थे। भारतीय जनमानस भी इन परिवर्तनों से प्रभावित हुआ। मध्ययुगीन परिवर्तन के बाद यह समय 'पूर्ण जागरण' का था। जनभावना के वैचारिक द्वन्द्व समाज में चल रहे थे। आधुनिक काल को साहित्य के अध्ययन की दृष्टि से दो भागों में बांटा जा सकता है। 19वीं शताब्दी को भी पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में विभक्त कर देख सकते है। गद्य के क्षेत्र में खड़ी बोली की परंपरा का प्रारंभ यही से होता है। लल्लूलाल, सदल मिश्र, ईंशा खाँ की रचनाओं का आविर्भाव, मिशनरियों के धार्मिक ग्रंथों की रचना, समाचार प्रकाशन, शिक्षा का इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति, भौतिक रसायन, प्रकृति विज्ञान और ज्योतिष जैसे ग्रंथों की रचना इस काल की प्रमुख विशेषता मानी जा सकती है। खड़ी बोली गद्य में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग हो रहा था। यद्यपि जिस बोली का प्रयोग इतिहास में किया जा रहा था, वह शुद्ध रुप से खड़ी बोली नहीं थी।

साहित्यिक परिदृश्य – साहित्य की विधाओं में उपन्यास और कहानियों के साथ ही निबंध, आलोचना और जीवन साहित्य के लेखन की शुरुआत हुई। यद्यपि कहानी या उपन्यास की विधि प्राचीन, पौराणिक कथाओं में मिलती है, किन्तु यह उसके समीप होकर भी उससे भिन्नता लिए हुए थी। इसका कारण यह है कि हिन्दी के उपन्यास लेखन पर पश्चिम का प्रभाव हो रहा था।

भारतेन्दुजी ने पौराणिक, ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यासों की ओर अधिक ध्यान दिया। 'चन्द्रप्रभा' और 'पूर्ण प्रकाश' उपन्यासों का अनुवाद उन्होंने स्वयं किया है। किशोरीलाल गोस्वामी ने 'त्रिवेणी', 'स्वर्गीय कुसुम',

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

'हृदय हारिणी', श्रीनिवास दास ने 'परीक्षा गुरु', बालकृष्ण भट्ट ने 'नूतन', 'ब्रह्मचारी' और 'सौ अजान एक सुजान', देवकीनंदन खत्री ने 'चन्द्रकान्ता', 'नरेन्द्र' आदि ग्रंथ लिखकर गद्य साहित्य को विकसित किया।'[1]

इस काल की उपन्यास कला अपनी प्राथमिक अवस्था में थी। 'सामाजिक चेतना, धार्मिक जागरुकता और राष्ट्रीय भाव की शिक्षा देना इस युग के साहित्यकारों का प्रमुख उद्देश्य रहा है। उपन्यास साहित्य की भांति भारतीय साहित्य का जन्म भी इसी युग में हुआ। हिन्दी साहित्य में एक प्रकार से नाटकों का अभाव ही था। उस समय रामलीला, पारसी थियेटर या रासलीलाएं ही प्रमुख रुप से मनोरंजन का साधन थी। इस युग के साहित्यकारों को हिन्दी साहित्य में जनता के शुद्ध मनोरंजन का अभाव खटक रहा था। इसलिए उन्होंने प्राचीन भारतीय नाट्य साहित्य की ओर ध्यान देना शुरु कर दिया था। इससे पूर्व महाराज विश्वनाथ सिंह कृत 'आनंद रघुनंदन', बाबू गोपालचंद्र गिरधर दास कृत 'नहुष' नाटक और राजा लक्ष्मण सिंह द्वारा अनुदित 'शकुंतला' नाटक जैसी उल्लेखनीय कृतियां लिखी जा चुकी थी।'[2]

भारतेन्दु काल में साहित्यिक निबंधों की रचना की दृष्टि से बालकृष्ण भट्ट और प्रतापनारायण मिश्र के नाम से उल्लेखनीय है। इनकी रचनाएँ स्व संपादित क्रमश: हिन्दी प्रदीपय और 'ब्राह्मण' पत्रों में प्रकाशित हुई, किन्तु इस काल के निबंधकारों का उपादान विषय विस्तार और शैली सीमित रही।

पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी सन् 1826 ई. में युगल किशोर शुक्ल द्वारा स्थापित परंपरा का विकसित रुप कहा जा सकता है। भारतेन्दु युग में प्रत्येक लेखक किसी न किसी पत्रिका का संपादक रहा है। पत्र-पत्रिकाओं में सुधारवादी आंदोलन और उससे संबंधित चिंतन, निबंध साहित्य को प्रोत्साहन दिया गया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा संपादित 'कविवचनसुधा', 'हरिशचन्द्र मैग्जीन' आदि, बालकृष्ण भट्ट द्वारा संपादित 'हिन्दी प्रदीपय', प्रतापनारायण मिश्र द्वारा संपादित 'ब्राह्मण' और प्रेमधन द्वारा संपादित 'आनंद कादम्बिनी' आदि पत्रों के नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय है।'[3]

समालोचना साहित्य का संबंध भी कुछ-कुछ पत्रों से है। प्रारंभ में समालोचना केवल समीक्षा के रुप में हो रही थी। 1877 ई. में श्रीनिवास दास के 'संयोगिता स्वयंवर' की आलोचना की गई। 1897 ई. में नागरी प्रचारिणी पत्रिका के प्रकाशन से हिन्दी समालोचना साहित्य की विशेष वृद्धि हुई एवं नूतन प्रणालियों का विकास हुआ।'[4]

उपसंहार – इस प्रकार भारतेन्दु काल में भारतीय समाज नई करवट ले रहा था और साहित्य में भी नये परिवर्तन की गूँज साफ दिखाई दे रही थी। इस काल में गद्य के साथ ही नई कविता धारा भी विकसित हो रही थी। ये कविता प्रकृति वर्णन से हटकर जीवन से जुड़ने लगी थी। कविता के नये-नये विषय खोजे जा रहे थे। काव्यगत राजनीतिक चेतना, देशप्रेम का संदेश दे रही थी और भारत के दु:ख दारिद्रय पर संताप प्रकट कर रही थी। शासन संबंधी और सुधारों जनसत्तात्मक प्रणाली की मांग की जा रही थी। इस काल की कविता में पारस्परिक भेदभाव भूलकर स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक जुट होने की प्रेरणा दी गई। काव्य भाषा के रुप में ब्रज भाषा प्रधान थी। यद्यपि भारतेन्दु हरिशचन्द्र की मृत्यु के बाद खड़ी बोली ने काव्य के क्षेत्र में पदार्पण शुरु कर दिया था। इस प्रकार भारतेन्दु काल का साहित्यिक परिदृश्य अपने पूर्ववर्ती समय से भिन्न नई दशा और दिशा में परिवर्तित हो गया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1)/सं. धीरेन्द्र वर्मा
2. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1)/सं. धीरेन्द्र वर्मा
3. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1)/सं. धीरेन्द्र वर्मा
4. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-1)/सं. धीरेन्द्र वर्मा

****

प्राचीन साहित्य में नारी चित्रण की पंरपरा

डॉ. शबनम खान *

प्रस्तावना – संसार की विभिन्न संस्कृतियों और सभ्यताओं के विकास में नारी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रत्येक युग में सभी राष्ट्रों में संस्कृति का मुख्य मापदण्ड भी नारी ही रही है। नारी की स्थिति में हर काल में परिवर्तन होते रहे है। सामाजिक परिवर्तन विकास के परिचायक होते है और ये परिवर्तन सामाजिक मान्यताओं के अनुरुप बदलते रहते है। इतिहास गवाह है कि सामाजिक मान्यताओं और समय में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार नारी की स्थिति में भी परिवर्तन होते रहे है। भारत में, विशेषकर प्राचीन भारत में नारी की सामाजिक स्थिति को लेकर परस्पर विरोधी बातें मिलती है। धर्मग्रंथ भारतीय संस्कृति के आधार है और विश्वसनीय प्रमाण भी। इनका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि इनमें भी नारी को लेकर परस्पर विरोधी बातें कही गई है। इसलिए किसी एक निष्कर्ष पर पहुंचने में कठिनाई होती है। प्राचीन भारतीय साहित्य की विशेषता यह भी है कि इसमें जिन नारियों का चित्रण भी किया गया है वे परिवार की है, गृहस्थ की है और घर–गृहस्थी के बाहर उनका संसार नहीं के बराबर दिखाई देता है। दूसरी विशेषता यह भी है कि मध्यम वर्ग की गृहणियों का उल्लेख कम ही हुआ है, किन्तु जो साहित्य उपलब्ध है उनके आधार पर नारी की स्थिति पर विचार किया जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में जिस प्रकार नारी का स्थान श्रेष्ठ माना गया है, उसी तरह साहित्य में उसे स्थान दिया जाता रहा है। संस्कृत महाकाव्यों से लेकर हिन्दी महाकाव्यों तक की लंबी परंपरा में नारी की अनिवार्य उपस्थिति रही है। साहित्य में नारी चित्रण की विकास परंपरा का अध्ययन वाल्मीकि की रामायण से प्रारंभ होकर आधुनिक काल तक फैला हुआ है। इस साहित्यिक विकास के अंतर्गत जहां एक ओर नारी स्वयं मूल्यांकन का कारण बनी है, तो दूसरी ओर अनेक साहित्यिक मान्यताओं को भी उसने जन्म दिया है। महाकाव्यों की परम्परा आदिकवि वाल्मीकि की रामायण से प्रारंभ मानी जाती है। वैदिक युग का साहित्य नारी चित्रण को लिए हुए है। वैदिककाल में नारी का स्थान सम्मानजनक था। माना जाता था कि जिस घर में नारी की पूजा होती है, या सम्मान होता है, वहां देवता निवास करते है। नारी को देवी, लक्ष्मी, अन्नपूर्णा आदिशक्ति कहा गया है। नारी के इन सभी रुपों का चित्रण वैदिक साहित्य में मिलता है।

रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने आदर्श परिवार नीति, धर्म और संबंधों की स्थापना की है। इसके माध्यम से उन्होंने भारतीय गृहस्थ जीवन और धर्म का, विस्तृत चित्रण किया है। आदर्श पिता, आदर्श माता, आदर्श पति, आदर्श पत्नी आदि सभी रुपों का अनुपम चित्रण इसमें मिलता है। डॉ. नगेन्द्र का विचार है कि रामायण में नीति के बंधन अत्यंत दृढ़ हो गए थे। स्त्री–पुरुषों की वरण संबंधी स्वतंत्रता कम हो गई थी। विशेषकर स्त्री, वरण में स्वतंत्र नहीं रह गई थी। यद्यपि स्वयंवर प्रथा अब भी प्रचलित थी, पर स्त्री के गुरुजन ही उसके योग्य पुरुष का चुनाव करते थे। रामायण का मूल उद्देश्य धर्म है, किन्तु भारतीय नारी के आदर्श रुप को यथा प्रसंग आदिकवि ने चित्रित किया है। रामायण की नारी अपने स्वभाव को, भक्ति, पाणिग्रहण को पीछे छोड़कर केवल उसके स्त्रीत्व को आगे रखने वाली प्रवृत्ति के साथ मिलती है। महाभारत हिन्दू संस्कृति का महान ग्रंथ है। इसमें भी धर्म और मर्यादा की चर्चा की गई है। यह भी बताया गया है कि जब–जब भी मर्यादाओं को तोड़ा जाता है तो समूची सभ्यता, संस्कृति का विनाश होता है। जहां तक नारी चित्रण का संबंध है, यहां नीति और आदर्श में शिथिलता देखी जा सकती है। इसके पात्रों की विशेषता यह है कि वे सब स्वाभिमानी है। 'गलती करने वाला अपनी गलती पर गर्व करता है, प्रेम करने वाला अपने प्रेम पर अभिमान करता है और घृणा करने वाला अपनी घृणा का खुलकर प्रदर्शन करता है।'[1]

यद्यपि सत्यवती और कुंती कुमारावस्था में ही संतान को जन्म दे देती है। द्रोपदी पांच पतियों की भार्या है, फिर भी कुंती और द्रोपदी तेजोमय नारियां है 'महाभारत' अपने आप की जीवनी शक्ति से परिपूर्ण वनस्पतियों और लताओं का विशाल वन है और इसीलिए महाभारत की नारी अपने नारीत्व पर अभिमान करती है'[2] रामायण और महाभारत के बाद कवि अश्वघोष के दो महाकाव्य ग्रंथ इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है। एक 'बुद्धचरित' और दूसरा 'सौन्दरान्द' प्राप्त हुए है। अश्वघोष का समय सन् ईस्वी की प्रथम शताब्दी में पड़ता है। कवि ने संसार की मोहक और आकर्षक नारी को इन महाकाव्यों में स्थान दिया है। इन्होंने नारी के आकर्षक और विकर्षक दोनों पहलुओं का चित्रण इसमें किया है। 'बुद्धचरित' एवं 'सौंदरानंद' में नारी का जो रुप चित्रित किया गया है, उसमें उसे वैराग्य मार्ग की बाधा के रुप में स्वीकार किया गया है। अश्वघोष के पश्चात् कालिदास के दो महाकाव्यों की रचनाएँ उस काल की उपलब्धि है। 'कुमारसंभव' और 'रघुवंश' इन दोनों ही महाकाव्यों में पुन: आदर्श नारी की प्राण प्रतिष्ठा की गई है। 'कुमारसंभव' के अंतर्गत कालिदास ने जिस पर्वत कन्या के प्रेम व्यापार की योजना की है, उसका जैसा विकास उचित था, वैसा ही इस ग्रंथ में किया गया है।

कालिदास के प्रेम निरुपण और चरित्रों को लेकर डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि 'जो प्रेम तपस्या से उत्पन्न होता है, वह स्थायी होता है और शुभ भविष्य का बीज लेकर आता है। शिव पार्वती के प्रेम में कालिदास ने इसी महान सिद्धांत का प्रतिपादन किया है।''परन्तु सर्वत्र उनकी रचना सुष्मित है। कुमार या काम की पराजय नारी के आंतरिक प्रेम का पराभाव नहीं, बल्कि उसकी महिमा को और भी उज्जवल, और भी सरस तथा और भी महान बनाने वाला है।'[3]

'रघुवंश' भी नारी की गौरवगाथा से परिपूर्ण है। दिलीप के साथ सुदक्षिणा के तपोमय जीवन का वर्णन कर कालिदास ने नारी को भी सहधर्मिणी, सहचरी और पुरुष की समभागिनी सिद्ध किया है। 'आज के विलाप के अंतर्गत कालिदास ने जहां एक ओर इन्दुमती के प्रति आज का

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रेमभाव प्रकट किया है, वहीं वे नारी को गृहिणी, सचिव, सखी और प्रिय शिष्या बताने में भी नहीं चूके है।'[4]

वैसे भी कालिदास नारी सौन्दर्य के सजीव वर्णन के चितेरे रहे है। उन्होंने नारी के श्रृंगारिक रुप का ही चित्रण नहीं किया, वरन् नारी की महिमा को भी कभी खंडित नहीं होने दिया है। संस्कृत के महाकाव्यकारों में कालिदास के बाद भारवि का नाम आता है। इन्होंने 'किरातार्जुनीय' ग्रंथ की रचना की है। इनके अलावा 'भट्टिकाव्य' के रचयिता भट्टी, 'जानकीहरण' के रचनाकार कुमारदास, 'शिशुपाल वध' के कवि माघ आदि के नाम आते है। श्री हर्ष का नाम भी उल्लेखनीय है, जिन्होंने 'नेषधीय चरित्र' की रचना की है। इस काल की रचनाओं में भी नारी चित्रण मिलता है। नारी का जो रुप और चरित्र इन ग्रंथों में वर्णित है, वह भारतीय नारी के आदर्श रुप को प्रस्तुत करता है।

इस काल में संस्कृत के साहित्य का बोलबाला था। कवियों की रुचि नारी के सौन्दर्य को लेकर अधिक दिखाई देती थी। बाह्य सौन्दर्य के अतिरिक्त इस काल के कवियों ने नारी के आंतरिक सौन्दर्य, आदर्शरुप और मर्यादा को अधिक स्थान दिया है। वैसे कालिदास के बाद का अधिकांश साहित्य रामायण और महाभारत के प्रसंगों पर आधारित है। इसके अतिरिक्त इस काल की उल्लेखनीय कृतियों में वात्स्यायन के 'कामसूत्र' का नाम आता है। इस काल के अधिकतर कवि अपने आश्रयदाता की संतुष्टि के लिए रचना कर रहे थे, इसलिए उन्हें अपने आश्रयदाता की इच्छानुसार रचना करनी पड़ती थी। ऐसे ग्रंथों में नारी के सौन्दर्य और उसके कामिक रुप का चित्रण अधिक रुचि के साथ मिलता है। ये रचनाएँ आवेग और कल्पना पर आधारित थी। डॉ. नगेन्द्र के मतानुसार 'स्त्री-पुरुष का संबंध वैभव और विलास के इस युग में, शरीर की आवश्यकता नहीं थी। वह मन का विलास था, इसलिए इसमें तीव्रता और उत्कंठता के स्थान पर माधुर्य और मृसणता मिलती है।'[5]

उपसंहार – इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन भारत में नारी को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। इस काल के साहित्य में भी उसे वही स्थान दिया गया है। रामायण, महाभारत, बौद्ध, जैन आदि ग्रंथों में नारी के आदर्श रुप का ही चित्रण मिलता है। समाज में नारी को धीरे-धीरे दोयम दर्जे पर रखा जाने लगा था, इसके संकेत भी उन ग्रंथों में मिलते हैं। पर यह तय है कि नारी को साहित्य में, हर युग में स्थान दिया जाता रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संस्कृत साहित्य की रुपरेखा – डॉ. व्यास
2. हिन्दी साहित्य की भूमिका – डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी
3. संस्कृत के महाकाव्यों की परंपरा, पृ. 12
4. संस्कृत के महाकाव्यों की परंपरा, पृ. 12
5. देव और उनकी कविता – डॉ. नगेन्द्र

****

साहित्य में व्यंग्य की प्रासंगिकता

डॉ. सुदामा प्रसाद धूमकेती *

शोध सारांश – व्यंग्य केवल हंसाने का कार्य न कर सतसैया के दोहों की भांति गंभीर घाव करने वाला होता है। इसका उद्देश्य मात्र मनोरंजन न होकर अभीष्ट बांकपन लाना है। यह श्रोता और पाठक के मानस पर ही नहीं व्यक्ति, समाज, दल आदि के मन में टीस उत्पन्न करते हुए आश्रय को उचित मार्ग पर लाने का माध्यम है। यह मानवीय कमजोरियों, दुर्बलताओं, दोषों, कमियों आदि को दूर करने में सहायक का काम करता है। व्यंग्य व्यक्तिगत राग द्वेष से ऊपर होता है यह पूर्णत: विकासात्मक और सुधारात्मक है। प्रमुख व्यंग्य लेखकों में परसाई , शरद जोशी ,श्री लाल शुक्ल आदि के नाम लिए जाते हैं। हास्य व्यंग्य लेखकों में बेढब बनारसी का भी नाम है जिन्होंने अपने निबंधों द्वारा इस दिशा में पहल की, यद्यपि उनका उद्देश्य प्रकाश्य रूप में हंसी और विनोद का सृजन था फिर भी परोक्ष रूप से राजनीति और समाज की विसंगतियों पर वे गहरा व्यंग्य करते थे। व्यंग्य का सम्बन्ध समाज और व्यक्ति दोनों के जीवन से हो सकता है। किन्तु मूलत: सामाजिक जीवन से ही अधिक होता है। व्यंग्य का आलंबन व्यक्ति भी प्राय: सामाजिक अन्तर्विरोधों का प्रतीक होता है। इसलिए यह देखने में आता है कि सामाजिक जीवन अनुभव और सामाजिक दृष्टि वाले कवि व्यंग्य विधान में अधिक प्रवृत्त और सफल होते हैं। ये जीवन की बनावट अन्याय, विषमता, अव्यवस्था, अपवित्रता, और षोषण को दूर करके सामाजिक जीवन को लोकमंगल की भूमि पर प्रतिष्ठापित करने का प्रयत्न है।

प्रस्तावना – साहित्य में यद्यपि व्यंग्य एक प्राचीन विधा है। खासकर प्राचीन साहित्य में भी व्यंग्य के पर्याप्त उदाहरण देखे जा सकते हैं रवीन्द्रनाथ त्यागी, शरद जोशी जैसे व्यंग्यकारों ने अपनी प्रतिभा के बल पर व्यंग्य लेखन को जो विस्तार दिया है उसी का परिणाम है कि आज व्यंग्य लेखन की अनेक धाराएं फूटी हैं व्यंग्य लेखन साहित्य और पत्रकारिता की अद्यतन विधा है, को नवीन एवं जनप्रिय रूप प्राप्त हो चुका है अपितु भक्तिकाल का साहित्य तो कई अर्थों में व्यंग्य साहित्य ही है। इसके सबसे प्रमुख हस्ताक्षर कबीर हैं लेकिन एक स्वतंत्र विधा की तरह व्यंग्य को मान्यता आधुनिक काल में ही मिली है हरिशंकर परसाई श्री लाल शुक्ल आज के पत्र पत्रिकाओं में नित्य स्थान पा रहे हैं व्यंग्य विधा काव्य की अपेक्षा गद्य को अधिक महत्व देती है।

व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक रचना है जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों दुर्बलताओं करनी एवं कथनी के अंतरों की समीक्षा, निन्दा भाषा को टेढी भंगिमा देकर अथवा कभी कभी पूर्णत: सपाट शब्दों में प्रहार करते हुए की जाती है। वह पूर्णत: अगंभीर होते हुए भी गंभीर हो सकती है। अतिश्योक्ति तथा अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णत: सत्य हो सकती है। व्यंग्य में आक्रमण की स्थिति अनिवार्य है। साथ ही सुधार की दृष्टि भी अनिवार्य होनी चाहिए। मुक्तिबोध के शब्दों में कहें तो व्यंग्यकार की दृष्टि कुछ ऐसी होती है जैसी दुनिया है उससे बेहतर चाहिए। सारा कचरा साफ करने को मेहतर चाहिए।। कबीर के समय में समाज में असंतोष का बोलबाला था ऐसे ही समय में कबीर के द्वारा व्यंग्य का आर्विभाव हुआ व्यंग्य असंतोष की वजह से ही उत्पन्न हुआ है परन्तु यह संवेदनशील और करूण हृदय के असंतोष की प्रतिक्रिया के रूप में उपजता है कबीर भी अपने समय में प्रचण्ड व्यंग्य करते थे और सुनने वालों को तिलमिला कर रख देते है।पर किसी का मजाक उड़ाने या उपहास करने के लिए नहीं बल्कि उसे सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने के लिए। कबीर का सम्पूर्ण व्यंग्य करूणा से उपजा है अक्खडता तो सिर्फ उसकी ढाल है। वह चूंकि चेतना के धरातल पर जगे हुए थे और विसंगतियों एवं मूढ़ताओं को समझते थे और उस पर प्रहार करना जरूरी मानते थे।

साहित्य में व्यंग्य का महत्व और प्रमुख रचनाकार – साहित्य में हास्य तो रस का भेद बनकर अत्यन्त प्राचीन काल से ही अपनी सत्ता जमाये हुआ है, किन्तु व्यंग्य का उन्मेश आधुनिक काल में ही हुआ। व्यंग्य का अस्तित्व पहले नहीं था ऐसी बात नहीं, वह पहले भी था किन्तु हास्य के अन्तर्गत ही था। हास्य अपनी मूल प्रकृति में बहुत निश्छल होता है वह किसी का जी दुखाये बिना आलंबन की विचित्रता का चित्रण कर एक आहलाद प्रदान करता है, वह किसी को कचोटता नहीं खुला सुख देता है इसलिए व्यंग्य उसमें खोकर भी अपनी स्वतंत्र सत्ता उभार नहीं पाता। व्यंग्य की कथ्य की असंगतियों का पर्दाफाश कर चोट करता है। यह चोट हल्का हल्का हंसाती भी है और बेचैन भी करती है। व्यंग्य का सम्बन्ध समाज और व्यक्ति दोनों के जीवन से हो सकता है। किन्तु मूलत: सामाजिक जीवन से ही अधिक होता है। व्यंग्य का आलंबन व्यक्ति भी प्राय: सामाजिक अन्तर्विरोधों का प्रतीक होता है। इसलिए यह देखने में आता है कि सामाजिक जीवन अनुभव और सामाजिक दृष्टि वाले कवि व्यंग्य विधान में अधिक प्रवृत्त और सफल होते हैं। भारतेंदु काल के सारे लेखकों ने व्यंग्य का सहारा लिया फिर प्रगतिवाद ने व्यंग्य की ओर भरपूर दृष्टिपात किया और नयी कविता में तो प्रमुखत: व्यंग्य कविता ही बन गयी।

भारतेंदु युग में हास्य एवं व्यंग्यात्मक कविताओं की भी प्रचुर मात्रा में रचना हुई। पश्चिमी सभ्यता विदेशी शासन सामाजिक अंधविश्वासों रूढियों आदि पर व्यंग्य करने के लिए कवियों ने विषय और शैली की दृष्टि से अनेक नये प्रयोग किये। इस दिशा में भारतेंदु का योगदान सर्वाधिक है।अपने नाटकों के प्रगीतों में कहीं कहीं शिष्ट हास्य को स्थान देने के अतिरिक्त उन्होंने व्यंग्य नीतियों और मुकरियों की भी रचना की है।इस काल के व्यंग्यकारों में प्रेमधन और प्रताप नारायण मिश्र हैं। भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग का आगमन हुआ इसमें व्यंग्य के विषय राजनीतिक शोषण, सामाजिक कुरीतियां,

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ज. मु. चौ. महिला महाविद्यालय, मंडला (म.प्र.) भारत

धर्माडम्बर, लकीर की फकीरी, विदेशीयता का अंधानुकरण, फैशनपरस्ती, व्यभिचार आदि हैं। आचार्य द्विवेदी ने'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं' में कल्लू अल्हैत के माध्यम से गांव को छोड़कर शहर जाने वाले तथा विदेशी सभ्यता का अंधानुकरण करने वाले लोगों की हास्यास्पद स्थिति का चित्रण किया गया है। बालमुकुंद गुप्त इस युग के सबसे बडे सशक्त व्यंग्यकार हैं।इन्होंने तत्कालीन वाइसराय लार्डकर्जन को अपने व्यंग्य और हास्य का प्रमुख आलंबन बनाया– हमसे सच की सुनो कहानी। जिससे मरे झूठ की नानी।। सच है सभ्य देश की चीज। तुमको उसकी कहां तमीज।।

छायावादोत्तर काल में कवि निराला व्यंग्य की ओर विशेष रूप से प्रवृत्त हुए सामाजिक जीवन के अनुभवों और लोक दृष्टि से सम्पन्न होने के कारण निराला में शुरू से ही व्यंग्य का स्पर्श मिलता है, किन्तु बाद में चलकर उन्होंने कुकुरमुत्ता, मास्को डायलाग्स, गर्म पकोड़ी प्रेम, संगीत आदि उत्कृष्ट व्यंग्य कविताएं लिखीं ये कविताएं प्रगतिशील धारा में समाहित की जा सकती हैं। निराला की इन कविताओं की परम्परा में प्रगतिशील कवि नागार्जुन त्रिलोचन और रामविलास शर्मा की बहुत सी कविताएं देखी जा सकती हैं इनमें नागार्जुन का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।नागार्जुन में सामाजिक जीवन के अनुभवों प्रगतिशील दृष्टि और राजनीतिक चेतना का सुंदर समन्वय है, इसीलिए वे हमारे सामाजिक और राजनीतिक जीवन के बीच व्याप्त भयंकर विसंगतियों और अर्न्तर्विरोधों को पहचान लेते हैं। उनकी प्रगतिशील दृष्टि इन विसंगतियों के उद्घाटन में एक ओर शोषक व्यक्ति और समाज के आचरण मूल्य के अलगाव पर चोट करती हैं तो दूसरी ओर शोषित के प्रति दर्द जगाती है।

नयी कविता और विशेषतया परवर्ती नयी कविता की प्रकृति ही व्यंग्यात्मक है कारण यह है कि स्वाधीनता परवर्ती भारतीय समाज निरंतर विसंगतियों से त्रस्त होता चला गया। कथनी और करनी , आचरण और मूल्य के बीच विरोध बढता गया।अनुभव पर बल देने के कारण नई कविता में उन आदर्शों या मूल्यों की स्थापना करने से इंकार कर दिया जो व्यवहार में न उतारकर केवल ऊपर टंगे हुए थे। कवि की यथार्थवादी दृष्टि हमारे सामाजिक राष्ट्रीय और व्यक्तिगत जीवन के जटिल अन्तर्विरोधों के उद्घाटन के लिए व्यंग्य का सहारा लेकर चली, इसलिए व्यंग्य नई कविता की मूल प्रकृति बन गया। अज्ञेय, मुक्तिबोध, भारती , भवानीप्रसाद मिश्र ,रधुवीर सहाय, भरतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, सर्वेश्वरदयाल, विजयदेवनारायण साही आदि सभी प्रमुख कवियों में व्यंग्य मिलता है। अज्ञेय की सांप और भवानी प्रसाद मिश्र की गीतफरोश इस धारा की दो बहुत प्रसिद्ध व्यंग्य कविताऐं हैं। हास्य व्यंग्य लेखकों में बेढब बनारसी का भी नाम है जिन्होंने अपने निबंधों द्वारा इस दिशा में पहल की, यद्यपि उनका उद्देश्य प्रकाश्य रूप में हंसी और विनोद का सृजन था फिर भी परोक्ष रूप से राजनीति और समाज की विसंगतियों पर वे गहरा व्यंग्य करते थे। श्रीनारायण चतुर्वेदी ने भी विनोद शर्मा के छदमनाम से राजभवन की सिगरेटदानी में परिपक्व व्यंग्य प्रतिभा का परिचय दिया है। वर्तमान व्यंग्यकारों में हरिशंकर परसाई, केशवचंद्र वर्मा, लक्ष्मीकांत वर्मा, भीमसेन त्यागी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शरदजोशी, नरेन्द्रकोहली आदि ने भी काफी संख्या में व्यंग्यात्मक निबंधों की सृष्टि की है। इनमें परसाई का नाम प्रमुख है। उनके व्यंग्य सामान्यत: मूल्यगत विसंगतियों से सम्बद्ध होते हैं।

निष्कर्ष – मूल्य चाहे राजनीतिक हों चाहे सांस्कृतिक या पीढ़ीगत, केशवचंद्र वर्मा, रवीन्द्रनाथ त्यागी, प्रभृति लेखकों ने व्यंग्य लेखन की यही पद्धति अपनायी।परसाई कहते हैं कि व्यंग्य एक गंभीर चीज है हंसने हंसाने की चीज नहीं । व्यंग्य निष्पक्ष ईमानदारी के बिना पैदा नहीं हो सकता और यह ईमानदारी अपने युग के प्रति जीवन मूल्यों के प्रति होनी चाहिए। एक व्यंग्कार को अपनी रचना में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए 1 संवेदनशीलता 2 कल्पनाशीलता 3 व्यापकता 4 युगबोध और युगचेतना 5 भाषा शैली आदि। व्यंग्य पढ़कर सुनकर हंसी आ जाना प्रासंगिक भर होता है, पर उसका अभीष्ट नहीं। व्यंग्यकार का मानवीयता और मानव जीवन से गहरा सरोकार होता है।

व्यंग्य वह औजार है जो जीवन के झाड झंखार को दूर करता है, समाज की वह विसंगति,अन्याय,अत्याचार,अनाचार, मिथ्याचार, पाखण्ड, दोमुंहापन और दंभ जो घातक है, अशिव है इन सब पर यह प्रहार करती है, यह चोट प्रहार सात्विक होती है और ऐसी सात्विकता, मानवीय करूणा और सरोकार से ही उपज सकती है। व्यंग्य लेखन में कल्पनाशीलता का सहारा ज्यादा दूर तक नहीं लिया जा सकता। व्यंग्य विकट यथार्थ के अनुभव से ही पैदा होता है यदि उसमें कल्पनाशीलता का समावेश कर व्यंग्य पैदा करने की कोशिश की गई तो वह रचना हास्यास्पद हो जायेगी उसमें धार तो कभी आ नहीं सकती। परसाईजी का व्यंग्य लगभग पूरा का पूरा खुद के अनुभव पर आधारित है और इसीलिए उसकी रचनाओं में वह धार है। इस अर्थ में व्यंग्य साहित्य की अन्य सभी विधाओं से विशिष्ट है। कविता कल्पना के आधार पर, विशुद्ध कल्पना पर आधारित होती है उपन्यास और कहानी में व्यंग्य पैदा करने के लिए ठोस अनुभव चाहिए इसके बिना काम नहीं चल सकता। व्यंग्य लेखन के लिए युग चेतना और युगबोध का बोध होना आवश्यक है। कबीर को अपने समय की युग चेतना और युग सत्य की समझ थी, यह समझ हरिशंकर परसाई में भी थी। युग चेतना और युग सत्य जब इतिहास से टकराते हैं तो उससे अवांछनीय और अवरोधक तत्व खत्म होने लगते हैं। बीसवीं शताब्दी के जिन दो हिन्दी साहित्यकारों को उनके जीवंत और सक्रिय युगबोध के आधार पर सबसे बड़ा व्यंग्यकार माना जाता है वे हैं प्रेमचंद और परसाई । प्रेमचंद स्वतंत्रता पूर्व के युगबोध के सबसे सशक्त साहित्यिक प्रतिनिधि हैं, तो परसाई स्वतंत्रता पश्चात के युगबोध के।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास –डॉ नगेन्द्र
2. आजकल साहित्यिक पत्रिका –संपादक सुभाष सेतिया
3. उपकार सिविल सर्विसिज हिन्दी –डॉ राजेश्वर प्रसाद
4. निबंध एवं अन्य विधाएं सम्पादक –शशिप्रभा पाण्डेय म प्र हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
5. srijanshilpi.com
6. प्राचीन हिन्दी काव्य– मप्र हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
7. हिन्दी साहित्य का अतीत – आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

****

तकनीकी शब्दावली का महत्व

डॉ. वंदना अग्निहोत्री *

शोध सारांश – तकनीकी शब्दों का अर्थ कभी-कभी एक-दो षब्दों में समेट पाना संभव नहीं हो पाता, कुछ अर्थ संरचना स्पष्ट करती है और शेष उसकी परिभाषा । ऐसी स्थिति में परिभाषा की अनिवार्यता ही शब्दों को परिभाषिक बनाती है। भारत में इसकी परम्परा बहुत प्राचीन है। समय-समय पर वैयाकरणों, नैयामिकों तथा मीमांसकों ने गंभीर चिंतन-मनन किया। यही कारण है कि दर्शन शास्त्र की शब्दावली की दृष्टि से आज भी विश्व हमारी ओर देखता है। व्याकरण का सूक्ष्म चिंतन शिक्षा ग्रन्थों में किया गया। मुगलकाल में भी हमारे प्राचीन शास्त्रों के अरबी-फारसी में अनुवाद कराए गए।

प्रस्तावना – हिन्दी के वर्तमान शब्द भण्डार में वैज्ञानिक धारणाओं को व्यक्त करने की अनन्त संभावनाएँ हैं और यही कारण है कि हमारी वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दावली के बहुत बडे भाग को इस शब्द भंडार ले लेना संभव हो सका है। जनता तक ज्ञान-विज्ञान की जानकारी पहुँचाने और जनता के दैनिक जीवन में अमली स्थान दिलाने के लिए आवश्यक है कि भाषा में प्रयुक्त होने वाली शब्दावली बोलने-लिखने और समझने में आसान हो। स्वतन्त्र देश की अपनी निजी राजभाषा में पारिभाषिक शब्दों का महत्व एवं उपयोगिता और अधिक हो जाती है, क्योंकि शासन सम्बन्धी सभी कार्य उसकी अपनी भाषा में होते है। इस दृष्टि से हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली का महत्व बहुत अधिक है।

उपयोगिता– जब भी कोई देश विकासोन्मुख होता है तो आधुनिकीकरण की प्रक्रिया तेज हो जाती है और देश के विकास के साथ भाषा का विकास भी होता है। भाषा मनुष्य की अभिलाषाओं, भावनाओं के अनुरूप और सांस्कृतिक प्रगति के साथ बढती है। माधुर्य सूक्ष्मता, शक्ति, स्पष्टता एवं ओज से सम्पन्न होना जीवित भाषा का अनिवार्य लक्षण है। नेहरूजी का विश्वास था कि 'अगर भाषा शक्तिशाली और जोरदार होती है तो उसका इस्तेमाल करने वाले लोग भी वैसे ही होते है। अगर वह छिछली, लच्छेदार और पेचीदा है तो उसे बोलनेवाली प्रजा में वही लक्षण देखने को मिलेंगे।'1 महाकवि अज्ञेय मानते है- 'भाषा कल्पवृक्ष है। जो उससे आस्थापूर्वक मॉगा जाता है। भाषा वही देती है।'2

तकनीकी शब्द ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में विशिष्ट और सुस्पष्ट ढंग से अर्थ के संदर्भ में परिभाषित करने का दायित्व लेते हैं, ताकि शब्द जो कुछ व्यक्त करें वह वक्ता और श्रोता दोनों केा स्पष्ट हो।

भाषा के माध्यम से मनुष्य अपने विचारों को एक दूसरे तक सम्प्रेषित करते है। भाषा की प्रकृति व्यक्ति प्रधान न होकर सामाजिक है और सभी विकल्प होते हुए भी वह समाज में समझ ली जाती है। 'भाषा की प्रकृति उसके दोनों पक्षो भाषा व्यवस्था और भाषा-व्यवहार को ठीक-ठीक उद्घाटित करती है। और बोधगम्य कराती है।'3

ज्ञान के क्षेत्र में सामाजिक भिन्नता के आधार पर पर्याप्त वैविध्य देखने को मिलता है 'आज के इस आधुनिक युग में कोई समाज विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान की उत्पत्ति न भी करे, उसे अन्य आधुनिक देशों से ज्ञान अवश्य प्राप्त करना पडता है और इसी से वह सांसारिक विकास से जुड पाता है।'4 जब हमारे पास शब्द होते है, हम अनुवाद करते हैं, शब्द न होने की स्थिति में केवल शब्द निर्माण करते है।

रसायन विज्ञान, भैतिकी, दर्शनशास्त्र, राजनीति विज्ञान आदि जैसे ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के विशिष्ट शब्द परिभाषिक तकनीकी शब्द कहलाते है। प्रत्येक शब्द का केवल एक विशिष्ट अर्थ होना चाहिए, ताकि अर्थ संप्रेषित करने वाले शब्द में द्वयर्थकता न हो। 'पारिभाषिक शब्द अर्थपरक् भाव परक अथवा वैचारिक शब्द होते है।'5 इनकी परिभाषा अथवा व्याख्या प्रस्तुत करना अपेक्षित होता है। Head (सिर) शरीर रचना विज्ञान से सम्बद्ध हैं। किन्तु मुहावरों में सिर चकराना, सिर फिरना मूल शब्द सिर से भिन्न है कई बार एक ही शब्द भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने के कारण अलग-अलग अर्थ में भी प्रयोग किया जाता है।

इंजीनियरिंग में- Plant (संयत्र) ऊर्जा सूयंत्र सूचक

उद्यान-विज्ञान में - Plant (पादप) अंकुर का सूचक जो बीज से फूटता है। तकनीकी शब्दावली एवं सामान्य शब्दावली में विशेष अन्तर है। विज्ञान की भाषा पानी H_2O जबकि साहित्यिक भाषा में कहीं जल कहीं उदक हो सकता है, किन्तु इससे यह आशय नहीं है कि जन-सामान्य की भाषा में विज्ञान की बाते नहीं समझायी जा सकती विज्ञान में तथ्य निरूपण के कारण शब्दों का तथ्यात्यक रूप ही स्वीकार किया जाता है। जबकि साहित्य में भाषा का भावात्मक एवं रागात्मक स्वरूप स्वीकार होता है।'6 आक्सीजन को कई शती पूर्व (Vital Air) प्राणवायु कहा जाता रहा है। विज्ञान की भाषा की विशेषता है सांक्षिप्तता सटीकता जब शब्द अधिक व्यवहार में आते हैं तो भाषा में रच-पचकर रह जाते है। पोटाश, और नाईट्रोजन आज भारतीय किसान तक पहुँच गया है। वेग भौतिक में उद्दीपन मनोविज्ञान में तथा अनु क्रिया रसायन शास्त्र मे भिन्न अर्थ रखते है। गणित में प्रयुक्त सांख्यिकी अब अलग से स्टेटिक्स के लिए, शास्त्र के लिए प्रयुक्त होता है।

भाषाविद् ब्लूमफील्ड ने कहा है- 'तकनीकी शब्द लम्बे वाक्याशों या व्याख्यात्मक विवरण का स्थान ले लेते है जिनका अर्थ सर्व सम्मत परिभाषा से सुनिश्चित होता है, केवल उसी अर्थ में वैज्ञानिक जगत में उसका सर्वत्र प्रयोग किया जाता है।'7

तकनीकी शब्दों का प्रयोग सामान्य बोलचाल की भाषा में न होकर किसी अर्थ विशेष के संदर्भ और संकेत रूप में ही हुआ करता है। डॉ. राजेश के शब्दों में देश के संविधान में हिन्दी राजभाषा घोषित कर दी गई है अत:

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग की सीमा दैनिक व्यवहार एवं औपचारिक लिखन-पढन एवं विचार-विनियम के लिए भी दिनोंदिन बढती जा रही है।'[8]

जीवन में नए-नए अविष्कारों एवं अनेकानेक नई वस्तुओं के आने से तत्सम्बन्धी क्रियाओं और विचारों में नए-नए शब्दों का प्रवेश होता जा रहा है। परिणाम स्वरूप अन्य विदेशी भाषाओं तथा अंग्रेजी के अनेक शब्द हिन्दी शब्दावली के प्रमुख अंग बन गए है। तकनीकी शब्दों को उसके उपयुक्त संदर्भ में समझना पडता है। सामान्य व्यक्ति तब तक इसका अर्थ नहीं निकाल पाता जब तक उसने विषय को पढा न हो। यही कारण है कि 'कानूनी भाषा अथवा तर्क की भाषा, अथवा समुद्री जीव-विज्ञान जैसे विशिष्ट विषयों को समझना कठिन होता है, क्योंकि उस विषय की भाषा की अपनी प्रकृति होती है।'[9] उदाहरणार्थ जीवविज्ञान के शब्द कशेरूक शब्द यदि दस बार आए तो एक बार 'प्राणी' रीढ की हड्डी वाले प्राणी प्रयोग करके नौ बार परिभाषिक शब्द का प्रयोग करना पडेगा। यदि शब्द का लगातार प्रयोग किया जाए तो वह सरल हो जाता है। रेण्डम हाउस डिन्शनरी में लिखा हैं 'विशिष्ट विषय जैसे विज्ञान अथवा कला विषय की तकनीकी अभिव्यक्ति के लिए निश्चित अथवा विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त एक शब्द अधिकांशत: कला का शब्द'[10] डॉ. भोलानाथ तिवारी ने भी लिखा है पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते है जो सामान्य भाषा व्यवहार के शब्द न होकर ज्ञान के विविध क्षेत्रों (जैसे रसायन, भौतिकी, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि) के होते है तथा विशिष्ट ज्ञान-विज्ञान या शास्त्र में जिनकी अर्थसीमा परिभाषित या निश्चित रहती है।'[11] विज्ञान की विभिन्न शाखाओं की अपनी शब्दावली होती है, जिनका अध्ययन अनिवार्य है। वह शब्दावली आनेवाली पीढियों के लिए है। देवेन्द्रनाथ शर्मा ने यही कहा है-'वस्तुत हमें भूलना न चाहिए कि जो शब्दावली तैयार की जा रही है, वह इस पीढी के लिए नहीं बल्कि आने वाली पीढियों के लिए है नव वयस्क बच्चे काफी सुगमता और सुविधा से हिन्दी शब्दों को सीख रहे है फीजिक्स सुनने के आदी कानों को भौतिकी में काई अस्वाभाविकता नहीं लगती। भूत पंचभूत कौन नहीं जानता फिर उसे भौतिकी बनाने में क्या उलझन है। इसी प्रकार लिग्विस्टिक्स की अपेक्षा भाषिकी शब्द कही अधिक सार्थक और सहज है।'[12]

तकनीकी शब्दावली निर्माण में अल्पाक्षरता, असंदिग्धता, सुबोधता तथा शुद्धता का ध्यान रखा जाना आवश्यक है। प्रत्येक शब्द के गुण, अवगुण, उसकी व्यंजना और शक्ति व्यापकता तथा प्रसार को समझकर ही शब्द निर्मित करना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित एवं स्वीकृत शब्दों का जबरन अनुवाद करना ठीक नहीं। उन्हें यथावत स्वीकार लेना ही ठीक है। नए शब्द बनाने में स्त्रोत भाषा की ध्वनि व्यवस्था, उच्चारण आदि के पक्षो पर विचार कर लिप्यंतरण करना चाहिए इसके लिए समन्वय वादी सिद्धान्त अपनाना चाहिए 'उसे अनुकूलन प्रक्रिया द्वारा अपनी भाषा की प्रकृति के अनुकूल किया जाता है जैसे अंग्रेजी का एकेडमी अकादमी बन जाता है।'[13]

निष्कर्षत: कानून, विधान, चिकित्सा, उद्योग, व्यापार, शिल्प, विज्ञान, धर्म, कारीगरी, दस्तकारी आदि से सम्बन्धित शब्दावली सरल व सुबोध होनी चाहिए।

1. अनुवाद प्रक्रिया स्वरूप डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया पृ.36
2. अनुवाद के विविध आयाम डॉ. पूरनचन्द्र टंडन एवं हरिश कुमार सेठी पृ.195
3. अनुवाद प्रक्रिया और स्वरूप डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया पृ.109, 110
4. अनुवाद के विविध आयाम डॉ. पुरनचन्द्र टंडन पृ.198
5. प्रयोजन मुलक हिन्दी प्रक्रिया और स्वरूप डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया पृ.197,200
6. हिन्दी भाषा का इतिहास डॉ. राकेश पृ.167
7. अनुवाद के विविध आयाम डॉ. पूरनचन्द्र टंडन हरिशकुमार सेठी पृ. 205
8. Chambers technical Dictionary – page. 48
9. अनुवाद विज्ञान डॉ. भोलानाथ तिवारी पृ.215
10. राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याएँ और समाधान डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा पृ.63
11. प्रयोजन मूलक हिन्दी डॉ. माधव सोनटक्के पृ.04

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनुवाद प्रक्रिया और स्वरूप डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया
2. अनुवाद के विविध आयाम डॉ. पूरनचंद्र टंडन एवं हरिश कुमार सेठी
3. प्रयोजनमूलक हिन्दी प्रक्रिया और स्वरूप डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया
4. हिन्दी भाषा का इतिहास डॉ. राकेश
5. अनुवाद विज्ञान डॉ. भोलानाथ तिवारी
6. राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याओं और समाधान डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा
7. प्रयोजन मूलक हिन्दी डॉ. माधव सोनटक्के

****

जनवादी रचना के प्रतीक : नागार्जुन - एक विश्लेषण

डॉ. रशीदा खान *

प्रस्तावना - नामवर सिंह ने नागार्जुन की कविताओं पर बातचीत करते हुए एक जगह उल्लेख किया है कि 'जो वस्तु औरों की संवेदना को अछूती छोड़ जाती है वही नागार्जुन के कवित्व की रचना भूमि है।' (नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ पृ. 5) नागार्जुन की यह एक विरल काव्यगत विशेषता रही है, जिसके कारण उनकी कविताओं के विशाल फलक पर जीवन के विविध चित्र अंकित मिलते हैं। सच तो यह है कि इसे हम अनायास या आकस्मिक नहीं कह सकते। क्योंकि नागार्जुन समाज और जनजीवन के कुशल चितेरे थे। यही उनके साहित्य का आधार था। जिनके लिये उन्होंने समय-समय पर कविताएँ, कहानियाँ तथा उपन्यास लिखे। उनका व्यक्तित्व एक अक्खड़ और यथार्थवादी लेखक का रहा, जो दरअसल एक बड़े रचनाकार की महिमा से मंडित था।

नागार्जुन अपनी अक्खड़ प्रकृति के कारण एक ओर जहाँ कबीर की परम्परा से जुड़ते हैं, वहीं दूसरी ओर निराला और मुक्तिबोध की पंक्ति में भी खड़े दिखाई देते हैं। दरअसल निराला और नागार्जुन में विचारधारा और चेतना में अंतर होने के बावजूद दोनों में एक प्रकार की समानता भी है।

नागार्जुन की कविताओं में जनजीवन से गहरा लगाव दिखाई देता है। वे लगातार परिस्थितियों का दबाव महसूस करते हैं किन्तु अपनों को याद रखना नहीं भूलते। उनकी कविताओं में चाहे पत्नी का सिन्दूर हो या मिथिला का रूचिर भू भाग हो, बच्चे की मुस्कान, प्रायवेट बस ड्रायवर की सात साल की बच्ची, फटी बिवाइयों वाले खुरदुरे पैर हों सबके प्रति उनका समान लगाव होने के कारण कविताओं का महत्व बढ़ जाता है, अभिजात वर्ग को चुनौती देते हुए वे कहते हैं -

कुली मजदूर हैं
बोझा ढोते हैं
खींचते हैं ठेला
धुँआ-धुँआ भाप से पड़ता है साबका .....।

नागार्जुन अपने रहन-सहन और विचारों में कबीर के आस-पास दिखाई देते हैं। कबीर जिस तरह छोटी-बड़ी जातीयता की मानसिकता पर चोट करते थे, नागार्जुन भी उसी दिशा में चलने वाले अक्खड़ कवि साबित होते हैं। उनकी काव्य भाषा कबीर की भाषा की तरह पूरी तरह सधुक्कड़ी न होने पर भी वे जिस भाषा का प्रयोग करते थे वह जनभाषा के निकट थी। उनकी 'अकाल और उसके बाद', 'नीम की टहनियाँ', 'बहुत दिनों के बाद' आदि सभी कविताएँ इसके उदाहरण हैं। उनकी 'प्रतिबद्ध' शीर्षक से एक कविता है जो 1975 में लिखी गई तथा जिससे उनके वैचारिक सरोकार का तो पता चलता ही है साथ ही इससे उनके व्यापक जीवन, वास्तव में लगाव की भी सूचना मिलती है। वे खुले रूप में इस बात की घोषणा करते हुए कहते हैं -

आबद्ध हूँ
जी हाँ आबद्ध हूँ
स्वजन परिजन के प्यार की डोर में
प्रियजन पलकों की कोर में
सपनीली रातों के भोर में
बहुरूपा कल्पना रानी के आलिंगन-पाश में
तीसरी चौथी पीढ़ियों के दंतुरित
शिशु सुलभ हास में
लाल-लाल मुखड़ों के तरूण-हुसास में
आबद्ध हूँ
जी हाँ शतधा आबद्ध हूँ।

नागार्जुन की कविता राजनीतिक शिक्षण का भी काम करती है। उनकी 'भोजपुर' कविता में उन्होंने समस्त युवा और क्रांतिकारी शक्तियों को सम्बोधित करते हुए कहा है -

यहाँ अहिंसा की समाधि है
यहाँ कब्र है पार्लमेण्ट की
भगत सिंह ने नया नया अवतार लिया है

उक्त कविता में कवि की दृष्टि 1967 की कृषि क्रांति के प्रभाव के तहत होने वाले किसान आन्दोलन की ओर है। नागार्जुन की कविता में सर्वत्र सामाजिक सरोकार का बोध होता है। उनमें कहीं-कहीं वैचारिक भटकाव भी दिखाई देता है। जिसके चलते वे कभी-कभी विवादों के घेरे में आ जाते हैं - 'क्रांति तुम्हारी तुम्हें मुबारक', 'पुत्र हूँ भारत माता का', 'कुछ नहीं हिन्दुस्तानी हूँ महज' आदि कविताओं को उद्धृत किया जाता है। नागार्जुन ने जिन स्थितियों और प्रसंगों को लक्ष्य कर तथाकथित वैचारिक भटकाव की कविताएं लिखीं। वे जनमानस के बहुत निकट हैं। इस प्रसंग में नागार्जुन में कबीर का अक्खड़ व्यक्तित्व प्रखर होता है -

अपने सुदृढ़ आलिंगनों में कसकर
हमें इतना अधिक मत झकझोरो
लेकिन जैसे आपके पितामह हुए
जिन्होंने हासिल करवा दिया
आपके लिये स्वर्ग-सुख
मगर हमारा तो
कोई पूर्वज नहीं हुआ।

नागार्जुन वैसी क्रांति के भी खिलाफ थे, जो स्वत: स्फूर्त ढंग से व्यापक जनता को गुमराह करती है। वे संपूर्ण क्रांति को भ्रांति कहकर पुकारते हैं, कारण कि इस प्रकार की क्रांति में सामंत, नौकरशाह और पूँजीपति घराने के नर-नारी भी शामिल थे, जिसका वर्णन 'क्रांति सुगबुगाई है' शीर्षक कविता में इस प्रकार हुआ है -

हवा से भर उठी इन्कलाब के कपूर की खुश्बू

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बार–बार गूँजा आसमान
बार–बार उमड़ आये नौजवान
बार–बार लौट गये नौजवान।

नागार्जुन लोगों के 'राजनीतिक खेल' का मकसद खूब समझते थे। उन्होंने उनके खिलाफ भी कलम चलाई। उन्होंने संघ परिवार के प्रमुख नेता देवरस को संबोधित एक कविता लिखकर उनके वैचारिक चेहरे को बेनकाब करने का काम किया था। यथा –

देवरस दानव रस
पी लेगा मानव रस
होंगे विकृत विरस
क्या षटरस क्या नवरस
होंगे सब विजित–विवश
क्या तो तीव्र क्या तो ठस
देवरस दानव रस
पी लेगा मानव रस।

निष्कर्ष – इस तरह नागार्जुन एक जनवादी और क्रांतिकारी तेवर के कवि थे। उनकी कविताओं में भारतीय समाज का जीवंत यथार्थ चित्रित हुआ है। नागार्जुन ने समाज और देश में सम्प्रदायवाद के विषाक्त परिवेश के फैलाये जाने के पीछे लोगों की तुच्छ मानसिकता को माना।

नागार्जुन अपनी साहित्य साधना के दौरान बराबर एक जनवादी और क्रांतिकारी रचनाकार के रूप में ही सामने आते हैं।

अन्ततः वे एक जन पक्षधर कवि और लेखक के रूप में ही याद किये जाते रहे। किसी ने सच ही कहा है –

रहेगा रंज जमाने में यादगार तेरा
वो कौन दिल है जिसमें नहीं मजार तेरा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पुस्तक का नाम – शमशेर, नागार्जुन, मुक्तिबोध, रामनिहाल गुंजन पृ. संख्या 56–57
2. 'प्रतिबद्ध' कविता नागार्जुन 1975
3. 'कुली मजदूर' है कविता – घिन तो नहीं आती है नागार्जुन
4. देवरस – कविता नागार्जुन देवरस दानवरस
5. 'शांति मैत्री' कविता – 1984 नागार्जुन

****

Current Scenario Of Higher Education In India With It's Challenges

Pawan Kumar Jaiswal * **Archana Arya** * *

Abstract - The education system of India is one of the major contributors to the economic rise of India. Universities are the life -blood of higher education, Islands of excellence in professional education, such as IITs and IIMs are valuable complements but can't be substitutes for universities which provide educational opportunities for people at large. There is no doubt that higher education has made a significant contribution to economic development, social progress and political democracy in independent India. The Indian higher education system is presently facing several challenges ,due to this government has set a target of increasing the Gross Enrolment Ratio(GER)from the present level of about 12 % to 15 % by the end of XI five year plan and to 30% by the year 2020.

The size of India's higher education market is about $40 billion per year. Presently about 12.4 % of students go for higher education from the country. If India were to increase that figures of 12.4% to 30 % then it would need another 800 to 1000 universities and over 40,000 colleges in the next 10 years.

The aim of this paper is to presents the development and present scenario of higher education in India by analyzing the various data and identities the key challenges that India's higher education sector is facing .This paper also presents the key initiatives by the government and recommendations to meet these challenges.

Key Words - Higher Education, Knowledge Economy, Technical Education.

Introduction - In order to promote economic and industrial development in a country, the essential requirement is the capacity to develop skilled manpower of good quality in adequate number. According to population projections [1] based on the 2001 Census figures, in 2011 nearly 144 million of India's population will be between the age-group 18 to 23-the target age group for Higher Education. At the beginning of India's independence, there were 20 universities and 500 colleges while students enrollment at the tertiary level of education was 0.1 million. After independence, the growth has been very impressive. India now possesses a highly developed higher education system that offers facility of education and training in almost all aspects of human creation and intellectual endeavors. India's higher education system is the third largest in the world after China and United States in terms of enrolment. However, in terms of the number of institutions, India is the largest higher education system in the world with 26,455 institutions (611 universities and 31324colleges) as on 31August, 2011(Table1).

Table1: Number, Nature and Category of Institutions (As on 31 August, 2011)

Type of institution	**Number**
Central Universities	43
State Universities	289
State Private Universities	94
Deemed to be Universities	130
Institutes of National Importance plus Other Institutes	50
Institutions established under State Legislature Acts	5
Total	611
Total Colleges	31,324
Grand Total	**31,935**

Source: UGC, MHRD

Knowledge Economy - Knowledge is the driving force in the rapidly changing globalized economy and society. Education general and higher education in particular, is a highly nation-specific activity, determined by national culture and priorities. The emergence of India as a knowledge-based service driven economy has made its human capital its major strength and opportunity for growth.

According to a report [3] by ICRIER, New Delhi, India is home to the world's largest pool of scientific and knowledge workers and produces 400,000 engineers per year while the US produces 60,000. According to the same report, in August 2006 India filed 1312 patent applications second only to the United States.

This indicates that on the science and technology side, India has built up the largest stock of scientists, engineers and technician. In order to sustain these positive trends and an economic growth rate of 7%, a venture Intelligence calculates that India's higher education gross enrollment ratio (GER) would need to increase from 12 to 20 percent by 2014.

* **Research Scholar, SOE, D.A.V.V., Indore (M.P.) INDIA**

* * **Research Scholar, M.J.B. Girls, P.G. College Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA**

Table2: **Student Enrolment: Faculty-wise: (2009-10)**

S. No.	Faculty	Total Enrolment	% to Total
1	Arts	61,43,959	42.01
2	Science	28,22,623	19.30
3	Commerce/Management	26,07,638	17.83
4	Education	3,65,621	2.50
5	Engineering/Technology	15,10,762	10.33
6	Medicine	5,08,950	3.48
7	Agriculture	80,438	0.55
8	Veterinary Sciences	20,475	0.14
9	Law	3,43,688	2.35
10	Others	2,20,836	1.51
	Total	**1,46,24,990**	**100.00**

Source: UGC Annual Report, 2009-10

Structure and Statistics of Higher Education in India - In India the institutional framework consists of Universities established by an Act of Parliament (Central Universities) or of a State Legislature (State Universities), Deemed Universities (institutions which have been accorded the status of a university with authority to award their own degrees through central government notification), Institutes of National Importance (prestigious institutions awarded the said status by Parliament), and Institutions established by State Legislative Act and colleges affiliated with the University (both government-aided and unaided) [4].

In India technical education is treated as a separate sector. There are 65 centrally funded institutions like IITs, IIMs, NITs, IISc, etc. Additionally, State Governments have also set up technical institutions. AICTE and equivalent sectoral regulators (like the Medical Council of India) both approve and regulate technical institutions in engineering/ technology, pharmacy, architecture, hotel management & catering technology, management studies, computer applications and applied arts & crafts. Vocational Education is another stream of higher education in India. For this a network of public and private polytechnics and vocational institutions exists, controlled and supervised by the Councils specializing in each discipline. India has also developed an Open University system to encourage distance learning. Indira Gandhi National Open University (IGNOU) was the pioneer and now there are 14 open universities in India [5]. The open universities in India are regulated by the Distance Education Council of India (DEC), New Delhi which maintains the standards, encourages and organizes the activities of Open and Distance learning in India(ODL).

The Higher Education sector ensures the quality of the educational process with the help of accreditation agencies established for the purpose. The main agency which accredits universities and colleges in general education is the National Assessment and Accreditation Council (NAAC) established by the UGC in 1994, whereas a similar function is done for technical education by the National Board of Accreditation (NBA) set up by AICTE in 1994, and for agricultural education by the Accreditation Board (AB) set up by ICAR in 1996. NAAC proposes to introduce the India Education Index (IEI) for ranking institutes based on academic, research performance and other parameters. The outcome will help in the international comparison of institutes. NAAC has entered into an MOU with higher learning institutes of the United States, Taiwan, Norway, Kuwait and with the Commonwealth of Learning (COL) to facilitate collaborative work on quality assurance in higher education institutions (HEIs

Challenges in Higher Education - In present scenario the challenges in higher education are:

Demand-Supply Gap - According to the recent report of HRD ministry [6], presently about 12.4 percent of students go for higher education from the country. If India were to increase that figure of 12.4% to 30%, then it would need another 800 to one thousand universities and over 40,000 colleges in the next 10 years. Addressing a higher education summit organized by the Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI), HRD Minister Kapil Sibal said "We will need 800 new universities and 40,000 new colleges to meet the aim of 30 percent GER (gross enrolment ratio) by 2020. Government alone cannot meet this aim,"

Statistics show that there is a huge gap between the demand and supply. The HRD ministry says that the foreign institutions could fill this gap to a large extent. Close to 50 Foreign universities may enter India in near future. But realistically speaking, the foreign institutions could not fill this gap. This is the third attempt being made by government to liberalize education system. Two attempts were made in 1995 and 2006 to bring foreign universities to India. Against the projected requirements, the 11th Five Year Plan [7-8] provides for a total of 30 new Central Universities (with medical and Engineering colleges), eight new IITs, 20 NITs, 20 IIITs, 3 IISERs, seven IIMs, and two SPA and 373 new colleges in districts with GERs that are below the national GER.

Quality Education - Quantity and quality of highly specialized human resources determine their competence in the global market. According to a recent government report [3] two-third of India's colleges and universities are below standard. However, according to MHRD annual report 2009-10 [6], a proposal for mandatory accreditation in higher education and creation of an institutional structure for the purpose of regulation is under consideration. India's highest-quality institutions have severely limited capacity. In order to increase the supply quality should be maintained. Recently MRD ministry has decided to derecognize as many as "44 deemed universities". These 44 deemed universities have 1,19,363 students at the undergraduate and postgraduate levels. In addition, there are 2,124 students pursuing research at MPhil and PhD levels and another estimated 74,808 students pursuing distance education programmes.

Research and Development - Research and higher education are complementary to each other. According to the available statistics [9] the expenditure on R&D in the field of Science & Technology as a percentage of gross domestic products (GDP) was 0.8 percent during the year 2005-06 in India. For perspective, countries spending the most on S&T as a percent of their GDP were Israel (5.11 percent), Sweden (4.27 percent), Japan (3.11 percent), South Korea (2.95 percent), the United States (2.77 percent),

Germany (2.74 percent) and France (2.27 percent). Among other countries, China (1.54 percent), Russia (1.74 percent), U.K. (1.88 percent) and Brazil (1.04 percent) have spent more than India. Moreover, India's higher education institutions are poorly connected to research centers. So this is another area of challenge to the higher education in India.

Faculty Shortage - According to a recent report of HRD Ministry premier educational institutes like the Indian Institute of Technology (IITs) and the Indian Institute of Management (IIMs) are facing a faculty crunch with nearly one-third of the posts vacant. According to a report published in IANS [10] around 35 percent posts are vacant in the central universities, 25 percent in the IIMs, 33.33 percent in the National Institute of Technology (NITs) and 35.1 percent in other central education institutions coming up under the Human Resource Development (HRD) Ministry.

5. Key Initiatives - The key initiatives of the government to improve the quality and further development of higher education in India are as follows:

- A proposal for establishment of an autonomous overarching National Commission for Higher Education and Research (NCHER) for prescribed standards of academic quality and defining policies for advancement of knowledge in higher educational institutions. The said proposal is based on the recommendations of Yash Pal Committee and National Knowledge Commission.
- A proposal to prevent, prohibit and punish educational malpractices.
- Law for mandatory assessment and accreditation in higher education through an independent regulatory authority.
- Establishment of a national database of academic qualifications created and maintained in an electronic format which would provide immense benefit to institutions, students and employers.
- A proposal to establish 14 innovation universities aiming at world class standards.
- Setting up 10 new National Institutes of Technology (NITs).
- Launching of a new scheme of interest subsidy on educational loans taken by professional courses by the economically weaker students.
- Setting up of 374 Model degree colleges in districts having GER for education less than the National GER.
- As part of reforms in All India Council for Technical Education (AICTE) norms, the HRD Ministry announced an increase of almost 200,000 seats in engineering courses, additional 80,000 seats in management and 2,200 seats in architecture courses. The ministry also made it mandatory for technical institutions to reserve 5 percent seats for the weaker sections of society.
- HRD ministry has liberalized the norms for land requirement for engineering colleges. Now lesser space will be needed for establishing technical institutes. While an engineering college in rural India will need 10 acres of land, just 2.5 acres of land will be needed in urban areas.
- Conduction of special evening in the areas of Engineering, Technology, Architecture, Town Planning, Hospitality and Pharmacy by AICTE-approved institutes.

Recommendation - As per the present scenario of the higher education in India we recommend following in order to further meet the challenges:

1. Government should offer tax concessions/fiscal incentives for setting up campuses of higher Education by private/corporate sectors.
2. Open Universities need to be encouraged to offer quality programmes at the least cost.
3. Government should encourage foreign universities to come to India to set up independent Operations or collaborate with existing Indian Institutions.
4. A regulatory set up is required to ensure that there is no cheating or hoax and, fixation of fees should not be in state control.
5. There is great need for providing broad band connectivity to all students along with low priced computer accessibility.
6. Private sector should run universities not for a profit-basis through charitable trusts/societies but as a part of a corporate social responsibility (CSR).
7. Possibilities for foreign collaboration and participation as 100% foreign direct investment (FDI).

The government can encourage this initiative to improve the quality of formal education, particularly, in government run institutions.

Conclusion - In this paper we have presented the development and present scenario of higher education in India by analyzing the various data and also identify the key challenges like demand-supply gap, quality education, research and development and faculty shortage in India's higher education sector. In this paper also identified the key initiatives from the government side which include the establishment of NCHER, independent regulatory authority for accreditation and national database of academic qualification, increase in number of universities including IITs, IIMs, NITs and SPAs during 12th five year plan and increase in the number of seats in existing institutions, and passing of the Right of Children to Free and Compulsory Education. Looking to the present scenario of the higher education in India we recommended some points in order to further meet the challenges.

References -

1. PWC report on, "Redefining Higher Education for Inclusive Development in Eastern India", Indian Chamber of Commerce, 2010.
2. PWC report on "Emerging opportunities for private and foreign participation in higher education" Indo-US Summit on higher education 2010.
3. Uttara Dukkipati, "Higher Education in India: sustaining long term growth" South Asia Monitor, 141, 01 May, 2010.
4. Sanat Kaul, "Higher Education in India: seizing the opportunity", Working paper no. 179, 2006.
5. India Education ,"Open universities in India" ,www.indiaedu.com.
6. MHRD, Annual Report on Higher Education in India-2009-2010.
7. UGC report: "Higher Education in India: Issues related to expansion, inclusiveness, quality and finance" 2008,2009-10.

Role Of Teacher Education In Promoting Culture Of Peace

Dr. Ramesh Nagda * **Reena Dutt Sharma** * *

Abstract - Peace means being one with life itself. Having no fear of bitterness. Peace is more than merely sitting still or insolence. Peace therefore is a state of mind. Tagore has rightly said, "where the mind id without fear and the head is held high, into that kingdom of my father let my country awake."

We need peace at global level for the world is in a state of instability and tension with the depletion of human values. The peace education is as attempt to promote the development of an authentic planetary consciousness that will enable us to function as global citizen and to transform the present human conditions by changing the social structures and patterns of thought that have created it.

Introduction - "Peace education is the pedagogy of the brave" Betty Reardon. Peace is not only as educational term but also a reflection of the realization of where we are in the world today. Peace means social justice, personal right to fulfill one's own potential to live freely and to recognize one's relationship to all of life. Peace education is value education. It is often used as a synonym for global education. Both are education in the values of ethics and morals. It deals with global problems and important values. Our present system of education lacks value education. Therefore, several education commissions and committees have envisaged the introduction of value education in the curriculum and thereby make education a powerful means of peace culture. Value education is the need of the hour. Now, it is the responsibility of entire teaching community to inculcate the values through education among students.

Peace is simply having a feeling of security, calm and restfulness. We often tend to think of peace as being an international issue, far from our daily life, but we do not realize that global peace can only be achieved if each country is settled and at peace. The peace and happiness of each country can only be achieved if every citizen is at peace. This follows therefore that a country can be peaceful and progress if her people live tolerantly. We all want peace of mind. Is peace of mind possible at all in our rushed life? It is up to us. We must come to grips with ourselves. Though the world may be full of problems and distress we must see the positive side of it all. We must accept the problem as an opportunity and not as a problem. Just as you destroy an enemy and make him your friend you can destroy a problem and turn it into joy.

Peace education is a process of promoting the knowledge, skill, attitudes and values needed to bring about behavior changes that will enable children, youth and adults to prevent conflict and violence, both overt and structural, to resolve conflict peacefully and to create the conditions conductive to peace, whether at an intrapersonal, interpersonal, intergroup, national and international level.

Teacher should be a peace educators and that peace education should have a holistic and integrated approach, cutting across all subjects of the school curriculum. Therefore, we need some experts to enable teachers to foster peaceful attitudes in their pupils. Teachers can learn from experts that how to handle violent students, react to their quarries, help them counter social evils and respect others, thereby promoting social cohension.

The present system of university will find itself doomed due to an optional failure unless it can quality, effectively and efficiently learn to absorb the charges brought by the present revolution based on computers, electronic communication and bio-technology etc. Unable to know, regulate, control and adjust to the force of future would mean collective suicide for the academic fraternity. It helps us to keep pace with the futuristic changes of space age and electronic era. As far as India concerned we have got a titanic and challenging task to matching the high ideal of education and knowledge with better quality; greater efficiency deeper involvement and large pragmatic relevance.

Our university system in India has reflected norms arid values characteristic of an alien culture like European universities in India our universities also follow the same pattern of advancement of knowledge through research, extension and interpretation of knowledge through presentation of libraries, museums and galleries and diffusion of knowledge through prudent and scholarly publications.

Here are very effective and useful methods which can be helpful to promoting culture of peace:-

1. Becoming and staying informed, which implies the ability to identify problems and community needs and to recognize community's strengths and resources. It

* Principal, The Nobles. T.T. College, Kherwara, Distt. Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific University, Paher, Udaipur (Raj.) INDIA

implies also understanding of how the political, economic and social service systems operate, and knowing how to identify diverse sources of information and interpret and analyze it.

2. Forming and expressing opinions and ideas require a sense of self that reflects one's history, values, beliefs and roles in the community. One must be able to listen to the experiences and ideas of others and learn from them and communicate one's own ideas and opinions clearly for others to understand. One should also be able to reflect on and re-evaluate one's opinions.
3. Citizens in a democracy need to be able to work together, getting involved in the community and mobilizing others to get involved. This implies respecting others and valuing diversity of ideas, opinions and beliefs. It also implies the ability to participate in group processes and engage in creative, non-violent conflict resolution.
4. Finally, citizens should be able to take action with the aim of strengthening their communities.

This means to be willing and able to help others and exercise one's human and legal right, fulfill one's civic responsibilities, as well as influence decision-makers, holding them accountable. In other words, citizens should be leaders in their own communities.

It has to be a place for imparting universal knowledge scholarly honesty, civility is discourse, tolerance of diverse beliefs and values and trust in rationality and public reliability were be taught and practiced by the university, as Pandit Nehru said –

" a university stands for humanism for tolerance, for reason, for advancement of ideas and for the search of truth…. If the universities discharge their duties adequately, then it is well with the nation and the people."

The social responsibility syndrome is the hallmark of any institution. The university system has to prove its accountability to the society otherwise it will fail from grade and regarded as fruitless and futureless.

References -

1. Learning the way of Peace, A Teacher's Guide to Peace Education. UNESCO (2001).
2. Peace Education: A Framework for Teacher Education, New Delhi, NIEPA, UNESCO & NIEPA (2005).
3. Globalization and its Discontent New Delhi penguin Books, Stigtitz, J. (2003)
4. Peace Education-Self Instruction Package for Peace Education, N.C.E.R.T. (2004)
5. National Curriculum Frame Work, N.C.E.R.T. (2005)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Education : Its height and depth

Ratna Kumari *

Abstract - The true meaning and purpose of education has been lost its significance today. The situation in schools, colleges or Universities is pretty confusing with several forces competing with each other in polluting the academic atmosphere. Educationist all over the country recognize the malaise, they have not been able to suggest a workable remedy. The problem persist due to the bottlenecks in the bureaucratic structure, Also there is the absence of a accountability of the different players such as the teacher, managements, Government students and even the parents.
Keywords - Dispels , Emancipation, Obliged, Stipulated, Maze, Concoction, Leveraged, Stream Lined, Resonate.

Introduction - Knowledge has always been represented by light, and ignorance has been symbolized by darkness. Hence education, the key to all knowledge and yet more knowledge, dispels the darkness and ushers in the light.

Education must not be confused here with literacy and learning the three letters. Nor is education confined to the 10+2+3 system. Education does not consist in collecting degrees or burying oneself in research. Education is a continuous process of learning which broadens our mental horizons and with our perspective. Education leads to the dissemination of knowledge, to the breaking down of all mental barriers and to a greater realization of self worth and better understanding of fellow beings.

If Person is uneducated he cannot think for himself, his family and for society. He is forced to blindly accept the dictates of other and this makes him servile as he lacks the ability to judge right from wrong. With education he is able to make this distinction, to realize the reason behind his forced servility and to stand up and demand redressal. This frees him from the shackles of servility and makes him a free individual. Know here is this truer than in women's education which has been the single important factor in women's emancipation?

Even **Swami Vivekananda** had said, "I don't consider a man to be educated who has learnt libraries by heart. If a man learns five Ideas, and applies them in his life, I consider him educated". Thus Swami Ji believed true education helped a person to think for himself. Let us all pledge ourselves to Shiva the destroyer as he goes about his Tandava Nritya to stamp out ignorance and let us make education transport us in the world of Tagore to that "Heaven of freedom".

Education awakens intelligence and developed life of human being. It aims to adjust the Rhythm of the individual life with the rhythm of society. This adjustment involves strengthening of character and consolidation of moral values.

Today due to heavy demands of modern consumer civilization even two and a half year old toddlers are being pushed out of comfort zone of their homes in to the strange world of the classroom and teachers. They are obliged to parrot. Education which is supposed to be rich, constructive, creative and a dialogical, process becomes monotonous and mechanical and is reduced to a mere business. Pleasure of learning seems to be a thing of past.

In a system that lays so much emphasis on achievement rather than developing the true potential of a student, who, then, is to be really blamed.

Schools from Nursery to middle level should be fashioned as children's clubs. The children's natural curiosity of how and why can be given more from prominence than following the stipulated syllabus. Before teaching, the teacher must create interest amongst the students. Again the teacher should feel responsible for a student's failure to learn.

It is well nigh impossible to judge a student's proficiency in a subject through a single examination of three hours. Again, it is sad Irony that the best teachers are supposed to be employed in govt. schools, while people prefer to send their wards to the private schools. School education in India is in a maze. One wrong step and you are lost forever.

At the time of appointment of teacher, besides their academic achievements, their real interest in education and dedication to teaching should also be made a qualifying criterion for the final selection. The present status of poor school teacher should be improved so that they command the same respect and dignity in society as do professional like doctors, engineers or civil servants.

Multimedia's impact on learning could be thought of similarly to that of kitchen electronics on cooking. You see, both cooking and learning have been deeply rooted in the traditions and rich diversity of practices we experience today. Just as cooking has arguably been enhanced by knowledgeable usage of kitchen electronics, it has, at the same time, degraded the quality of cooking by situational time-saving concoctions. In a similar manner, multimedia has also served to both enhance student learning and detract from it.

* **Research Scholar, Singhania University, Pacheri Beri,Jhunjhunu (Raj.) INDIA**

There have been times when, in an effort to enhance student learning, effective educators have knowledgeably leveraged appropriate doses of selected multimedia to supplement the course content. In so doing, they had successfully aided the learner to achieve better learning outcomes for the needed objective. There have been other times when efforts to enhance teaching efficiency by leveraging media has actually unintentionally served to degrade the learning process. This can happen with a lack of attention given to multimedia's actual development costs, issues of accessibility, societal and political suitability, cultural awareness, flexibility and openness, interactivity, motivational value, as well as considerations of effectiveness (Pastula, 2002). There is a growing body of research that speaks to each of these practical guidelines for knowledgeably using multimedia in the learning context.

On the topic of creativity, author and speaker Rob Bell (2009) goes on to suggest that great designers know that it is not what is put into a piece of art that gives it life, but rather knowing what to take away to get down to the simple, pure, streamlined essence. Effective multimedia design carries no exception. Taking into account what we know about cognitive load theory for multimedia learning in the Cambridge Handbook of Multimedia Learning (Mayer, 2005), Schnotz presented an integrated model that informs instructional design for both verbal and pictorial channel comprehension. This model is known for recognizing that learners are able to effectively use multiple sensory modalities under certain conditions. The model accounts for sensory registers, working memory and long-term memory when emphasizing that learner comprehension is dependent on both the kind of content being delivered and how it is delivered. Such careful considerations seem to resonate with the passionate descriptions of a chef who takes great pride in their ingredient, preparation, and presentation.

Oral & practical learning should be given greater emphasis in the introductory stage. Writing should be introduced in the curriculum only after 2-3 years of schooling. Before writing we should encourage children to draw pictures of different shapes. Rhymes at kindergarten level should be in mother tongue so that children can enjoy and learn them effortlessly. Before teaching anything the teacher must create interest amongst the students.

Today the main problem with secondary education is our failure to treat it as merely preparation ground for university education. An independent entrance test could be offered by every institution. This could reduce the anxiety about the unevenness of marks offered by different boards.A separate independent autonomous body which conducts achievement tests in the field of student choice could be set up & commercialization of education should be stopped.

Innovative schools like Eklavya in Bhopal , Vasant Valley in Delhi, Sherwood in Nainital, Rishi Valley in Andhra Pradesh, Which try to move away from the curriculum as possible.

References -

1. Google
2. Wikipedia
3. Times of India
4. Spectrum Books
5. Web Service

****

डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के जीवन मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. भगवती लाल व्यास * संदीप सिंह चौहान * *

प्रस्तावना – भारत में आजादी के पश्चात् शिक्षा प्रसार तो हो रहा है किन्तु हमें यह भी सोचना होगा कि हम जो शिक्षा दे रहे हैं, वह सही अर्थ में शिक्षा हो। पुस्तकों को पढ़ लेना और अपनी भावनाओं को शब्दों में व्यक्त कर देना शिक्षा नहीं है। शिक्षा को पूर्ण अर्थ में लिया जाना चाहिये, ताकि व्यक्तिगत विकास तो हो ही, साथ ही समाज और देश की अस्मिता की रक्षा भी हो सके। आज हम देख रहे हैं कि हमारी सभ्यता व संस्कृति की धारा कुछ मन्द होती जा रही हैं। किसी भी देश की सभ्यता व संस्कृति शिक्षा से पहचानी जाती हैं और रक्षित होती है। हमारी सभ्यता और सामाजिक मूल्यों में मानवीयता, भाईचारा, सोहार्द्रता, करुणा, सहयोग आदि कई पक्ष प्रतिष्ठित हैं। हम हमेशा जीवन के उच्चत्तम मूल्यों को महत्व देते रहे हैं।

मूल्यों को हम एक ऐसे पैमाने या मानक के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जिसके आधार पर हम किसी व्यवहार, वस्तु, भावना, लक्ष्य एवं साधन को उचित एवं अनुचित, अच्छी या बुरी तथा सही या गलत ठहराते हैं। इस प्रकार मूल्य सामान्य मानक हैं। ये उच्चस्तरीय मानदण्ड कहे जा सकते हैं। स्वयं मानदण्डों का मूल्यांकन भी मूल्यों के आधार पर किया जाता है। फिर भी इन दोनो में इतना घनिष्ठ संबंध है कि कभी-कभी इन दोनों को एक ही मान लिया जाता है।

जॉनसन के अनुसार, 'मूल्यों को एक धारणा या मानको के रूप में परिभाषित किया जा सकता हैं जो सांस्कृतिक हो सकता हैं या केवल व्यक्तिगत और जिनके द्वारा वस्तुओं की एक साथ तुलना की जाती हैं और वे एक-दूसरे के संदर्भ में स्वीकार या अस्वीकार की जाती हैं।'

मूल्य की परिभाषा –

राधाकमल मुखर्जी के अनुसार, ' मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएँ तथा लक्ष्य हैं, जिनका आन्तरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता हैं और जो प्राकृतिक अधिमान्यताएँ, मानक तथा अभिलाषाएँ बन जाती हैं।'

फिचर के अनुसार, 'मूल्यों को उन कसौटियों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनके द्वारा वह समूह या समाज व्यक्तियों, प्रतिमानों, उद्देश्यों और अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक वस्तुओं के महत्व का निर्णय करते हैं।'

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मूल्य वे मानक या धारणाएँ हैं, जिनके आधार पर हम किसी व्यक्ति के व्यवहार, वस्तु के गुण, लक्ष्य, साधन एवं भावनाओं आदि को उचित या अनुचित, अच्छा या बुरा ठहराते हैं।

मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता

मूल्यों की शिक्षा पर अलग से बल देने के निम्न कारण हैं :

- प्रगतिवाद के इस युग में विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में तेज गति से प्रगति हो रही है और उसके कारण मनुष्य की जीवन शैली में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। जीवन में पहले जैसी स्थिरता एवं शांति नहीं है। विज्ञान एवं तकनीक का प्रयोग भयंकर अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण के लिये भी हो रहा है जिससे मनुष्य जाति के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया हैं। ऐसी दशा में नैतिक चेतना के जागरण की आवश्यकता हैं ताकि विज्ञान का प्रयोग उपकार करने के लिये सिखाया जाए, विनाश के लिये नहीं।
- विश्व के अन्य देशों के समान हमारे देश में पारस्परिक मूल्यों का ह्रास हो रहा हैं। नैतिकता के विकास में धर्म अपना योगदान नहीं कर पा रहा हैं। ऐसी स्थिति में हमें मूल्यों की खोज की आवश्यकता है, जिन पर हमारा समाज आधारित हैं।
- हमारी परीक्षा प्रणाली कई बार छात्र के नकल करने की ओर प्रेरित करती है, जिससे बच्चों में मूल्यों के विकास में गलत संदेश आते हैं।
- मनुष्य के परिवार, व्यवसाय और राजनीतिक वातावरण का निरन्तर जटिल होना, जिन्हें सिर्फ किताबों के द्वारा न पूरा करके दैनिक जीवन में उतारकर पूरा किया जाये।
- बच्चों को आगे चलकर स्वयं पर निर्भर रहना पड़ता है इसके लिये उन्हें स्वयं निर्णय लेने पड़ते हैं। इस दृष्टि से भी आवश्यक है। कि विद्यार्थी जीवन में उन्हें सोच-समझ कर नैतिक निर्णय लेने की शिक्षा दी जाये।
- पूरे समाज में उन मूल्यों का पालन होते नहीं दिखाई देता हैं जिनका वर्णन पुस्तकों में होता हैं। इसलिये उन्हें सही जीवन शैली अपनाने की जानकारी दी जाये क्योंकि मानव समाज का विकास मानव के उचित मूल्यों पर ही आधारित है।
- कहाँ, कब किस ढंग से बात करनी है यह बालकों को मालूम नहीं होता हैं ऐसे में वे अनुभवहीनता के कारण गलती कर बैठते हैं। अत: आवश्यक है बालकों को आदर, प्रेम, आदि मूल्यों से अवगत कराया जाये, ताकि वे समाज में अपने सकारात्मक व्यक्तित्व को प्रदर्शित कर सके।
- आज की शिक्षा, नैतिकता व धार्मिकताविहीन दिखाई पड़ती हैं जिसके कारण विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता चरम सीमा पर दिखाई देती है।

फिचर के अनुसार, 'मूल्यों के उन कसौटियों के रूप में परिभाषित किया जा सकता हैं जिसके द्वारा वह समूह या समाज व्यक्तियों, प्रतिमानों, उद्देश्यों और अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक वस्तुओं के महत्व का निर्णय करते हैं।' इस प्रकार मूल्य वे कसौटियाँ हैं जो कि सम्पूर्ण संस्कृति एवं समाज को अर्थ एवं महत्व प्रदान करती हैं।

वार्नर (1982) ने संस्कृति व व्यक्ति के मूल्यों का विश्लेषण करने के लिए पर्सन का कार्यक्रम उपयोग में लिया। परीक्षण में यह ज्ञात हुआ कि मूल्यों की विषय वस्तु का समाजीकरण से सम्बन्ध है।

* शोध निर्देशक, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत * *शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

हारवर्ड, टेयेथी (1985) ने नियुक्त किये हुए बिना नियुक्त किये हुए व्यक्तियों के वैयक्तिक मूल्यों का मापन किया तथा उसकी तुलना की।

रेमण्ड गेरार्ड, व्हाइट मेन (1986) ने अन्वैयक्तिक और संस्थापन चारों ओर युवाओं की मूल्य प्रणाली का विश्लेषण एवं उनमें सम्बन्ध ज्ञात किया।

हंसा एम. शाह (1992) ने सौराष्ट्र के हायर सैकण्डरी विद्यालयों के बच्चों के मूल्यों का अध्ययन किया। इस हेतु उन्होंने 69 विद्यालयों से 3310 लड़कों और 2300 लड़कियों को चयनित किया। निष्कर्ष में पाया कि–

- विभिन्न चरों जैसे लिंग, पढ़ने की धारा, निवास स्थान एवं स्तर का पारम्पारिक और धार्मिक मूल्यों में सार्थक सहसंबंध होता हैं।
- विभिन्न चरों जैसे लिंग, पढ़ने की धारा, निवास स्थान का ज्ञान और नैतिक मूल्यों में सार्थक सहसंबंध होता हैं।
- विभिन्न चरों जैसे लिंग, पढ़ने की धारा, निवास स्थान एवं स्तर का आार्थिक मूल्यों से सार्थक सहसंबंध होता हैं।
- विभिन्न चरों निवास स्थान एवं स्तर का मानवीय मूल्यों से सार्थक सहसंबंध होता हैं।
- सामाजिक एवं मापनीय मूल्यों का लिंग से कोई संबंध नहीं होता हैं।
- स्तर और ज्ञान का सामाजिक, राजनैतिक और नैतिक मूल्यों के मध्य कोई संबंध नहीं होता हैं।

शोध अध्ययन के उद्देश्य –

- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के जीवन मूल्यों का अध्ययन करना।
- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के जीवन मूल्यों, का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध अध्ययन परिकल्पना

- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के जीवन मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

न्यादर्श का चयन – प्रस्तुत शोध में मापनी पूर्ति हेतु न्यादर्श चयन के लिये अनुसंधानकर्त्ता ने प्रस्तुत अध्ययन हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से न्यादर्शों का चयन किया हैं।

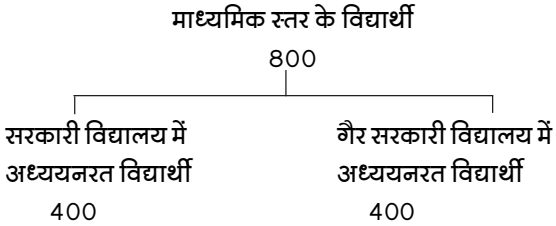

उपकरण – जीवन मूल्य परीक्षण का निर्माण आर. के. ओझा ने 1994 में किया। उक्त प्रश्नावली में सामाजिक शैक्षिक तथा नैतिक मूल्यों से सम्बन्धित कुल 30 प्रश्न दिये गये है। उत्तरदाता को प्रत्येक प्रश्न पर पांच उत्तरों में से एक को चिन्हित करना होता है।

कुल तीन क्षेत्रों में प्रत्येक में 10–10 प्रश्न है। अंकीकरण हेतु पूर्ण सहमत को 5 आंशिक सहमत को 4 अनिश्चित को 3 आंशिक असहमत को 2 तथा पूर्ण असहमत को 1 अंक दिया जाता है। इस प्रकार न्यूनतम सम्भावित अंक 30 तथा अधिकतम सम्भावित अंक 150 होते है। परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक 0.83 तथा वैद्यता गुणांक 0.79 है।

अध्ययन के चर

स्वतंत्र चर – सरकारी व गैर सरकारी विद्यालय

आश्रित चर – जीवन मूल्य

दत्तों का विश्लेषण – सारणी संख्या 1 में सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्यों की तुलना को प्रस्तुत किया गया है।

सारणी संख्या 1(अगले पृष्ठ पर देखें)

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य का मध्यमान 40.38 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य का मध्यमान 39.44 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 0.943 प्राप्त हुआ। टी का मान 2.141 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य से अधिक होते हैं।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य का मध्यमान 38.37 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य का मध्यमान 39.70 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.335 प्राप्त हुआ। टी का मान 2.764 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य से कम होते हैं।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य का मध्यमान 40.36 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य का मध्यमान 39.47 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 0.893 प्राप्त हुआ। टी का मान 2.028 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य से अधिक होते हैं।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के कुल मूल्य का मध्यमान 119.10 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के कुल मूल्य का मध्यमान 118.60 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 0.500 प्राप्त हुआ। टी का मान 0.537 प्राप्त हुआ जो कि असार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के कुल मूल्य में सार्थक अन्तर नहीं होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के कुल मूल्य निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के कुल मूल्य एक समान होते हैं।

निष्कर्ष – परिकल्पना (सरकारी और निजी विद्यार्थियों के मूल्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है) को आंकड़ों के विश्लेषण के आधार पर स्वीकृत किया जाता है। आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि सरकारी विद्यार्थियों के सामाजिक व नैतिक मूल्य निजी विद्यार्थियों की तुलना में अधिक होते हैं जबकि शहरी विद्यार्थियों के शैक्षिक मूल्य ग्रामीण विद्यार्थियों की तुलना में अधिक होते हैं।

सारणी में दिए हुए कुल मूल्य के विश्लेषण को देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों के कुल मूल्य में सार्थक अन्तर नहीं होता है। अत: उपरोक्त परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

Hansa M. Shah (1992) ` A study of Values of students from Saurashtra' Ph.D. Thesis, Gujarat University.

Harward Tayathi (1985) Values in Organization, `Organizational Behaiour, Kleman Publisher Sydeny.

Raymond F. Damann : Environmental Conservation, New York, John Willey and Soni, 1976.

Warner (1982) Socio-cultural analysis of Values, Mc. Mohan Publisher, Singapore.

सारणी संख्या 1

सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के मूल्यों की तुलना

		N	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान अन्तर	टी	सार्थकता
सामाजिक मूल्य	सरकारी	400	40.38	5.449	.943	2.141	.033
	निजी	400	39.44	6.915			
शैक्षिक मूल्य	सरकारी	400	38.37	7.119	1.335	2.764	.006
	निजी	400	39.70	6.528			
नैतिक मूल्य	सरकारी	400	40.36	5.482	.893	2.028	.043
	निजी	400	39.47	6.884			
कुल मूल्य	सरकारी	400	119.10	11.430	.500	.537	.592
	निजी	400	118.60	14.707			

****

राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में स्वायत अधिगम प्रशिक्षण के प्रभाव का अध्ययन

प्रो. अनुपूनिया * शंकरलाल मीणा * *

शोध सारांश – इस अध्ययन का उद्देश्य था कि राजकीय माध्यमिक स्तर के छात्रों में स्वायत्ता अधिगम प्रशिक्षण के प्रभाव का अध्ययन ज्ञात करना इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा IX के छात्रों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया जिसमें न्यादर्श के रूप में 30 छात्रों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया। स्वनिर्मित उपकरण का चयन कर प्रायोगिक अभिक्रिया से पूर्व एवं पश्च परीक्षण तथ्यों का संकलन किया। परिणामस्वरूप पाया कि राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में प्रशिक्षण के प्रभाव का सार्थक अन्तर पाया गया।

परिचय – जन्म से ही बच्चा स्वतन्त्रता प्राप्त करना प्रारम्भ कर लेता है, विकास के दौरान वह अपने को पूर्ण बनाता है और जीवन की हर समस्या का समाधान करना चाहता है। उसके अन्दर कुछ जैविक शक्ति होती है जो कार्य करती है। इसी से वह सहज विकास करता है; जन्म से ही यह शक्ति प्रेरणा देती है कि वह संसार पर विजय प्राप्त करेगा। जैसे–जैसे वह विभिन्न अवस्थाओं से गुजरता है। तब वह वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित कर अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।

प्रो. काटज के अनुसार– बच्चे को संसार से प्रेरणाएँ मिलती है। सबसे पहले उसकी इन्द्रियाँ काम करना प्रारम्भ करती है, इन्द्रियों के द्वारा ही वह संसार का अनुभव प्राप्त करता है। इन्हीं अनुभवों को वह अपने व्यक्तित्व का अंग बना लेता है। पहले वह संसार को पूरी इकाई के रूप में ग्रहण करता है तथा बाद में उसका विश्लेषण करता है। ऐसी ही कुछ मनोवृत्ति किशोरावस्था के छात्रों में होती है। जब छात्र किशोरावस्था में प्रवेश करता है तब तर्क, चिन्तन, संश्लेषण, विश्लेषण एवं निर्णय लेता है। कुछ कार्य छात्र स्वयं करने लगता है। इस प्रकार स्वयं कार्य करने की स्वतन्त्रता को लेकर धीरे–धीरे स्वयं सीखने लगता है। इसी को मनोविज्ञान में स्वायत्ता अधिगम की संज्ञा दी गई है।

स्वायत्ता अधिगम –

मनोविज्ञान के पारिभाषिक शब्दकोश के अनुसार– 'स्वायत्ता अधिगम स्वयं निर्देशित शिक्षा है और सीखने की प्रक्रिया से है। गेराल्डिन और नील टीम मेकमोहन के अनुसार स्वायत्ता अधिगम छात्रों में अनुभव जन्य व आत्मनिर्देशित है। यह छात्र केन्द्रित सीखना है।'

ब्रुनर के अनुसार– 'स्वायत्ता अधिगम में छात्र एक नेता के रूप में अपना स्वराज्य स्थापित करता है। स्वयं के भीतर ज्ञानात्मक क्रियाओं की क्षमता है जिससे छात्र अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। स्वायत्ता सीखना छात्र अपनी क्षमता के आधार पर सीखता है। अत: स्वायत्ता अधिगम सीखने की उप प्रक्रिया जब सीखना स्वयं की क्रियाओं द्वारा होताहै।

स्वायत अधिगम के सिद्धांत –

- स्वायत्ता अधिगम से छात्र की जिम्मेदारी में वृद्धि होती है।
- सीखने में स्वायत्तता की भावना विकसित करना।
- शिक्षक के प्रति छात्र का सम्मान विकसित करना।

अत: स्वायत्ता अधिगम में क्या सीखना है, कैसे सीखना है, क्यों सीखना है, कैसे सीखना है, क्या परिणाम है। इसी विचार से चिन्तन को सम्प्रत्यय काल में शिक्षण की उद्यतन प्रक्रिया के बारे में स्वीकारा जा रहा है कि 'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पूर्व–पश्च परीक्षण के आधार पर स्वायत्ता अधिगम इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए परिकल्पना का निर्धारण किया गया है।'

परिकल्पना – राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में स्वायत्ता अधिगम का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में कोई सार्थक अन्तर नही है।'

न्यादर्शन – प्रायोगिक अभिक्रिया हेतु न्यादर्श के रूप में राजकीय माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा खद के 30 छात्रों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया।

चर –

1. आश्रित चर – स्वायत अधिगम

उपकरण – स्वनिर्मित उपकरण

1. स्वायत अधिगम के घटको पर आधारित आव्यूह

परिणाम – तथ्यों का सकंलन करने के पश्चात उनका विश्लेषण सांख्यिकीय विधि से किया गया तथा टी मूल्य परिकल्पना को जाँचा गया।

सारणी संख्या 1.1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

निष्कर्ष – राजकीय माध्यमिक विद्यालयो के छात्रों के पूर्व एवं पश्च परीक्षण के संमको को आधार बनाकर यदि देखा जाये तो हम पाते हैं कि कक्षा–IX के छात्रों में पूर्व एवं पश्च परीक्षण के समंकों के अंकों में सार्थक अन्तर पाया गया।

अत: राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में स्वायत्ता अधिगम का विकास होता है। छात्र स्वयं तर्क चिन्तन कर व अभ्यास करके सीख लेते हैं तथा सीखने की यह प्रवृत्ति विद्यार्थियों में सकारात्मक प्रभाव डालती है।

इसी प्रकार निजी माध्यमिक विद्यालय के कक्षा–IX के विद्यार्थियों में स्वायत्ता अधिगम का अध्ययन किया गया तथा पूर्व एवं पश्च परीक्षण के समंकों की गणना की गई तथा पाया गया कि स्वायत्ता अधिगम का पूर्व एवं पश्च परीक्षण के समंकों में अन्तर है जो यह बताता है कि निजी माध्यमिक विद्यालय के छात्र भी करके सीखने में तथा स्वयं खोज प्रणाली में ज्यादा विश्वास रखते हैं।

अत: स्वायत्ता अधिगम का विकास इन विद्यार्थियों में भी प्रभावी है। इसी प्रकार निजी माध्यमिक विद्यालय तथा राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा–IX के विद्यार्थियों में स्वायत्ता अधिगम का पूर्व एवं पश्च परीक्षण के समंकों की गणना कर उनकी तुलना की गई। तुलना द्वारा यह पाया गया कि स्वायत्ता अधिगम का विकास निजी माध्यमिक के विद्यार्थियों में ज्यादा है। जबकि राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा–IX के विद्यार्थियों में कम है।

*प्राध्यापक (शिक्षा) वी.बी.टी.टी.सी. मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

छात्रों में स्वायत्ता अधिगम का विकास होता है लेकिन धीरे–धीरे होता है जबकि निजी माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में यह प्रवृत्ति शीघ्र होती है।

सुझाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन के माध्यम से शिक्षको, शिक्षार्थियों एवं शिक्षाशास्त्रियों प्रशिक्षणार्थियों, पाठ्यक्रम निर्माताओ आदि को एक नवीन दिशा का ज्ञान होगा जिससे अधिगम प्रवृत्तियों की नई प्रणाली का विकास होगा साथ ही शोधकर्त्ताओं को एक और नवीन दिशा का ज्ञान होगा तथा भविष्य की शिक्षण प्रक्रियाओं में विद्यार्थियों का ध्यान रखकर शिक्षण–विधियों एवं प्रविधियों का निर्माण किया जा सकेगा। साथ ही अध्यापक एक नवीन शिक्षण आव्यूह की रचना कर सकेगे जिसके माध्यम से छात्र नवीन उपागमों को अपनाकर अधिगम कर सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Banson, P(2001) Teaching and Researching Autonomy in Language learning long men London.
2. Banson, P(2006) Autonomy in Language Teaching and Learning State of The Article,2.
3. Cotterall, S. (1995) Readiness four Autonomy.
4. Cotterall, S. (2000) Promoting learner autonomy through the curriculum principles for designing language courses. ELT Journals.
5. Cotterall, S. and Crabbe, D (1999) Learner Autonomy in language learning defining the field and Effecting change, Peter lang.
6. Defei, D. (2007) An Exploration of the relationship between learner autonomy and English proficiency. Asian EFL Journal, 1-23.
7. Dam, L., Eriks son R., Littie, (1990) "Towords a definition of autonomy in T. Trebbi (ed.) Third Nordic workshop on Developing Autonomous learning in FL classroom. (Bergen University of Bergen)
8. Gao, X. (2010) "Autonomous language learning against all odds system: 1-11.
9. Susan widen beck (1999) "Self-Efficacy and mental models in learning to program, College of IST Drexel Univeristy, Philadelphia.
10. Pemberton, P., Toogood, S. and Barfield, A. (2009) "Maintaining control : Autonomy and Language learning bafiild : Hongkong University.

सारणी संख्या 1.1

राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों में स्वायत्त अधिगम स्तर का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में अन्तर

क्र.स.	स्वायत्ता अधिगम के घटक	पूर्व परीक्षण			पश्च परीक्षण			r	Mean `t' Diff	Value
		Mean	S.D.	N	Mean	S.D.	N			
1.	स्वयं खोज	26.57	3.451	30	26.37	3.79	30	0.126	6.80	7.76*
2.	निर्देशन	19.40	3.52	30	25.97	4.11	30	.362	6.56	8.27*
3.	नियोजन	9.77	2.68	30	25.80	3.60	30	.205	6.03	8.20*
4.	पठन	19.63	2.90	30	25.37	4.26	30	.198	5.73	6.73*
5.	कौशल	19.83	2.89	30	25.47	3.86	30	.118	5.63	6.78*
6.	अभ्यास	19.93	2.36	30	24.70	3.97	30	0.57	4.76	5.79*
7.	आत्ममूल्यांकन	19.90	2.78	30	24.17	4.25	30	.022	4.26	4.64*
8.	आंतरीकरण	19.70	2.20	30	25.23	2.68	30	.292	5.53	10.33*
9.	अमूर्त चिन्तन	18.87	4.08	30	25.43	4.51	30	.323	6.56	7.17*
10.	मानसिक संरचना	18.87	3.72	30	25.47	4.20	30	.359	6.60	8.02*
	योग	**195.47**	**22.120**	**30**	**256.67**	**29.63**	**30**	**.373**	**61.20**	**11.31***

* P<0.01, अर्थात् 0.01 स्तर पर सार्थक है।

****

Association Of Motor Fitness Mechanism With Playing Papability Of Handballers

Dr. Jogendra Singh * Amit Ganshyam Bhai Upadyay **

Abstract - Handball is basically a consecutively sport and can able to perform different moves like jumping, running, change of directions and technical movements in very short time and with an order resolute by the tactical situation. It become popular throughout the world and along with that it is exclusive with a rapid and physical yet concurrently skillful and strategic style of play.

The objective of this paper is to study the association between physical ability and motor fitness components. The present study is conducted on 98 inter-university handball male players. Five motor fitness components like speed, age strength, flexibility, agility, endurance and two playing ability skills are selected for evaluating relationship. It is concluded that nine meter motor throw and dominant hand speed pass skill have significant correlation with motor fitness components and only flexibility have negative association with these two skills of handball game.

Key words - Playing ability, motor fitness, and handball players.

Introduction - Handball is an Olympic sport played professionally in many countries. It is basically a consecutively sport and can able to perform different moves like jumping, running, change of directions and technical movements in very short time and with an order resolute by the tactical situation. It is the game which is gaining fame continuously throughout the world and along with that this game is exclusive, with a rapid and physical yet concurrently skillful and strategic style of play. It is a relatively unsophisticated team game with twelve players to a side where six court players and a goalie of one team oppose the same number from another team. The remaining five players may be substituted in from the side lines at centre court at any time.

Rowland (1970) stated that "Handball requires that the performer is able to run, jump, throw, and catch all natural and specific skills." This sport requires a high level of physical condition in the relevant actions of the game like jumping, diving, blocking, running, sprint, and throwing (Wallace & Cardinale, 1997). Of all, goal shot is considered as key to success (Wit & Eliasz, 1998). Throwing accuracy and ball velocity are considered to play an important role in goal success (Fleck et al., 1992; Van den T. 2003).

Objective - The objective of this paper is to appraise the association between playing ability of handball players with five motor fitness components**.**

Material and Methods - The relationship between playing ability which includes two handball game skills with five motor fitness components, are evaluated on 98 inter-university male handball players of North – West India**.**

Data for motor fitness components are collected by using the 6Lbs Medicine ball Put, 50 yards Dash Run, 600Yards run and walk, Bent and Reach, Shuttle Run, Standing broad jump, and Stork Stand test to measure Arm Strength, Speed, Endurance, Flexibility, Agility. The playing ability was measured by **I.L.Zinn Team Handball Skills Battery (1981)** i. e., 9 Meter Front Throw, and Dominant Hand Speed Pass

Result -

Table-1- Mean, Standard Deviation and Correlation Value between Motor Fitness Components and nine Meter front Throw **(N=98)**

S.No	Variables correlated with nine meter front throw skill efficiency	Mean	S.D.	Co-efficient of Correlation
	Nine meter front throw skill	23.86	6.02	
1	Speed	6.96	0.49	-0.392
2	Arm Strength	871.28	30.26	.690
3	Endurance	221.20	20.46	.164
4	Flexibility	15.59	3.83	-.254
5	Agility	10.59	0.71	-0319

It is observed in table-1 that speed, flexibility, and agility are inverse and significant correlations at .01 level of confidence with nine meter front throw skill. As time is inversely related with performance so decrease in time shows higher performance of players due to this correlation between speed and agility are inverse in shooting skill efficiency. It is suggested that these all factors of motor fitness directly contribute to improve the Handball players shooting skill.

Table 2 - Mean, Standard Deviation, and Correlation Value between Motor Fitness Components and Dominant Hand speed Pass Skill. (N=98)

* **Secretary (Sports Board) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

S.No	Variables correlated with dominant hand speed pass skill efficiency	Mean	S.D.	Co-efficient of Correlation
	Dominant Hand Speed Pass skill	11.49	2.20	
1	Speed	6.96	0.49	0.671
2	Arm strength	871.28	30.26	-.768
3	Endurance	221.20	20.46	-.064
4	Flexibility	15.59	3.83	.183
5	Agility	10.59	.71	.560

The results of above table shows that speed, arm strength, and agility are significant correlations at .01 level of confidence with dominant hand pass skill. As time is inversely related with performance level of players hence less time or decrease in time shows higher level of performance and vice versa**.**

GRAPHICAL PRESENTATION OF TABLE 1 AND 2:

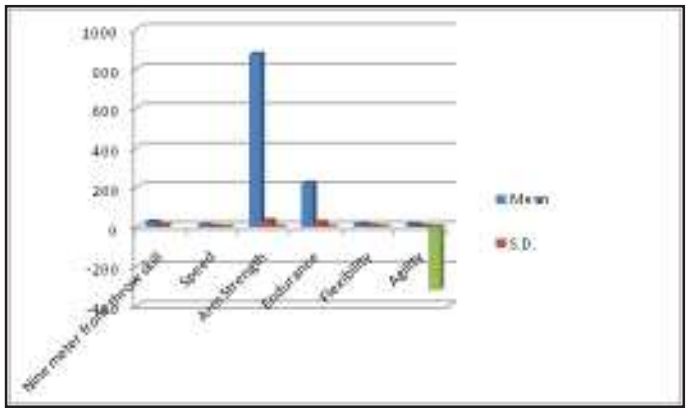

Table -1

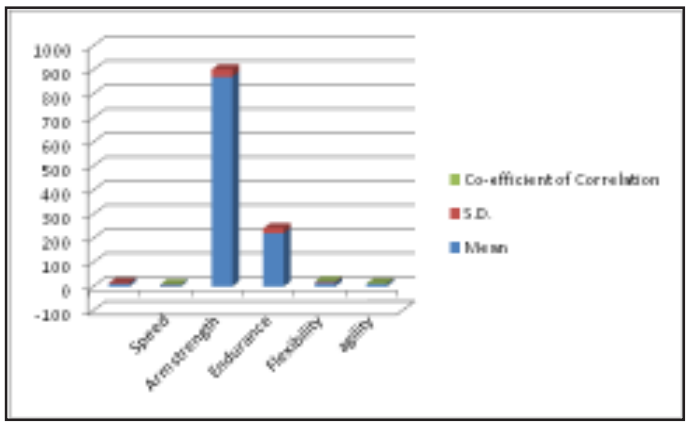

Table-2

Conclusions - Handball is a demanding contact Olympic team sports that emphasis on running, jumping, sprinting, and arm throwing, hitting, blocking, and pushing. For these reasons, it is supposed that game skills and motor fitness qualities are the most important factors to improve handball performance.

From this above results it is concluded that 9 Meter Front Throw Skill and Dominant Hand Speed Pass Skill are positive and significant correlations at .01 level of confidence with speed, arm strength, and agility. It is revealed that out of all motor fitness components only flexibility has negative relationship with two skills of Handball game. Consequently, the importance of the motor fitness parameters and playing ability are the source of orientation toward the choice of more and more big players, and it is the reason for which the majority of the trainers show a big interest in the motor fitness ability.

References -

1. Anthrakidis, N, Skoufas, D., Lazaridis, S., Zaggelidis, G. (2008). Relationship between Muscular Strength and Kicking Performance. Physical Training 2008;10:2-2 |
2. Bayios, I. A., Anastasopoulou, E. M., Sioudris, D. S., & Boudolos, K. D. (2001). Relationship between isokinetic strength of the internal and external shoulder rotators and ball velocity in team handball. Journal of Sports Medicine & Physical Fitness, 41(2), 229-235. |
3. David H. Clarke and H. Harrison Clarke, Research Process in Physical Education (New Jersey: Prentice Hall, Inc., 1984), P. 226**.**
4. "Hardayal Singh: "SCIENCE OF SPORTS TRAINING", D.V.S. Publications, Delhi."Hoff, Jan & others: "The Effects of Maximum Strength Training on Throwing Velocity and Muscle Strength in Female Team-Handball Players", Journal of Strength &Conditioning Research, November 1995- Volume 9 - Issue 4 - p 255-589.
5. H. Harrison Clarke and David H. Clarke, Advanced Statistics (New Jersey: Prentice Hall, Inc., 1984), P. 84.
6. Wernstedt P, Sjostedt C, Ekman I, Du H, Thuomas KA, Areskog NH, Nylander E (2002). Adaptation of cardiac morphology and function to endurance and strength training. A comparative study using MR imaging and echocardiography in males and females. Scandinavian J. Med. Sci. Sports, 12:17-25.
7. Whyte GP, George K, Sharma S, Firoozi S, Stephens N, Senior R, McKenna WJ (2004). The upper limit of physiological cardiac hypertrophy in elite male and female athletes: the British experience. Eur. J. Appl. Physiol., 92:592-597.
8. Zapartidis I, Vareltzis I, Gouvali M, Kororos M (2009). Physical Fitness and Anthropometric Characteristics in different Levels of Young Team Handball Players. Open Sports Sci. J., 2:22-28.
9. Zoghi M, Gürgün C, Yavuzgil O, Akilli A, Türkoglu C, Kültürsay H, Akin M (2002). QT dispersion in patients with different etiologies of left ventricular hypertrophy: the significance of QT dispersion in endurance athletes. Intl. J. Cardiol., 84:153-159.

****

Impact Of Deliberative Practice On Swimming Velocity And Active Drag

Gagan Vyas * Dr. Seema Gurjar **

Introduction - Deliberate practice involves the concentration of learning a skill over numerous repetitions. It seems obvious that deliberate practice results in better improvements than non-deliberate practice, yet many coaches are aware their swimmers sing songs in their head or dissociate themselves from practice. K. Anders Ericsson is recognized as the research who created the 10,000 hour theory. Many view this theory as a rule suggesting performing 10,000 hours of any activity will make you an expert, but anyone involved in a sport knows many who have put in this volume of time without becoming an "expert". Unfortunately, Ericsson's theory has been blown out of proportion and has been altered by the mainstream media. One misconception is the view of simply practicing for 10,000 hours compared to deliberating practicing for 10,000 hours (Ericsson 2008).

The most important reason children should learn to swim is **safety.** Swimming is a life skill. It's something your child will retain for the entirety of their life. It's an ability they will have even as an elderly person and it's the one sport that has the potential to be a true life saver. Swimming is a great form of **Physical Activity** which involves the entire body. It requires kids to actively involve their bodies and minds and kids have fun in the pool. Often times kids are repeatedly jumping in and getting out of the pool which is good exercise and helps boost metabolism. If you have a community pool that has attractions such as a water slide, diving boards, high diving boards or a lazy river, kids will be playing for hours.

Swimming is a **heart healthy** activity that is great for **strengthening lung capacity**. The longer kids spend in the pool swimming, the more their heart rate is working and the better lung capacity they will have. This is especially true for kids who swim laps. There are many people who have asthma that are very successful swimmers. By swimming and building lung capacity, their resistance to asthma is greater.

Swimming is a **no impact** activity that provides **resistance training.** It's a one of a kind workout! It is fantastic for toning shoulders and arms, backs and abs and it's easy to do. A lot of elderly people do low impact water aerobics because it feels so great to be in the water and because there is no impact on their bodies. Swimming is an **inexpensive** activity. If you cannot find a public lake, a lot of cities have public pools which are reasonably priced and if you can get a season pass, it's always the best deal.

Swimming is a **social** activity that allows children to interact with other children. Public pools are typically swarming with other children in the summers and it's a fantastic opportunity for kids to learn social skills and to make friends.

One of the greatest things about swimming is that kids can start swimming as early as **6 months old** Kids will learn to be comfortable in the water, blow bubbles, hold their breath and in some swimming programs, children are taught to roll from their tummies onto their backs and sustain themselves by floating.

Common Misconceptions About Swimming Lessons -

1. It's a common misconception for people to think that your child can take one or two sessions of swim lessons each year just before summer and will learn everything that is necessary in that short amount of time. Kids should swim year-round until they can swim fluently, on their own, without the aid of any life-saving devices in deep water.
2. It may take several lessons before your child can move from one level to the next. Children learn at different speeds so while your son is Michael Phelps, your other son might be more like Hulk Hogan, and that's okay. Just recognize that the Hulk might take longer to learn the breast stroke.
3. Arm floaties are not life saving devices and are actually dangerous. If your child cannot swim, do not put floaties on his arms and turn him loose. If they were to pop and fail, your child would sink.
4. Many swim programs don't allow parents to sit on the swim deck because children may cry and have separation issues. If your child does cry, simply turn them over to the teacher and walk away. It's been said numerous times that as a parent, you don't want your kiddo to disrupt the other kids, but the swim instructors should be trained on methods to help calm the children. In our swimming and gymnastics facility we had numerous children who cried and in cases where parents trusted the teacher to handle the situation, we had a

* Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Sports Officer, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

nearly 100% success rate of calming and teaching the kids.

It may have taken a few weeks to get the kids acclimated and into a routine but we never gave up. My youngest son actually cried for the first five weeks of lessons and it was excruciating to listen to him crying while I was out in the gym coaching. I knew he was in good hands and that it was for his benefit so stiffened my back and toughened up and by the time he was 4 years-old, he was jumping off the side of the boat into the lake by himself. The lesson learned is that it's always harder on the adult than it is on the child.

5. Kids cannot swim just fine with flotation devices. You cannot rely on a flotation device to act as a rescue device for your child's life or well being.

Many swimmers seem to be hesitant when it comes to realizing the need to get stronger. This uncertainty is slowly dying off, but there are still many misconceptions of what it really means to get stronger.

First let's clarify the best reason to get stronger. My number one goal when working with athletes is to keep them healthy and injury-free, as much as practically possible, and getting stronger makes you more durable. The leading cause of injury is weakness. This weakness can be expressed either through an improperly conditioned muscle or because of a joint's lack of integrity, which could be because it's not properly aligned to absorb and produce force. Either one of these conditions can become much worse if the muscle or joint is put through a high number of repetitions or movements.

When you swim, you're putting your joints through the same movements thousands upon thousands of times. When a muscle is not properly conditioned or a joint is misaligned and you perform a lot of movement with it, micro-trauma will inevitably develop. Think of this process as getting a paper cut. One paper cut isn't that bad at all, but 1,000 of them would be a much bigger problem. But what does getting stronger really mean? For your joints, it's making sure that your muscles are properly balanced so that all of your joints are aligned as much as possible. If you swam as an age grouper, through high school and/or college, you may have a rounded upper back and forward protruding shoulders. If so, your muscles aren't balanced between your front and back. This can happen in the lower body as well—many people's hips are too tight in the front, causing another imbalance.

A well-planned strength program will start out by getting you stronger in the areas where you are weak or imbalanced based on your posture and movement. Some would view this as corrective rehab or prehab exercising. But I like to call it what it is—good training that's making you stronger and more durable.

When you think about getting stronger you may think strength is purely structural—getting bigger. But that's only half of the equation. The neurological component is just as important. When you strength train, your brain gets more efficient at alerting parts of your muscles to work hard. This is why you can get much stronger without any difference in the actual size of the muscle. The strength gains are through greater neurological efficiency, when the brain is essentially able to send "louder" messages to your muscles.

To increase strength, from either a structural or neurological standpoint, you simply need to have a resistance that is more than you are used to. For some that's doing just five standing push-ups against a wall. For others a regular push-up position on the ground and doing 20 regular push-ups would be a good starting point. And some may be strong enough that they need to do one-arm push-ups for an appropriate challenge.

Don't think about gaining strength as doing this or that particular exercise or routine—it's much broader than that. To fully reap the benefits of getting stronger, have a professional help you assess your current ability and determine how to progress over time so that you don't do exactly what you wanted to avoid in the first place—get hurt. Anyone can go to the gym and lift weights, but it takes an experienced professional to help someone get stronger quickly and safely without injury.

In swimming, Ericsson has been working with Dr. Rod Havriluk on research and applying these methods in swimming. Now, their work is still adolescent, but preliminary research from Dr. Havriluk is quite impressive.

Methodology - Eighteen competitive swimmers (M=12, F=6) performed a 30-m sprint, where the hand force and swimming velocity was measured for the last 10-m. One trial of each stroke was performed with 1 minute rest between trials.

After the trial, a one-week intervention of three classroom and five poolside instructional sessions were provided. The classroom sessions included technique feedback based on their videos. The poolside was a reinforcement of the cues implemented from the classroom. The poolside instructional sessions composed of "numerous repeats of 25 m swims, the subjects were encouraged to swim at a slow enough velocity that they could control their movements to comply with the cues. Daily training distance during the intervention was similar to the typical distance for the subjects (5 km). The subjects were then post tested.

Results - There was a significant improvement in swimming velocity and active drag. Significant improvements in stroke length were also noted.

Table 1 (See the next page)

Discussion - Classroom and in-water instruction of stroke biomechanics significantly improve stroke length, active drag, and sprint swimming velocity in teenage swimmers. These improvements are likely from deliberate practice improving motor learning. This study adds confirmation that stroke length is the largest contributor to swimming velocity.

Practical Implication - Coaches should consider individualized feedback and classroom education for improving technique. However, this study did not have a comparison group, making the interventions difficult to extrapolate across a population. More research and comparison groups are necessary for confirmation.

References -

1. Havriluk, R. Performance level differences in swimming: Relative contributions of strength and technique. In P-L. Kjendlie, R. K. Stallman, & J. Cabri (Eds.) 2010 Biomechanics and Medicine in Swimming XI. Norwegian School of Sport Science, Oslo.
2. Ericsson KA. Deliberate practice and acquisition of expert performance: a general overview. Acad Emerg Med. 2008 Nov;15(11):988-94. doi: 10.1111/j.1553-2712.2008.00227.x. Epub 2012 Sep 5.

Table 1
Comparing Pre and Post Test Scores

	Pre Test		Post Test		ES	p
	Mean	S.D.	Mean	S.D.		
Swimming velocity (m/sec)						
Back Stroke	1.08	0.09	1.13	0.12	0.47	<0.05
Breast Stroke	0.93	0.30	0.96	0.09	0.27	
Butterfly	1.23	0.34	1.30	0.15	0.46	<0.05
Free Style	1.30	0.25	1.36	0.13	0.45	
Active Drag Coefficient						
Back Stroke	1.23	0.17	1.10	0.13	0.92	<0.05
Breast Stroke	1.55	0.28	1.50	0.38	0.16	
Butterfly	1.06	0.29	0.91	0.16	0.67	<0.05
Free Style	0.98	0.20	0.91	0.14	0.43	
Stroke Length (m/cycle)						
Back Stroke	1.75	0.22	1.87	0.23	0.53	<0.01
Breast Stroke	1.42	0.20	1.53	0.21	0.58	
Butterfly	1.56	0.17	1.62	0.20	0.32	<0.05
Free Style	1.74	0.20	1.80	0.17	0.31	

****

जल प्रबन्धन : घटता जल, भयावह कल

डॉ. भारती जोशी *

प्रस्तावना – प्रकृति की अनमोल देन है जल। जल है तो कल है। जल के बिना न तो जीवन की रचना संभव है और न ही जीवन उसके बिना हो सकता है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले छोटे बड़े जीव जन्तु , पेड़, पौधे, वनस्पति सभी का जीवन जल से ही संचालित होता है। 'बिन पानी सब सून' यह सिर्फ एक मुहावरा ही नहीं वास्तव में जल का अभाव मृत्यु का कारण है। एक जमाना था जब किसी की प्यास बुझाना श्रेष्ठतम मानवीय कार्य समझा जाता था। ग्रीष्म ऋतु में जगह जगह प्याऊ बनवायी जाती थी पशुओं के लिए रास्तों में हौद बनवा कर जल रखा जाता था लेकिन बढ़ती आबादी का कड़वा सच यह भी है कि जल जैसा अमृत पेय अब बाजार की वस्तु बन गया है। एक अनुमान के अनुसार इस समय दुनिया में जल का बाजार 34,000 अरब से भी अधिक का है। जल की एक एक बूंद से मुनाफा कमाया जा रहा है।

यूनिसेफ के अनुसार इस समय पूरी दुनिया में 88.40 करोड़ लोग साफ पेयजल से वंचित है। सन् 2025 तक हालात और भी गंभीर होंगे। 14 सालों में 30 देशों में जल संकट होगा। इनमें से 18 मध्यपूर्व व उत्तर अफ्रीका के हो सकते है। हम जल के बारे में तभी सोचते है जब जरूरत होती है यानी प्यास लगने पर कुआँ खोदना। जबकि जल प्रबन्धन के लिए हमें हमेशा जागरूक और सतर्क रहने जैसी बातें संस्कार में शामिल कर लेना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति जल बचाने के प्रयास को अपना धर्म बना ले तो दुनिया हमेशा हरी भरी खुशहाल हो सकती है। वर्षा की एक एक बूंद को सोने की तरह सहेजने की जरूरत है। जल के अपव्यय पर कानूनी कार्यवाही की जाना चाहिए तभी बढ़ती आबादी की प्यास बुझ सकती है। पर्यावरण व प्रदुषण नियत्रंण के कड़े नियम लागू करना ही होंगे ।यूनिसेफ के अनुसार इस समय पूरी दुनिया में 88.40 करोड़ जनता साफ पेयजल से वंचित है और 26 अरब लोगों को पर्याप्त सेनिटेशन नसीब नहीं है। सन् 2025 तक स्थिति और बिगड़ेंगी तथा 18 अरब लोग जलाभाव में जी रहे होंगे। 14 सालों में 30 दशकों में जल संकट होगा। जिनमें से 18 मध्यपूर्व व उत्तर अफ्रीका के होंगे।

हमारे देश में 19वीं सदी के अंत तक जल प्रबन्धन और संरक्षण समाज की साझा जिम्मेदारी थी, शासकों की नहीं। जनता जल सहेजती ही नहीं बल्कि बचाती भी थी। तेजी से हो रहे शहरीकरण, बदलती जीवन शैली तथा जल के प्रति हमारी लापरवाही के कारण जल स्त्रोत लगातार कम होते जा रहे है। झरने सूख रहे है, नदियों का आकार बदलकर नाले का रूप धारण कर लिया है, बावड़ियों – पोखरों पर अतिक्रमण होकर इमारतें तन गयी है । प्रतिवर्ष औसत से कम बारिश होने का रिकार्ड बनता जा रहा है। हमारे देश में 1952 के मुकाबले अब तक 33 प्रतिशत जल खत्म हो चुका है, जबकि आबादी 36 करोड़ से बढ़कर 125 करोड़ के लगभग हो गयी है। अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के आकलन के अनुसार ज्यादातर जनता भूमिगत जल पर निर्भर होती जा रही है जिससे प्रतिवर्ष भूजल स्तर एक फीट की गति से नीचे जा रहा है। आज भारत में 5723 में से 839 से अधिक ब्लाक डार्क जोन में आ चुके है। देश के हर कोने में जल को लेकर खींचतान चल रही है। पेयजल के लिए लम्बी लाईन में लगना कई क्षेत्रों में दिनचर्या का एक हिस्सा बन गया है। भारत में जल और जल को शुध्द करने के उपकरणों के उपयोग का प्रचलन लगातार बढ़ रहा है। देश में करीब 1 करोड़ से अधिक परिवार वॉटर प्यूरिफायर का इस्तेमाल करते है। भारतीय बाजार में पैक्ड जल के उपयोग का प्रचलन जोरो पर है। देश के एक हजार करोड़ के जल के बाजार में हर साल 50 प्रतिशत बढ़ोतरी हो रही है देश में पैक्ड जल के 100 से अधिक ब्रान्ड है और 1200 से अधिक बाटलिंग प्लांट है। देश का हर बड़ा कारोबार समूह पैक्ड जल के व्यापार में है। भारत में जल संकट के चार प्रमुख कारण निम्नलिखित है–

1. **जल की बर्बादी** – भारत में हर साल बारिश से जितना जल मिलता है, उसका 18 प्रतिशत हिस्सा ही उपयोग में आ पाता है शेष 82 प्रतिशत जल नदियों के जरिये समुद्र में समाहित हो जाता है। जल वितरण के दौरान भी अधिक जल बर्बाद हो जाता है। क्योंकि हमारे यहाँ जल संग्रहण क्षमता का अभाव है । संग्रहण क्षमता इतनी कम है कि हम 30 दिन के बराबर हुई बारिश का जल ही संग्रहित कर पाते है। रेनवाटर हार्वेस्टिंग के प्रति जागरूकता का अभाव इसका प्रमुख कारण है। जल के कुप्रबन्धन के कारण जल बड़ी मात्रा में बर्बाद हो जाता है।
2. **सिंचाई जल का कुप्रबन्धन** – देश में उपलब्ध कुल जल का 70 प्रतिशत भाग सिंचाई में खर्च होता है । हरित क्रान्ति के बाद देश में फसलों की ऐसी किस्में अधिक बोई जाने लगी , जिनमें जल का अधिक उपयोग होता है। बारिश से पर्याप्त जल नहीं मिलने से भूगर्भीय जल भण्डारों पर निर्भरता बढ़ गयी है । क्योंकि कृषि भूमि से अंधाधुंध जल निकाला जा रहा है। नासा के एक प्रतिवेदन के अनुसार उत्तर भारत के राज्यों में सन् 2002 से 2008 के बीच 109 अरब क्यूबिक मीटर (1क्यूबिक मीटर बराबर एक हजार लीटर) जल समाप्त होगया है। इसीलिए करोड़ों जनता के समक्ष जल संकट हो गया है।
3. **विकास की तीव्र गति** – भारतीय अर्थव्यवस्था में लगातार प्रगति के कारण देश में जल की मांग में लगातार बढ़ोतरी हो रही है । केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय के अनुसार इस समय उद्योगों में जल की मांग 50 अरव क्यूबिक मीटर है। इस जल की आपूर्ति भी भूगर्भीय संसाधनों से हो रही है। क्योंकि उद्योगों से बड़ी मात्रा में निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थो के कारण जल स्त्रोत प्रदुषित हो रहे हैं। उपचार के अभाव में अपशिष्ट जल का सही उपयोग नहीं हो पा रहा है। केंद्रीय प्रदुषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार इस जल का केवल 35 प्रतिशत भाग ही शोधित हो पाता है।
4. **जीवनशैली** – पिछले चार दशकों में भारत की शहरी आबादी दोगुनी हो गयी है और वर्तमान में 40 प्रतिशत हिस्सा शहरों में रहता है । शहरों में रहने से लोगों की जीवनशैली बदली है। बदलती जीवनशैली जल की बर्बादी का कारण बनी है। क्योंकि शहरों में रहने के कारण विलासितापूर्ण जीवन की आदतें जैसे– फ्लश टायलेट, वॉशिंग मशीन में कपड़े धोना जैसी शहरी शैली से जल का अधिक उपयोग होता है। इस शताब्दी में पेयजल तेल से भी मंहगा होगा जल विशेषज्ञों का माना है कि आने वाले समय में जल को लेकर युध्द की स्थिति भी निर्मित हो सकती है। अनेक स्थानों पर जनता पेयजल के लिए भटक रही है तो दूसरी तरफ वाहन धोने, नहाने, फ्लश करने और दूसरी सुविधाओं के लिए जरूरत से कई गुना ज्यादा जल बहाने में लोग संकोच नहीं करते है। अत्यधिक जल संकट को देखकर हमें अब तो गंभीर हो जाना चाहिये

* विभागाध्यक्ष (आजीवन शिक्षण विभाग) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय तक्षशिला परिसर, खण्डवा रोड़, इंदौर (म.प्र.) भारत

जल संकट से निपटने के लिए कई वैज्ञानिक तरीके है जिनमें तीन अधिक महत्वपूर्ण है। इन्हे अपनाने से हम अपने कल को खुशहाल बना सकते है। ये इस तरह से है–

1. रेनवाटर हार्वेस्टिंग –इंटरनेशनल वाटर इंस्टिटयूट ने छत से प्राप्त होने वाले वर्षा जल को अन्य स्त्रोतों से प्राप्त होने वाले जल की अपेक्षा श्रेष्ठ बताया है। केमिकल लेब की रिपोर्ट के अनुसार यह जल हर तरह के घातक लवणों से मुक्त होता है। इसमें हानिकारक वैक्टीरिया भी नहीं होते है और इसकी पीएच वेल्यू भी आदर्श 6.95 होती है। पीएच वेल्यू यह बताती हे कि जल कितना प्राकृतिक व सामान्य है। 6.5 से 8.5 के बीच पीएच वेल्यू वाले जल को सामान्य व उपयोग के योग्य समझा जाता है । इस तकनीक का मुख्य उद्देश्य है कि बरसाती जल को व्यर्थ बहने से रोका जाय और उसे छतों के माध्यम से ऐसे संग्रहित किया जाय कि उसका पुन: उपयोग संभव हो सके । ऐसा भूगर्भीय जल भंडारों को भरकर , बोरवेल– कुंओं को चार्ज करके या किसी टैंक आदि में जल को एकत्र कर किया जा सकता है। एक बरसाती मौसम में एक हजार वर्ग मीटर की छोटी छत से लगभग एक लाख लीटर जल जमीन के अन्दर उतारा जा सकता है । इसके लिए सबसे पहले जमीन में 3 से 5 फीट चौड़ा और 6 से 10 फीट गहरा गड्ढा खोदना होगा। खुदाई के बाद इसमें सबसे नीचे मोटे पत्थरों वाली रेत बीच में मध्यम आकार वाले पत्थर और सबसे ऊपर बारीक रेत या बजरी डाल दी जाती है। यह तरीका फिल्टर का काम करता है। छत से जल एक पाइप के माध्यम से गड्ढे में उतार दिया जाता है । गड्ढे से जल धीरे धीरे छनकर जमीन के अन्दर चला जाता है । इसी तरह फिल्टर के जरिए जल को सम्प या टैंक में भी एकत्र किया जा सकता है। वाटर हार्वेस्टिंग से जमीन के भीतर जल संग्रहण का एक फायदा यह भी होता है कि वाष्पीकरण के जरिए जल के खत्म होने की आशंका कम हो जाती है। रेनवाटर हार्वेस्टिंग में मध्यप्रदेश का देवास जिला एक मिसाल है। एक दशक पहले तक यहाँ जल संकट था लेकिन 1999 में भूजल संवर्ध्दन मिशन नाम से प्रारंभ इस अभियान में प्रशासन तथा जनता ने मिलकर 1999 में शहर में एक हजार से अधिक रूफ वाटर हार्वेस्टिंग स्ट्रक्चरों का निर्माण किया जिससे एक लाख 15 हजार क्यूबिक मीटर जल भूमिगत भंडारों में डालना संभव हो सका और इस तरह गिरते भूजल स्तर को संभाल लिया। रेनवाटर हार्वेस्टिंग करते समय ध्यान रखे कि छत अच्छी तरह से साफ रखें । वाटर हार्वेस्टिंग के लिए खोदा गया गड्ढा टॉयलेट के पास नहीं होना चाहिये। फिल्टर की रेत को समय समय पर साफ करें और बदलते रहे।

2. वाटर रीसाइक्लिंग– वाटर रीसाइक्लिंग का अर्थ है पानी की हर बूंद को साफ कर बार बार उसका इस्तेमाल करना। हम जानते है कि जल का कोई विकल्प नहीं होता है इसलिए आवश्यक है कि जितना जल उपलब्ध है उसका अधिकतम उपयोग किया जाय यह केवल रीसाइक्लिंग एवं ट्रीटमेंट से संभव है। नहाने, हाथ –मुंह धोने , साफ– सफाई और बर्तन आदि में इस्तेमाल होने वाला जल ग्रे वाटर कहलाता है और इस जल को रीसाइक्लिंग ब्लैकवाटर कहलाता है जिसे ट्रीट करना होता है। वाटर रीसाइक्लिंग घर, दफ्तर, उद्योग कहीं भी किया जा सकता है। रीसाइक्लिंग जल का उपयोग पीने लायक तो नहीं होता है पर सिंचाई के काम आ सकता है। शहरी क्षेत्रों में प्रतिदिन वितरण किये जाने वाले करोड़ों लीटर जल का 80 प्रतिशत जल का हिस्सा उपयोग के बाद सीवरेज में बहा दिया जाता है अगर इस जल का उपयोग पुन: कर लिया जाय तो जल की बचत होगी।

रीसाइक्लिंग करने के लिए सर्वप्रथम बालू से फिल्टर करने की प्रक्रिया में ग्रे वाटर को रेत, रोड़ी व कंकड़ से निथारा जाता है। इसमें जल से केवल ठोस पदार्थ और मिट्टी के कण अलग हो जाते है। फिर इसमें इलेक्ट्रोमैग्नेटिक किरणों का उपयोग होता है। अधिक प्रदुषित जल के लिए सुपर क्लेरीनेशन और रिवर्स ऑस्मोसिस (आर ओ) प्लांट लगाते है। आर ओ में ग्रे वाटर में आक्सीजन पंप करके मित्र जीवाणुओं को सक्रिय किया जाता है। सीवरेज जल को ट्रीट कर उद्योगों में उपयोग या सिंचाई में उपयोग करने का टर्शरी बेहतरीन तरीका हो सकता है। टर्शरी एवं क्लेरीनेशन प्लांट को जोड़कर शुद्ध किया जल पीने योग्य हो सकता है। जनता अपने स्तर पर घर में ही 45 का गड्ढा बनाकर रसोई व बाथरूम का जल उसमें डाल सकते है। गड्ढे में मिट्टी, चारकोल , रोड़ी व कंकड़ डालकर जल रीसाइक्लिंग कर सकते है इस जल से बगीचे को सींच सकते है। चंडीगढ़ में गोल्फ कोर्स व पार्कों को सीवरेज जल ट्रीट कर दिया जाता है। बेंगलूर का लोकप्रिय कब्बन पार्क हार्ड वाटर से सींचा जाता है।

3. नैनो टेक्नोलॉजी – धरती का 72 प्रतिशत हिस्सा जल में डूबा होने के बावजूद जनता के हिस्से आने वाला पेयजल सिर्फ 1 प्रतिशत है । नैनो टेक्नोलॉजी से शेष 71 प्रतिशत जल के उपयोग की उम्मीद जाग रही है। नैनो टेक्नोलॉजी में जल से आर्सेनिक जैसी विषैली धातु के कण, वायरस व बैक्टीरिया तक छान देने वाले महिन फिल्टरों की टेक्नोलॉजी है। एक नैनो मीटर एक मीलिमीटर के दस लाखवें हिस्से के बराबर होता है। यानी इन फिल्टरों में इतने महीन छेद होते है जो जल से हर तरह की गंदगी साफ कर सकती है। समुद्र के खरे जल को मीठे में बदलने के प्रयास जारी है। नैनो फायबर, पोलिमर, रेजिन, सिरेमिक आदि से बना यह फिल्टर जल साफ कर देता है। घरों में इस्तेमाल तथा रख रखाव का कोई खर्च नहीं होता है।

4. अन्य उपाय– जल प्रबंघन के लिए निम्नांकित उपायों को अपनाना उचित होगा–

- पर्यावरण व प्रदुषण नियंत्रण के कड़े नियम लागू करना होंगे । नदियों , तालाबों में मिट्टी का कटाव रोकना होगा। गाद जमने से बचाना होगा ताकि जल संग्रहण बढ़े, जल फालतू नहीं बहे।
- तालाबों, बावड़ियों का जीर्णोध्दार किया जाय। इनमें गंदगी नहीं डाले।
- तकनीकी और सामाजिक लोगों की समिति बनाकर उनके जरिये जल प्रबंधन अभियान को आगे बढ़ाया जा सकता है।
- घरों में जितनी जरूरत हो उतना ही जल इस्तेमाल करें । कपड़े धोने का जल फ्लश में , बर्तन धोने काजल बगीचों या गमलों में डाला जा सकता है।
- पौधों में शाम को जल दें ताकि वाष्पीकरण नहीं हो।
- भूजल के शोषण को रोकने के लिए कड़ा कानून हो।
- आर्गेनिक खेती को बढ़ावा दिया जाय। रासायनिक उर्वरक मिट्टी को कठोर करते है।
- सरकार की नदी जोड़ परियोजना से अधिक लाभ की संभावना है।
- घर आये मेहमानों को जल भरे गिलास देने की जगह जल बोतल और छोटे खाली गिलास दिये जाए ताकि जितना पीना चाहे उतना ही जल ले ।
- जल लीकेज होता दिखे तो ग्रेविटी टेप लगाएं या तत्काल संबधित विभाग को सूचित करें। जल लीकेज रोकने के लिए हेल्प लाइन शुरू कर सकते है।
- निर्माण कार्यों में पेयलज प्रतिबंधित किया जाय।
- बच्चों को घर, विद्यालयों में जल प्रबंधन की शिक्षा अनिवार्य रूप से दे।
- प्रति व्यक्ति न्यूनतम जल वितरित कर जल बचायें ।

अभी भी हमने जल प्रबंधन नहीं सीखा तो अगली पीढ़ी हमें कभी माफ नहीं करेगी । जल संसाधनों के घटते स्त्रोंतो के कारझा एक दिन वह भी आ सकता है जब गिलास भर जल से स्नान कर संतुष्ट होना होगा। जल के उपयोग का आडिट किया जाना आवश्यक है। जल बचाने के लिए रोल मॉडल बनाने तथा रीसाइक्लिंग प्लांट तैयार करने की भी जरूरत है। नदियों, तालाबों में मिट्टी का कटाव रोकना, गाद जमने से बचाना होगा ताकि जल का संग्रहण बढ़े, जल बेकार न बह जाए। जल प्रबन्धन के क्षेत्र में शोध तथा विकास को बढ़ावा देना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जल सत्याग्रह भास्कर श्रृंखला

ऋग्वेद की मानव को पर्यावरणीय सीख-वर्णनात्मक अध्ययन

डॉ. मनीषा मालवीय *

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति के मूल वेद ही है। वैदिक काल से ही मानव और प्रकृति के पारस्परिक संबंध मधुर रहे हैं। इस पर यह कहना कि वेद ने प्रकृति संरक्षण व संचालन का अपनी ओर से विधान नहीं किया, प्रत्युत्त उत्तम गति की आकांक्षा रखने वाले पुरूषों को रागद्वेष रहित होने का ही सदा उपदेश दिया। 'प्रकृति हमारी माता है इसे नुकसान से बचाना हमारा कर्त्तव्य है' यह सर्वप्रथम वेद की ही घोषणा थी।

उद्देश्य – प्रस्तुत लघु शोध का उद्देश्य ऋग्वेद में व्याप्त पर्यावरणीय पहलुओं से जनसामान्य को अवगत कराना है, साथ ही पर्यावरण समस्या से जूझ रहे मानव को अपने वैदिक ग्रन्थों को पढ़कर पर्यावरण की समस्या से उभरने का रास्ता बताना है।

अध्ययन क्षेत्र – वेदों में प्रकृति की प्रत्येक वस्तु को देवतुल्य मानकर उसे संजोए रखा। स्वस्थ पर्यावरण की चाह में मानव की पर्यावरण के साथ आत्मीय जीवन शैली रही है। मानव ने हमेशा प्रकृति और उसके साधनों की पूजा की है, गंगा, यमुना, सरस्वती आदि जलस्त्रोतों की अर्चना की है। बड़ (बरगद), पीपल, नीम, तुलसी जैसे पेड़-पौधों की पूजा की। मनुष्य का पार्थिव जगत से संबंध माता और पुत्र के समान रहें। मनुष्य पार्थिव जगत में (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा) सम्मिलित प्रत्येक वस्तु को उपयोगी मानकर उसके हर एक पहलू को अच्छी तरह व्यवस्थित करके प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित कर पर्यावरण व मानव के बीच होने वाली अव्यवस्था को होने से रोका। वैदिक युग में मानव की प्रत्येक जरूरत पार्थिव जगत से जुड़ी हुई थी, क्योंकि इन्द्र को जल का देवता मानकर वह इन्द्र देव की स्तुति कर वर्षा को पृथ्वी पर आने के लिए आमंत्रित करता था। सूर्य देव को आराध्य मानकर सूर्य किरणों से सम्पूर्ण जगत् को रोगरहित होने तथा स्वस्थ रहने की कामना करता था। नदियों को माता कहकर अपने कृषि कार्यो को पूर्ण करता था। भूमि से निकले बहुमूल्य रत्नों व धातुओं को अपने दैनिक जीवन में उपयोग करता था। भूमि पर निवास हेतु घरों का निर्माण किया। पृथ्वी को मातातुल्य मानकर उससे प्रार्थना की। कि वे हमेशा सम्पूर्ण मानव का कल्याण करें व अपने द्धारा उपजी प्रत्येक वस्तु का उपयोग मानव को कल्याण कार्यों व अपने स्वयं के पालन-पोषण करने की आज्ञा दें। पार्थिव जगत किसी न किसी रूप में मानव से जुड़ा है। या यों कहें कि अगर पार्थिव जगत ना होता, तो मानव का अस्तित्व इस पृथ्वी पर असंभव होता।

समस्यायें – आज हम पेड़ों की अंधा-धुंध कटाई के कारण विश्व के बड़े भू-भाग को वनों से वंचित होता देख रहे हैं। बहुत बड़ा भू-भाग वनों के अभाव के कारण वर्षा से वंचित होकर मरूस्थल में परिवर्तित होता जा रहा है। वन शीतलता को बनाए रखने में सहायक होते हैं, परन्तु वनों के अभाव से वातावरण में ऊष्मा बढ़ती चली जा रही है। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि वनों को साफ करके उस भूमि को कृषि योग्य बनाया जाए, परन्तु वे यह भूल जाते हैं कि कृषि के लिए पानी की आवश्यकता होती है, और पानी वर्षा के माध्यम से ही पृथ्वी को प्राप्त होता है। नदियों मे भी पानी वर्षा तथ बर्फ के कारण ही उपलब्ध होता है। यदि वर्षा नहीं होगी, तो नदियां सूख जायेंगी, और सिंचाई के लिए भी खेती-बाड़ी को पानी उपलब्ध नहीं होगा।

वन पशु-पक्षियों के छिपने की जगह भी होती है। यदि वन न हो तो पशु-पक्षियों का बहुत बड़ा आश्रय समाप्त हो जाएगा। ये पशु-पक्षी अनेक प्रकार से मानव जाति की सहायता करते हैं।

निष्कर्ष – प्रकृति को माता की संज्ञा दी है, और यह कहना कि माँ अपने बच्चों को नुकसान नहीं पहुंचाती, बिल्कुल गलत नहीं होगा। मनुष्य और प्रकृति सिक्के के दो पहलू की तरह है, एक दूसरे एक बिना सृष्टि का निर्माण असंभव है, क्योंकि पार्थिव व जैविक जगत मिलकर ही सृष्टि का निर्माण करते हैं। किसी भी वस्तु की उपयोगिता उसके महत्व को बताती है। प्रकृति में अनगिनत वस्तुएँ हैं जिनका आंकलन करना हमारे लिये असंभव हैं किन्तु इनका अस्तित्व तब सामने आया, जब मनुष्य ने उसका उपयोग करना शुरू किया। या यों कहें कि प्रकृति के संचालन में अहम् भूमिका मनुष्य ने ही निभायी है। इस बात की पुष्टि वेद ग्रन्थों में कई जगह देखने को मिलती है, जिसमें जल, वायु, भूमि, सूर्य, चन्द्रमा, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, पर्वत औषधियाँ, बहुमूल्य रत्न, धातुएँ आदि को मानव ने उपयोगी बनाया व प्रकृति में गतिशीलता का संचार किया, किन्तु धीरे-धीरे मानवीय प्रवृत्ति के अनुसार उसने अपनी जिज्ञासा की गति तेज कर दी, और प्रकृति का आवश्यकता से अधिक दोहन करना शुरू कर दिया। वैदिककाल में यह स्थिति नहीं थी, क्योंकि वैदिक मानव प्रकृति पूजक था और वह प्रकृति की प्रत्येक वस्तुओं को देवतुल्य मानता था।

सम्पूर्ण ऋग्वेद में कई जगह मानव को प्रकृति को नुकसान पहुंचाने पर दण्ड का विधान बताया गया है। वैदिक विचारधारा यह घोषणा करती है कि जंगल में कोई भी व्यक्ति कृषि कार्य नहीं करेगा। जंगल में कृषि वालों का अर्थात् किसानों का कोई काम नहीं। कई सूक्तों में प्रकृति को नुकसान पहुंचाने पर निषेध किया गया है और कहा है कि यदि पृथ्वी रूष्ट हो गई तो वह हिलने लगेगी और सम्पूर्ण प्रकृति (सृष्टि) को नष्ट कर देंगी। इस भय के कारण मानव पशुओं (जीवों) की हिंसा नहीं करता था। बड़, पीपल, नीम, तुलसी, आदि पेड़-पौधों की पूजा कर उन्हें संरक्षित करता था।

सुझाव – वेद ग्रन्थ ने समय-समय पर मानव को प्रकृति संरक्षण के कई निर्देश दिये है। जैसे-

- पशु हिंसा न करना।
- वनों को आवश्यकतानुसार ही उपयोग में लाना।
- कृषि योग्य भूमि बनाने की लालसा में वनों को खत्म न करना।
- पृथ्वी व पर्यावरण को प्रदूषित न करना, व अशुद्ध पर्यावरण को शुद्ध करने के लिए यज्ञ करना।
- रोगादि दूर करने के लिये औषधियों (वनस्पतियों) को संरक्षित करना।
- पशुपालन कर अपना व अपने परिवार का उदरनिर्वाह करना।

कई वैदिक साहित्य है, जो मानवीय गतिविधियों पर रोक लगाने व प्रकृति को संजोए रखने का निर्देश देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अहिताग्नि शिवनाथ, शास्त्री पं. शंकरदत्त
   ऋग्वेद संहिता 10।164।4, 10।146।6
   नाग प्रकाशक - ए./यू.ए., जवाहर नगर, दिल्ली - 6
2. डॉ. मनीषा मालवीय 'ऋग्वेद में पर्यावरण प्रबंधन की अवधारणाऐं एवं उनकी वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संभाव्यता का विश्लेषण पेज. 172, 176, 178, 179

* भैरुलाल पाटीदार शासकीय महाविद्यालय, महू , इन्दौर (म.प्र.) भारत

Guideline for Authors/Research Scholars

* This is a national/international refereed **NAVEEN SHODH SANSAR** Research Journal for all subjects.
* The selection and publication of research paper are done after recommendation of referees and subject experts.
* Your research papers should be original and unpublished.
* The research papers should be written according to **RESEARCH METHODOLOGY**. Although this is a national/international registered research journal but in any case or circumstances if any university/college/institute/society denies to accept or recognize author's/research scholar's published research papers in the journal, then it will not be the responsibility of editor, publisher, management, editorial board, referee or subject experts.
* The research papers should have bibliography, footnotes, references, suggestions and findings.
* Only one printed copy of research journal will be sent to the author. No extra or second copy for co-author will be sent but if anybody requires extra copy of issue then in that case individual has to give an amount of Rs. 400/- for each single issue.
* The titles of your research papers should be appropriate.
* If your research paper is not accepted in that case **NAVEEN SHODH SANSAR** will refund your amount without any interest rate within 90 days after rejection of paper.
* You can also send your Research Papers by Website & Email id.
* Authors/Researchers should sent hardcopy of research paper with copyright form at **NAVEEN SHODH SANSAR** official Address.

Double Blind Peer Review Policy

Review System: Every article is processed by a masked peer review of double blind or by three referees and edited accordingly before publication. The criteria used for the acceptance of article are: contemporary relevance, updated literature, logical analysis, relevance to the global problem, sound methodology, contribution to knowledge and fairly good command on language. Selection of articles will be purely based on the experts' views and opinion. Authors will be communicated within Two months from the date of receipt of the manuscript. The editorial office will endeavor to assist where necessary with English/Hindi language editing but authors are hereby requested to seek local editing assistance as far as possible before submission. Papers with immediate relevance would be considered for early publication. The possible expectations will be in the case of occasional invited papers and editorials, or where a partial or entire issue is devoted to a special theme under the guidance of a Guest /Advisor Editor.

Compulsory Guidelines for Research Scholar Lecturers and Professors

* Research paper should be typed in MS Word 2007.
* Paper should be typed in A4 Size paper with standard margins of (2 cm/0.787 inches in all four sides)
* Title of Research Paper should be typed in 14 Size font and Bold with Underline.
* Authors / Research Scholar Names with College Address should be typed in 12 Size Font and Bold.
* Line Space Between should be 1.0 line spaces.
* Reference should be in Vancouver style at End of the paper (Endnote).
* For HINDI and SANSKRIT papers, use only these fonts : Kruti Dev-10 (Font size : 12)
* For ENGLISH papers, use only these fonts : Arial (Font size : 10).

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No.- MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767
Impact Factor - 0.547

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used)

Name (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

Name of Co-Author(s) : .....

Designation : ..... Subject : .....

Name of College/University/Institution : .....

Home / Official Address : .....

.....

State : .....Pin : ..... Country : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....Mobile : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,250/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 850/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}